

अभिधम्मत्थसङ्ग्रह

Abhidhammatthasaṅgaha
[A Manual of Abhidhamma]

[अभिधर्मार्थसंग्रह]

攝阿毘達磨義論和註解

Dhamma Digital

अभिधम्मत्थसङ्ग्रहटीका
Abhidhammatthasaṅgahatikā

अनुवादक
भिक्षु धर्मगुप्त महास्थविर

सह-अनुवादक
लक्ष्मण मगर

Translated by:
Bhikṣu Dharmagupta Mahasthavira

Co-Translated by:
Laxman Magar



भगवान बुद्धले आफ्नी आमालाई तुषित देवलोकमा
अभिधर्म देशना गर्नुहुँदै ।



भगवान बुद्ध आफ्नी आमालाई अभिधर्म देशना गरिसकेपछि
तुषित देवलोकबाट ओर्लिनु हुँदै ।

अभिधम्मत्थसङ्ग्रह

Abhidhammatthasaṅgaha
[A Manual of Abhidhamma]

[अभिधर्मार्थसंग्रह]

攝河羅達摩義論和註解

अभिधम्मत्थसङ्ग्रहटीका

Abhidhammatthasaṅgahatīkā

अनुवादक

भिक्षु धर्मगुप्त महास्थविर

सह-अनुवादक

लक्ष्मण मगर

Translated by:

Bhikṣu Dharmagupta Mahasthavira

Co-Translated by:

Laxman Magar

प्रकाशकः
भिक्षु धर्मगुप्त महारथविर
बौद्ध जन विहार
सुनाकोठी, ललितपुर, नेपाल।

Published by

編印者：釋大甘
住 址：台灣彰化縣和美鎮東路四段286號
Bhikṣu Dharmagupta Mahasthavira
Bauddha Jana Vihara
Sunakothi, Lalitpur.

कम्प्यूटर सेटिङ्गः
भिक्षु धर्मगुप्त म. तथा लक्ष्मण मगर
बौद्ध जन विहार
सुनाकोठी, ललितपुर, नेपाल।

मूल्यः २५०/-
प्रथम संस्करणः २०७३ (१००० प्रति)
First Edition: 2016 (B.E. 2560)

© सर्वाधिकार : अनुवादकणा *.Digital*

बुद्ध संवत्: २५६०
नेपाल संवत्: १९३६
विक्रम संवत्: २०७३
ईस्वी संवत्: २०१६

मुद्रक : राजमति प्रिन्टिङ्ग प्रेस
नकबहील, ललितपुर।
फोन : ५५३४५२७

विषय सूची

| | |
|---|---|
| | भूमिका.....VIII |
| | अभिधम्मत्थसङ्ग्रहो (अभिधर्मार्थसंग्रह).....१ |
| | ▪ गन्धारम्भकथा (ग्रन्थारम्भकथा).....१ |
| | ▪ चतुपरमत्थधम्मो (चार परमार्थधर्म).....१ |
| ❖ | चित्तपरिच्छेदो (चित्तपरिच्छेद).....२ |
| | ▪ भूमिभेदचित्तं (भूमिभेदचित्त).....२ |
| | ▪ अकुसलचित्तं (अकुशलचित्त).....३ |
| | ▪ अहेतुकचित्तं (अहेतुकचित्त).....५ |
| | ▪ सोभनचित्तं (शोभनचित्त).....८ |
| | ▪ कामावचरसोभनचित्तं (कामावचर शोभनचित्त).....९ |
| | ▪ रूपावचरचित्तं (रूपावचरचित्त).....१४ |
| | ▪ अरूपावचरचित्तं (अरूपावचरचित्त).....१६ |
| | ▪ लोकोत्तरचित्तं (लोकोत्तर).....१९ |
| | ▪ चित्तगणनसङ्ग्रहो (चित्तगणनासंग्रह).....२० |
| | ▪ वित्थारगणना (विस्तृतमा चित्त गणना).....२१ |
| ❖ | चेतसिकपरिच्छेदो (चैतसिक परिच्छेद).....२६ |
| | ▪ सम्प्रयोगलक्षणं (सम्प्रयोगलक्षण).....२६ |
| | ▪ अञ्जसमानचेतसिकं (अन्यसमान चैतसिक).....२६ |
| | ▪ अकुसलचेतसिकं (अकुशल चैतसिक).....२७ |
| | ▪ सोभनचेतसिकं (शोभन चैतसिक).....२८ |
| | ▪ सम्प्रयोगनयो (सम्प्रयोगनय).....३१ |
| | ▪ अञ्जसमानचेतसिकसम्प्रयोगनयो (अन्यसमान चैतसिक सम्प्रयोगनय).....३२ |
| | ▪ अकुसलचेतसिकसम्प्रयोगनयो (अकुशल चैतसिक सम्प्रयोगनय).....३४ |
| | ▪ सोभनचेतसिकसम्प्रयोगनयो (शोभन चैतसिक सम्प्रयोगनय).....३५ |
| | ▪ सङ्ग्रहनयो (संग्रहनय).....३८ |
| | ▪ लोकोत्तरचित्तसङ्ग्रहनयो (लोकोत्तरचित्त संग्रहनय).....३८ |
| | ▪ महग्गतचित्तसङ्ग्रहनयो (महग्गतचित्त संग्रहनय).....४० |
| | ▪ कामावचरसोभनचित्तसङ्ग्रहनयो (कामावचरशोभनचित्त संग्रहनय).....४० |
| | ▪ अकुसलचित्तसङ्ग्रहनयो (अकुशलचित्त संग्रहनय).....४१ |
| | ▪ अहेतुकचित्तसङ्ग्रहनयो (अहेतुकचित्त संग्रहनय).....४३ |
| ❖ | पकिण्णकपरिच्छेदो (प्रकीर्णक परिच्छेद).....४५ |
| | ▪ वेदनासङ्ग्रहो (वेदनासंग्रह).....४५ |
| | ▪ हेतुसङ्ग्रहो (हेतुसंग्रह).....४७ |

- किच्चसङ्ग्रहो (कृत्यसंग्रह).....५०
 - द्वारसङ्ग्रहो (द्वारसंग्रह).....५३
- आलम्बणसङ्ग्रहो (आरम्भणसंग्रह).....५५
 - वत्थुसङ्ग्रहो (वस्तुसंग्रह).....५९
- ❖ वीथिपरिच्छेदो (वीथि परिच्छेद).....६१
 - विञ्जाणछक्कं (विज्ञान छ समूह).....६१
 - वीथिछक्कं (वीथि छ समूह).....६२
 - वीथिभेदो (वीथिभेद).....६२
 - पञ्चद्वारवीथि (पञ्चद्वारवीथि).....६३
 - मनोद्वारवीथि परित्तजवनवारो (मनोद्वारवीथि परित्तजवनवार).....६६
 - अप्पनाजवनवारो (अर्पणाजवनवार).....६७
 - तदारम्भणनियमो (तदारम्भणनियम).....६९
 - जवननियमो (जवननियम).....७०
 - पुग्गलभेदो (पुद्गलभेद).....७३
 - भूमिविभागो (भूमिविभाग).....७४
- ❖ वीथिमुत्तपरिच्छेदो (वीथिमुत्त परिच्छेद).....७६
 - भूमिचतुक्कं ((भूमिचतुष्क).....७६
 - पटिसन्धिचतुक्कं (प्रतिसन्धिचतुष्क).....७७
 - कम्मचतुक्कं (कर्मचतुष्क).....८३
 - चुत्तिपटिसन्धिककमो (च्युत्तिप्रतिसन्धिक्रम).....८८
- ❖ रूपपरिच्छेदो (रूपपरिच्छेद).....९२
 - रूपसमुद्देशो (रूपसमुद्देश).....९२
 - रूपविभागो (रूपविभाग).....९६
 - रूपसमुद्धाननयो (रूपसमुद्धान).....९७
 - कलापयोजना (कलाप योजना).....९८
 - रूपपवत्तिकमो (रूपप्रवृत्तिक्रम).....१०२
 - निब्बानभेदो (निर्वाणभेद).....१०४
- ❖ समुच्चयपरिच्छेदो (समुच्चयसंग्रह).....१०६
 - अकुशलसङ्ग्रहो (अकुशलसंग्रह).....१०६
 - मिस्सकसङ्ग्रहो (मिश्रकसंग्रह).....१०८
 - बोधिपक्खियसङ्ग्रहो (बोधिपक्षीयसंग्रह).....१११
 - सब्बसङ्ग्रहो (सर्वसंग्रह).....११३
- ❖ पच्चयपरिच्छेदो (प्रत्ययपरिच्छेद).....११६
 - पटिच्चसमुप्पादनयो (प्रतीत्यसमुत्पादनय).....११६
 - पद्दाननयो (प्रस्थाननय).....१२०

| | |
|---|---|
| ❖ | ▪ पञ्जतिभेदो (प्रज्ञप्तिभेद).....१२४ |
| | कम्मट्टानपरिच्छेदो (कर्मस्थान परिच्छेद).....१२७ |
| | ▪ समथकम्मट्टानं (शमथ कर्मस्थान).....१२७ |
| | ▪ चरितभेदो (चरित्रभेद).....१२७ |
| | ▪ भावनाभेदो (भावनाभेद).....१२७ |
| | ▪ निमित्तभेदो (निमित्तभेद).....१२८ |
| | ▪ सप्पायभेदो (सप्पायभेद).....१२९ |
| | ▪ भावनाभेदो (भावनाभेद).....१३० |
| | ▪ गोचरभेदो (गौचरभेद).....१३१ |
| | ▪ विपस्सनाकम्मट्टानं (विपश्यना कर्मस्थान).....१३५ |
| | ▪ विसुद्धिभेदो (विशुद्धिभेद).....१३५ |
| | ▪ विमोक्खभेदो (विमोक्खभेद).....१३८ |
| | ▪ पुग्गलभेदो (पुद्गलभेद).....१३९ |
| | ▪ समापत्तिभेदो (समापत्तिभेद).....१४१ |
| | ▪ उय्योजनं (प्रेरक गाथा).....१४२ |
| | ▪ निगमन (निगमन).....१४३ |
| | अभिधम्मत्थवि भाविनीटीका.....१४४ |
| | गन्थारम्भकथा.....१४४ |
| | गन्थारम्भकथावण्णना.....१४४ |
| | परमत्थधम्मवण्णना.....१४६ |
| | १. चित्तपरिच्छेदवण्णना.....१४७ |
| | भूमिभेदचित्तवण्णना.....१४७ |
| | अकुसलचित्तवण्णना.....१४७ |
| | अहेतुकचित्तवण्णना.....१५० |
| | सोभनचित्तवण्णना.....१५२ |
| | कामावचरसोभनचित्तवण्णना.....१५२ |
| | रूपावचरचित्तवण्णना.....१५४ |
| | अरूपावचरचित्तवण्णना.....१५५ |
| | लोकुत्तरचित्तवण्णना.....१५७ |
| | चित्तगणनसङ्ग्रहवण्णना.....१५८ |
| | वित्थारगणनवण्णना.....१५८ |
| | २. चेतसिकपरिच्छेदवण्णना.....१६० |
| | सम्पयोगलक्खणवण्णना.....१६० |
| | अञ्जसमानचेतसिकवण्णना.....१६० |
| | अकुसलचेतसिकवण्णना.....१६१ |
| | सोभनचेतसिकवण्णना.....१६२ |

| | |
|--------------------------------------|-----|
| सम्पयोगनयवण्णना..... | १६४ |
| अञ्जसमानचेतसिकसम्पयोगनयवण्णना..... | १६४ |
| अकुसलचेतसिकसम्पयोगनयवण्णना..... | १६४ |
| सोभनचेतसिकसम्पयोगनयवण्णना..... | १६५ |
| सङ्ग्रहनयवण्णना..... | १६६ |
| महग्गतचित्तसङ्ग्रहनयवण्णना..... | १६६ |
| कामावचरसोभनचित्तसङ्ग्रहनयवण्णना..... | १६७ |
| अकुसलचित्तसङ्ग्रहनयवण्णना..... | १६७ |
| अहेतुकचित्तसङ्ग्रहनयवण्णना..... | १६८ |
| ३. पकिण्णकपरिच्छेदवण्णना..... | १६८ |
| वेदनासङ्ग्रहवण्णना..... | १६९ |
| हेतुसङ्ग्रहवण्णना..... | १६९ |
| किच्चसङ्ग्रहवण्णना..... | १७० |
| द्वारसङ्ग्रहवण्णना..... | १७१ |
| आलम्बणसङ्ग्रहवण्णना..... | १७२ |
| वत्थुसङ्ग्रहवण्णना..... | १७४ |
| ४. वीथिपरिच्छेदवण्णना..... | १७५ |
| वीथिषक्कवण्णना..... | १७६ |
| वीथिभेदवण्णना..... | १७६ |
| पञ्चद्वारवीथिवण्णना..... | १७६ |
| मनोद्वारवीथि..... | १८० |
| परित्तजवनवारवण्णना..... | १८० |
| अप्पनाजवनवारवण्णना..... | १८० |
| तदारम्भणनियमवण्णना..... | १८२ |
| जवननियमवण्णना..... | १८४ |
| पुगलभेदवण्णना..... | १८५ |
| भूमिविभागवण्णना..... | १८६ |
| ५. वीथिमुत्तपरिच्छेदवण्णना..... | १८७ |
| भूमिचतुक्कवण्णना..... | १८७ |
| पटिसन्धिचतुक्कवण्णना..... | १८८ |
| कम्मचतुक्कवण्णना..... | १९० |
| चुतिपटिसन्धिकमवण्णना..... | १९८ |
| ६. रूपपरिच्छेदवण्णना..... | २०२ |
| रूपसमुद्देशवण्णना..... | २०२ |
| रूपविभागवण्णना..... | २०६ |
| रूपसमुद्धाननयवण्णना..... | २०७ |
| कलापयोजनावण्णना..... | २१० |
| रूपपवत्तिकमवण्णना..... | २१० |
| निब्बानभेदवण्णना..... | २१२ |

| | |
|---------------------------------|-----|
| ७. समुच्चयपरिच्छेदवण्णना..... | २१३ |
| अकुसलसङ्गहवण्णना..... | २१३ |
| मिस्सकसङ्गहवण्णना..... | २१४ |
| बोधिपक्खियसङ्गहवण्णना..... | २१७ |
| सब्बसङ्गहवण्णना..... | २१८ |
| ८. पच्चयपरिच्छेदवण्णना..... | २२० |
| पटिच्चसमुप्पादनयवण्णना..... | २२१ |
| पट्टाननयवण्णना..... | २२३ |
| पञ्जतिभेदवण्णना..... | २२८ |
| ९. कम्मट्टानपरिच्छेदवण्णना..... | २३० |
| समथकम्मट्टानं..... | २३० |
| चरितभेदवण्णना..... | २३० |
| भावनाभेदवण्णना..... | २३० |
| निमित्तभेदवण्णना..... | २३१ |
| सप्पायभेदवण्णना..... | २३१ |
| भावनाभेदवण्णना..... | २३२ |
| गोचरभेदवण्णना..... | २३२ |
| विपस्सनाकम्मट्टानं..... | २३५ |
| विसुद्धिभेदवण्णना..... | २३५ |
| विमोक्खभेदवण्णना..... | २३८ |
| पुगलभेदवण्णना..... | २३९ |
| समापत्तिभेदवण्णना..... | २३९ |
| उय्योजनवण्णना..... | २३९ |
| निगमनवण्णना..... | २४० |
| निगमनकथा..... | २४० |
| सन्दर्भ ग्रन्थ..... | २४१ |

भूमिका

‘अभिधम्मत्थसङ्ग्रह’ ग्रन्थ आचार्य अनुरुद्धद्वारा पालि भाषामा रचना गरिएको सानो सारयुक्त अत्यधिक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हो। समस्त बौद्ध देशमा अभिधर्मपिटक अध्ययन गर्नु अगाडि यो ग्रन्थ अनिवार्यरूपले अध्ययन गराइन्छ। विभिन्न प्रकारका विशेषता भएको हुनाले यो ग्रन्थलाई अभिधर्मपिटकको ‘कनिष्ठ अट्टकथा’ पनि भनिन्छ। त्यसैले यो ग्रन्थ अभिधर्मपिटकको प्रवेशिकाको रूपमा लिएको छ। अभिधर्मपिटकमा यताउति परेका तात्त्विक सारलाई निचोड गरी यो ग्रन्थमा सुस्पष्ट र सुसम्बद्धरूपले निर्देशन गरेका छन्। हिसाबको सूत्रहरू सन्धियो भने हिसाब गर्न सजिलो हुनेझैं यो अभिधम्मत्थसङ्ग्रह कण्ठष्ठ गरेर बुझ्यो भने अभिधर्मपिटक अध्ययन गर्न सुखकर हुन्छ। अतिरेक वा विशिष्ट भएको धर्म नै अभिधर्म हो। सूत्र भन्दा अतिरेक भएकोले यो अभिधर्म विशिष्टको हो। यसमा अभिधर्मपिटकको सार-तत्त्वलाई संक्षिप्तले वर्णन गरिएको छ। चित्त, चैतसिक, रूप र निर्वाण नै अभिधर्मार्थ हो। अविपरित-स्वभाव धर्मलाई परमार्थ भनिन्छ। जस्तै तोरीको बिउबाट तेल निस्कन्छन्, त्यस्तै नै प्रज्ञाप्यर्थबाट परमार्थ सार-रूप निस्कन्छन्। जस्तै-पुद्गल एक प्रज्ञाप्यर्थ हो। ज्ञानद्वारा पुद्गललाई विश्लेषण गरियो भने कलाप, मासु, रगतादि ३२ वटा अवयव मात्र बाँकी हुन्छन्। ती अवयव पनि प्रज्ञाप्यर्थ मात्र हुन्। ती अवयवलाई सूक्ष्मतम रूपले निरिक्षण गरियो भने अष्टकलाप मात्र बाँकी हुन्छन्, पुद्गल भन्ने हुँदैन। यहाँ कलाप-समूह परमार्थ भएतापनि ती तत्त्वहरू मिलेर बनेको हुनाले पुद्गल भन्ने भान हुन्छ। पुद्गलले आरम्भणलाई जानेतापनि, स्पर्श भएतापनि, अनुभव गरेतापनि, ती चित्त-स्पर्श-वेदना-आदि नाम-परमार्थ मात्र हो, कुनै व्यक्तिले गरेको होइन। यसरी पुद्गल भन्ने सत्त्वप्रज्ञप्तिद्वारा रूप र नाम परमार्थ मात्र बाँकी हुन्छ।

चित्त, चैतसिक, रूप र निर्वाण, यी चार प्रकारका परमार्थ धर्म समस्त अभिधर्मको वास्तविक सत्य (मुख्यबिन्दु, निचोड, ठोस) हो। यहाँ प्रज्ञप्तिलाई पनि ग्रहण गर्नुपर्छ। अभिधर्मपिटकमा पुगलपञ्जाति भन्ने एउटा ग्रन्थ पनि संगृहीत गरिएको छ। अभिधम्मत्थसङ्ग्रह ग्रन्थको रचयिता आचार्य अनुरुद्धले ग्रन्थारम्भमा ती चार प्रकारका परमार्थ धर्मलाई नै प्रतिज्ञा गर्नुभएको छ। वास्तवमा छ परिच्छेदमा नै उक्त परमार्थ धर्मको विषयवस्तु समाप्त भएतापनि सम्यक्-ज्ञानको लागि प्रज्ञप्ति पनि अत्यावश्यक भएको हुनाले अतिरिक्त तीन परिच्छेद प्रतिपादन गरेर नौ परिच्छेदमा समाप्त गरेका छन्। जसबाट प्रज्ञप्तिज्ञान र विषयना साधनाको लागि अत्यन्त उपकार हुन्छ।

ग्रन्थको संक्षिप्त विषयवस्तु

प्रथम परिच्छेद - आरम्भणं चिन्तेतीति चित्तं, तसर्थ विषयलाई जानेलाई नै चित्त भनिन्छ। यद्यपि चित्त एउटा मात्र भएपनि भूमि, जाति, सम्प्रयोग, वेदना र संस्कारादि भेदानुसार धेरै प्रकारका छन्। भूमिभेदानुसार चित्त कामावचर, रूपावचर, अरूपावचर र लोकोत्तर चित्त गरी चतुर्विध छन्। चित्त प्रायःगरी कामतृष्णामा आरम्भण गर्छ र कामभूमिमा मात्र हुने भएकाले कामावचर चित्त भनिन्छन्। कामावचर चित्तमा पनि अकुशल चित्त १२ वटा, अहेतुक चित्त १८ वटा, शोभन चित्त २४ वटा गरी ५४ वटा चित्त छन्। लोभ, दोष र मोहको कारणले चित्त अकुशल हुन्छ। जब चित्तमा लोभ, दोष, मोह, अलोभ, अदोष र अमोह हुँदैनन् तब चित्तलाई अहेतुक भनिन्छन्। चित्तमा कुशल हेतुहरू भएमा चित्त शोभन हुन्छ।

जातिभेदानुसार कामावचर चित्त ५४ वटालाई कुशल ८ वटा, अकुशल १२ वटा, विपाक २३ वटा र क्रिया ११ वटा गरी विभाजन गरिएका छन्।

सम्प्रयोगानुसार सम्प्रयुक्त २० वटा, विप्रयुक्त १६ वटा र सम्प्रयुक्त र विप्रयुक्त पनि नभएका १८ वटा चित्त छन्।

वेदनाभेदानुसार सुखसहगत १ वटा, दुःखसहगत १ वटा, सौमनस्यसहगत १८ वटा, दौर्मनस्यसहगत २ वटा र उपेक्षासहगत ३२ वटा छन्।

संस्कारभेदानुसार ससंस्कारिक १७ वटा, असंस्कारिक १७ वटा र ससंस्कारिक र असंस्कारिक पनि नभएका २० वटा छन्।

रूपावचर चित्त १५ वटा छन् - कुशल ५ वटा, विपाक ५ वटा र क्रिया ५ वटा हुन्। ध्यानाङ्गको अतिक्रमणानुसार ५ वटा ध्यानचित्त छन् - वितर्क, विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रता सहितको प्रथमध्यान चित्त एउटा^(५५), विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रता सहितको द्वितीयध्यान चित्त एउटा^(५६), प्रीति, सुख र एकाग्रता सहितको तृतीयध्यान चित्त एउटा^(५७), सुख र एकाग्रता सहितको चतुर्थध्यान चित्त एउटा^(५८), उपेक्षा र एकाग्रता सहितको पञ्चमध्यान चित्त एउटा^(५९)। यी पाँच प्रकारका चित्तलाई रूपावचर कुशल, विपाक र क्रिया चित्त भनिन्छन्। यो विभाजनलाई पञ्चकनय भनिन्छ। चतुष्कनयानुसार द्वितीयध्यानमा वितर्क र विचारलाई अतिक्रमण गरेर प्रीति, सुख र एकाग्रता ३ वटा ध्यानाङ्ग मात्र हुन्छ। त्यस्तै तृतीयध्यानमा सुख र एकाग्रता हुन्छ भने चतुर्थध्यानमा उपेक्षा र एकाग्रता मात्र हुन्छन्।

अरूपावचर चित्त कुशल, विपाक र क्रियाको भेदानुसार १२ वटा छन्। आरम्भण(आलम्बन)को भेदानुसार चार प्रकारका छन् - आकाशान्त्यायतन चित्त एउटा^(७०), विज्ञानन्त्यायतन चित्त एउटा^(७१), आकिञ्चन्त्यायतन चित्त एउटा^(७२), र नैवसंज्ञानासंज्ञायतन चित्त एउटा^(७३) गरी यी चार प्रकारका चित्तलाई अरूपावचर चित्त भनिन्छन्। रूपावचर र अरूपावचर २७ वटा चित्तलाई महग्गत चित्त भनिन्छ। ५४ वटा कामावचर र २७ वटा महग्गत चित्तलाई लौकिक चित्त भनिन्छ।

लोकोत्तर चित्त - लोकबाट (पञ्चस्कन्धबाट) उर्तीण भएका चित्तलाई लोकोत्तर वा अनुत्तर चित्त भनिन्छ। ती ८ वटा छन् - स्रोतापत्ति-मार्गचित्त^(८२), सकृदागामि-मार्गचित्त^(८३), अनागामि-मार्गचित्त^(८४), र अर्हत् मार्गचित्त^(८५) यी चार प्रकारका चित्त लोकोत्तर कुशल चित्त हो। स्रोतापत्ति-फलचित्त^(८६), सकृदागामि-फलचित्त^(८७), अनागामि-फलचित्त^(८८), र अर्हत्-फलचित्त^(८९) चार प्रकारका चित्त लोकोत्तर विपाक चित्त हो। यसरी सबै आठ लोकोत्तर कुशल र विपाक छन्। यसरी चार मार्गका भेदानुसार कुशलचित्त चार प्रकारका छन्, त्यस्तै नै ती फलको कारणले विपाक चित्त चार प्रकारका छन्। यी चित्त आर्य पुद्गलहरूका चित्त हुन्।

चित्त गणना संग्रह - सम्पूर्ण ८९ चित्तमा अकुशल १२ वटा, कुशल २१ वटा (कामावचर - ८, रूपावचर - ५, अरूपावचर - ४, र लोकोत्तर - ४), विपाक ३६ वटा (अहेतुक अकुशल विपाक चित्त ७ वटा, अहेतुक कुशल विपाक ८ वटा, सहेतुक कामावचर कुशल विपाक ८ वटा,

रूपावचर विपाक ५ वटा, अरूपावचर विपाक ४ वटा र लोकोत्तर विपाक ४ वटा) र क्रियाचित्त २० वटा (अहेतुक - ३, कामावचर - ८, रूपावचर - ५, अरूपावचर - ४) छन्। (यसरी विपाक ३६ वटा चित्त र क्रिया २० वटा चित्तलाई अव्याकृत चित्त भनिन्छ।

विस्तृतमा चित्त गणना - ध्यानाङ्गयोगको भेदानुसार लोकोत्तर चित्त एक-एकको पाँच-पाँच गरी लोकोत्तर-चित्त चालिस छन्। वितर्क, विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रता सहितको प्रथमध्यान स्रोतापत्ति-मार्गचित्त एउटा^(८२)। विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रता सहितको द्वितीयध्यान स्रोतापत्ति-मार्गचित्त एउटा^(८३)। प्रीति, सुख र एकाग्रता सहितको तृतीयध्यान स्रोतापत्ति-मार्गचित्त एउटा^(८४)। सुख र एकाग्रता सहितको चतुर्थध्यान स्रोतापत्ति-मार्गचित्त एउटा^(८५)। उपेक्षा र एकाग्रता सहितको पञ्चमध्यान स्रोतापत्ति-मार्गचित्त एउटा^(८६)। यी पाँच प्रकारका चित्तलाई स्रोतापत्ति-मार्गचित्त भनिन्छ। त्यस्तै नै सकृदागामि-मार्गचित्त, अनागामि-मार्गचित्त र अर्हत्-मार्गचित्त गरी बीस^{(८७)-(९०)} मार्गचित्त छन्। त्यस्तै नै फल चित्तहरू गरी चालिस^{(९०२)-(९२९)} लोकोत्तर-चित्त छन्।

अकुशल १२ वटा, कुशल ३७ वटा, विपाक ५२ वटा र क्रिया २० वटा गरी सबै चित्त १२१ वटा छन्।

द्वितीय परिच्छेद - चित्त सँगसँगै हुने धर्मलाई चैतसिक भनिन्छ। चित्त र चैतसिकको उत्पत्ति र निरोध सँगसँगै हुन्छ, आरम्भण र आश्रय (आधार) पनि समान नै हुन्छ। यीमध्ये चित्त प्रधान हुन्छ र चैतसिक प्रधान (मुख्य) हुँदैनन्। त्यसकारण ५२ वटा चैतसिकलाई १३ वटा अन्यसमान, १४ वटा अकुशल र २५ वटा शोभन अनुसार वर्गीकरण गरिएका छन्। १३ वटा अन्यसमान चैतसिक कुशल (शोभन) चित्तमा मिल्छ भने अकुशल (अशोभन) चित्तमा पनि मिल्ने भएकाले अन्यसमान भनिन्छ। स्पर्श, वेदनादि ७ वटा चैतसिक सबै चित्तमा हुने भएकाले सर्वचित्तसाधारण चैतसिक भनिन्छ। वितर्क, विचारादि ६ वटा चैतसिक मात्र कुशल चित्तमा र अकुशल चित्तमा पनि यथायोग्यानुसार मिल्ने भएकाले प्रकीर्णक चैतसिक भनिन्छ। १४ वटा अकुशल चैतसिक अकुशल (अशोभन) चित्तमा यथायोग्यानुसार मिल्छन्। २५ वटा चैतसिक कुशल (शोभन) चित्तमा यथायोग्यानुसार मिल्छन् र कहिलै पनि अकुशल र अहेतुक चित्तसँग मिल्दैनन्। ५२ वटा चैतसिकमध्ये ईर्ष्या, मात्सर्य, कौकृत्य, विरति, करुणा, मुदिता, मान, स्त्यान र भिद्र कहिलेकाहीँ अलग-अलग भई उत्पन्न हुने भएकाले अनियतयोगी भनी भन्छन्। शेष चैतसिक नियतयोगी (सधैँ नै मिल्नेका) हुन्छन्। चैतसिकसित मिल्ने चित्तहरू सम्प्रयोगनयमा देखाइएका छन् र चित्तसित मिल्ने चैतसिकहरू संग्रहनयमा उल्लेख गरिएको छ।

तृतीय परिच्छेद - चित्त चैतसिक धर्म स्वभावनुसार ५३ वटा योग्यानुसार मिल्छ। अब ती ५३ वटा स्वभावधर्मलाई योग्यानुसार वेदना, हेतु, कृत्य, द्वार, आरम्भण र वस्तुभेदलाई चित्तोत्पादको गणनानुसार यो प्रकीर्णक परिच्छेदमा दर्शाइएको छ। वेदना संग्रहमा सुख, दुःख, उपेक्षा, सौमनस्य र दौर्मनस्यको भेदानुसार ५ प्रकारका छन्। सुख वेदना १ वटा चित्तमा, दुःख वेदना १ वटा चित्तमा, दौर्मनस्य वेदना २ वटा चित्तमा, सौमनस्य वेदना ६२ वटा चित्तमा, उपेक्षा वेदना ५५ वटा चित्तमा छन्।

हेतु संग्रहमा लोभ, द्वेष र मोह ३ वटालाई अकुशल हेतु भनिन्छ। अलोभ, अद्वेष र अमोह ३ वटालाई कुशल अव्याकृत हेतु भनिन्छ। अहेतुक चित्त १८ वटा, एक अहेतुक चित्त २ वटा

(मोहमूल चित्त), द्विहेतुक चित्त २२ वटा (अकुशल १० वटा र ज्ञानविप्रयुक्त कामावचर शोभन १२ वटा) र त्रिहेतुक चित्त ४७ वटा (कामावचर शोभन चित्त १२ वटा र महग्गत लोकोत्तर ३५ वटा) छन्।

कृत्य संग्रहमा प्रतिसन्धि, भवङ्ग, आवर्जन, दर्शन, श्रवन, प्रायण, आस्वादन, स्पर्शन, सम्पटिच्छन, सन्तीरण, वोद्वपन, जवन, तदालम्बन र च्युति अनुसार १४ प्रकारका छन्। प्रतिसन्धि, भवङ्ग, आवर्जन र पञ्चविज्ञान आदि (सम्पटिच्छन, सन्तीरण, वोद्वपन, जवन, तदालम्बन र च्युति) स्थानको भेदानुसार १० प्रकारका छन्।

द्वार संग्रहमा चक्षुद्वार, श्रोत्रद्वार, घ्राणद्वार, जिह्वाद्वार, कायद्वार र मनोद्वार गरी ६ प्रकारका छन्। चक्षु प्रसाद नै चक्षुद्वार हो। भवङ्गचित्तलाई मनोद्वार भनिन्छ। 'एकद्वारिक' चित्त, 'पञ्चद्वारिक' चित्त, 'षड्द्वारिक' चित्त, 'षड्द्वारिक' चित्त कहिलेकाहीं 'द्वारविमुक्त' हुन्छन्।

आरम्भण संग्रहमा रूपालम्बन, शब्दालम्बन, गन्धालम्बन, रसालम्बन, स्प्रव्यालम्बन र धर्मालम्बन गरी ६ प्रकारका छन्। रूप नै रूपालम्बन हो। धर्मालम्बन मात्र प्रसाद, सूक्ष्मरूप, चित्त, चैतसिक, निर्वाण र प्रज्ञप्ति ६ वटालाई धर्मालम्बन भनिन्छ। २५ वटा चित्त कामारम्भणमा, ६ वटा चित्त महग्गतारम्भणमा, २१ वटा चित्त प्रज्ञप्ति-वस्तु संग्रहमा चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा, काय र हृदयवस्तु गरी ६ प्रकारका छन्। ती सबै वस्तु कामलोकमा छन्। रूपलोकमा घ्राण, जिह्वा, काय हुँदैनन्। अरूपलोकमा सबै वस्तुहरू हुँदैनन्। मनोधातु (पञ्चद्वारवर्जन र सम्पटिच्छन) र मनोविज्ञानधातु हृदयवस्तुको आश्रय लिएर प्रवृत्त हुन्छन्। यसरी ४३ वटा चित्त आश्रय लिएर, ४२ वटा चित्त आश्रय लिएर र नलिक नै उत्पन्न हुन्छ। आरूप्यविपाक मात्र आश्रय नलिक नै उत्पन्न हुन्छ।

यी ६ प्रकारका संग्रहको ज्ञानले मात्र चित्त-चैतसिक धर्मलाई राम्रोसित बुझ्न सक्छौं। यसको ज्ञान अभाव भएमा चित्त-चैतसिक धर्मका ज्ञान अपूर्णझैं हुन्छ। कुन चित्तमा कस्तो वेदना छ, हेतु छ, त्यसको काम (कृत्य) के हो, कुन द्वारले उत्पन्न हुन्छ, कुन विषयमा आरम्भण गरेका छन् र केको आधार लिएका छन् आदि जान्न यो परिच्छेदको ज्ञान अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हुन्छ। यो परिच्छेदको ज्ञान बिना वीथिको ज्ञान बुझ्न कठिन हुन्छ। त्यसैले यो परिच्छेदको वीथिको अगाडि परेको हो।

चतुर्थ परिच्छेद - यो परिच्छेदमा 'वीथि' मार्गको अर्थमा लिएको छ। जस्तै संसारमा प्राणीहरू हिँड्नुले गर्ने ठूलो, सानो, सिधा र बाँगिएका बाटा छन्। त्यस्तै नै चित्तका गति पनि अनेक प्रकारका छन्। मार्गझैं भएकाले वीथि भनी भनिएको हो। यो वीथि अभिधर्म अनुसार अत्यधिक महत्त्वपूर्णको छ। यसमा चित्तका गतिहरू अत्यन्त सूक्ष्मरूपले विश्लेषण गरिएका छन्। त्यसकारणले थेरवादलाई विभज्यवाद भनी भनिएको छ।

अभिधर्ममा चित्त सन्ततिलाई चित्तवीथि र रूपधर्मका सन्ततिलाई रूपवीथि भनिन्छ। विषयना कर्मस्थान आरम्भ गर्ने अभिलाषी साधकलाई अनित्य, दुःख र अनात्माका विषयमा यथाभूत ज्ञान उपलब्ध गर्न चित्तवीथिका ज्ञान परमावश्यक हुन्छ। चित्तवीथि नै बुद्धधर्मको हृदय हो। 'वीथि' पञ्चद्वारवीथि र मनोद्वारवीथि भनी दुई प्रकारका छन्। पञ्चद्वारवीथि पनि आरम्भणानुसार

धेरै प्रकारका छन्। पुनश्च स्वप्नवीधि, मरणासन्नवीधि, ध्यानवीधि, अभिज्ञावीधि, निरोधसमापत्तिवीधि, मार्गवीधि, फलवीधि आदि धेरै प्रकारका छन्।

वीधिमा कति चित्त र कति जवन छन् भनी जवननियममा दर्शाइएका छन् भने कुन जवनको अनन्तरमा कुन तदालम्बन हुन्छन् भनी तदालम्बननियममा दर्शाइएका छन्। अन्तमा कति प्रकारका पुद्गलहरूसित कुन-कुन वीधिचित्त उत्पन्न हुन्छन् भनी पुद्गलभेदमा स्पष्ट पारिएको छ भने भूमिभेदमा कुन-कुन वीधि छन् र त्यसमा कति बटा चित्त उत्पन्न हुन्छन् भनी दर्शाइएका छन्। यी वीधिचित्तहरू समुद्रको तरङ्गझैं मनुष्यहरूका चित्त जाग्रत, सुषुप्ति, मूर्च्छा आदि अवस्थामा निरन्तर उत्पन्न भइरहन्छन्। त्यसकारण मनुष्य जीवन नै चित्तवीधि हो। जीवित-मनुष्य वीधिचित्तका समूह हो। मनुष्यहरू निर्वाण प्राप्त नभएसम्म यी चित्तवीधिहरू त्रैभूमिक संसारमा उत्पन्न भइरहन्छन्।

पञ्चम परिच्छेद - प्रतिसन्धि, भवङ्ग र च्युति यी वीधिबाह्य चित्त हुन्। यहाँ चित्तको उत्पादक्रम देखाइएको छ। चार भूमि, चार प्रकारका प्रतिसन्धि, चार कर्म र चार प्रकारका मरणुत्पत्ति भनी वीधिमुक्त संग्रहमा चार समूह दर्शाएका छन्। नर्क, तिर्यक, प्रेत र असुरकाय भनी अपायभूमि चार प्रकारका, कामसुगतिभूमि सात प्रकारका, रूपावचरभूमि सोड्ठ प्रकारका र अरूपावचरभूमि चार प्रकारका छन्।

प्रतिसन्धिचतुष्कमा पुद्गलको कुन चित्तले चार भूमिमा प्रतिसन्धि ग्रहण गर्छ भनी प्रदर्शित गरिएको छ। कर्मचतुष्कमा कृत्यचतुष्क, पादानचतुष्क, पर्यायचतुष्क, पाककालचतुष्क र पाकस्थानचतुष्क प्रतिपादित गरिएका छन्। यसरी कर्मचतुष्कमा १६ प्रकारका कर्मको राम्ररी विवेचना गरिएका छन्। मरणोत्पत्तिचतुष्कमा मात्र आयु क्षय भएर, कर्म क्षय भएर, आयु र कर्म क्षय भएर र उपच्छेदक हेतुद्वारा मरण हुने विषय देखाइएको छ। मृत्यु अवस्थामा सत्त्वको वीधिचित्तको अन्तमा वा भवङ्ग क्षय हुँदा च्युति अनुसार वर्तमान भवको अवसान भइरहेका च्युतिचित्त उत्पन्न भएर निरोध हुनेछ। यहाँ मरणासन्नवीधिमा मन्दगतिले उत्पन्न हुने भएकोले पाँच पटकसम्म जवनचित्त उत्पन्न हुन्छ। यदि वर्तमान आरम्भण प्रकट रूपमा देखा पर्दा नै मरण भयो भने त्यसबेला प्रतिसन्धिको आरम्भणलाई ६ द्वारले ग्रहण गरिराखेका वर्तमान र अतीत आरम्भण भइरहेका कर्मनिमित्त र गतिनिमित्त उपलब्ध हुन्छन्, पछि अन्य भवमा जन्म हुन्छन्।

षष्ठ परिच्छेद - रूप परिच्छेदमा रूपसमुद्देश, रूपविभाग, रूपसमुत्थान, कलाप योजना, रूपप्रवृत्तिक्रम र निर्वाणभेदको विषयलाई लिएर दर्शाइएका छन्। रूपपरिच्छेदमा २८ वटा रूपका नामावली मात्र देखाएर रूपविभागमा सबै रूप अहेतुक, सप्रत्यय, सास्रव, संस्कृत, लौकिक, कामावचर, अनारम्भण र अप्रहातव्य छन् भनी एक प्रकारको रूप भएतापनि आध्यात्मिक र बाहिरिकादि अनुसार अनेक प्रकारले विभाजन गरेर प्रतिपादन गरिएका छन्। रूपसमुत्थानमा २८ प्रकारका रूपका कारण कर्म, चित्त, ऋतु र आहार हुन्। कर्मबाट उत्पन्न हुने रूपलाई कर्मज रूप, चित्तबाट उत्पन्न हुने रूपलाई चित्तज रूप, ऋतुबाट उत्पन्न हुने रूपलाई ऋतुज रूप र आहारबाट उत्पन्न हुने रूपलाई आहारज रूप भनिन्छन्। अवयवका समूहलाई कलाप भनिन्छ। रूपधर्मका अन्तिम अवयवलाई कलाप भनिन्छ। एउटा कलापमा कमसेकम आठ अविनिर्भोग (छुट्याउन नसकिने) रूप अवश्य नै हुन्छ। कर्मसमुत्थान कलाप ९ वटा, चित्तसमुत्थान कलाप ६ वटा, ऋतुसमुत्थान कलाप ४ वटा र आहारसमुत्थान कलाप २ वटा गरी २१ प्रकारका कलाप छन्।

आकाशधातु र ४ वटा लक्षणरूप गरी यी ५ वटा रूपधर्मलाई कलापमा गणना गरिएका छैनन्। किनभने यी कलापका परिच्छेद र लक्षण मात्र हुन्छन्। कलापका अङ्ग हुँदैनन्। रूपको प्रवृत्तिक्रममा पुद्गल र भूमि अनुसार रूपधर्मको उत्पाद र निरोधक्रम देखाइएका छन्।

परिच्छेदको अन्तमा संक्षिप्तरूपले निर्वाणको विषयमा बताइएको छ। चार मार्ग ज्ञानले साक्षात्कार गर्नुपर्ने निर्वाणलाई 'वान' भन्ने तृष्णाबाट निस्किएर जाने भएकोले निर्वाण भनी भनिन्छ। निर्वाण स्वभाव अनुसार एक प्रकारको भएतापनि कारण पर्याय अनुसार सोपधिशेष निर्वाणधातु र अनुपधिशेष निर्वाणधातु भनी दुई प्रकारका छन्। त्यस्तै नै आकारको भेदानुसार शून्यता निर्वाण, अनिमित्त निर्वाण र अप्रणिहित निर्वाण भनी तीन प्रकारका छन्। यसरी ६ वटा परिच्छेदमा आचार्य अनुरुद्धले चित्त, चैतसिक, रूप र निर्वाण चार प्रकारले परमार्थ धर्मलाई प्रकाश पार्नुभएको छ।

सप्तम परिच्छेद - यो परिच्छेदमा चित्त १ वटा, चैतसिक ५२ वटा, निष्पन्नरूप १८ वटा र निर्वाण १ वटा गरी ७२ वटा धर्मका विभिन्न दृष्टिले अकुशलसंग्रह, मिश्रकसंग्रह, बोधिपक्षीयसंग्रह र सर्वसंग्रह गरी चार प्रकारका संग्रह देखाइएको छ। अकुशलसंग्रहमा स्वरूपानुसार आम्रव, ओष, योग, र ग्रन्थलाई तीन प्रकारले, उपादानलाई दुई प्रकारले, नीवरणलाई आठ प्रकारले, अनुशयलाई छ प्रकारले, संयोजनलाई नौ प्रकारले र क्लेशलाई दश प्रकारले गरी सबै नौ प्रकारका पाप (अकुशल) संग्रह छन्। मिश्रकसंग्रहमा कुशल, अकुशल र अव्याकृत धर्मको संग्रह गरिएको छ। बोधिपक्षीयसंग्रहमा चार आर्यसत्यलाई जान्ने मार्गज्ञान र फलज्ञान प्राप्त गर्न चाहिने धर्महरू देखाइएका छन्। बोधिपक्षीयधर्म जम्मा ३७ वटा छन्। सर्वसंग्रहमा चित्त, चैतसिक, रूप र निर्वाण गरी चार परमार्थ धर्मका संगृहीत गरिएका संग्रह हुन्। सर्वसंग्रहमा पाँच स्कन्ध, पाँच उपादानस्कन्ध, बाह्र आयतन, अठार धातु र चार आर्यसत्यलाई लिएर संगृहीत गरिएको छ।

अष्टम परिच्छेद - यो परिच्छेदमा प्रतीत्यसमुत्पाद र पट्टान(प्रस्थान)का अलग्ग-अलग्ग वर्णन गरिएका छन्। प्रतीत्यसमुत्पादनयमा तीन काल, बाह्र अङ्ग, बीस आकार, तीन सन्धि, चार संक्षेप (भाग, अंश), तीन वर्त र दुई मूललाई विभाजन गरेर प्रतिपादन गरिएको छ। पट्टान शब्दमा प (प्र) उपसर्ग प्रकारको अर्थमा र ठान (स्थान) शब्द कारणको अर्थमा प्रयुक्त भएका छन्। यहाँ प्रत्ययशक्ति वा प्रत्ययशक्तिमान धर्मलाई कारण भनिएको हो। नामधर्मले नामधर्मलाई छ प्रकारका प्रत्ययशक्तिद्वारा, नामधर्मले नामधर्म र रूपधर्मलाई पाँच प्रकारका प्रत्ययशक्तिद्वारा, नामधर्मले रूपधर्मलाई एक प्रकारका प्रत्ययशक्तिद्वारा, रूपधर्मले नामधर्मलाई एक प्रकारका प्रत्ययशक्तिद्वारा, प्रज्ञप्ति, नाम र रूपधर्मले नामधर्मलाई दुई प्रकारका प्रत्ययशक्तिद्वारा, नाम र रूपधर्म दुबैले नाम र रूपधर्म दुबैलाई नौ प्रकारका प्रत्ययशक्तिद्वारा उपकार गरिन्छ। यसरी प्रत्ययहरू छ प्रकारका छन्। यसरी २४ वटा प्रत्ययका निरूपण गरिएका छन्। परिच्छेदको अन्तमा विद्यमान प्रज्ञप्ति, अविद्यमान प्रज्ञप्ति आदि ६ प्रकारका प्रज्ञप्तिलाई विवेचना गरिएका छन्। अभिधर्मपिटकमा प्रस्थानको उच्च स्थान छ। यो गम्भीर र दुरवबोधका विषय हुन्।

नवम परिच्छेद - यो परिच्छेदमा नामरूप धर्मका यथार्थस्वभाव जान्न अभिलाषी पुद्गलहरूलाई कर्मस्थानविधि निर्देश गरिएको छ। शमथकर्मस्थान र विपश्यनाकर्मस्थान भनी दुई प्रकारका छन्। शमथकर्मस्थानमा कसिण दश, अशुभ दश, अनुस्मृति दश, अप्रमाण्य चार, संज्ञा एक, व्यवस्थान एक र आरुय चार गरी सात प्रकारका छन्। विपश्यनाकर्मस्थानमा शीलविशुद्धि,

चित्तविशुद्धि, दृष्टिविशुद्धि, कांक्षावितरणविशुद्धि, मार्गमार्गज्ञानदर्शनविशुद्धि, प्रतिपदाज्ञानदर्शनविशुद्धि र ज्ञानदर्शनविशुद्धि गरी सात प्रकारका र सम्मसनज्ञान, उदयव्ययज्ञान, भङ्गज्ञान, भयज्ञान, आदीनवज्ञान, निर्विदाज्ञान, मुञ्चितुकाम्यताज्ञान, प्रतिसांख्यज्ञान र संस्काररूपेक्षाज्ञान, अनुलोमज्ञान गरी बाह्र विषयनाज्ञानलाई पनि निर्देश गरिएका छन्। स्रोतापत्ति मार्गलाई अभ्यास वृद्धि गरेर सत्कायदृष्टि र विचिकित्सालाई प्रहाण हुनाले अपायगमन प्रहाण भएका सात पटकसम्म जन्म लिने पुद्गललाई 'स्रोतापन्न' भनिन्छ। सकृदागामि मार्गलाई अभ्यास वृद्धि गरी राग, द्वेष र मोहलाई पातलो पारेर एक पटक मात्र यो मनुष्यलोकमा आउने काणले 'सकृदागामी' भनिन्छ। अनागामि मार्गलाई अभ्यास वृद्धि गरी कामराग र व्यापादलाई पूर्णरूपले प्रहाण गरेर यस कामभूमिमा नआउने कारणले 'अनागामी' भनिन्छ। अरहन्त मार्गलाई अभ्यास वृद्धि गरेर सम्पूर्ण क्लेशलाई प्रहाण गरेकाले क्षीणास्रव अग्रदक्षिण्य 'अरहन्त' भनिन्छ। संक्षिप्तमा यो ग्रन्थको विषयवस्तु हो।

ग्रन्थको विषयवस्तु समाप्त।

यो महत्त्वपूर्ण 'अभिधम्मत्थसङ्ग्रह' ग्रन्थ श्रद्धेय पूज्यपाद गुरुवर संघमहानायक प्रज्ञानन्द महास्थविर भन्तेले सर्वप्रथम म श्रामणेर छँदा पढाउनुभयो। उहाँ भन्तेका सत्प्रयासले गर्दा चीनिया भाषामा अध्यापन गराउने मौका मलाई प्राप्त भयो, साथै चीनिया भाषामा समेत नौ परिच्छेका तालिका तयार गरी प्रकाशन गर्ने। जसबाट चीनिया विद्याथीहरूलाई अभिधर्म अध्ययन गर्न धेरै मद्दत मिलेको छ। यो सबै उहाँ भन्तेका सत्परामर्श र प्रोत्साहनले हो। पुग्गलपञ्चति ग्रन्थको प्रकाशन पछि धातुकथाको अनुवाद र पट्टानको अनुवाद पनि सिद्ध्याएर यो ग्रन्थ नेपाली भाषामा तालिका समेत तयार गरी अनुवाद गरेका छौं। यो ग्रन्थ अनुवाद गर्न श्रद्धेय नारद महास्थविरले अंग्रेजीमा A manual of Abhidhamma, भिक्षु बोधिले Comprehensive Manual of Abhidhamma, डा. नन्दमालाभिवंसले Fundamental Abhidhamma, श्रद्धेय भदन्त रेवतधम्मले हिन्दी भाषामा अनुवाद गर्नुभएको र श्रद्धेय ज्ञानपूर्णिक महास्थविरले नेपाल भाषामा अनुवाद गर्नुभएको किताबका आधारमा तालिका सहित प्रकाशन गरेका छौं। पालिभाषा मात्र छट्टसङ्घायनको CSCD बाट र आफूले नै सम्पादन गरेको 'अभिधम्मत्थसङ्ग्रह र टिका' ग्रन्थको आधार लिइएको छ। यो किताब समयमा छापिदिनुभएकोले आइडियल प्रिन्टिङ्ग प्रेसलाई धन्यवाद छ।

यस ग्रन्थद्वारा यथार्थ धर्मलाई जानेर शुद्ध, स्वच्छ र निर्मलको धर्ममा अग्रसर भई बुद्धशासनमा रहेर जीवन सार्थक गर्न सफल होस्।

ने.सं. १९३६ कौलाखः चतुर्थी
वि.सं. २०७३ असोज १९ गते
बौद्ध जन विहार
सुनाकोठी, ललितपुर।

- अनुवादक

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स ।
उहाँ भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्धलाई नमस्कार छ ।

अभिधम्मत्थसङ्ग्रहो (अभिधर्मार्थसंग्रह)

गन्थारम्भकथा
ग्रन्थारम्भकथा

१. सम्मासम्बुद्धमतुलं ससद्धम्मगणुत्तमं ।
अभिवादिय भासिस्सं, अभिधम्मत्थसङ्ग्रहं ॥

१. सम्यक्सम्बुद्ध अतुलनीयलाई^१, सद्धर्मसहित उत्तमगणले युक्त हुनुभएकालाई^२ ।
अभिवादन^३ गरी भन्नेछु अभिधर्मार्थसंग्रहलाई^४ ॥

चतुपरमत्थधम्मो
चार परमार्थधर्म

२. तत्थ वृत्ताभिधम्मत्था, चतुधा परमत्थतो ।
चित्तं चेतसिकं रूपं, निब्बानमिति सब्बथा ॥
२. त्यहाँ भनिएको अभिधर्मार्थ, चतुर्विधका परमार्थ^५ ।

Dhamma.Digital

^१ सम्यक्सम्बुद्ध अतुलनीयलाई भन्ने सम्मा + सं + बुद्धं + अतुलं । सम्मा = अविपरीत, सं = स्वयं, आफै, बुद्ध = जसले अबबोध गर्नुभयो, अतुलं = अतुलनीय । जसले अविपरीत अर्थात् यथार्थ (परमार्थ, मूलस्वभाव) ज्ञानलाई स्वयं अबबोध गर्नुभयो । उहाँ कोहीसित तुलना गर्न अयोग्य छन् अर्थात् भगवान् बुद्धको शील, समाधि र प्रज्ञासित कोही पनि समान भएका छैनन् ।

^२ सद्धर्मसहित उत्तमगणले युक्त हुनुभएकालाई भन्ने सन्तो धम्मो सद्धम्मो, सत् (परमार्थ) धर्म नै सद्धर्म हो । सद्धर्म परिकल्पित नभएर परमार्थरूपले विद्यमान भएको चार आर्य सत्य प्रतीत्यसमुत्पादादि हो । 'उत्तमो गणो गणुत्तमो' आर्य सङ्घलाई गुणोत्तम भनिन्छ । मार्ग र फलले युक्त भएका पुद्गलहरूलाई आर्य सङ्घ भनिन्छ । 'स' भनेको सह (सहित, तैगै) हो अर्थात् सद्धर्म तथा उत्तमगण (आर्यसङ्घ) हुनुभएका सम्यक्सम्बुद्धलाई भनिएको हो ।

^३ अभिवादन भन्ने विशेषरूपले अभिवादन गर्ने वा प्रणाम गर्ने हो । यहाँ विशेषरूपले भनिएको श्रद्धा, प्रज्ञा, वीर्य, चेतनापूर्वक बन्दना गरिएकोलाई भनिन्छ । प्रणाम तीन प्रकारका छन् - कायप्रणाम, वाक्प्रणाम र मनप्रणाम । ती तीनमध्ये वाक्प्रणाम महान् फलदायी हुन्छ ।

^४ अभिधर्मार्थसंग्रहलाई भन्नाले अभि + धर्म + अर्थ हो । सुत्तपिटकलाई नाथेको अतिरेक वा विशिष्ट धर्मलाई अभिधर्म भनिन्छ । अभिधर्मपिटकमा बताइएको सार अर्थलाई अभिधर्मार्थ भनिन्छ । अभिधर्मार्थ भनिएको चित्त, चैतसिक, रूप र निर्वाण हो । अभिधर्मपिटकमा धम्मसङ्गणि, विभङ्ग, धातुकथा, पुग्गलपञ्जति, कथावत्तु, यमक, पद्दान छन् । यी सात ग्रन्थको सारतत्त्वलाई संक्षिप्त रूपले संग्रह गरिएकोलाई अभिधर्मार्थसंग्रह भनिन्छ ।

^५ परमार्थ भनेको अविपरीत स्वभाव धर्म हो । जस्तै - तोरीबाट तेल निस्कन्छ, त्यसरी नै प्रज्ञाप्यर्षबाट परमार्थ साररूप निस्कन्छ । जस्तै - पुद्गल भन्ने एउटा प्रज्ञाप्यर्ष हो । त्यसमा ज्ञानले हेरियो भने कपाल, रौं,

चित्त^१ चैतसिक^२ रूप^३, र निर्वाण^४ गरी सबै।।

चार प्रकारका परमार्थ तालिका नं. १

| चित्त | चैतसिक | रूप | निर्वाण |
|------------------------|---------------|-----------|---------|
| ५४+१५+१२+८/२० = ८९/१२१ | १२+१४+२५ = ५२ | ४+२४ = २८ | १ |

१. चित्तपरिच्छेदो

१. चित्त परिच्छेद

भूमिभेदचित्तं

भूमिभेद चित्त

३. तथ चित्तं ताव चतुब्बिधं होति कामावचरं रूपावचरं अरूपावचरं लोकुत्तरञ्चेति।

३. त्यहाँ^{१०} चित्त पहिला चतुर्विधका छन् - 'कामावचर'^{११}, रूपावचर^{१२},

मासु, रगत, उद्दी आदि बत्तीस प्रकारका अवयवहरू मात्र बाँकी रहन्छ। ती अवयवहरूलाई सुक्ष्मरूपले निरीक्षण गरियो भने खाली अष्टकलाप मात्र बाँकी रहन्छ। पुद्गल भन्ने उपलब्ध हुँदैन। अन्तमा नाम र रूप मात्र रहन्छ। यसरी उत्तम ज्ञानको गोचर (आलम्बन) नै परमार्थ हो।

^१चित्त भनेको 'चिन्तेतीति चित्तं, आरम्भणं चिन्तेतीति चित्तं, विजानातीति अत्थो' - जसले चिन्तन गर्छ, त्यो नै चित्त हो; आलम्बनलाई जान्ने मात्र अथवा थाहा पाउने मात्रलाई चित्त भनिन्छ। आलम्बन (केही वस्तु वा विषय) लाई संज्ञा, विज्ञान र प्रज्ञाद्वारा जान्न सकिन्छ वा थाहा हुन्छ। जस्तै - हजारको नोटलाई बच्चाले देख्यो भने त्यसको मूल्य अर्कै हुन्छ भने साधारण मान्छेले देख्यो भने त्यो प्रयोगमा ल्याउँछ र व्यापारीले देख्यो भने अर्कै भाव हुन्छ। यहाँ बच्चा संज्ञा, साधारण मान्छे विज्ञान र व्यापारी प्रज्ञाको सङ्केत हो।

^२चैतसिक भन्ने 'चेतसि भवं चेतसिकं' - चित्तमा उत्पन्न भइरहने स्वभाव धर्म नै चैतसिक हो। ती स्वभाव धर्महरू ५२ वटा छन्।

^३रूप भन्ने 'सीतुण्हादिविरोधिपच्चयोहि रुप्यतीति रूपं' - शीत, उष्ण आदि विरोधी प्रत्यय (कारण) ले परिवर्तन हुँदै जानेलाई रूप भनिन्छ। चिसो भएमा र तातो भएमा मानिसका रूपका आकार फरक हुन्छन्। एउटै मानिस भएतापनि भोकाएको बेला, प्रसन्न भएको बेला, रोगी भएको बेला उसको अनुहार, शरीरको रूप आकार फरक भएको देखिन्छ।

^४निर्वाण भन्ने 'वानतो निक्खन्तं ति निब्बानं' - वान भन्ने तृष्णाबाट बाहिरिएकोलाई निर्वाण भनिन्छ अथवा आसक्त रहित भएको अवस्था हो। निर्वाणको पर्यायवाची शब्दहरू जस्तै - मोक्ष, निरोध, दीप, तृष्णाक्षय, परम, त्राण, लेण, अरूप, सत्य, अनालय आदि हुन्।

^{१०}अभिधर्म पिटकमा

^{११}कामावचर भन्ने 'कामे अवचरतीति कामावचरं' - प्रायःगरी कामभूमिमा उत्पन्न हुने चित्तहरूलाई कामावचर चित्त भनिन्छ। कामावचर भूमि जम्मा ११ वटा छन् - नर्क^१, तिर्यक^२, प्रेत^३, असुरकाय^४, मनुष्य^५, चातुर्माहारानिका^६, त्रयस्त्रिंश^(७), यामा^(८), तुषित^९, निर्माणरति^{१०}, परनिर्मित वशवती^{११}। यहाँ प्रायःगरी भनिएको अन्य भूमिमा पनि उत्पन्न हुने सम्भव छ।

^{१२}रूपावचर भन्ने 'रूपे अवचतीति रूपावचरं' - प्रायःगरी रूपभूमिमा उत्पन्न हुने चित्तहरूलाई रूपावचर चित्त भनिन्छन्। रूपावचर भूमि जम्मा १६ वटा छन् - ब्रह्मपरिषय^१, ब्रह्मपुरोहित^२, महाब्रह्मा^३, परित्राणा^४, अप्रमाणाभा^५, आभाश्वर^६, परित्रशुभा^७, अप्रमाणशुभा^८, शुभकृष्णा^९, वृहत्फल^{१०}, अतंजसत्त्व^{११}, अविहा^{१२}, अत्रपा^{१३}, सुदर्शा^{१४}, सुदर्शा^{१५}, अकनिष्ठ^{१६}।

अरूपावचर^{१३} र लोकोत्तर^{१४} ।’

अकुसलचित्तं अकुशल चित्त

४. तत्थ कतमं कामावचरं? सोमनस्ससहगतं दिट्ठिगतसम्पयुत्तं
असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकं, सोमनस्ससहगतं दिट्ठिगतविप्पयुत्तं
असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकं उपेक्खासहगतं दिट्ठिगतसम्पयुत्तं
असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकं, उपेक्खासहगतं दिट्ठिगतविप्पयुत्तं
असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकन्ति इमानि अट्ठपि लोभसहगतचित्तानि नाम ।

४. त्यहाँ^{१५} कुन कामावचर हो? सौमनस्य-सहगत^{१६} दृष्टिगत-सम्प्रयुक्त^{१७}
असंस्कारिक^{१८} एउटा^(१), ससंस्कारिक^{१९} एउटा^(२), सौमनस्य-सहगत दृष्टिगत-
विप्रयुक्त^{२०} असंस्कारिक एउटा^(३), ससंस्कारिक एउटा^(४), उपेक्षा-सहगत^{२१}
दृष्टिगत-सम्प्रयुक्त असंस्कारिक एउटा^(५), ससंस्कारिक एउटा^(६), उपेक्षा-सहगत
दृष्टिगत-विप्रयुक्त असंस्कारिक एउटा^(७), ससंस्कारिक एउटा^(८) गरी यी आठ

^{१३}अरूपावचर भन्ने ‘अरूपे अवचरतीति अरूपावचरं’ - प्रायःगरी अरूपावचरभूमिमा उत्पन्न हुने चित्तहरूलाई अरूपावचर चित्त भनिन्छन् । अरूपावचरभूमि जम्मा ४ वटा छन् - आकाशानन्त्यायतन^{२८}, विज्ञानन्त्यायतन^{२९}, आकिञ्चन्यायतन^{३०}, नैवसंज्ञानासंज्ञायतन^{३१} ।

^{१४}लोकोत्तर भन्ने ‘लुञ्जति पलुञ्जतीति लोको, लोकोत्तो उत्तरं लोकोत्तरं’ - उदाउने र अस्ताउनेलाई लोक भनिन्छ, त्यो लोकबाट पार भएर जानेलाई लोकोत्तर भनिन्छ । लोक ३ प्रकारका छन् - सतलोक (सत्त्वलोक)^१, सङ्घारलोक (संस्कारलोक)^२, ओकासलोक (अवकाशलोक, सत्त्वहरूको आवासस्थान), यहाँ संस्कारलोक (नाम-रूप संस्कार) लाई लिइएको हो । संस्कारलोक भनेको उपादानस्कन्ध हो ।

^{१५}चार प्रकारका चित्तमा

^{१६}सौमनस्य-सहगत भन्ने ‘सुन्दरं मनो सुमनो सुमनस्त भावो सोपनस्सं’ - राम्रो मन नै सु-मन हो । राम्रो मनको भाव वा प्रसन्नता भएको नै सौमनस्य हो । यो मानसिक सुख वेदनालाई भनिएको हो । यहाँ प्रसन्नता भावलाई लिइएको हो । मानिसहरू केही विषयवस्तुमा प्रसन्न हुँदा राम्रो भएपनि नराम्रो भएपनि त्यो काम गर्न तत्पर हुन्छन् । यहाँ सहगत भनेको संसृष्ट (मिश्रित, सम्मिलित, मिसिएको) अर्थ हो ।

^{१७}दृष्टिगत-सम्प्रयुक्त भन्ने विष्यादृष्टि (गलत धारणा, गलत विचार) ले युक्त भएको हो ।

^{१८}असंस्कारिक भन्ने ‘नत्थि सङ्घारो यस्सा ति असङ्घारो, असङ्घारेण उप्पन्नं असङ्घारिकं’ - काय, वाक र मनले गरेको कर्मलाई संस्कार भनिन्छ । जसमा संस्कार छैन, त्यसलाई असंस्कारिक भनिन्छ वा असंस्कारबाट उत्पन्न भएको कर्मलाई असंस्कारिक भनिन्छ । साधारण अर्थमा टेवा दिनु नपर्ने, प्रेरित गर्नु नपर्ने, प्रेरणारहितको काम भनी बुझिन्छ । यहाँ प्रेरणारहित भनेको उत्तेजित नगर्नु, अगाडि नसराउनु, नउक्साउनु, आदेश नदिनु, निर्देश नदिनु भन्ने हुन्छ ।

^{१९}ससंस्कारिक भन्ने ‘सह सङ्घारेण यो वट्ठीति ससङ्घारो, ससङ्घारेण उप्पन्नं ससङ्घारिकं’ - जसमा संस्कार हुन्छ, त्यसलाई नै संस्कारिक भनिन्छ वा ससंस्कारबाट उत्पन्न भएको कर्मलाई ससंस्कारिक भनिन्छ । ससंस्कार भनेको साधारण अर्थमा टेवा दिनु पर्ने, प्रेरित गर्नु पर्ने, प्रेरणारहितको काम भनी बुझिन्छ । यहाँ प्रेरणारहित भनेको उत्तेजित गर्नु, अगाडि सराउनु, उक्साउनु, आदेश दिनु, निर्देश दिनु भन्ने हुन्छ ।

^{२०}दृष्टिगत-विप्रयुक्त भन्ने विष्यादृष्टि (गलत धारणा, गलत विचार) ले युक्त नभएको हो ।

^{२१}उपेक्षा-सहगत भन्ने ‘उपपत्तिं यो युत्तितो इक्खति अनुभवतीति उपेक्खा, सुखदुःखानं उपेता युता इक्खा उपेक्खा’ अर्थात् धेरै पनि होइन कम पनि होइन, युक्तिपूर्वक देख्ने र अनुभव गर्नेलाई उपेक्षा भनिन्छ । सुख-दुःखको पक्ष नलिएर मध्यस्थभावले अनुभव गर्नेलाई उपेक्षा भनिन्छ । उपेक्षा भन्नाले तटस्थता, मध्यस्थता, निष्पक्ष, उभैतिर नलाग्ने हो । सुख वेदना र दुःख वेदनाको बिचमा परस्पर विरोधी हुन्छ, उपेक्षा वेदना यो दुवैको पक्ष नलिएर मध्यस्थ हुन्छ ।

लोभ सहगत चित्त हुन् ।

५. दोमनस्ससहगतं पटिघसम्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकन्ति इमानि द्वेपि पटिघसम्पयुत्तचित्तानि नाम ।

५. दौर्मनस्य-सहगत^{२२} प्रतिघसम्प्रयुक्त^{२३} असङ्घारिक एउटा^(१) र ससंस्कारिक एउटा^(१०) यसरी यी दुई चित्तलाई प्रतिघ-सम्प्रयुक्त चित्त भनिन्छन् ।

६. उपेक्खासहगतं विचिकिच्छासम्पयुत्तमेकं, उपेक्खासहगतं उद्धच्चसम्पयुत्तमेकन्ति इमानि द्वेपि मोहमूहचित्तानि नाम ।

६. उपेक्षा-सहगत विचिकित्सा^{२४}-सम्प्रयुक्त एउटा^(११) र उपेक्षा-सहगत औद्धत्य^{२५}-सम्प्रयुक्त एउटा^(१२) यसरी यी दुई चित्तलाई मोहमूह^{२६} (मोहमूढ) चित्त भनिन्छ ।

७. इच्छेवं सब्बथापि द्वादसाकुसलचित्तानि समत्तानि ।

७. यसरी सबै बाह अकुशल चित्त समाप्त ।

८. अट्टधा लोभमूलानि, दोसमूलानि च द्विधा ।

मोहमूलानि च द्वेति, द्वादसाकुसला सियुं ॥

८. आठविधका लोभमूल, र द्वेषमूल दुईविधका ।

र मोहमूल दुई गरी, बाह अकुशल छन् ।।

अकुशल चित्तको तालिका नं. २

| | हेतु | वेदना | सम्प्रयुक्त | विप्रयुक्त | प्रेरणा | नं. |
|---|------|---------|--------------|--------------|---------|-----|
| १ | लोभ | सुख | मिथ्यादृष्टि | - | रहित | (१) |
| २ | " | " | मिथ्यादृष्टि | - | सहित | (२) |
| ३ | " | " | - | मिथ्यादृष्टि | रहित | (३) |
| ४ | " | " | - | मिथ्यादृष्टि | सहित | (४) |
| ५ | " | उपेक्षा | मिथ्यादृष्टि | - | रहित | (५) |
| ६ | " | " | मिथ्यादृष्टि | - | सहित | (६) |
| ७ | " | " | - | मिथ्यादृष्टि | रहित | (७) |
| ८ | " | " | - | मिथ्यादृष्टि | सहित | (८) |

^{२२}दौर्मनस्य-सहगत भन्ने 'दुद्दु मनो दुपनो, दुपनस्स भावो दोमनस्सं' - दुष्टको मनलाई दुष्टमन (कालो मन) भनिन्छ । दुष्टको भाव भएको मनलाई दौर्मनस्य भनिन्छ । सहगतको अर्थ संसृष्ट हो । त्यसैले दौर्मनस्य वेदनाले संसृष्ट चित्तलाई दौर्मनस्य-सहगत भनिन्छ । यहाँ नराग्नो स्वभाव भएको र कष्ट दिने मानसिकता नै दौर्मनस्य हो ।

^{२३}प्रतिघसम्प्रयुक्त - 'पटिहञ्जतीति पटिघो' - प्रतिघात (विरोध गर्ने, उग्रस्वभाव) गर्ने द्वेष चैतसिकलाई प्रतिघ भनिन्छ । अनिष्ट आलम्बनलाई अनुभव गर्ने चैतसिक दौर्मनस्य हो । यो वेदनास्कन्धमा पर्छ । प्रतिघमा विरोधाभास र चण्डस्वभाव हुने भएकोले संस्कारस्कन्धमा पर्छ ।

^{२४}विचिकित्सा भन्ने शंका, संशय र संदेह हो ।

^{२५}औद्धत्य भन्ने चञ्चल र विशिप्त स्वभाव हो ।

^{२६}मोहमूह भन्ने अज्ञानता, अन्यकार हो । मोहमूह चित्तमा इष्ट र अनिष्ट आलम्बन हुँदैन । जस्तै - रक्सीले लागेको मान्छेलाई कडा शब्द (अपशब्द) र नरम शब्द प्रयोग गर्दा पनि मध्यस्थ भएर अनुभव गर्दछ । त्यसैले औद्धत्य र विचिकित्सा चैतसिक उपेक्षा-सहगत चित्त हुन्छन् ।

| | | | | | | |
|----|-------|-----------|------------|---|------|------|
| ९ | द्वेष | दोर्मनस्य | प्रतिष | - | रहित | (९) |
| १० | " | " | प्रतिष | - | सहित | (१०) |
| ११ | मोह | उपेक्षा | विचिकित्सा | - | - | (११) |
| १२ | " | " | औद्वत्य | - | - | (१२) |

१२ वटा अकुशल चित्तको तालिका नं. ३

| मूल | चित्त |
|---------|--|
| लोभ ८ | १. सोमनस्य सहगत मिथ्यादृष्टि सम्प्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(१) २. सोमनस्य सहगत मिथ्यादृष्टि सम्प्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(२) ३. सोमनस्य सहगत मिथ्यादृष्टि विप्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(३) ४. सोमनस्य सहगत मिथ्यादृष्टि विप्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(४) ५. उपेक्षा सहगत मिथ्यादृष्टि सम्प्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(५) ६. उपेक्षा सहगत मिथ्यादृष्टि सम्प्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(६) ७. उपेक्षा सहगत मिथ्यादृष्टि विप्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(७) ८. उपेक्षा सहगत मिथ्यादृष्टि विप्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(८) |
| द्वेष ३ | ९. दोर्मनस्य सहगत प्रतिष-सम्प्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(९) १०. दोर्मनस्य सहगत प्रतिष-सम्प्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(१०) |
| मोह ३ | ११. उपेक्षा-सहगत विचिकित्सा-सम्प्रयुक्त चित्त ^(११) १२. उपेक्षा-सहगत औद्वत्य-सम्प्रयुक्त चित्त ^(१२) |

अकुशल चित्तको मूल वेदनादिको तालिका नं. ४

| मूल | वेदना | धारणा | प्रेरणा | चित्त सङ्घा |
|---------|-----------|--------------|---------|-------------|
| लोभ ८ | सोमनस्य | मिथ्यादृष्टि | रहित | १ |
| | सोमनस्य | मिथ्यादृष्टि | सहित | १ |
| | सोमनस्य | - | रहित | १ |
| | सोमनस्य | - | सहित | १ |
| | उपेक्षा | मिथ्यादृष्टि | रहित | १ |
| | उपेक्षा | मिथ्यादृष्टि | सहित | १ |
| | उपेक्षा | - | सहित | १ |
| द्वेष ३ | दोर्मनस्य | प्रतिष | रहित | १ |
| | दोर्मनस्य | प्रतिष | सहित | १ |
| मोह ३ | उपेक्षा | विचिकित्सा | - | १ |
| | उपेक्षा | औद्वत्य | - | १ |

अहेतुकचित्तं
अहेतुक चित्त^{२०}

९. उपेक्षासहगतं चक्खुविज्जाणं, तथा सोतविज्जाणं, धानविज्जाणं, जिह्वाविज्जाणं दुक्खसहगतं कायविज्जाणं, उपेक्षासहगतं सम्पटिच्छनचित्तं,

^{२०}अहेतुक चित्त भन्ने हेतु-वैततिकहरू, जस्तै - लोभ, द्वेष, मोह, अलोभ, अद्वेष, अमोहले युक्त नभएको चित्तलाई अहेतुक चित्त भनिन्छ। लोभ, द्वेष र मोह अकुशल हेतु हो; भने अलोभ, अद्वेष र अमोह कुशल तथा अब्याकृत हेतु हो।

उपेक्षासहगतं सन्तीरणचित्तञ्चेति इमानि सत्तपि अकुशलविपाकचित्तानि नाम।

९. उपेक्षासहगत चक्षुर्विज्ञान^{३८} चित्त^(१३), त्यस्तै श्रोत्रविज्ञान^(१४), घ्राणविज्ञान^(१५), जिह्वाविज्ञान^(१६), दुःखसहगत कायविज्ञान^{३९}^(१७), उपेक्षासहगत सम्प्रतिच्छन-चित्त^{४०}^(१८) र उपेक्षासहगत सन्तीरण-चित्त^{४१}^(१९); यसरी यी सात चित्तलाई अहेतुक अकुशल-विपाक-चित्त^{४२} भनिन्छ।

१०. उपेक्षासहगतं कुशलविपाकं चक्षुर्विज्ञानं, तथा सोतविज्ञानं, घानविज्ञानं, जिह्वाविज्ञानं, सुखसहगतं कायविज्ञानं, उपेक्षासहगतं सम्प्रतिच्छनचित्तं, सोमनस्ससहगतं सन्तीरणचित्तं, उपेक्षासहगतं सन्तीरणचित्तञ्चेति इमानि अट्टपि कुशलविपाकाहेतुकचित्तानि नाम।

१०. उपेक्षासहगत कुशलविपाक चक्षुर्विज्ञान चित्त^(२०), त्यस्तै श्रोत्रविज्ञान^(२१), घ्राणविज्ञान^(२२), जिह्वाविज्ञान^(२३), सुखसहगत कायविज्ञान^{४३}^(२४), उपेक्षासहगत सम्प्रतिच्छन चित्त^(२५), सोमनस्यसहगत सन्तीरण चित्त^{४४}^(२६) र उपेक्षासहगत सन्तीरण चित्त^(२७); यसरी यी आठविधका चित्तलाई अहेतुक कुशल विपाक चित्त भनिन्छ।

११. उपेक्षासहगतं पञ्चद्वारावज्जनचित्तं, तथा मनोद्वारावज्जनचित्तं, सोमनस्ससहगतं हसितुप्पादचित्तञ्चेति इमानि तीणिपि अहेतुककिरियचित्तानि नाम।

^{३८}चक्षुर्विज्ञान - चक्षु प्रसादमा आश्रित विज्ञानलाई चक्षुर्विज्ञान भनिन्छ। त्यस्तै नै श्रोत्रविज्ञान, घ्राणविज्ञान, जिह्वाविज्ञान र कायविज्ञानलाई पनि बुझ्नुपर्छ। यहाँ चक्षुर्विज्ञानादि चार विज्ञानले रूपादि विषयमा स्पष्टरूपले अनुभव हुँदैन। त्यसैले उक्त चार विज्ञान उपेक्षासहगत हुन्छ।

^{३९}दुःखसहगत कायविज्ञान - दुःख दुई प्रकारका हुन्छन् - कायिक दुःख र चैतसिक दुःख। यहाँ कायिक दुःखलाई मात्र लिइएको हो। काय इन्द्रियले स्पर्शको कारणद्वारा जुन प्रतिकूल अनुभव हुन्छन्, त्यो कायिक दुःख हो। अकुशल-विपाकको कारणले जुन कायविज्ञान उत्पन्न हुन्छ, त्यो सँधै दुःख-सहगत नै हुन्छ। 'कुच्छित्तं हुत्वा खनतीति दुक्खं' कुत्सित भएर जुन धर्मले सुखलाई उखेल्छ, त्यो दुःख हो। यहाँ कुत्सित भनेको घृणित, तिरस्करणीय, अधम, नीच र दुश्चरित्र हो।

^{४०}सम्प्रतिच्छन चित्त - चक्षुर्विज्ञानादि पाँच विज्ञानलाई पञ्च विज्ञान भनिन्छ, ती पाँच विज्ञानद्वारा गृहीत आलम्बनलाई राम्ररी ग्रहण गर्छ, त्यसलाई सम्प्रतिच्छन-चित्त भनिन्छ।

^{४१}सन्तीरण-चित्त - सम्प्रतिच्छन-चित्तले जुन आलम्बनलाई ग्रहण गरेको हो, त्यसमा विचार गरेर निर्णय गर्ने चित्तलाई सन्तीरण-चित्त भनिन्छ।

^{४२}अकुशल-विपाक-चित्त - परस्पर विरुद्ध कुशल-अकुशल धर्मको परिणामलाई विपाक भनिन्छ, यहाँ अकुशल-चित्तको फललाई अकुशल-विपाक-चित्त भनिएको हो।

^{४३}सुखसहगत कायविज्ञान - 'कायचित्ताबाधं खनतीति सुखं' काय र चित्तको बाधालाई जुन धर्मले दुःखलाई उखेल्छ, त्यो सुख हो। सुख दुई प्रकारका छन् - कायिक सुख र चैतसिक सुख। यहाँ कायिक सुखलाई मात्र लिइएको हो। कुशल कर्मको विपाकले जुन कायविज्ञान उत्पन्न हुन्छ, त्यो सुखसहगत हुन्छ।

^{४४}सौमनस्यसहगत सन्तीरण चित्त - अकुशलविपाकमा एउटा मात्र अनिष्ट आलम्बन भएकोले एउटा मात्र उपेक्षासहगत सन्तीरण चित्त भनिएको हो। कुशलविपाकमा इष्ट आलम्बन र इष्ट मध्यस्थ आलम्बन भएकोले इष्ट आलम्बन हुँदा सौमनस्यसहगत सन्तीरण र इष्ट मध्यस्थ आलम्बन हुँदा उपेक्षासहगत सन्तीरण चित्त उत्पन्न हुन्छ।

११. उपेक्षासहगत पञ्चद्वारावर्जन^{१५} चित्त^(२८), त्यस्तै - मनोद्वारावर्जन^{१६} चित्त^(२९), र सौमनस्यसहगत हसितोत्पाद-चित्त^{१७} (३०); यसरी यी तीन चित्तलाई पनि अहेतुक क्रिया चित्त भनिन्छ।

१२. इच्चेव सब्बथापि अट्टारसाहेतुकचित्तानि समत्तानि।

१२. यसरी सबै अटार अहेतुकचित्त समाप्त।

अहेतुकचित्त आठरको तालिका नं. ५

| | प्रभेद | वेदना | चित्त | नं. |
|----|------------|---------|-----------------|------|
| १ | अकुशलविपाक | उपेक्षा | चक्षुर्विज्ञान | (१३) |
| २ | " | " | श्रोत्रविज्ञान | (१४) |
| ३ | " | " | घ्राणविज्ञान | (१५) |
| ४ | " | " | जिह्वाविज्ञान | (१६) |
| ५ | " | दुःख | कायविज्ञान | (१७) |
| ६ | " | उपेक्षा | सम्प्रतिच्छन | (१८) |
| ७ | " | " | सन्तीरण | (१९) |
| ८ | कुशलविपाक | " | चक्षुर्विज्ञान | (२०) |
| ९ | " | " | श्रोत्रविज्ञान | (२१) |
| १० | " | " | घ्राणविज्ञान | (२२) |
| ११ | " | " | जिह्वाविज्ञान | (२३) |
| १२ | " | सुख | कायविज्ञान | (२४) |
| १३ | " | उपेक्षा | सम्प्रतिच्छन | (२५) |
| १४ | " | सुख | सन्तीरण | (२६) |
| १५ | " | उपेक्षा | सन्तीरण | (२७) |
| १६ | क्रिया | " | पञ्चद्वारावर्जन | (२८) |
| १७ | " | " | मनोद्वारावर्जन | (२९) |
| १८ | " | सुख | हसितोत्पाद | (३०) |

^{१५}पञ्चद्वारावर्जन - चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा र कायलाई पञ्चद्वार भनिन्छ। यी पञ्चद्वारमा देखा परेको वा स्पर्श हुनआएको आलम्बनलाई तान्ने र आकर्षित गर्नेलाई पञ्चद्वारावर्जन चित्त भनिन्छ अथवा चित्त सन्ततिलाई भवङ्गमा नपटाएर वीधिचित्तमा परिवर्तन गर्न प्रयास गर्ने पञ्चद्वारावर्जन चित्त हो।

^{१६}मनोद्वारावर्जन - मनोद्वारावर्जन चित्त पनि चित्त सन्ततिलाई भवङ्गमा नपटाएर वीधिचित्तमा परिवर्तन गर्ने प्रयास गर्दछ। मनोद्वारावर्जन चित्त पञ्चद्वारमा सन्तीरणले विचार गरेको आलम्बनलाई ब्यवस्थापन गर्ने काम गर्छ।

^{१७}हसितोत्पाद-चित्त - 'हसितमेव उप्पादेतीति हसितोत्पादं' मुसुक्क मुस्काइदिने हसितोत्पाद चित्त हो। यहाँ मुसुक्क मुस्काइदिने बाहेक अन्य केही कृत्य हुँदैन। अलङ्कारशास्त्रानुसार हसले ६ प्रकारक छन् - (१). स्थित (सित) - आँखामा मात्र हँसेको भाव देखिने, (२). हसित - दाँत देख्ने गरी हँस्ने, (३). विहसित - स्वर निकालेर हँस्ने, (४). उपहसित - शरीर नै हल्लाएर हँस्ने, (५). अपहसित - आँसु खल्ने गरी हँस्ने, (६). अतिहसति - लसीबुझी गरेर हँस्ने; यीमध्ये दुई-दुई क्रमशः उच्च, मध्यम र नीच हँसो हुन्।

१३. सत्ताकुसलपाकानि, पुञ्जपाकानि अद्वधा।
क्रियचित्तानि तीणीति, अट्टारस अहेतुका ॥
१३. सात अकुशलविपाक, पुण्यविपाक आठविध।
क्रियाचित्त तीन गरी, अठार अहेतुक चित्त छन् ॥

१८ अहेतुक चित्तको तालिका नं. ६

| | |
|------------------|---|
| अकुशल विपाक ७ | १. उपेक्षासहगत चक्षुर्विज्ञान(१३) २. उपेक्षासहगत श्रोत्रविज्ञान(१४) ३. उपेक्षासहगत घ्राणविज्ञान(१५) ४. उपेक्षासहगत जिह्वाविज्ञान(१६) ५. दुःखसहगत कायविज्ञान(१७) ६. उपेक्षासहगत सम्प्रतिच्छन(१८) ७. उपेक्षासहगत सन्तीरण(१९) |
| कुशल विपाक ८ | ८. उपेक्षासहगत चक्षुर्विज्ञान(२०) ९. उपेक्षासहगत श्रोत्रविज्ञान(२१) १०. उपेक्षासहगत घ्राणविज्ञान(२२) ११. उपेक्षासहगत जिह्वाविज्ञान(२३) १२. सुखसहगत कायविज्ञान(२४) १३. उपेक्षासहगत सम्प्रतिच्छन(२५) १४. सौमनस्यसहगत सन्तीरण(२६) १५. उपेक्षासहगत सन्तीरण(२७) |
| क्रिया ३ | १६. उपेक्षासहगत पञ्चद्वारावर्जन(२८) १७. उपेक्षासहगत मनोद्वारावर्जन(२९) १८. सौमनस्यसहगत हसितोत्पाद(३०) |

Dhamma.Digital

सोभनचित्त
शोभनचित्त

१४. पापाहेतुकमुत्तानि, सोभनानीति वुच्चरे।
एकूनसट्ठि चित्तानि, अथेकनवुतीपि वा ॥
१४. पाप अहेतुकले मुक्त भएका, शोभन^{३८} भनी भनिन्छ।
उनन्साठी चित्त, त्यसपछि एकान्नब्बे पनि भनिन्छन् ॥

^{३८}शोभन - 'सोभन्तीति सोभनानि' राम्रो चित्तलाई शोभन भनिन्छ। चित्तलाई राम्रो पार्न कुशल सम्प्रयुक्त हुनुपर्छ। अकुशल चैतसिकहरू सम्प्रयुक्त भएमा चित्त अशोभन हुन्छन्।

कामावचरसोभनचित्तं कामावचर शोभन चित्त

१५. सोमनस्ससहगतं जाणसम्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकं, सोमनस्ससहगतं जाणविप्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकं, उपेक्खासहगतं जाणसम्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकं। उपेक्खासहगतं जाणविप्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकन्ति इमानि अट्ठपि कामावचरकुसलचित्तानि नाम।

१५. सौमनस्यसहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त^{३१} असंस्कारिक एउटा^(३१), र ससंस्कारिक एउटा^(३२); सौमनस्यसहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक^(३३) एउटा र

^{३१}ज्ञानसम्प्रयुक्त - 'जानाति यथासभावं पटिज्झति जाणं, आणेन सम्पयुत्तं जाणसम्पयुत्तं' जुन जानेको हो वा जुन विषयवस्तुको यथास्वभाव (वास्तविकता) लाई प्रतिवेध गर्छ, त्यो ज्ञान हो। ज्ञान (प्रज्ञा चैतसिक) सित युक्त भएको नै ज्ञानसम्प्रयुक्त हो।

ज्ञानसम्प्रयुक्तको उत्पत्ति कारण -

- (१). पूर्वजन्ममा कुशल कर्म गरेको बेला - 'यो पूण्यको प्रभावले पठि प्रज्ञा प्राप्त होस्' भनी प्रार्थना गर्दछन्, त्यो कर्मको फलले त्यो व्यक्तिलाई तीक्ष्णज्ञान सम्पन्न हुन्छ। जस्तै - स्कुलहरू बनाइदिने, निःशुल्क पढाइदिने आदि हुन्। यसलाई पञ्चसंवत्तनिक कर्म भनिन्छ।
- (२). ढेषव्यापादरहित भएमा ज्ञानसम्प्रयुक्त हुन्छ। प्रायःगरी रूपभूमिमा ज्ञानसम्प्रयुक्त चित्त हुन्छ। ढेषभावले ज्ञानलाई नाश गर्छ।
- (३). चञ्चल नभएकाहरू, सभाधिस्थ भएकाहरू र इन्द्रिय परिपक्व भएकाहरूसित ज्ञानसम्प्रयुक्त चित्त हुन्छ।
- (४). अध्ययन गर्ने प्रबल इच्छा भएकाहरू, ध्यानभावना वृद्धि गर्नेहरू र क्लेशबाट टाढिएर बस्नेहरूसित ज्ञान सम्प्रयुक्त चित्त हुन्छ।
- (५). त्रिहेतुक (अलोष, अद्वेष, अपोह) ले प्रतिसन्धि ग्रहण गर्नेहरूसित प्रायःगरी ज्ञानसम्प्रयुक्त चित्त हुन्छ। यी पाँच कारणले ज्ञानसम्प्रयुक्त चित्त उत्पन्न हुन्छ।

आठ कामावचर महाकुशलका उत्पत्ति कारण -

- (१). कुनै व्यक्ति प्रसन्न भएर राम्रो विचार गरेर प्रेरणारहित आफै उचित पात्रलाई दान दिन्छ भने सौमनस्यसहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक चित्त उत्पन्न हुन्छ।
- (२). कुनै व्यक्ति प्रसन्न भएर राम्रो विचार गरेर प्रेरणासहित उचित पात्रलाई दान दिन्छ भने सौमनस्यसहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त उत्पन्न हुन्छ।
- (३). कुनै व्यक्ति प्रसन्न भएर प्रेरणारहित उचित पात्रलाई दान दिन्छ भने सौमनस्यसहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक चित्त उत्पन्न हुन्छ।
- (४). कुनै व्यक्ति प्रसन्न भएर प्रेरणासहित उचित पात्रलाई दान दिन्छ भने सौमनस्यसहगत ज्ञानविप्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त उत्पन्न हुन्छ।
- (५). कुनै व्यक्तिले मध्यस्थभावले राम्रो विचार गरेर प्रेरणारहित आफै उचित पात्रलाई दान दिन्छ भने उपेक्षासहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक चित्त उत्पन्न हुन्छ।
- (६). कुनै व्यक्तिले मध्यस्थभावले राम्रो विचार गरेर प्रेरणासहित उचित पात्रलाई दान दिन्छ भने उपेक्षासहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त उत्पन्न हुन्छ।
- (७). कुनै व्यक्तिले मध्यस्थभावले प्रेरणारहित आफै उचित पात्रलाई दान दिन्छ भने उपेक्षासहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक चित्त उत्पन्न हुन्छ।
- (८). कुनै व्यक्तिले मध्यस्थभावले प्रेरणासहित पात्रलाई दान दिन्छ भने उपेक्षासहगत ज्ञानविप्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त उत्पन्न हुन्छ।

ससंस्कारिक एउटा^(३४); उपेक्षासहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक एउटा^(३५) र ससंस्कारिक एउटा^(३६); उपेक्षासहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक एउटा^(३७) र ससंस्कारिक एउटा^(३८) भनी यी आठलाई कामावचर कुशलचित्त^{१०} भनिन्छन्।

१६. सोमनस्ससहगतं जाणसम्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकं, सोमनस्ससहगतं जाणविप्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकं, उपेक्खासहगतं जाणसम्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकं, उपेक्खासहगतं जाणविप्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकन्ति इमानि अट्टपि सहेतुककामावचर-विपाकचित्तानि नाम।

१६. सौमनस्यसहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक एउटा^(३९), र ससंस्कारिक एउटा^(४०); सौमनस्यसहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक^(४१) एउटा र ससंस्कारिक एउटा^(४२); उपेक्षासहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक एउटा^(४३) र ससंस्कारिक एउटा^(४४); उपेक्षासहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक एउटा^(४५) र ससंस्कारिक एउटा^(४६) भनी यी आठलाई पनि सहेतुक कामावचर विपाक चित्त^{११} भनिन्छन्।

१७. सोमस्ससहगतं जाणसम्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकं, सोमनस्ससहगतं जाणविप्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं ससङ्घारिकमेकं, उपेक्खासहगतं जाणसम्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकं, उपेक्खासहगतं जाणविप्पयुत्तं असङ्घारिकमेकं, ससङ्घारिकमेकन्ति इमानि अट्टपि सहेतुककामावचर-किरियचित्तानि नाम।

१७. सौमनस्यसहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक एउटा^(४७), र ससंस्कारिक एउटा^(४८); सौमनस्यसहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक^(४९) एउटा र ससंस्कारिक एउटा^(५०); उपेक्षासहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक एउटा^(५१) र ससंस्कारिक एउटा^(५२); उपेक्षासहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक एउटा^(५३) र ससंस्कारिक

यसरी नै दशपुण्यक्रिया वस्तु (दान, शील, भावनादि) ले विभाजन गर्नुपर्छ। यी आठ महाकुशलमा दशपुण्यक्रिया वस्तु मिलाउँदा $८ \times १० = ८०$ वटा चित्त हुन्छन्। त्यसमा पनि गोचरवस्तु ६ वटा मिलाउँदा $८० \times ६ = ४८०$ वटा चित्त हुन्छन्। त्यसमा ज्ञानसम्प्रयुक्त २४० र ज्ञानविप्रयुक्त २४० हुन्छन्। ज्ञानविप्रयुक्त २४० वटा सित्त छन्, वीर्य र चित्त मिला २४० \times ३ = ७२० वटा चित्त हुन्छन् भने ज्ञानसम्प्रयुक्तमा भीषांता, छन्द, वीर्य र चित्त मिला २४० \times ४ = ९६० वटा चित्त हुन्छन्। ज्ञानविप्रयुक्त र ज्ञानसम्प्रयुक्त गरी जम्मा १६८० वटा चित्त हुन्छन्। यहाँ कायकर्म, वाक्कर्म र मनकर्मसित मिला १६८० \times ३ = ५०४० वटा चित्त हुन्छन्। फेरि हीन, मध्यम र प्रणीतद्वारा विभाजन गर्दा $५०४० \times ३ = १५१२०$ वटा चित्त हुन्छन्। त्यस्तै नै अतीत आदिद्वारा विभाजन गर्दा धेरै नै सङ्ख्या हुन्छन्।

^{१०}कुशलचित्त - 'कुच्छित्ते पापके धम्मे सलयन्ति, चलयन्ति, कम्पन्ति, विद्वंसेन्तीति कुसला' अर्थात् कुत्सित पापधर्मलाई विरफार गर्ने, चलाउने, नाश गर्ने र च्छंस गर्नेलाई कुशलचित्त भनिन्छ, यस ८ चित्तलाई महाकुशलचित्त पनि भनिन्छ।

^{११}सहेतुक कामावचर विपाक चित्त - अहेतुकचित्तमा पनि ८ वटा कुशल विपाक चित्त भएकाले यहाँ फरक देखाउनको लागि सहेतुक कुशल विपाक चित्त भनिएको हो।

एउटा^(५४) भनी यी आठलाई पनि सहेतुक कामावचर क्रियाचित्त^{४३} भनिन्छन्।

१८. इच्छेवं सब्बथापि चतुवीसति सहेतुककामावचरकुशलविपाक-
किरियचित्तानि समत्तानि।

१८. यसरी सबै चौबीस सहेतुक कामावचर कुशल, विपाक र क्रिया चित्त
समाप्त।

२४ वटा शोभन चित्तको तालिका नं. ७

| | |
|-------------------|--|
| कुशल चित्त ८ | १. सौमनस्यसहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(३१) २. सौमनस्यसहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(३२) ३. सौमनस्यसहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(३३) ४. सौमनस्यसहगत ज्ञानविप्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(३४) ५. उपेक्षासहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(३५) ६. उपेक्षासहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(३६) ७. उपेक्षासहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(३७) ८. उपेक्षासहगत ज्ञानविप्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(३८) |
| विपाक चित्त ८ | ९. सौमनस्यसहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(३९) १०. सौमनस्यसहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(४०) ११. सौमनस्यसहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(४१) १२. सौमनस्यसहगत ज्ञानविप्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(४२) १३. उपेक्षासहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(४३) १४. उपेक्षासहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(४४) १५. उपेक्षासहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(४५) १६. उपेक्षासहगत ज्ञानविप्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(४६) |
| क्रिया चित्त ८ | १७. सौमनस्यसहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(४७) १८. सौमनस्यसहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(४८) १९. सौमनस्यसहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(४९) २०. सौमनस्यसहगत ज्ञानविप्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(५०) २१. उपेक्षासहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(५१) २२. उपेक्षासहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(५२) २३. उपेक्षासहगत ज्ञानविप्रयुक्त असंस्कारिक चित्त ^(५३) २४. उपेक्षासहगत ज्ञानविप्रयुक्त ससंस्कारिक चित्त ^(५४) |

१९. वेदनाजाणसङ्खारभेदेन चतुवीसति।
सहेतुकामावचरपुञ्जपाकक्रिया मता ॥

^{४३}क्रियाचित्त - 'करणं करणमत्तं किरियं' यहाँ कुशलचित्तमा अत्र क्रियाचित्तमा विपाक हुँदेन, खाली 'गरेको
मात्र' हुन्छ। यो चित्तलाई क्रिया चित्त भनिन्छ।

अर्हतहरूले दान, शील, भावनादि पुण्यकर्म गर्दा सौमनस्यसहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त असंस्कारिक चित्त
भएतापनि फलोत्पादक हुँदैन। उहाँहरूका बन्धनकारक अविद्या, तृष्णादि अनुशय बलेशहरू हुँदैनन्। पृथग्जनका ती
अनुशय बलेशहरू भएकाले फलोत्पादक हुन्छन्।

कुशल, अकुशल, क्रियाचित्तको सम्बन्ध -

अकुशलचित्तमा लोभ, द्वेष, मोहको कारण जवनचित्त हुने भएकोले अकुशल हुन्छन्। कुशलचित्तमा अलोभ,
अद्वेष, अमोहको कारणले जवनचित्त हुने भएकोले कुशल हुन्छन्। अर्हतहरूका बन्धनकारक अविद्या, तृष्णादि
संसारको मूल हेतुलाई नाश (सीण) भइसकेका हुनाले फल दिन असमर्थ हुँदा क्रियाचित्त हुन्छ।

१९. वेदना, ज्ञान र संस्कारको भेद अनुसार चौबीस छन्।
सहेतुक कामावचर पुण्य विपाक क्रिया भनी जान्नुपर्छ।।

वेदना, ज्ञान र संस्कारको भेदानुसार चौबीस चित्तको तालिका नं. ८

| | वेदना | ज्ञान | प्रेरणा | कुशल | विपाक | क्रिया |
|---|---------|-------------|---------|------|-------|--------|
| १ | सुख | सम्प्रयुक्त | रहित | (३१) | (३९) | (४७) |
| २ | सुख | सम्प्रयुक्त | सहित | (३२) | (४०) | (४८) |
| ३ | सुख | विप्रयुक्त | रहित | (३३) | (४१) | (४९) |
| ४ | सुख | विप्रयुक्त | सहित | (३४) | (४२) | (५०) |
| ५ | उपेक्षा | सम्प्रयुक्त | रहित | (३५) | (४३) | (५१) |
| ६ | उपेक्षा | सम्प्रयुक्त | सहित | (३६) | (४४) | (५२) |
| ७ | उपेक्षा | विप्रयुक्त | रहित | (३७) | (४५) | (५३) |
| ८ | उपेक्षा | विप्रयुक्त | सहित | (३८) | (४६) | (५४) |

२०. कामे तेवीस पाकानि, पुञ्जापुञ्जानि वीसति।

एकादस क्रिया चैति, चतुपञ्जास सब्बथा॥

२०. कामभूमिमा तेइस^{४३} विपाक, पुण्य-अपुण्य बीस^{४४}।
एघार^{४५} क्रिया गरी, जम्मा चउन्न छन्।।

वेदना, ज्ञान र संस्कारको जातिभेदद्वारा कामावचर चित्तको तालिका नं. ९

| वेदना | ज्ञान | संस्कार | जातिभेद | स. | वि. | म. | असं. | ससं. | न. |
|--------------------|----------------|---------------|------------|------------|------------|------------|------------|------------|------------|
| सौमनस्य सहगत १८ | सम्प्रयुक्त १६ | असंस्कारिक १७ | महाकुशल ८ | ४ | ४ | | ४ | ४ | |
| दौमनस्य सहगत २ | | | अकुशल १२ | ४ | ४ | | ५ | ५ | |
| दुःख सहगत १ | विप्रयुक्त १६ | ससंस्कारिक १७ | विपाक २३ | ४ | ४ | | ४ | ४ | |
| सुख सहगत १ | | | क्रिया ११ | ४ | ४ | | ४ | ४ | |
| उपेक्षा सहगत ३२ | म. २२ | न. २० | | १६ | १६ | २२ | १७ | १७ | २० |
| जम्मा = ५४ | जम्मा = ५४ | जम्मा = ५४ | जम्मा = ५४ | जम्मा = ५४ | जम्मा = ५४ | जम्मा = ५४ | जम्मा = ५४ | जम्मा = ५४ | जम्मा = ५४ |

स. - सम्प्रयुक्त, वि. - विप्रयुक्त, म. - (स. र वि. पनि) नभएको, असं. - असंस्कारिक, ससं. - ससंस्कारिक, न. - अहेतुक र मोहमूल = असं. र ससं. नभएको।

^{४३}अहेतुक अकुशल विपाक - ७, अहेतुक कुशल विपाक - ८, कुशल विपाक - ८ गरी जम्मा २३ वटा छन्।

^{४४}पुण्य-अपुण्य भनेको कुशल-अकुशलचित्त हुन्। कुशल (पुण्य) ८ र अकुशल (अपुण्य) १२ गरी जम्मा २० वटा छन्।

^{४५}अहेतुक क्रियाचित्त ३ र महाक्रिया चित्त ८ गरी जम्मा ११ वटा छन्।

माथिको तालिकालाई निम्नानुसार देखाउन सकिन्छ : -

जातिभेदानुसार -

- महाकुशल ८
- अकुशल १२
- विपाक २३
- अकुशल विपाक ७
- अहेतुक कुशल विपाक ८
- महाकुशल विपाक ८
- क्रिया ११
- अहेतुक क्रिया ३
- महाक्रिया ८

वेदनाको भेदानुसार -

- सौमनस्यसहगत १८
- उपेक्षासहगत ३२
- दौमनस्यसहगत २
- सुखसहगत १
- दुःखसहगत १

ज्ञानको भेदानुसार -

- सम्प्रयुक्त १६
- विप्रयुक्त १६
- सम्प्रयुक्त र विप्रयुक्त नभएको (म.) २२

संस्कारको भेदानुसार -

- असंस्कारिक १७
- ससंस्कारिक १७
- असंस्कारिक र ससंस्कारिक पनि नभएको (न.) २०

रूपावचरचित्तं रूपावचर चित्त

२१. वितक्कविचारपीतिसुखेकग्गतासहितं पठमज्झानकुसलचित्तं,
विचारपीतिसुखेकग्गतासहितं दुतियज्झानकुसलचित्तं, पीतिसुखेकग्गतासहितं
ततियज्झानकुसलचित्तं, सुखेकग्गतासहितं चतुत्थज्झानकुसलचित्तं,
उपेक्खेकग्गतासहितं पच्चमज्झानकुसलचित्तञ्चेति इमानि पच्चपि
रूपावचरकुसलचित्तानि नाम ।

२१. वितर्क^{४६}, विचार^{४७}, प्रीति^{४८}, सुख^{४९} र एकाग्रता^{५०}सहितको^{५१}
प्रथमध्यान^{५२} कुशलचित्त^(५५); विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको
द्वितीयध्यान कुशलचित्त^(५६); प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको तृतीयध्यान
कुशलचित्त^(५७); सुख र एकाग्रतासहितको चतुर्थध्यान कुशलचित्त^(५८); उपेक्षा र
एकाग्रतासहितको पञ्चमध्यान कुशलचित्त^(५९) यसरी यी पाँच रूपावचर^{५३}
कुशलचित्त भनिन्छन् ।

^{४६}वितर्क - आरम्भणमा तर्क-वितर्क गर्ने वा मन राखिराख्नेलाई वितर्क भनिन्छ । वितर्कले आलम्बनमा सम्प्रयुक्त धर्महरूलाई अरोपित (प्रतिष्ठित) गर्छ । वितर्कले स्थान र भिन्न (लोसेपन र आलस्यपन) नीवरणलाई नाश गर्छ ।

^{४७}विचार - आरम्भणमा तर्क-वितर्क गरेकोलाई विमर्श-विचार गरेकोलाई विचार भनिन्छ । विचारले प्रतिष्ठित आलम्बनलाई अनुमार्जन गर्छ । विचारले विचिकित्सा (शंका) नीवरणलाई नाश गर्छ ।

^{४८}प्रीति - आरम्भणमा तर्क-वितर्क, विमर्श-विचार गरेर उत्पन्न भएको प्रसन्नता छ, त्यसलाई प्रीति भनिन्छ । अनुमार्जन पश्चात् चित्त प्रसन्न हुन्छ । प्रीतिले व्यापाद (उग्रस्वभाव, चण्डस्वभाव, क्रोधित-स्वभाव) नीवरणलाई नाश गर्छ ।

^{४९}सुख - आरम्भणमा तर्क-वितर्क, विमर्श-विचार गरेर, प्रसन्न भएर, जुन सुख आनन्द हुन्छ, त्यसलाई सुख भनिन्छ । चित्त प्रसन्नता पश्चात् चित्तमा सुखको वेदना अनुभव हुन्छ । सुखले औद्धत्य (अनुपशम, अशान्त) र कौकृत्य (अनुताप, पश्चाताप) नीवरणलाई नाश गर्छ ।

^{५०}एकाग्रता - आरम्भणमा तर्क-वितर्क, विमर्श-विचार गरेर, प्रसन्न भएर, सुख आनन्दको अनुभव गरेर चित्तलाई स्थिर तथा समाधिस्थ अवस्थामा रहन्छ, त्यसलाई नै एकाग्रता भनिन्छ । एकाग्रताले कामच्छन्द (कामविषयको राग र आसक्ति) नीवरणलाई नाश गर्छ ।

^{५१}सहितको - भएको, समाहित र सहगत एउटै अर्थ हो ।

^{५२}ध्यान - 'पच्चनीकधम्मो ज्ञापेतीति ज्ञानं' जुन प्रत्यनीक अर्थात् विरोधी स्वभावको नीवरणधर्महरूलाई दहन गर्नेलाई 'ध्यान' भनिन्छ । नीवरणहरू पाँच प्रकारका छन् - स्थान-भिन्न, विचिकित्सा, व्यापाद, औद्धत्य-कौकृत्य, र कामच्छन्द ।

^{५३}रूपावचर - 'रूपे अवचरतीति रूपावचरं' प्रायःगरी रूपभूमि १६ वटाभा उत्पन्न हुने चित्तहरूलाई रूपावचर चित्त भनिन्छन् । रूपावचर चित्त कुशल, विपाक र क्रिया गरी जम्मा १५ वटा छन् । प्रथमध्यान चित्तमा ५ वटा ध्यानाङ्ग (वितर्क, विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रता) छन् । द्वितीयध्यानमा ४ वटा, तृतीयध्यानमा ३ वटा, चतुर्थध्यानमा २ वटा र पञ्चमध्यानमा २ वटा हुन्छन् । प्रायःगरी भनिएको ध्यान अभ्यास गर्ने योगीहरूले रूपावचर चित्तको कामभूमिमा बस्दा पनि उत्पन्न गर्न सक्छन् ।

वितर्क, विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रता अलग-अलग ध्यानका अङ्ग हुन् । यी पाँचलाई 'समुच्चय ध्यान' भनिन्छ । यहाँ समुच्चय भनिएको सम्पष्टि, पुञ्ज, संग्रह, संघात हो । यी ध्यान अङ्गले सम्प्रयुक्त चित्तलाई ध्यान चित्त भनिन्छन् । चतुर्थध्यानसम्म सुख र एकाग्रता ध्यानाङ्गहरू हुन्छन् भने पञ्चमध्यानमा उपेक्षा र एकाग्रता ध्यानाङ्ग हुन्छन् । चतुर्थध्यानसम्म सुखवेदना हुन्छ भने पञ्चमध्यानमा पुग्दा उपेक्षावेदना हुन्छ ।

२२. वितकविचारपीतिसुखेकगतासहितं पठमज्ज्ञानविपाकचित्तं, विचारपीतिसुखेकगतासहितं दुतियज्ज्ञानविपाकचित्तं, पीतिसुखेकगतासहितं ततियज्ज्ञानविपाकचित्तं, सुखेकगतासहितं चतुत्थज्ज्ञानविपाकचित्तं, उपेक्खेकगतासहितं पञ्चमज्ज्ञानविपाकचित्तञ्चेति इमानि पञ्चपि रूपावचरविपाकचित्तानि नाम ।

२२. वितर्क, विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको प्रथमध्यान विपाकचित्त^(६०); विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको द्वितीयध्यान विपाकचित्त^(६१); प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको तृतीयध्यान विपाकचित्त^(६२); सुख र एकाग्रतासहितको चतुर्थध्यान विपाकचित्त^(६३); उपेक्षा र एकाग्रतासहितको पञ्चमध्यान विपाकचित्त^(६४) यसरी यी पाँच रूपावचर विपाकचित्त भनिन्छन् ।

२३. वितकविचारपीतिसुखेकगतासहितं पठमज्ज्ञानकिरियचित्तं, विचारपीतिसुखेकगतासहितं दुतियज्ज्ञानकिरियचित्तं, पीतिसुखेकगतासहितं ततियज्ज्ञानकिरियचित्तं सुखेकगतासहितं चतुत्थज्ज्ञानकिरियचित्तं, उपेक्खेकगतासहितं पञ्चमज्ज्ञानकिरियचित्तञ्चेति इमानि पञ्चपिरूपावचरकिरियचित्तानि नाम ।

२३. वितर्क, विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको प्रथमध्यान क्रियाचित्त^(६५); विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको द्वितीयध्यान क्रियाचित्त^(६६); प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको तृतीयध्यान क्रियाचित्त^(६७); सुख र एकाग्रतासहितको चतुर्थध्यान क्रियाचित्त^(६८); उपेक्षा र एकाग्रतासहितको पञ्चमध्यान क्रियाचित्त^(६९) यसरी यी पाँच रूपावचर क्रियाचित्त भनिन्छन् ।

२४. इच्चेवं सब्बथापि पन्नरस रूपावचरकुशलविपाककिरियचित्तानि समत्तानि ।

२४. यसरी सबै पन्ध्र वटा रूपावचर कुशल, विपाक र क्रिया चित्त समाप्त ।

रूपावचर चित्तको ध्यानाङ्ग र सङ्ख्या तालिका नं. १०

| | चित्त | ध्यानाङ्ग | | | | | कुशल | विपाक | क्रिया |
|---|--------------|-----------|-------|--------|---------|----------|------|-------|--------|
| | | वितर्क | विचार | प्रीति | सुख | एकाग्रता | | | |
| १ | प्रथमध्यान | वितर्क | विचार | प्रीति | सुख | एकाग्रता | (५५) | (६०) | (६५) |
| २ | द्वितीयध्यान | - | विचार | प्रीति | सुख | एकाग्रता | (५६) | (६१) | (६६) |
| ३ | तृतीयध्यान | - | - | प्रीति | सुख | एकाग्रता | (५७) | (६२) | (६७) |
| ४ | चतुर्थध्यान | - | - | - | सुख | एकाग्रता | (५८) | (६३) | (६८) |
| ५ | पञ्चमध्यान | - | - | - | उपेक्षा | एकाग्रता | (५९) | (६४) | (६९) |

१५ वटा रूपावचर चित्तको तालिका नं. ११

| | |
|----------------|--|
| कुशल चित्त ५ | १. वितर्क, विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको प्रथमध्यान चित्त ^(५५) २. विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको द्वितीयध्यान चित्त ^(५६) ३. प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको तृतीयध्यान चित्त ^(५७) ४. सुख र एकाग्रतासहितको चतुर्थध्यान चित्त ^(५८) ५. उपेक्षा र एकाग्रतासहितको पञ्चमध्यान चित्त ^(५९) |
| विपाक चित्त ५ | ६. वितर्क, विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको प्रथमध्यान चित्त ^(६०) ७. विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको द्वितीयध्यान चित्त ^(६१) ८. प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको तृतीयध्यान चित्त ^(६२) ९. सुख र एकाग्रतासहितको चतुर्थध्यान चित्त ^(६३) १०. उपेक्षा र एकाग्रतासहितको पञ्चमध्यान चित्त ^(६४) |
| क्रिया चित्त ५ | ११. वितर्क, विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको प्रथमध्यान चित्त ^(६५) १२. विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको द्वितीयध्यान चित्त ^(६६) १३. प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको तृतीयध्यान चित्त ^(६७) १४. सुख र एकाग्रतासहितको चतुर्थध्यान चित्त ^(६८) १५. उपेक्षा र एकाग्रतासहितको पञ्चमध्यान चित्त ^(६९) |

२५. पञ्चधा ज्ञानभेदेन, रूपावचरमानसं ।

पुञ्जपाकक्रियाभेदा, तं पञ्चदसधा भवे ॥

२५. पञ्चविधका ध्यानका भेदानुसार, रूपावचर मानसिकता^{५५}लाई ।

पुण्यविपाक क्रियाको भेदानुसार, ती पञ्चविधका हुन्छन् ॥

ध्यानादि भेदानुसार रूपावचर चित्तको तालिका नं. १२

| ध्यान | कुशल | विपाक | क्रिया |
|---------|------|-------|--------|
| प्रथम | ३ | १ | १ |
| द्वितीय | ३ | १ | १ |
| तृतीय | ३ | १ | १ |
| चतुर्थ | ३ | १ | १ |
| पञ्चम | ३ | १ | १ |
| जम्मा | १५ | ५ | ५ |

अरूपावचरचित्तं

अरूपावचर चित्त

२६. आकासानञ्जायतनकुसलचित्तं, विज्ञाणञ्जायतनकुसलचित्तं, आकिञ्चञ्जायतनकुसलचित्तं, नेवसञ्जानासञ्जायतनकुसलचित्तञ्चेति इमानि चत्तारिपि अरूपावचरकुसलचित्तानि नाम ।

^{५५}मनस्थिति, मन, चित्त, विज्ञान

२६. आकाशानन्त्यायतन^{५०} कुशलचित्त^(७०), विज्ञानन्त्यायतन^{५६}
कुशलचित्त^(७१), आकिञ्चन्यायतन^{५७} कुशलचित्त^(७२) र नैवसंज्ञानासंज्ञायतन^{५८}
कुशलचित्त^(७३) गरी यी चार अरूपावचर कुशलचित्त भनी भनिन्छ।

२७. आकाशानञ्जायतनविपाकचित्तं, विज्ञानञ्जायतनविपाकचित्तं,
आकिञ्चञ्जायतनविपाकचित्तं, नैवसञ्ज्ञानासञ्जायतनविपाकचित्तञ्चेति इमानि
चत्तारिपि अरूपावचरविपाकचित्तानि नाम।

२७. आकाशानन्त्यायतन विपाकचित्त^(७४), विज्ञानन्त्यायतन
विपाकचित्त^(७५), आकिञ्चन्यायतन विपाकचित्त^(७६) र नैवसंज्ञानासंज्ञायतन
विपाकचित्त^(७७) गरी यी चार अरूपावचर विपाकचित्त भनी भनिन्छ।

२८. आकाशानञ्जायतनकिरियचित्तं, विज्ञानञ्जायतनकिरियचित्तं,
आकिञ्चञ्जायतनकिरियचित्तं, नैवसञ्ज्ञानासञ्जायतनकिरियचित्तञ्चेति इमानि
चत्तारिपि अरूपावचरकिरियचित्तानि नाम।

२८. आकाशानन्त्यायतन क्रियाचित्त^(७८), विज्ञानन्त्यायतन क्रियाचित्त^(७९),
आकिञ्चन्यायतन क्रियाचित्त^(८०) र नैवसंज्ञानासंज्ञायतन क्रियाचित्त^(८१) गरी यी चार
अरूपावचर क्रियाचित्त भनी भनिन्छ।

२९. इच्चेवं सब्बथापि द्वादस अरूपावचरकुसलविपाककिरियचित्तानि
समत्तानि।

२९. यसरी सबै बाह बटा अरूपावचर कुसल, विपाक र क्रिया चित्त

“आकाशानन्त्यायतन - यसमा ‘आकाश + अनन्त + आयतन’ छ। जसमा अनन्त आकाश नै
आकाशान्त्य हो, आयतन भनेको आधार हो, त्यो आकाशप्रज्ञप्तिको आलम्बन गरेको प्रवृत्त कुशलचित्तलाई
आकाशानन्त्यायतन कुशलचित्त भनिन्छ। यो आकाश कसिण ध्यानमा पर्न आउँछ। यसको आधार उपेक्षा र
एकाग्रता ध्यानाङ्ग हुन्छ।

“विज्ञानन्त्यायतन - यसमा ‘विज्ञान + अनन्त + आयतन’ छ। जसमा अनन्त विज्ञान नै विज्ञानान्त्य हो,
विज्ञान भनेको जान्ने मात्र हो, आयतन भनेको आधार हो, त्यो आरूप्य विज्ञानको आलम्बन गरेको प्रवृत्त
कुशलचित्त नै विज्ञानानन्त्यायतन कुशलचित्त हो। यसमा आकाशप्रज्ञप्तिलाई अतिक्रमण गरी प्रथम आरूप्य
विज्ञानलाई आलम्बन गर्छ।

“आकिञ्चन्यायतन - जसमा केही छैन भन्नु नै अकिञ्चित् हो। त्यो भनेको नै प्रथम आरूप्य विज्ञानलाई
अतिक्रमण गरेर नास्तिभावप्रज्ञप्तिलाई आलम्बन गर्नु हो। आयतन भनेको आधार हो। त्यसैले यो नास्तिभाव
आलम्बनमा प्रवृत्त भएको कुशलचित्त नै आकिञ्चन्यायतन हो। यसमा केवल अभावप्रज्ञप्ति मात्र हुन्छ।

“नैवसंज्ञानासंज्ञायतन - यसमा ‘नैव + संज्ञा + न + असंज्ञा + आयतन’ छ। यसमा संज्ञा होइन र
असंज्ञा पनि होइन तर केही सुख संज्ञा छ भनिएको हो। संज्ञा भनेको चिन्नु हो। संज्ञा पनि नभएको र असंज्ञा
पनि नभएको अति सुख संज्ञा चैतसिकलाई लिइएको हो। उदाहरणको लागि - पानीले भिजेको ठाउँमा ‘क’ले
‘ख’लाई भन्यो - “त्यहाँ नबस! पानी छ।” ‘ख’ले भन्यो - “त्यसो भए म नुहाउनेछु, पानी त्याऊ।” ‘क’ले
भन्यो - “पानी छैन।” ‘क’ले पहिला - “पानी छ” भन्नु र पछि - “पानी छैन” भन्नु पानी नभएको होइन
केवल नुहाउनको लागि पानी पर्याप्त छैन, पानी नै छैन भनेको होइन, यहाँ पनि संज्ञा नै छँदैछैन भनेको होइन।
आयतन भनेको आधार हो। यसमा नास्तिभाव प्रज्ञप्तिलाई अतिक्रमण गरी तृतीय आरूप्य विज्ञानलाई आलम्बन
गरिन्छ। तृतीय आरूप्य विज्ञानको आलम्बनमा प्रवृत्त भएको कुशलचित्त नै नैवसंज्ञानासंज्ञायतन हो।

यसरी यी अरूप चार ध्यानमा आलम्बन गर्नुपर्ने र अतिक्रमण गर्नुपर्ने देखाइएको छ।

३०. आलम्बणप्पभेदेन चतुधारुप्पमानसं ।
पुञ्जपाकक्रियाभेदा, पुन द्वादसधा ठितं ॥
३०. आलम्बनको भेदानुसार चतुर्विध अरूप मानसिकतालाई ।
पुण्य विपाक र क्रियाको भेद अनुसार, फेरि बाह्र हुन्छन् ॥

आलम्बनको भेदानुसार अरूपावचर चित्तको तालिका नं. १३

| | चित्त | आलम्बितव्य | अतिक्रमितव्य | कुशल | विपाक | क्रिया |
|---|----------------------|------------------------|------------------------|------|-------|--------|
| १ | आकाशानन्त्यायतन | आकाशप्रज्ञप्ति | कसिणप्रज्ञप्ति | (७०) | (७४) | (७८) |
| २ | विज्ञानन्त्यायतन | प्रथम आरूप्यविज्ञान | आकाशप्रज्ञप्ति | (७१) | (७५) | (७९) |
| ३ | आकिञ्चन्यायतन | नास्तिभावप्रप्ति | प्रथम आरूप्यविज्ञान | (७२) | (७६) | (८०) |
| ४ | नैवसंज्ञानासंज्ञायतन | तृतीय आरूप्यविज्ञान | नास्तिभावप्रप्ति | (७३) | (७७) | (८१) |

१२ वटा अरूपावचर चित्तको तालिका नं. १४

| | |
|----------------------|---|
| कुशल चित्त ४ | १. आकाशानन्त्यायतन चित्त _(७०) २. विज्ञानन्त्यायतन चित्त _(७१) ३. आकिञ्चन्यायतन चित्त _(७२) ४. नैवसंज्ञानासंज्ञायतन चित्त _(७३) |
| विपाक चित्त ४ | ५. आकाशानन्त्यायतन चित्त _(७४) ६. विज्ञानन्त्यायतन चित्त _(७५) ७. आकिञ्चन्यायतन चित्त _(७६) ८. नैवसंज्ञानासंज्ञायतन चित्त _(७७) |
| क्रिया चित्त ४ | ९. आकाशानन्त्यायतन चित्त _(७८) १०. विज्ञानन्त्यायतन चित्त _(७९) ११. आकिञ्चन्यायतन चित्त _(८०) १२. नैवसंज्ञानासंज्ञायतन चित्त _(८१) |

कुशल, विपाक र क्रियाको भेद अनुसार चित्तको तालिका नं. १५

| आरम्भण | | कुशल | विपाक | क्रिया |
|----------------------|---|------|-------|--------|
| आकाशानन्त्यायतन | ३ | १ | १ | १ |
| विज्ञानन्त्यायतन | ३ | १ | १ | १ |
| आकिञ्चन्यायतन | ३ | १ | १ | १ |
| नैवसंज्ञानासंज्ञायतन | ३ | १ | १ | १ |
| जम्मा = १२ | | ४ | ४ | ४ |

लोकुत्तरचित्तं लोकोत्तर चित्तं^{१९} ८

३१. सोतापत्तिमग्गचित्तं सकदागामिमग्गचित्तं, अनागामिमग्गचित्तं, अरहत्तमग्गचित्तञ्चेति इमानि चत्तारिपि लोकुत्तरकुसलचित्तानि नाम।

३१. स्रोतापत्ति मार्गचित्तं^{६०} (८२), सकृदागामि मार्गचित्तं^{६१} (८३), अनागामि मार्गचित्तं^{६२} (८४) र अर्हत्^{६३} मार्गचित्तं^{६४} (८५) गरी यी चार लोकोत्तर कुशल चित्त भनिन्छन्।

३२. सोतापत्तिफलचित्तं, सकदागामिफलचित्तं, अनागामिफलचित्तं, अरहत्तफलचित्तञ्चेति इमानि चत्तारिपि लोकुत्तरविपाकचित्तानि नाम।

३२. स्रोतापत्ति फलचित्तं^{६४} (८६), सकृदागामि फलचित्तं^{६५} (८७), अनागामि फलचित्तं^{६६} (८८), अर्हत् फलचित्तं^{६७} (८९) गरी यी चार लोकोत्तर विपाकचित्त भनिन्छन्।

३३. इच्चेवं सब्बथापि अट्ट लोकुत्तरकुसलविपाकचित्तानि समत्तानि।

३३. यसरी सबै आठ लोकोत्तर कुशलविपाक चित्त समाप्त।

८ वटा लोकोत्तर चित्तको तालिका नं. १६

| | |
|--------------------|---|
| ४ वि ल कि | १. स्रोतापत्ति मार्गचित्तं ^(८२) २. सकृदागामि मार्गचित्तं ^(८३) ३. अनागामि मार्गचित्तं ^(८४) ४. अर्हत् मार्गचित्तं ^(८५) |
|--------------------|---|

^{१९}लोकोत्तरचित्त - निर्वाणलाई आरम्भण गर्ने चित्तलाई लोकोत्तर चित्त भनिन्छ। यसको शाब्दिक अर्थ लोक + उत्तर = लोकोत्तर, यसको अर्थ पञ्चस्कन्धलाई नाघेर जानु हो। यहाँ पञ्चस्कन्ध भनेको रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार र विज्ञान स्कन्ध हुन्। जतलाई नाम-रूप पनि भनिन्छ। यहाँ नाममा रूप बाहेकका चार स्कन्ध समावेश छन्।

^{६०}स्रोतापत्तिमार्गचित्त - यसमा 'स्रोत+आपत्ति+मार्ग+चित्त' हुन्छ। स्रोत भनेको धारा प्रवाह हो। यहाँ आर्यअष्टाङ्गिक मार्गलाई स्रोत भनिएको हो। आपत्ति भनेको आर्यअष्टाङ्गिक मार्गको स्रोतमा पुग्नु हो। मार्ग भनेको क्लेशलाई माउँ जानु नै मार्ग हो। यसरी निर्वाण प्रार्थीहरूले आर्यअष्टाङ्गिक मार्गमा लागेर क्लेशलाई निर्मूल गर्दै जाने अभ्यास पद्धतिमा उत्पन्न हुने चित्तलाई स्रोतपत्तिमार्गचित्त भनिन्छ। यो मार्गमा लाग्यो भने सत्कायदृष्टि, विचिकित्ता, शीलव्रतपरामर्श प्रहाण भएको हुन्छ। जसको यो प्रहाण हुन्छ, ऊ अपाय भूमिमा उत्पन्न हुँदैन। अधिकतम जन्म लिनुपरेमा सातपटक मात्र जन्म लिन्छ।

^{६१}सकृदागामी - यस लोकबाट गएर फेरि एकपटक यहाँ आउनेलाई सकृदागामी भनिन्छ। सकृदागामि-मार्गचित्तले युक्त भएकोलाई सकृदागामि-मार्गचित्त भनिन्छ। यो चित्त वृद्धि गरेर राग, द्वेष, मोहलाई पातलो पारेर कमजोर पारेका हुन्छन्।

^{६२}अनागामी - यस कामभूमिमा फेरि प्रतिसन्धि लिन नआउने हुनाले अनागामी भनिन्छ। अनागामि-मार्गलाई वृद्धि गरियो भने कामराग र व्यापाद विशेषरूपले प्रहाण हुन्छ।

^{६३}अर्हत् - क्लेशलाई प्रहाण गर्दै जाने मार्गलाई अर्हत् मार्ग भनिन्छ। अर्हत् मार्ग वृद्धि गरेर सबै क्लेशलाई निर्मूल गरेकोलाई अर्हत् भनिन्छ।

^{६४}फलचित्त - ती मार्गचित्तहरूद्वारा परिणाम उपलब्ध गरेको चित्तलाई फलचित्त भनिन्छन् अथवा विपाकचित्त पनि भनिन्छ।

| | |
|---------------|---|
| विपाक चित्त ४ | ५. स्रोतापत्ति फलचित्त(८६) ६. सकृदागामि फलचित्त(८७) ७. अनागामि फलचित्त(८८) ८. अर्हत् फलचित्त(८९) |
|---------------|---|

३४. चतुमग्गप्पभेदेन, चतुधा कुसलं तथा ।
पाकं तस्स फलत्ताति, अट्ठधानुत्तरं मतं ॥

३४. चार मार्गको भेदानुसार, चतुर्विध कुशल तथा ।
विपाक त्यसको फलको कारणले, आठविधका अनुत्तर छन् ॥

लोकोत्तर ८ चित्तको तालिका नं. १७

| | मार्ग | फल |
|-------------|-------|------|
| स्रोतापत्ति | (८२) | (८६) |
| सकृदागामि | (८३) | (८७) |
| अनागामि | (८४) | (८८) |
| अर्हत् | (८५) | (८९) |

चित्तगणनसङ्ग्रहो चित्त गणना संग्रह

३५. द्वादसाकुसलानेवं, कुसलानेकवीसति ।
छत्तिसेव विपाकानि, क्रियचित्तानि वीसति ॥

३५. बाह अकुशल मात्र नै, कुशल एक्काइस ।
छत्तीस मात्र विपाक, क्रियाचित्तहरू बीस छन् ॥

३६. चतुपञ्जासधा कामे, रूपे पन्नरसीरये ।
चित्तानि द्वादसारूपे, अट्ठधानुत्तरे तथा ॥

३६. चउन्नविधका कामभूमिमा, रूपभूमिमा पन्ध्र छन् ।
चित्तहरू बाह अरूप भूमिमा, आठविध अनुत्तर भूमिमा छन् ॥

जाति भेदानुसार ८९ चित्तको तालिका नं. १८

| | अकुशल | कुशल | अव्याकृत | |
|----------|-------|------|----------|--------|
| | | | विपाक | क्रिया |
| कामावचर | १२ | ८ | २३ | ११ |
| रूपावचर | - | ५ | ५ | ५ |
| अरूपावचर | - | ४ | ४ | ४ |
| लोकोत्तर | - | ४ | ४ | - |
| | १२ | २१ | ३६ | २० |

भूमि भेदानुसार ८९ चित्तको तालिका नं. १९

| लौकिक चित्त ८१ | | | | | | | | | | लोकोत्तर ८ | | | | | | |
|----------------|------------|------------|-----------------|-----------------|------------|------------|-----------|-------------|----------|---------------|------------|----------|-----------|------------|-----------|--------|
| कामावचर ५४ | | | | | | महग्गत २७ | | | | | | | | | | |
| अकुशल - १२ | | | अहेतुक - १८ | | | रूपावचर १५ | | अरूपावचर १२ | | | | | | | | |
| लोकभूत - ८ | देषभूत - २ | मोरभूत - २ | अकुशाविचारक - ७ | कुशालविचारक - ८ | क्रिया - ३ | कुशल - ८ | विपाक - ८ | क्रिया - ८ | कुशल - ५ | विपाक - ५ | क्रिया - ५ | कुशल - ४ | विपाक - ४ | क्रिया - ४ | मार्ग - ४ | फल - ४ |

३७. इत्थमेकूननवृत्तिपभेदं पन मानसं।

एकवीससतं वाथ, विभजन्ति विचक्खणा ॥

३७. यसरी उन्नान्ब्वेविधको मानसिकतालाई।

एक सय एक्काइस भनी, विभाजन गर्दछन् विद्वानहरू ॥

वित्थारगणना
विस्तृत चित्त गणना

३८. कथमेकूननवृत्तिविधं चित्तं एकवीससतं होति? वितक्कविचार-पीतिसुखेकग्गतासहितं पठमज्झानसोतापत्तिमग्गचित्तं, विचारपीतिसुखेकग्गतासहितं दुतियज्झानसोतापत्तिमग्गचित्तं, पीतिसुखेकग्गतासहितं ततियज्झानसोतापत्तिमग्गचित्तं, सुखेकग्गतासहितं चतुत्थज्झानसोतापत्तिमग्गचित्तं, उपेक्खेकग्गतासहितं पञ्चमज्झानसोतापत्तिमग्गचित्तञ्चेति इमानि पञ्चपि सोतापत्तिमग्गचित्तानि नाम।

३८. कसरी उन्नान्ब्वेविधका चित्तलाई एक सय एक्काइ हुन्छन्? वितर्क, विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको प्रथमध्यान स्रोतापत्ति मार्गचित्त^(८२), विचार, प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको द्वितीयध्यान स्रोतापत्ति मार्गचित्त^(८३), प्रीति, सुख र एकाग्रतासहितको तृतीयध्यान स्रोतापत्ति मार्गचित्त^(८४), सुख र एकाग्रतासहितको चतुर्थध्यान स्रोतापत्ति मार्गचित्त^(८५), उपेक्षा र एकाग्रतासहितको पञ्चमध्यान स्रोतापत्ति मार्गचित्त^(८६) गरी यी पाँच स्रोतापत्ति मार्गचित्त भनिन्छ।

३९. तथा सकदागामिमग्गअनागामिमग्गअरहत्तमग्गचित्तञ्चेति समवीसति मग्गचित्तानि।

३९. त्यस्तै सकृदागामि मार्गचित्त, अनागामि मार्गचित्त र अर्हत् मार्गचित्त गरी बीस वटा मार्गचित्त^{(८७)-(१०१)} हुन्छन्।

४०. तथा फलचित्तानि चेति समचत्तालीस लोकोत्तरचित्तानि भवन्तीति ।
४०. त्यस्तै नै फलचित्तहरू गरी लोकोत्तर चित्त चालीस (१०२)-(१२१) हुन्छन् ।

लोकोत्तर चालिस चित्तको तालिका नं. २०

| ध्यान | मार्ग | | | | फल | | | |
|---------|-------------|-----------|---------|--------|-------------|-----------|---------|--------|
| | स्रोतापत्ति | सकृदागामि | अनागामि | अर्हत् | स्रोतापत्ति | सकृदागामि | अनागामि | अर्हत् |
| प्रथम | (८२) | (८७) | (९२) | (९७) | (१०२) | (१०७) | (११२) | (११७) |
| द्वितीय | (८३) | (८८) | (९३) | (९८) | (१०३) | (१०८) | (११३) | (११८) |
| तृतीय | (८४) | (८९) | (९४) | (९९) | (१०४) | (१०९) | (११४) | (११९) |
| चतुर्थ | (८५) | (९०) | (९५) | (१००) | (१०५) | (११०) | (११५) | (१२०) |
| पञ्चम | (८६) | (९१) | (९६) | (१०१) | (१०६) | (१११) | (११६) | (१२१) |

चित्त (८९/१२१) को तालिका नं. २१

| | | |
|----------------------------|--|-----------------------------|
| कामावचर (५४) | महगत (२७) | लोकोत्तर (८/४०) |
| अकुसल (१२) | रूपावचर (१५) | लोकोत्तर (८) |
| ●●●●●●●● (लोभमूल ८) | ●●●●●● (कुसल ५) | ●●●●●● (कुसल ४) |
| ●● (दोषमूल २) | ●●●●●● (विपाक ५) | ●●●●●● (विपाक ४) |
| ●● (मोहमूल २) | ●●●●●● (क्रिया ५) | |
| अहेतुक (१८) | अरूपावचर (१२) | लोकोत्तर (४०) |
| ●●●●●●●● (अकुसलविपाक ७) | ●●●●●● (कुसल ४) | ●●●●●● (स्रोतापत्तिमग ५) |
| ●●●●●●●● (कुसलविपाक ८) | ●●●●●● (विपाक ४) | ●●●●●● (सकदागामिमग ५) |
| ●●●●●● (क्रिया ३) | ●●●●●● (क्रिया ४) | ●●●●●● (अनागामिमग ५) |
| सोभन (२४) | जम्मा कुसलचित्त ३७ (८+५+४+२०) | ●●●●●● (अरहत्तमग ५) |
| ●●●●●●●● (कुसल ८) | | ●●●●●● (स्रोतापत्तिफल ५) |
| ●●●●●●●● (विपाक ८) | जम्मा विपाक चित्त ५२ (७+८+८+५+४+२०) | ●●●●●● (सकदागामिफल ५) |
| ●●●●●●●● (क्रिया ८) | | ●●●●●● (अनागामिफल ५) |
| | जम्मा क्रियाचित्त २० (३+८+५+४) | ●●●●●● (अरहत्तफल ५) |

४२. यथा च रूपावचरं, गृह्यतानुत्तरं तथा ।
 पठमादिज्ञानभेदे, आरूप्यञ्चापि पञ्चमे ॥
 एकादसविधं तस्मा, पठमादिकमीरितं ।
 ज्ञानमेकेकमन्ते तु, तेवीसतिविधं भवे ॥
४२. जसरी रूपावचर चित्तलाई, अनुत्तर चित्तमा लिइएको छ त्यस्तै ।
 प्रथमादि ध्यान भेदमा, आरूप्यलाई पनि पञ्चम ध्यानमा ॥
 एघारविध त्यसैले, प्रथमादि गरी भनिएको छ ।
 अन्तिम ध्यान मात्र, तेइसविध छन् ॥

लौकिक र लोकोत्तर ध्यान चित्तको तालिका नं. २३

| ध्यान | रूपावचर १५ | | | अरूपावचर १२ | | | लोकोत्तर ४० | | जम्मा |
|---------|------------|-------|--------|-------------|-------|--------|-------------|-------|-------|
| | कुशल | विपाक | क्रिया | कुशल | विपाक | क्रिया | कुशल | विपाक | |
| प्रथम | १ | १ | १ | - | - | - | ४ | ४ | ११ |
| द्वितीय | १ | १ | १ | - | - | - | ४ | ४ | ११ |
| तृतीय | १ | १ | १ | - | - | - | ४ | ४ | ११ |
| चतुर्थ | १ | १ | १ | - | - | - | ४ | ४ | ११ |
| पञ्चम | १ | १ | १ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | २३ |
| | ५ | ५ | ५ | ४ | ४ | ४ | २० | २० | |

ध्यानादि भेदानुसार चित्तको तालिका नं. २४

| ध्यान | लौकिकचित्त | लोकोत्तरचित्त | जम्मा |
|---------|------------|---------------|-------|
| प्रथम | ३ | ८ | ११ |
| द्वितीय | ३ | ८ | ११ |
| तृतीय | ३ | ८ | ११ |
| चतुर्थ | ३ | ८ | ११ |
| पञ्चम | १५ | ८ | २३ |
| जम्मा | २७ | ४० | ६७ |

४३. सत्तिसविधं पुञ्जं, द्विपञ्चासविधं तथा ।
 पाकमिच्छाहु चित्तानि, एकवीससतं बुधा ॥
४३. सैतीसविध^{१५} पुण्यका, बाउन्नविध त्यस्तै ।
 विपाक चित्तहरू भनी, एक सय एक्काइस विद्वानहरूले ॥

इति अभिधम्मत्थसङ्गहे चित्तसङ्ग्रहविभागो नाम पठमो परिच्छेदो ।
 यसरी अभिधर्मार्थ संग्रहमा चित्तसंग्रहविभाग भन्ने प्रथम परिच्छेद समाप्त ।

^{१५}जम्मा १२१ प्रकारका चित्तमा कुशलचित्त ३७, अकुशल चित्त १२, विपाक चित्त ५२, २ क्रियाचित्त २० हुन्छन् ।

८९ र १२१ चित्तको झलक

लौकिक चित्त ८१

कामावचर चित्त ५४

अकुशल चित्त १२

- (१)-(८) लोभमूल चित्त ८
- (९)-(१०) द्वेषमूल चित्त २
- (११)-(१२) मोहमूल २

अहेतुक चित्त १८

- (१३)-(१९) अकुशल विपाक ७
- (२०)-(२७) कुशल विपाक ८
- (२८)-(३०) अहेतुक क्रिया ३

कामावचर शोभन चित्त २४

- (३१)-(३८) कामावचर कुशल ८
- (३९)-(४६) कामावचर विपाक ८
- (४७)-(५४) कामावचर क्रिया ८

रूपावचर चित्त १५

- (५५)-(५९) रूपावचर कुशल ५
- (६०)-(६४) रूपावचर विपाक ५
- (६५)-(६९) रूपावचर क्रिया ५

अरूपावचर चित्त १२

- (७०)-(७३) अरूपावचर कुशल ४
- (७४)-(७७) अरूपावचर विपाक ४
- (७८)-(८१) अरूपावचर क्रिया ४

लोकोत्तर चित्त ८ वा ४०

लोकोत्तर कुशल चित्त ४ वा २०

- (८२) वा (८२)-(८६) स्रोतापत्ति मार्ग १ वा ५
- (८३) वा (८७)-(९१) सकृदागामि मार्ग १ वा ५
- (८४) वा (९२)-(९६) अनागामि मार्ग १ वा ५
- (८५) वा (९७)-(१०१) अर्हत् मार्ग १ वा ५

लोकोत्तर विपाक चित्त ४ वा २०

- (८६) वा (१०२)-(१०६) स्रोतापत्ति मार्ग १ वा ५
- (८७) वा (१०७)-(१११) सकृदागामि मार्ग १ वा ५
- (८८) वा (११२)-(११६) अनागामि मार्ग १ वा ५
- (८९) वा (११७)-(१२१) अर्हत् मार्ग १ वा ५

२. चेतसिकपरिच्छेदो २. चैतसिक परिच्छेद

सम्प्रयोगलक्षण सम्प्रयोग लक्षण

१. एकुप्पादनरोधा च, एकालम्बणवत्थुका ।
चेतोयुता द्विपञ्जास, धम्मा चेतसिका मता ॥
१. एकोत्पाद निरोध र एकै आलम्बन र वस्तु (आधार) भएको ।
चित्तसित संयुक्त बाउन्न धर्म चैतसिक^{६६} जानुपर्छ ॥

अञ्जसमानचेतसिकं अन्यसमान चैतसिक

२. कथं? फस्सो वेदना सञ्जा चेतना एकगता जीवितिन्द्रियं
मनसिकारो चेति सत्तिमे चेतसिका सब्बचित्तसाधारणा नाम ।
२. कसरी? स्पर्श^{६७} (१), वेदना^{६८} (२), संज्ञा^{६९} (३), चेतना^{७०} (४),
एकाग्रता^{७१} (५), जीवितइन्द्रिय^{७२} (६) र मनसिकार^{७३} (७) यी सात चैतसिकलाई

“चित्तसितै सम्प्रयुक्त हुने धर्म चैतसिक हो। यो चित्तसित एकसमान भएर उत्पन्न हुन्छ। यसलाई सहोत्पन्न पनि भनिन्छ। साथै निरोध चित्तसितै हुन्छ। चित्त र चैतसिकको आलम्बन र आधार एकै हुन्छ। अर्को शब्दमा भन्दा, उत्पत्ति-निरोध र आलम्बन-आधार यी चार कुरा चित्त र चैतसिकमा एकैसाथ हुन्छ।

“स्पर्श - चित्त-चैतसिकले आलम्बनलाई घुनु मात्र स्पर्श हो। यो सुक्ष्म र गाढा पनि हुन्छ। जस्तो - अरूले तितौरा खाएको देखा मुख रसाउनु र झुलुङ्गे पुलमा हिँड्दा इराउनु आदि स्पर्शका उदाहरण हुन्।

“वेदना - वेदना भनेको आलम्बनलाई अनुभूति र अनुभव गर्नु हो। उदाहरणको लागि - खाना पकाउँदा भान्सेले खाना कस्तो भयो भनेर अलिकति चाख्नु र पछि भोकै मेटाउनको लागि खाना खानुमा अनुभूति र अनुभव फरक हुन्छ। यहाँ खाना चाख्नु भनेको स्पर्श हो भने भोकै मेटाउने गरी खाना खानु भनेको वेदना हो, तदर्थ स्पर्शमा अल्प मात्र अनुभूति र अनुभव हुन्छ भने वेदनामा धेरै अनुभूति र अनुभव हुन्छ।

“संज्ञा - आलम्बनलाई रातो निलो पहेंलो भनी चिन्नु मात्र संज्ञा हो। उदाहरणको लागि - कुनै पहेंलो वस्तु बच्चालाई दिँदा पहेंलो मात्र भनी चिन्नु बच्चाको संज्ञा हो भने त्यही वस्तु मातापितालाई दिँदा पहेंलो मात्र नभएर मूल्यवान् वस्तु सुन पनि हो भनी ठान्छन् त्यही सुन सुनारलाई दिँदा उसले नक्कली-सक्कली छ-छैन भन्ने विन्दछ। यस उदाहरणमा बच्चा संज्ञा हो, मातापिता विज्ञान हो भने सुनारको चिन्नेपना प्रज्ञा हो। संज्ञा भनेको चिन्नु मात्र भएकोले यो मिय्यावृष्टि वा सत्य दुबै हुनसक्छ।

“चेतना - जुन धर्मले आलम्बन सम्प्रयुक्त धर्ममा उत्साहित गर्छ, प्रेरणा दिन्छ, प्रवृत्त गर्छ र जुटाउन टेवा दिन्छ भने त्यो नै चेतना हो।

“एकाग्रता - चित्तको स्थिर भावलाई नै एकाग्रता भनिन्छ। आरम्भमा चित्त विसिप्त नहुने जस्तै धुलोमा हावा आयो भने उडाउँछ तर पानी आयो भने सबैलाई टँसेर राख्छ। यो स्तम्भ जस्तो हो जुन हावा आप्तापनि चल्दैन।

“जीवितइन्द्रिय - सम्प्रयुक्त धर्मलाई बचाइराख्ने अथवा अनुपालन गरिराख्नेलाई जीवित-इन्द्रिय भनिन्छ। जस्तै कमलको फूललाई पोखरीमा पानीले बचाए जस्तै नाम-रूप धर्मलाई अनुपालन गर्दछ। जस्तै - सुसारले बच्चालाई स्नाहारेको जस्तो हो।

सर्वचित्त साधारण^७ भनिन्छ ।

३. वित्तको विचारो अधिमोक्खो वीरियं पीति छन्दो चाति छ इमे चेतसिकापकिण्णका नाम ।

३. वित्त^{७५} (८), विचार^{७६} (९), अधिमोक्ष^{७७} (१०), वीर्य^{७८} (११), प्रीति^{७९} (१२) र छन्द^{८०} (१३) गरी यी छ चैतसिकलाई प्रकीर्णक^{८१} भनिन्छ ।

४. एवमेते तेरस चेतसिका अञ्जसमानाति वेदितब्बा ।

४. यसरी यी तेह चैतसिकलाई अन्यसमान^{८२} भनी जान्नुपर्छ ।

१३ वटा अन्यसमान चैतसिकको तालिका नं. २५

| सर्वचित्त साधारण ७ | प्रकीर्णक ६ |
|--|--|
| स्पर्श ^(१) , वेदना ^(२) , संज्ञा ^(३) , चेतना ^(४) , एकाग्रता ^(५) , जीवित-इन्द्रिय ^(६) , र मनसिकार ^(७) | वित्त ^(८) , विचार ^(९) , अधिमोक्ष ^(१०) , वीर्य ^(११) , प्रीति ^(१२) , र छन्द ^(१३) |

अकुसलचेतसिक अकुशल चैतसिक

५. मोहो अहिरिकं अनोत्तपं उद्धच्चं लोभो दिट्ठि मानो दोसो इस्सा मच्छरियं कुक्कुच्चं थिनं मिद्धं विचिकिच्छा चेति चुट्टसिमे चेतसिका अकुसला

^{७१}मनसिकार - आरम्भणलाई मनन गर्ने नै मनसिकार हो। यसले आरम्भणहरूलाई अधि बढाउँछ। यसको शाब्दिक अर्थ मनमा गढ्ने अथवा मनमा लाग्ने हुन्छ। जस्तो - 'मन लागेको ठाउँमा जाने' भन्ने अर्थमा प्रयोग हुन्छ।

^{७२}सर्वचित्त साधारण - सबै चित्तमा यी सात चैतसिक समान रूपमा व्याप्त हुने भएकोले यसलाई सर्वचित्त साधारण भनिन्छ।

^{७३}वित्त - आरम्भणमा चित्तलाई लगाउनु वा ल्याउनुलाई वित्तक भनिन्छ।

^{७४}विचार - वित्तकले ल्याएको चित्तमा अनुमार्जन गर्नु वा पछ्याउनु नै विचार हो।

^{७५}अधिमोक्ष - आरम्भण भित्र्या होस् वा सत्य, त्यस आरम्भणलाई जेतुकै भएतापनि दृढ निर्णय गर्नु वा दृढ निश्चय गर्नु हो। सबै चित्तमा उत्पन्न हुने चैतसिक यी हुन्।

^{७६}वीर्य - उत्साहित गर्ने वा टेवा दिनेलाई नै वीर्य भनिन्छ। जस्तै - घर भत्किन लाग्दा काठले टेको लगाएर वीर्यको उपमा दिन सकिन्छ। यहाँ काठ भनेको वीर्य हो।

^{७७}प्रीति - आरम्भणमा प्रसन्न र प्रफूलित हुन रुचाउनेलाई प्रीति भनिन्छ। जस्तै - भोकाएको मानिसलाई प्रशस्त खाना पाउँदा हुने अनुभूति^{७८} हो।

^{७८}छन्द - आरम्भण गर्ने इच्छा मात्रलाई छन्द भनिन्छ। आरम्भणमा हुने इच्छा मन्द र प्रबल हुन्छन्। इच्छा प्रबल भयो भने लोभ र तृष्णातिर लम्किन्छ। यहाँ लोभ भएको प्रबल छन्द भन्न खोजिएको होइन। यहाँ हुने छन्द भनेको मन्द छन्द हो, जसमा इच्छा मात्र हुन्छ।

^{७९}प्रकीर्णक - सबै चित्तमा समान रूपले कहिले भिल्ले र कहिले नभिल्ले भएकोले यसलाई प्रकीर्णक चैतसिक भनिन्छ।

^{८०}अन्यसमान - कहिले कुशल चित्तमा भिल्ले जाने र कहिले अकुशल चित्तमा भिल्ले जाने भएकोले यसलाई अन्यसमान भनिन्छ। जस्तै - पानीमा कालो रङ्ग राखिन्छ भने कालो हुन्छ, सेतो रङ्ग राखियो भने सेतो नै हुन्छ। अर्को उदाहरणमा - एउटा शिकारी जङ्गलमा गयो भने शिकार गर्छ, धर्मसभामा गयो भने पुण्य गर्छ भने घान्ठे एउटै भएतापनि जङ्गल र धर्मसभामा हुने स्वभाव फरक-फरक हुन्छ, यहाँ घान्ठे अन्यसमान हो।

४. वीथिपरिच्छेदो

४. वीथि परिच्छेद

१. चित्तुप्पादानमिच्चेवं, कत्वा सङ्गहमुत्तरं।
भूमिपुग्गलभेदेन, पुब्बापरनियामितं ॥
पवत्तिसङ्गहं नाम, पटिसन्धिपवत्तियं।
पवक्खामि समासेन, यथासम्भवतो कथं ॥

१. उपरोक्त चित्तोत्पादको यसरी, गरेर संग्रह उत्तमको।
भूमि-पुद्गल भेदानुसार, अगाडि-पछाडि नियमितलाई।।
प्रवृत्ति संग्रह भन्ने, प्रतिसन्धि प्रवृत्तिलाई।
भन्नेछु विशेषरूपले संक्षिप्तरूपमा, यथासम्भव कसरी?।।

२. छ वत्थुनि छ द्वारानि छ आरम्भणानि छ विज्जाणानि छ वीथियो
छधा विसयप्पवत्तिवेति छ छक्कानि वेदितब्बानि।

२. छ वस्तु, छ द्वार, छ आरम्भण, छ विज्ञान, छ वीथि^{१३९} छविधा
विषयप्रवृत्ति गरी छ-छ समूह जान्नुपर्दछ।

३. वीथिमुत्तानं पन कम्मकम्मनिमित्तगतिनिमित्तवसेन तिविधा होति
विसयप्पवत्ति।

३. वीथि मुक्तको कर्म, कर्मनिमित्त र गतिनिमित्त अनुसार त्रिविध हुन्छन्
विषयप्रवृत्ति।

४. तत्थ वत्थुद्वारारम्भणानि पुब्बे वुत्तनयानेव।

४. त्यहाँ वस्तु, द्वार र आरम्भणहरू पूर्व नै बताइएको अनुसार हुन्छ।

विज्जाणछक्कं

विज्ञानको छ समूह

५. चक्खुविज्जाणं सोतविज्जाणं घानविज्जाणं जिह्वाविज्जाणं
कायविज्जाणं मनोविज्जाणञ्चेति छ विज्जाणानि।

५. चक्षुर्विज्ञान, श्रोत्रविज्ञान, घ्राणविज्ञान, जिह्वाविज्ञान, कायविज्ञान र
मनोविज्ञान गरी छ विज्ञान छन्।

^{१३९} वीथि - चित्त जाने वा प्रवृत्त भइरहेने अवस्थालाई वीथि भनिन्छ। वीथिको अर्थ हिँड्ने बाटो पनि हुन्छ।

वीथिछक्कं वीथिको छ समूह

६. छ वीथियो पन चक्खुद्वारवीथि सोतद्वारवीथि घानद्वारवीथि जिह्वाद्वारवीथि कायद्वारवीथि मनोद्वारवीथि चेति द्वारवसेन वा, चक्खुविज्ञाणवीथि सोतविज्ञाणवीथि घानविज्ञाणवीथि जिह्वाविज्ञाणवीथि कायविज्ञाणवीथि मनोविज्ञाणवीथि चेति विज्ञाणवसेन वा द्वारप्पवत्ता चित्तप्पवत्तियो योजेतब्बा।

६. छ द्वारवीथि भन्ने चक्षुद्वारवीथि, श्रोत्रद्वारवीथि, घ्राणद्वारवीथि, जिह्वाद्वारवीथि, कायद्वारवीथि र मनोद्वारवीथि गरी द्वारानुसार वा चक्षुर्विज्ञानवीथि, श्रोत्रविज्ञानवीथि, घ्राणविज्ञानवीथि, जिह्वाविज्ञानवीथि, कायविज्ञानवीथि, मनोविज्ञानवीथि गरी विज्ञानानुसार वा द्वारमा उत्पन्न भएको चित्तप्रवृत्तिहरू मिलाउनुपर्छ।

छ वीथिको समूह तालिका नं. ३८

| छ द्वारवीथि | छ विज्ञानवीथि |
|--|--|
| चक्षुद्वारवीथि, श्रोत्रद्वारवीथि, घ्राणद्वारवीथि, जिह्वाद्वारवीथि, कायद्वारवीथि, मनोद्वारवीथि | चक्षुर्विज्ञानवीथि, श्रोत्रविज्ञानवीथि, घ्राणविज्ञानवीथि, जिह्वाविज्ञानवीथि, कायविज्ञानवीथि, मनोविज्ञानवीथि |

Dhamma.Digital

वीथिभेदो वीथि भेद

७. अतिमहन्तं महन्तं परित्तं अतिपरित्तञ्चेति पञ्चद्वारे मनोद्वारे पन विभूतमविभूतञ्चेति छधा विसयप्पवत्ति वेदितब्बा।

७. अतिमहन्त, महन्त^{१४०}, परित्त^{१४१} र अतिपरित्त गरी पञ्चद्वारमा हुन्छन् भन्ने मनोद्वारमा विभूत (प्रकट, स्पष्ट) र अविभूत (अप्रकट, अस्पष्ट) गरी छविध विषयप्रवृत्ति जान्नुपर्छ।

^{१४०} ठूलो, उत्तम, अनेक, धेरै
^{१४१} सानो, न्यून, कम, थोरै

विषयप्रवृत्तिको तालिका नं. ३९

| छ आरम्भण | पञ्चद्वारमा | मनोद्वारमा |
|--------------------------------|---------------------------------------|---------------|
| रूप, शब्द, गन्ध, रस, स्पर्श | अतिमहन्त, महन्त, परित्त, अतिपरित्त | विभूत, अविभूत |
| धर्म | - | - |

पञ्चद्वारमा ७५ वीथिचित्तको तालिका नं. ४०

| वीथि | आरम्भण | | | |
|--------------|----------|-------|--------|-----------|
| | अतिमहन्त | महन्त | परित्त | अतिपरित्त |
| चक्षुद्वार | १ | २ | ६ | ६ |
| श्रोत्रद्वार | १ | २ | ६ | ६ |
| घ्राणद्वार | १ | २ | ६ | ६ |
| जिह्वाद्वार | १ | २ | ६ | ६ |
| कायद्वार | १ | २ | ६ | ६ |

पञ्चद्वारवीथि
पञ्चद्वार वीथि

८. कथं? उप्पादठितिभङ्गवसेन खणत्तयं एकचित्तक्खणं नाम।
८. कसरी? उत्पाद, स्थिति र भङ्गानुसार तीन क्षणलाई एक-चित्त-क्षण भनिन्छ।
९. तानि पन सत्तरस चित्तक्खणानि रूपधम्मणमायू।
९. ती सत्र चित्त-क्षण नै रूपधर्मको आयु हो।

१०. एकचित्तक्खणातीतानि वा बहुचित्तक्खणातीतानि वा ठितिप्पत्तानेव पञ्चारम्भणानि पञ्चद्वारे आपाथमागच्छन्ति। तस्मा यदि एकचित्तक्खणातीतकं रूपारम्भणं चक्खुस्स आपाथमागच्छति, ततो द्विक्खत्तुं भवङ्गे चलिते भवङ्गसोतं वोच्छिन्दित्वा तमेव रूपारम्भणं आवज्जन्तं पञ्चद्वारावज्जनचित्तं उप्पज्जित्वा निरुज्झति, ततो तस्सानन्तरं तमेव रूपं पस्सन्तं चक्खुविज्जाणं, सम्पटिच्छन्तं सम्पटिच्छनचित्तं, सन्तीरयमानं सन्तीरणचित्तं, ववत्थपेन्तं वोड्डुब्बनचित्तञ्चेति यथाक्कमं उप्पज्जित्वा निरुज्झन्ति, ततो परं एकूनतिसं कामावचरजवनेसु यं किञ्चि लद्धपच्चयं येभ्युयेन सत्तक्खत्तुं जवति, जवनानुबन्धानि च द्वे तदारम्भणपाकानि यथारहं पवत्तन्ति, ततो परं भवङ्गपातो।

१०. एक-चित्त-क्षण बितिसक्दा वा बहु-चित्त-क्षण बितिसक्दा स्थिति-क्षणमा पुग्दा पञ्च-आरम्भण पञ्चद्वारमा प्रकट हुन आउँछ। त्यसैले यदि एक-चित्त-क्षण बितिसक्दा रूपारम्भण चक्षुको प्रसादमा प्रकट हुन्छ। त्यसपछि दुईपटक

भवङ्ग चलन हुँदा भवङ्ग स्रोतलाई विच्छेद गरेर त्यही नै रूपारम्भणलाई आवर्जन गर्दै पञ्चद्वारावर्जन चित्त उत्पन्न भएर निरोध हुन्छ। त्यसपछि त्यसैको अनन्तरलाई त्यही नै रूपलाई हेर्दै चक्षुर्विज्ञान, ग्रहण गर्दै सम्प्रतिच्छनचित्त, निर्णय गर्दै सन्तीरणचित्त, व्यवस्था (नियमित) गर्दै वोडुपनचित्त गरी क्रमानुसार उत्पन्न भएर निरोध हुन्छन्। त्यसपछि उनान्तीस कामावचर-जवनमध्ये कुनै प्राप्त भएको प्रत्ययलाई प्रायःगरी सातपटक वेगपूर्वक गमन (जवन) गर्दछ। जवनको अनुगमन गर्ने दुई तदारम्भणविपाक योग्यतानुसार प्रवृत्त हुन्छन्। त्यसपछि भवङ्गपात हुन्छ।

११. एतावता चुद्दस वीथिचित्तुप्पादा, द्वे भवङ्गचलनानि, पुब्बेवातीतकमेकचित्तकखणन्ति कत्वा सत्तरस चित्तकखणानि परिपूरेन्ति, ततो परं निरुज्झति, आरम्भणमेतं अतिमहन्तं नाम गोचरं।

११. यसरी चौध वीथिचित्तोत्पाद, दुई भवङ्गचलन, बितिसकेको एक-चित्त-क्षण गरी सत्र चित्त-क्षण पूर्ण हुन्छ, त्यसपछि निरोध हुन्छ, यो आरम्भणलाई 'अतिमहन्त गोचर' भनिन्छ।

अतिमहन्त आरम्भणवीथिको तालिका नं. ४१

| भवङ्गस्रोत | - | - | चित्त संख्या |
|-----------------|-------|---|------------------------|
| अतीतभवङ्ग | १ | - | १९, २९ |
| भवङ्गचलन | २ | - | ३९-४६, ६०-६४ |
| भवङ्गच्छेद | ३ | - | ७४-७७ |
| पञ्चद्वारावर्जन | ४ | १ | २८ |
| चक्षुर्विज्ञान | ५ | २ | १३-१७, २०-२४ |
| सम्प्रतिच्छन | ६ | ३ | १८, २५ |
| सन्तीरण | ७ | ४ | १९, २६, २७ |
| वोडुपन | ८ | ५ | २९ |
| जवन | ९-१५ | ६ | १-१२, ३०, ३१-३८, ४७-५४ |
| तदारम्भण | १६-१७ | ७ | १९, २७, ३९-४६ |

१२. याव तदारम्भणुप्पादा पन अप्पहोन्तातीतकमापाथमागतं आरम्भणं महन्तं नाम, तत्थ जवनावसाने भवङ्गपातोव होति, नत्थि तदारम्भणुप्पादो।

१२. तदारम्भण उत्पाद हुनेसम्म नपुग्दा बितिसकेको रूपमा प्रकट हुनआएको आरम्भणलाई 'महन्त' भनिन्छ। त्यहाँ जवनको अन्तमा भवङ्गपात नै हुन्छ, तदारम्भण उत्पाद हुँदैन।

१३. याव जवनुप्पादापि अप्पहोन्तातीतकमापाथमागतं आरम्भणं परित्तं नाम, तत्थ जवनमपि अनुप्पज्जित्वा द्वत्तिकखत्तुं वोडुब्बनमेव पवत्तति, ततो परं भवङ्गपातोव होति।

१३. जवन उत्पादहुनेसम्म नपुग्दा बितिसकेको रूपमा प्रकट हुनआएको

आरम्भणलाई 'परित्त' भनिन्छ। त्यहाँ जवन पनि उत्पन्न नभएर दुई-तीनपटक वोडुपन नै प्रवृत्त हुन्छ, त्यसपछि भवङ्गपात नै हुन्छ।

१४. याव वोडुबुनुप्पादा च पन अप्पहोन्तातीतकमापाथमागतं निरोधासन्नमारम्भणं अतिपरित्तं नाम, तत्थ भवङ्गचलनमेव होति, नत्थि वीथिचित्तुप्पादो।

१४. वोडुपन उत्पाद हुनेसम्म नपुग्दा बितिसकेको रूपमा प्रकट हुनआएको निरोधासन्न आरम्भणलाई 'अतिपरित्त' भनिन्छ, त्यहाँ भवङ्गचलन मात्र हुन्छ, वीथिचित्तोत्पाद हुँदैन।

१५. इच्च्येवं चक्खुद्वारे, तथा सोतद्वारादीसु चेति सब्बथापि पञ्चद्वारे तदारम्भणजवनवोडुबुनमोघवारसङ्घातानं चतुन्नं वारानं यथाक्कमं आरम्भणभूता विसयप्पवत्ति चतुधा वेदितब्बा।

१५. यसरी चक्षुद्वारमा, त्यस्तै श्रोत्रद्वारादीमा गरी सबै पञ्चद्वारमा तदारम्भण, जवन, वोडुपन र मोघवार भन्ने चार वारलाई यथाक्रमानुसार आरम्भणभूत विषय-प्रवृत्ति चतुर्विध भनी जान्नुपर्दछ।

चक्षुद्वारवीथिको तालिका नं. ४२

| आरम्भण | अतीतभवङ्ग | भवङ्गचलन | भवङ्गच्छेदन | वीथिचित्त | वार |
|-----------|--|----------------------------------|----------------------------------|--|---------|
| अतिपरित्त | भ१ | भ१ | भ१ | प.च.स.स२.व.ज.ज.ज.ज.ज.ज.ज.त.त. | तदारम्भ |
| परित्त | भ२ भ३ | भ१ भ१ | भ१ भ१ | प.च.स.स२.व.ज.ज.ज.ज.ज.ज.ज.भ. प.च.स.स२.व.ज.ज.ज.ज.ज.ज.ज. | जवन |
| अतिपरित्त | भ४ भ५ भ६ भ७ भ८ भ९ | भ१ भ१ भ१ भ१ भ१ भ१ | भ१ भ१ भ१ भ१ भ१ भ१ | प.च.स.स२.व.व.व.(भ.भ.भ.) प.च.स.स२.व.व.व.(भ.भ.भ.) प.च.स.स२.व.व.व.(भ.भ.) प.च.स.स२.व.व.व.(भ.) प.च.स.स२.व.व.व. प.च.स.स२.व.व. | वोडुपन |
| अतिपरित्त | भ१० भ११ भ१२ भ१३ भ१४ भ१५ | भ२ भ२ भ२ भ२ भ२ भ२ | | भ.भ.भ.भ. भ.भ.भ.भ. भ.भ.भ. भ.भ. भ. | मोघ |

भ = अतीतभवङ्ग, भ१ = भवङ्गचलन, भ३ = भवङ्गच्छेद, प. = पञ्चद्वारावर्जन, च. = चक्षु, स. = सम्प्रतिच्छेदन, स२. = सन्तीरण, व. = वोडुपन, त. = तदारम्भण

१६. वीथिचित्तानि सत्तेव, चित्तुप्पादा चतुद्दस ।
 चतुपञ्जास वित्थारा, पञ्चद्वारे यथारह ॥
 १६. वीथिचित्तहरू सात नै, चित्तोत्पाद चौध छन् ।
 चउन्न विस्तृतरूपले, पञ्चद्वारमा यथायोग्यानुसार हुन्छन् ॥

अयमेत्थ पञ्चद्वारे वीथिचित्तप्पवत्तिनयो ।
 यो यहाँ पञ्चद्वारमा वीथिचित्त प्रवृत्तिनय समाप्त ।

आरम्भण र वीथिचित्तको तालिका नं. ४३

| आरम्भण | वीथिचित्त | वीथिचित्त प्रवृत्ति | जम्मा वीथिचित्त |
|-----------|-----------|---------------------|-----------------|
| अतिमहद् | ७ | १४ | ४६ |
| महद् | ६ | १२ | ३८ |
| परित्त | ५ | ७ | ९ |
| अतिपरित्त | - | - | - |

मनोद्वारवीथि परित्तजवनवारो
 मनोद्वारवीथि परित्तजवनवार

१७. मनोद्वारे पन यदि विभूतमारम्भणं आपाथमागच्छति, ततो परं भवङ्गचलनमनोद्वारावज्जनजवनावसाने तदारम्भणपाकानि पवत्तन्ति, ततो परं भवङ्गपातो ।

१७. मनोद्वारमा यदि विभूत आरम्भण प्रकटरूपमा आएमा, त्यसपछि भवङ्गचलन, मनोद्वारावर्जन र जवनको अन्तमा तदारम्भणविपाक प्रवृत्त हुन्छ, त्यसपछि भवङ्गपात हुन्छ ।

१८. अविभूते पनारम्भणे जवनावसाने भवङ्गपातोव होति, नत्थि तदारम्भणुप्पादोति ।

१८. अविभूत आरम्भणमा जवनको अन्तमा भवङ्गपात नै हुन्छ, तदारम्भण उत्पाद हुँदैन ।

१९. वीथिचित्तानि तीणेव, चित्तुप्पादा दसेरिता ।

वित्थारेन पनेत्थेकचत्तालीस विभावये ।

१९. वीथिचित्त तीन नै, चित्तोत्पादमा देखाइएको छ ।

विस्तृतरूपमा यहाँ एकचालीस छन् भनी विभाजन गर्नुपर्दछ ।

अयमेत्थ परित्तजवनवारो ।
 यहाँ यो परित्तजवनवार भयो ।

लेडी सयाडोको मतानुसार मनोद्वारवीथि तालिका नं. ४४

| अतिमहद् | महद् | परित्त | अतिपरित्त | |
|----------------|----------------|----------------|------------|----|
| भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | - |
| भवङ्गचलन | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | १ |
| भवङ्गच्छेद | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | २ |
| मनोद्वारावर्जन | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | ३ |
| जवन | भवङ्गचलन | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | ४ |
| जवन | भवङ्गच्छेद | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | ५ |
| जवन | मनोद्वारावर्जन | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | ६ |
| जवन | जवन | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | ७ |
| जवन | जवन | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | ८ |
| जवन | जवन | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | ९ |
| जवन | जवन | भवङ्गस्रोत | भवङ्गस्रोत | १० |
| तदारम्पण | जवन | भवङ्गचलन | भवङ्गस्रोत | ११ |
| तदारम्पण | जवन | भवङ्गच्छेद | भवङ्गस्रोत | १२ |
| भवङ्गपात | जवन | मनोद्वारावर्जन | भवङ्गस्रोत | - |

अप्पनाजवनवारो
अर्पणा जवनवार

२०. अप्पनाजवनवारो पन विभूताविभूतभेदो नत्थि, तथा तदारम्पणुप्पादो च।

२०. अर्पणा^{१४२} जवनवारमा विभूत र अविभूत भेद छैन, त्यस्तै तदारम्पण उत्पाद पनि।

२१. तत्थ हि जाणसम्पयुत्तकामावचरजवनानमट्टन्नं अञ्जतरस्मिं परिकम्मोपचारानुलोमगोत्रभुनामेन चतुक्खत्तुं तिक्खत्तुमेव वा यथाक्कमं उप्पज्जित्वा निरुद्धानन्तरमेव यथारहं चतुत्थं, पञ्चमं वा छब्बीसतिमहग्गत-लोकुत्तरजवनेसु यथाभिनीहारवसेन यं किञ्चि जवनं अप्पनावीथिमोतरति, ततो परं अप्पनावसाने भवङ्गपातोव होति।

२१. त्यहाँ ज्ञानसम्प्रयुक्त कामावचर जवन आठमध्ये कुनै एकमा परिकर्म, उपचार, अनुलोम, गोत्रभू भन्ने चारपटक वा तीनपटकसम्म यथाक्रमानुसार उत्पन्न भएर निरोधको अनन्तरमा नै यथायोग्य चार, पाँचपटकसम्म, छब्बीस महग्गत लोकोत्तर जवनमध्ये यथाअभिनिहार अनुसार कुनै जवनलाई अर्पणा वीथिमा अवतरण हुन्छ, त्यसपछि अर्पणाको अन्तमा भवङ्गपात नै हुन्छ।

^{१४२}अर्पणा - आरम्भणमा स्थिर भइरहने अवस्थालाई अर्पणा भनिन्छ।

२२. तथ सोमनस्ससहगतजवनानन्तरं अप्पनापि सोमनस्ससहगताव पाटिकङ्कितब्बा, उपेक्खासहगतजवनानन्तरं उपेक्खासहगताव, तथापि कुसलजवनानन्तरं कुसलजवनञ्चेव हेट्ठिमञ्च फलत्तयमप्पेति, किरियजवनानन्तरं किरियजवनं अरहत्तफलञ्चाति।

२२. त्यहाँ सौमनस्यसहगत जवनको अनन्तरमा अर्पणा पनि सौमनस्यसहगत नै इच्छित हुन्छ। उपेक्षासहगत जवनको अनन्तरमा उपेक्षासहगत नै इच्छित, त्यहाँ पनि कुशलजवनको अनन्तरमा कुशलजवन नै, तलको तीन फल उत्पन्न हुन्छ, क्रियाजवनको अनन्तरमा क्रियाजवन अर्हत्फलको हुन्छ।

२३. द्वत्तिस सुखपुञ्जम्हा, द्वादसोपेक्खका परं।
सुखितक्रियतो अट्ट, छ सम्भोन्ति उपेक्खका ॥

२३. बत्तिस सुख पुण्यबाट, बाह्र उपेक्षाको पछाडि।
सुख क्रियाबाट आठ, छ उत्पन्न हुन्छ उपेक्षाबाट।

२४. पुथुज्जनान सेक्खानं, कामपुञ्जतिहेतुतो।
तिहेतुकामक्रियतो, वीतरागानमप्पना ॥

२४. पृथजन शैक्ष्यको, काम पुण्य त्रिहेतुकबाट।
त्रिहेतुक काम क्रियाबाट, वीतरागीको (अर्हत्) अर्पणा हुन्छ ॥

अयमेत्थ मनोद्वारे वीथिचित्तप्पवत्तिनयो।
यहाँ यो मनोद्वारमा वीथिचित्त प्रवृत्तिनय हो।

पृथजन अर्हत् पुद्गलहरूको अर्पणाजवनको तालिका नं. ४५

| पुद्गल | वीथिचित्त | ध्यान र मार्गवीथि | |
|---------------------------------------|---|--|--------------------|
| पृथगजन शैक्ष्य | महाकुशल सौमनस्य सहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त | सौमनस्य रूप कुशल ४ | |
| | | सौमनस्य मार्ग कुशल १६ | |
| | | सौमनस्य तल्लो फल कुशल १२ | |
| महाकुशल उपेक्षा सहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त | १२ | उपेक्षा पञ्चम रूपध्यान र अरूप कुशल ५ | |
| | | उपेक्षा मार्ग कुशल ४ | |
| | | उपेक्षा फल कुशल ३ | |
| अशैक्ष्य | महाक्रिया सौमनस्य सहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त | सौमनस्य रूपक्रिया ४ | |
| | | सौमनस्य अर्हत्फल ४ | |
| | | उपेक्षा पञ्चम रूपध्यान र अरूप क्रिया ५ | |
| | महाक्रिया उपेक्षा सहगत ज्ञानसम्प्रयुक्त | ६ | उपेक्षा अर्हत्फल १ |

तदारम्मणनियमो तदारम्मण नियम

२५. सब्बत्थापि पनेत्थ अनिट्ठे आरम्मणे अकुसलविपाकानेव पञ्चविञ्जाणसम्पटिच्छनसन्तीरणतदारम्मणानि ।

२५. यहाँ सबै अनिष्ट आरम्मणमा अकुशलविपाक नै पञ्चविज्ञान, सम्प्रतिच्छन, सन्तीरण र तदारम्मण हुन्छन् ।

२६. इट्ठे कुसलविपाकानि ।

२६. इष्टमा कुशलविपाक ।

२७. अतिइट्ठे पन सोमनस्ससहगतानेव सन्तीरणतदारम्मणानि, तथापि सोमनस्ससहगतकिरियजवनावसाने सोमनस्ससहगतानेव तदारम्मणानि भवन्ति, उपेक्खासहगतकिरियजवनावसाने च उपेक्खासहगतानेव होन्ति ।

२७. अतिइष्टमा मात्र सौमनस्यसहगत नै सन्तीरण तदारम्मण हुन्छ, त्यहाँ सौमनस्यसहगत क्रियाजवनको अन्तमा सौमनस्य नै तदारम्मण हुन्छन्, उपेक्षासहगत क्रियाजवनको अन्तमा उपेक्षासहगत नै हुन्छन् ।

२८. दोमनस्ससहगतजवनावसाने च पन तदारम्मणानि चेव भवङ्गानि च उपेक्खासहगतानेव भवन्ति, तस्मा यदि सोमनस्सपटिसन्धिकस्स दोमनस्स-सहगतजवनावसाने तदारम्मणसम्भवो नत्थि, तदा यं किञ्चि परिचितपुब्बं परित्तरम्मणमारब्ध उपेक्खासहगतसन्तीरणं उप्पज्जति, तमनन्तरित्वा भवङ्गपातोव होतीति वदन्ति आचरिया ।

२८. दौर्मनस्यसहगत जवनको अन्तमा पनि तदारम्मणहरू र भवङ्गहरू उपेक्षासहगत नै हुन्छन्, त्यसैले यदि सौमनस्य प्रतिसन्धिकलाई दौर्मनस्यसहगत जवनको अन्तमा तदारम्मणको सम्भव हुँदैन, त्यसबेला कुनै पूर्वपरिचित परित्तरम्मणको आधारमा उपेक्षासहगत सन्तीरण उत्पन्न हुन्छ, त्यो अनन्तर भएर भवङ्गपात नै हुन्छन् भनी आचार्यहरूद्वारा भनिएको छ ।

२९. तथा कामावचरजवनावसाने कामावचरसत्तानं कामावचरधम्मेस्वेव आरम्मणभूतेसु तदारम्मणं इच्छन्तीति ।

२९. त्यस्तै नै कामावचर जवनको अन्तमा कामावचर सत्त्वहरूलाई कामावचर धर्ममा नै आरम्मणभूत तदारम्मण इच्छित हुन्छ ।

३०. कामे जवनसत्तालम्बणानं नियमे सति।
विभूतेति महन्ते च, तदारम्भणमीरितं ॥
३०. काममा जवन, सत्त्व र आरम्भण नियमित हुन्छ।
विभूत महन्तमा र, तदारम्भण भनिएको छ।।

अयमेत्थ तदारम्भणनियमो।
यो यहाँ तदारम्भ नियमं हो।

जवन र तदारम्भणको तालिका नं. ४६

| जवन | | तदारम्भण | |
|-----|--------------------------|----------|------------------|
| ५ | सौमनस्य सहगत कामक्रिया | ५ | सौमनस्य तदारम्भण |
| ६ | सौमनस्य सहगत कामक्रिया ४ | ६ | उपेक्षा तदारम्भण |
| | द्वेषमूल २ | | |
| १८ | महाकुशल ८ | ११ | तदारम्भण |
| | लोभमूल ८ | | |
| | मोहमूल २ | | |

जवननियमो
जवन नियम

३१. जवनेसु च परित्तजवनवीथियं कामावचरजवनानि सत्तक्खत्तुं छक्खत्तुमेव वा जवन्ति।

३१. जवनमध्ये परित्तजवनवीथिमा कामावचरजवनहरू सातपटक वा छपटक मात्र वेगपूर्वक गमन (जवन) गर्दछ।

३२. मन्दप्पवत्तियं पन मरणकालादीसु पञ्चवारमेव।

३२. मन्दप्रवृत्तिमा मरणासन्न कालमा पाँचपटक मात्र।

३३. भगवतो पन यमकपाटिहारियकालादीसु लहुकप्पवत्तियं चत्तारिपञ्च वा पच्चवेक्खणचित्तानि भवन्तीतिपि वदन्ति।

३३. भगवान् बुद्धको यमकप्रातिहार्य आदि समयादिमा छिट्टै प्रवृत्तिमा चार-पाँचपटक प्रत्यवेक्षणचित्तहरू हुन्छन् भनी भनिन्छ।

३४. आदिकम्मिकस्स पन पठमकप्पनायं महग्गतजवनानि अभिञ्जाजवनानि च सब्बदापि एकवारमेव जवन्ति, ततो परं भवङ्गपातो।

३४. आदिकर्मिक (कर्मस्थान शुरु गर्ने पुद्गल) को प्रथम अर्पणामा महग्गत जवनहरू र अभिज्ञा जवनहरू सँधै नै एकपटक मात्र वेगपूर्वक गमन (जवन) गर्दछ, त्यसपछि भवङ्गपात हुन्छ।

३५. चत्तारो पन मग्गुप्पादा एकचित्तक्खणिका, ततो परं द्वे तीणि फलचित्तानि यथारहं उप्पज्जन्ति, ततो परं भवङ्गपातो।

३५. चार मार्गोत्पाद चित्त एक-चित्त-क्षणको हो, त्यसपछि दुई-तीन फलचित्तहरू यथायोग्यतानुसार उत्पन्न हुन्छन्, त्यसपछि भवङ्गपात हुन्छ।

३६. निरोधसमापत्तिकाले द्विक्खत्तुं चतुत्थारुप्पजवनं जवति, ततो परं निरोधं फुसति।

३६. निरोधसमापत्तिकालमा दुईपटक चतुर्थ आरूप्य जवन वेगपूर्वक गमन (जवन) हुन्छन्, त्यसपछि निरोधमा पुग्दछ।

३७. वुट्टानकाले च अनागामिफलं वा अरहत्तफलं वा यथारहमेकवारं उप्पज्जित्वा निरुद्धे भवङ्गपातोव होति।

३७. उटेको समयमा अनागामिफल वा अर्हत्तफल यथायोग्यतानुसार एकपटक उत्पन्न भएर निरोधको समयमा भवङ्गपात नै हुन्छ।

३८. सब्बत्थापि समापत्तिवीथियं भवङ्गसोतो विय वीथिनियमो नत्थीति कत्वा बहूनिपि लब्धन्तीति।

३८. सबै समापत्तिवीथिमा भवङ्गस्रोतस्रै वीथिनियम छैन भनी धेरै पनि उपलब्ध हुन्छन् भनी ठान्नुपर्छ।

३९. सत्तक्खत्तुं परित्तानि, मग्गाभिज्जा सकिं मता।
अवसेसानि लब्धन्ति, जवनानि बहूनिपि॥

३९. सातपटक परित्त, मार्ग अभिज्ञा एकपटक मात्र छ।
अवशेष उत्पन्न हुन्छन्, जवनहरू बहुपनि॥

अयमेत्थ जवननियमो।
यो यहाँ जवन नियम हो।

चक्षुद्वारवीथिमा जवन नियम तालिका नं. ४७

| | | | |
|-----------------|----------|----|--|
| भवङ्गस्रोत | :: | |  १४ वित्तीय |
| तदारम्भण | :: | १७ | |
| तदारम्भण | :: | १६ | |
| जवन | :: | १५ | |
| | :: | १४ | |
| | :: | १३ | |
| | :: | १२ | |
| | :: | ११ | |
| | :: | १० | |
| | :: | ९ | |
| | बोद्धुपन | :: | |
| सन्तीरण | :: | ७ | |
| सम्प्रतिच्छन | :: | ६ | |
| पञ्चविज्ञान | :: | ५ | |
| पञ्चद्वारावर्जन | :: | ४ | |
| भवङ्ग उपच्छेद | :: | ३ | |
| भवङ्गचलन | :: | २ | |
| अतीत भवङ्ग | :: | १ | |
| भवङ्ग स्रोत | :: | | |

पुग्गलभेदो पुद्गल भेद

४०. दुहेतुकानमहेतुकानञ्च पनेत्थ किरियजवनानि चेव
अप्पनाजवनानि च न लब्धन्ति ।

४०. यहाँ दिहेतुक अहेतुकलाई क्रिया जवनहरू र अर्पणाजवनहरू उपलब्ध
हुँदैनन् ।

४१. तथा आणसम्पयुत्तविपाकानि च सुगतियं ।

४१. त्यस्तै ज्ञानसम्प्रयुक्त विपाकहरू र सुगतिमा ।

४२. दुग्गतियं पन आणविप्पयुत्तानि च महाविपाकानि न लब्धन्ति ।

४२. दुर्गतिमा ज्ञानविप्रयुक्त र महाविपाकहरू उपलब्ध हुँदैनन् ।

४३. तिहेतुकेसु च खीणासवानं कुसलाकुसलजवनानि न लब्धन्ति ।

४३. तिहेतुकमध्ये क्षीणास्रवहरूको कुशल-अकुशल जवनहरू उपलब्ध
हुँदैनन् ।

४४. तथा सेक्खपुथुज्जनानं किरियजवनानि ।

४४. त्यस्तै शैक्ष्य पृथग्जनहरूको क्रिया जवन ।

४५. दिट्ठिगतसम्पयुत्तविचिकिच्छाजवनानि च सेक्खानं ।

४५. दृष्टिगत सम्प्रयुक्त विचिकित्सा जवनहरू शैक्ष्यहरूको ।

४६. अनागामिपुग्गलानं पन पटिघजवनानि च न लब्धन्ति ।

४६. अनागामी पुद्गलहरूको प्रतिघ जवन उपलब्ध हुँदैनन् ।

४७. लोकोत्तरजवनानि च यथारहं अरियानमेव समुप्पज्जन्तीति ।

४७. लोकोत्तर जवनहरू यथायोग्यानुसार आर्यहरूमा मात्र उत्पन्न हुन्छन् ।

४८. असेक्खानं चतुचत्तालीस सेक्खानमुद्दिसे ।

छप्पञ्जासावसेसानं, चतुपञ्जास सम्भवा ॥

४८. अशैक्ष्यको चवालीस शैक्ष्यहरूको देखाइको छ ।

छपन्न अवशेषको, चउन्न सम्भव हुन्छन् ॥

अयमेत्थ पुग्गलभेदो ।
यो यहाँ पुद्गल भेद हो ।

भूमिविभागो
भूमि विभाग

४९. कामावचरभूमियं पनेतानि सब्बानिपि वीथिचित्तानि यथारहमुपलब्धन्ति ।

४९. कामावचर भूमिमा यी सबै नै वीथिचित्तहरू यथायोग्यानुसार उपलब्ध हुन्छन् ।

५०. रूपावचरभूमियं पटिघजवनतदारम्मणवज्जितानि ।

५०. रूपावचर भूमिमा प्रतिघ जवन तदारम्मण वर्जित हुन्छन् ।

५१. अरूपावचरभूमियं पठममग्गरूपावचरहसनहेट्ठिमारुप्पवज्जितानि च लब्धन्ति ।

५१. अरूपावचर भूमिमा प्रथममार्ग रूपावचर हसन तलको आरूप्य वर्जित उपलब्ध हुन्छन् ।

५२. सब्बथापि च तं तं पसादरहितानं तं तं द्वारिकवीथिचित्तानि न लब्धन्तेव ।

५२. सबैमा त्यही-त्यही प्रसादरहित त्यही-त्यही द्वारिकवीथिचित्तहरू उपलब्ध हुँदैनन् ।

५३. असञ्जसत्तानं पन सब्बथापि चित्तप्पवत्ति नत्थेवात्ति ।

५३. असंज्ञिक सत्त्वहरूका सर्वप्रकारले चित्तप्रवृत्ति नै हुँदैनन् ।

५४. असीति वीथिचित्तानि, कामे रूपे यथारहं ।

चतुसट्ठि तथारूपे, द्वेचत्तालीस लब्धरे ॥

५४. असी वीथिचित्तहरू, काममा, रूपमा यथायोग्यानुसार ।

चौसट्ठी त्यस्तै आरूप्यमा, बयालिस उपलब्ध हुन्छन् ॥

अयमेत्थ भूमिविभागो ।
यो यहाँ भूमि विभाग हो ।

५५. इच्छेवं छद्धारिकचित्तप्पवत्ति यथासम्भवं भवङ्गन्तरिता यावतायुकमब्बोच्छिन्ना पवत्तति ।

५५. यसरी छद्धारिक चित्त प्रवृत्ति यथासम्भव भवङ्गद्वारा अन्तरित भएर आयु पर्यन्त अट्टरूपले प्रवृत्त हुन्छन् ।

इति अभिधम्मत्थसङ्गहे वीथिसङ्गहविभागो नाम चतुत्थो परिच्छेदो ।
यसरी अभिधर्मार्थ संग्रहमा 'वीथिसंग्रहविभाग' भन्ने चौथो परिच्छेद समाप्त ।

अ/द्वि/त्रिहेतुक वीथिचित्तको तालिका नं. ४८

| पुद्गल | भूमि | संभव वीथिचित्त |
|----------------------|---------------|----------------|
| दुर्गति अहेतुक | ४ अपायभूमि | ३७ |
| सुगति अहेतुक | मनुष्य | ४१ |
| | चातुमहाराजिक | ४१ |
| | असंज्ञासत्त्व | - |
| द्विहेतुक | मनुष्य | ४१ |
| | ६ देवभूमि | |
| त्रिहेतुक पृथग्जन | कामसुगति | ४५/५४ |
| | रूप | ३८ |
| | अरूप | २३ |
| स्रोतापन्न सकृदागामी | कामसुगति | ४१/५० |
| | रूप | ३४ |
| | अरूप | १९ |
| अनागामी | कामसुगति | ३९/४८ |
| | रूप | ३४ |
| | अरूप | १९ |
| अरहन्त | कामसुगति | ३५/४४ |
| | रूप | ३० |
| | अरूप | १४ |

५. वीथिमुत्तपरिच्छेदो ५. वीथिमुक्त परिच्छेद

१. वीथिचित्तवसेनेवं, पवत्तियमुदीरितो ।
पवत्तिसङ्गहो नाम, सन्धियं दानि वुच्चति ॥

१. वीथिचित्त अनुसार नै, प्रवृत्तिलाई बताइसकेको छ ।
प्रवृत्ति संग्रह भन्ने, सन्धिमा अब भन्ने छ ।

२. चतस्सो भूमियो, चतुब्बिधा पटिसन्धि, चत्तारि कम्मनि, चतुधा मरणुप्पत्ति चेति वीथिमुत्तसङ्गहे चत्तारि चतुक्कानि वेदितब्बानि ।

२. चार भूमि, चतुर्विध प्रतिसन्धि, चार कर्म, चतुर्विध मरणोत्पत्ति गरी वीथि संग्रहमा चारको चारसमूह जान्नुपर्दछ ।

भूमिचतुक्कं
भूमि चतुष्क

३. तत्थ अपायभूमि कामसुगतिभूमि रूपावचरभूमि अरूपावचरभूमि चेति चतस्सो भूमियो नाम ।

३. त्यहाँ अपायभूमि, कामसुगतिभूमि, रूपावचरभूमि र अरूपावचरभूमि गरी चार भूमि भन्ने छन् ।

४. तासु निरयो तिरच्छानयोनि पेत्तिविसयो असुरकायो चेति अपायभूमि चतुब्बिधा होति ।

४. तीमध्ये नर्क, तिर्यक, प्रेत र असुरकाय गरी अपायभूमि चतुर्विध छन् ।

५. मनुस्सा चातुमहाराजिका तावतिसा यामा तुसिता निम्मानरति परनिम्मितवसवत्ती चेति कामसुगतिभूमि सत्तविधा होति ।

५. मनुष्य, चातुर्माहाराजिका, त्रयस्त्रिंश, यामा, तुषित, निर्माणरति र परनिर्मित-वशवर्ती गरी कामसुगतिभूमि सातविध छन् ।

६. सा पनायमेकादसविधापि कामावचरभूमिच्चेव सङ्गं गच्छति ।

६. ती एघारविध कामावचर भूमि भनी गणना गरिन्छ ।

७. ब्रह्मपारिसज्जा ब्रह्मपुरोहिता महाब्रह्मा चेति पठमज्झानभूमि ।

७. ब्रह्मपारिषय, ब्रह्मपुरोहित र महाब्रह्मा गरी प्रथमध्यानभूमि हुन् ।

८. परित्ताभा अप्पमाणाभा आभस्सरा चेति दुतियज्झानभूमि ।

८. परित्राभा, अप्रमाणाभा र आभाश्वर गरी द्वितीयध्यानभूमि हुन् ।

९. परित्तसुभा अप्पमाणसुभा सुभकिण्हा चेति ततियज्झानभूमि।

९. परित्रशुभा, अप्रमाणशुभा र शुभकृष्ण गरी तृतीयध्यानभूमि हुन्।

१०. वेहप्फला असज्जसत्ता सुद्धावासा चेति चतुत्थज्झानभूमीति
रूपावचरभूमि सोळसविधा होति।

१०. वृहत्फल, असंज्ञसत्त्व र शुद्धावास गरी चतुर्थध्यानभूमि गरेर
रूपावचरभूमि सोहविध हुन्छन्।

११. अविहा अतप्पा सुदस्सा सुदस्सी अकनिट्टा चेति सुद्धावासभूमि
पञ्चविधा होति।

११. अविहा, अत्रपा, सुदर्शा, सुदर्शी र अकनिष्ट गरी शुद्धावासभूमि
पञ्चविध हुन्छन्।

१२. आकासानञ्जायतनभूमि विज्जाणञ्जायतनभूमि आकिञ्च-
ञ्जायतनभूमि नेवसञ्जानासञ्जायतनभूमि चेति अरूपभूमि चतुब्बिधा होति।

१२. आकाशानन्त्यायतन, विज्ञानन्त्यायतन, आकिञ्चन्यायतन र
नैवसंज्ञानासंज्ञायतन गरी अरूपावचरभूमि चतुर्विध हुन्छन्।

१३. पुथुज्जना न लब्भन्ति, सुद्धावासेसु सब्बथा।

सोतापन्ना च सकदागामिनो चापि पुग्गला ॥

१३. पृथग्जनहरू उपलब्ध हुँदैनन्, शुद्धावासमा सर्वप्रकारले।

स्रोतापन्न र सकृदागामी पुद्गलहरू पनि ॥

१४. अरिया नोपलब्भन्ति, असज्जापायभूमिसु।

सेसट्टानेसु लब्भन्ति, अरियानरियापि च ॥

१४. आर्यहरू उपलब्ध हुँदैनन्, असंज्ञ र आपाय भूमिमा।

शेष स्थानमा उपलब्ध हुन्छन्, आर्य र अनार्यहरू ॥

इदमेत्थ भूमिचतुक्कं।

यो यहाँ भूमि चतुष्क हो।

पटिसन्धिचतुक्कं

प्रतिसन्धि चतुष्क

१५. अपायपटिसन्धि कामसुगतिपटिसन्धि रूपावचरपटिसन्धि
अरूपावचरपटिसन्धि चेति चतुब्बिधा पटिसन्धि नाम।

१५. अपाय प्रतिसन्धि, कामसुगति प्रतिसन्धि, रूपावचर प्रतिसन्धि र

अरूपावचर प्रतिसन्धि गरी चतुर्विध प्रतिसन्धि भन्ने हुन्छन्।

१६. तत्थ अकुसलविपाकोपेक्खासहगतसन्तीरणं अपायभूमियं ओक्कन्तिकखणे पटिसन्धि हुत्वा ततो परं भवङ्गं परियोसाने चवनं हुत्वा वोच्छिज्जति, अयमेकापायपटिसन्धि नाम।

१६. त्यहाँ अकुशलविपाक उपेक्षासहगत सन्तीरण अपायभूमिमा अवतरण हुने बेलामा प्रतिसन्धि लिएर त्यसपछि भवङ्गको अन्तमा च्युति भएर विच्छेद हुन्छ, यसलाई अपायप्रतिसन्धि भनिन्छ।

१७. कुसलविपाकोपेक्खासहगतसन्तीरणं पन कामसुगतियं मनुस्सानञ्चेव जच्चन्धादीनं भुम्मस्सितानञ्च विनिपातिकासुरानं पटिसन्धिभवङ्गच्युतिवसेन पवत्तति।

१७. कुशलविपाक उपेक्षासहगत सन्तीरण कामसुगतिमा मनुष्यहरूको जन्मिदादेखि अन्धो भएको र भूमि निश्चित विनिर्पातिक असुरको प्रतिसन्धि, भवङ्ग र च्युति अनुसार प्रवृत्ति हुन्छन्।

१८. महाविपाकानि पन अट्टु सब्बत्थापि कामसुगतियं पटिसन्धिभवङ्गच्युतिवसेन पवत्तन्ति।

१८. महाविपाक आठ सबै नै कामसुगतिमा प्रतिसन्धि, भवङ्ग र च्युति अनुसार प्रवृत्त हुन्छन्।

१९. इमा नव कामसुगतिपटिसन्धियो नाम।

१९. यी नौलाई काम सुगति प्रतिसन्धि भनिन्छ।

२०. सा पनायं दसविधापि कामावचरपटिसन्धिच्चेव सङ्गं गच्छति।

२०. यी यहाँ दसविध पनि कामावचर प्रतिसन्धि भनी गणना गरिन्छ।

२१. तेसु चतुन्नं अपायानं मनुस्सानं विनिपातिकासुरानञ्च आयुप्पमाणगणनाय नियमो नत्थि।

२१. तीमध्ये चार अपाय, मनुष्य, विनिर्पातिक र असुरहरूका आयु प्रमाण गणनाको नियम छैन।

२२. चातुमहाराजिकानं पन देवानं दिब्बानि पञ्चवस्ससतानि आयुप्पमाणं, मनुस्सगणनाय नवुतिवस्ससतसहस्सप्पमाणं होति, ततो चतुग्गुणं तावत्तिसानं, ततो चतुग्गुणं यामानं, ततो चतुग्गुणं तुसितानं, ततो चतुग्गुणं निम्मानरतीनं, ततो चतुग्गुणं परनिम्मितवसवत्तीनं।

२२. चातुर्महाराजिक देवताहरूका दिव्य पाँच सय वर्ष आयु प्रमाण हुन्छ, मनुष्य गणना अनुसार नब्बे लाख वर्ष आयु प्रमाण हुन्छ, त्यसको चार गुणा

त्रयस्तिंशको, त्यसको पनि चार गुणा यामाको, त्यसको चार गुणा तुसिताको, त्यसको चार गुणा निर्माणरतिको र त्यसको पनि चार गुणा परनिर्मित वशवर्तीहरूको हुन्छन्।

२३. नवसतञ्चेकवीस-वस्सानं कोटियो तथा।
वस्ससतसहस्सानि, सट्ठि च वसवत्तिसु ॥

२३. नौ सय एक्काइस वर्ष करोडको त्यस्तै।
वर्ष सय हजार, साठी वशवर्तीमा।^{१४३}

२४. पठमज्झानविपाकं पठमज्झानभूमियं पटिसन्धिभवङ्गच्युतिवसेन पवत्तति।

२४. प्रथमध्यान विपाक प्रथमध्यान भूमिमा प्रतिसन्धि, भवङ्ग, च्युति अनुसार प्रवृत्त हुन्छन्।

२५. तथा दुतियज्झानविपाकं ततियज्झानविपाकञ्च दुतियज्झान-भूमियं।

२५. त्यस्तै द्वितीयध्यान विपाक र तृतीयध्यान विपाक द्वितीयध्यान भूमिमा।

२६. चतुत्थज्झानविपाकं ततियज्झानभूमियं।

२६. चतुर्थध्यानविपाक तृतीयध्यान भूमिमा।

२७. पञ्चमज्झानविपाकं चतुत्थज्झानभूमियं।

२७. पञ्चमध्यानविपाक चतुर्थध्यान भूमिमा।

२८. असञ्जसत्तानं पन रूपमेव पटिसन्धि होति। तथा ततो परं पवत्तियं चवनकाले च रूपमेव पवत्तित्वा निरुज्झति, इमा छ रूपावचरपटिसन्धियो नाम।

२८. असंज्ञासत्त्वहरूका रूप मात्र प्रतिसन्धि हुन्छन्। त्यस्तै पछि प्रवृत्ति र च्युतिकालमा रूप मात्र प्रवृत्ति भएर निरोध हुन्छन्, यी छ रूपावचर प्रतिसन्धि भनिन्छन्।

२९. तेसु ब्रह्मपारिसज्जानं देवानं कप्पस्स ततियो भागो आयुप्पमाणं।

२९. तीमध्ये ब्रह्मपारिषद्य देवताहरूका कल्पको तीन भागको एक भाग आयु प्रमाण हुन्छन्।

^{१४३} मनुष्यको गणनानुसार वशवर्तीमा नौ सय एक्काइस करोड साठी लाख वर्ष हुन्छन् अथवा नौ अरब एक्काइस करोड साठी लाख वर्ष हुन्छ।

३०. ब्रह्मपुरोहितानं उपह्वकप्पो ।
 ३०. ब्रह्मपुरोहितका कल्पको आधी ।
३१. महाब्रह्मानं एको कप्पो ।
 ३१. महाब्रह्माहरूका एक कल्प ।
३२. परित्ताभानं द्वे कप्पानि ।
 ३२. परित्राभाहरूका दुई कल्प ।
३३. अप्पमाणाभानं चत्तारिकप्पानि ।
 ३३. अप्रमाणाभाहरूका चार कल्प ।
३४. आभस्सरानं अट्ट कप्पानि ।
 ३४. आभाश्वरहरूका आठ अल्प ।
३५. परित्तसुभानं सोळस कप्पानि ।
 ३५. परित्रशुभाहरूका सोड कल्प ।
३६. अप्पमाणसुभानं द्वत्तिस कप्पानि ।
 ३६. अप्रमाणशुभाहरूका बत्तिस कल्प ।
३७. सुभकिण्हानं चतुसट्ठि कप्पानि ।
 ३७. शुभकृष्णाहरूका चौंसठ्ठी कल्प ।
३८. वेहप्फलानं असञ्जसत्तानञ्च पञ्चकप्पसत्तानि ।
 ३८. वृहत्फल र असंज्ञासत्त्वहरूका पाँच सय कल्प ।
३९. अविहानं कप्पसहस्सानि ।
 ३९. अविहाहरूका हजार कल्प ।
४०. अतप्पानं द्वे कप्पसहस्सानि ।
 ४०. अत्रपाहरूका दुई हजार कल्प ।
४१. सुदस्सानं चत्तारि कप्पसहस्सानि ।
 ४१. सुदर्शाहरूका चार हजार कल्प ।
४२. सुदस्सीनं अट्ट कप्पसहस्सानि ।
 ४२. सुदर्शीहरूका आठ हजार कल्प ।

४३. अकनिष्ठानं सोळस कप्पसहस्सानि।

४३. अकनिष्ठहरूका सोह्र हजार कल्प।

४४. पठमारुप्पादिविपाकानि पठमारुप्पादिभूमीसु यथाक्कमं पटिसन्धिभवङ्गच्युतिवसेन पवत्तन्ति। इमा चतस्सो अरूपपटिसन्धियो नाम।

४४. प्रथम अरूपादि विपाकहरू प्रथम आरूपादिभूमिमा यथाक्रमानुसार प्रतिसन्धि, भवङ्ग र च्युति अनुसार प्रवृत्त हुन्छन्। यी चारलाई अरूप प्रतिसन्धि भनिन्छन्।

४५. तेसु पन आकासानञ्जायतनूपगानं देवानं वीसतिकप्पसहस्सानि आयुप्पमाणं।

४५. तीमध्ये आकाशानन्त्यायतनमा उत्पन्न भएका देवताहरूका बीस हजार कल्प आयु प्रमाण हुन्छन्।

४६. विञ्जाणञ्जायतनूपगानं देवानं चत्तालीसकप्पसहस्सानि।

४६. विज्ञानन्त्यायतनमा उत्पन्न भएका देवताहरूका चालीसहजार कल्प।

४७. आकिञ्चञ्जायतनूपगानं देवानं सट्टिकप्पसहस्सानि।

४७. आकिञ्चन्त्यायतनमा उत्पन्न भएका देवताहरूका साठी हजार कल्प।

४८. नेवसञ्जानासञ्जायतनूपगानं देवानं चतुरासीतिकप्पसहस्सानि।

४८. नैवसंज्ञानासंज्ञायतनमा उत्पन्न भएका देवताहरूका चौरासी हजार कल्प।

४९. पटिसन्धि भवङ्गञ्च, तथा चवनमानसं।

एकमेव तथेवेकविसयञ्चेकजातियं ॥

४९. प्रतिसन्धि र भवङ्ग, त्यस्तै च्युति चित्त।

एकमात्र त्यस्तै नै विषयजाति पनि एक मात्रै हुन्छ।

इदमेत्थ पटिसन्धिचतुक्कं।

यो यहाँ प्रतिसन्धि चतुष्क समाप्त।

भूमि भेदानुसार भूमि र आयुको तालिका नं. ४९

| भूमि | भूवन | आयु | |
|----------|---|---|---|
| अरूपावचर | ३१. नैवासंज्ञानासंज्ञायतन ३०. आकिञ्चन्यायतन २९. विज्ञानन्त्यायतन २८. आकाशानन्त्यायतन | चौरासी हजार महाकल्प साठी हजार महाकल्प चालीस हजार महाकल्प बीस हजार महाकल्प | |
| रूपावचर | चतुर्थध्यान शुद्धवास (२३-२७) | २७. अकनिष्ट २६. सुदर्शी २५. सुदर्शा २४. अत्रपा २३. अविहा २२. असंज्ञसत्त्व २१. वृहत्फल | सोह्र हजार महाकल्प आठ हजार महाकल्प चार हजार महाकल्प दुई हजार महाकल्प हजार महाकल्प पाँच सय कल्प पाँच सय कल्प |
| | तृतीयध्यान | २०. शुभकृष्णा १९. अप्रमाणाशुभा १८. परित्रशुभा | चौंसठौ कल्प बत्तिस कल्प सोह्र कल्प |
| | द्वितीयध्यान | १७. आभाश्वर १६. अप्रमाणाभा १५. परित्राभा | आठ कल्प चार कल्प दुई कल्प |
| | प्रथमध्यान | १४. महाब्रह्मा १३. ब्रह्मपुरोहित १२. ब्रह्मपारियद्य | एक कल्प कल्पको आधा कल्पको एकतिहाइ |
| | कामावचर | कामसुगति | ११. परनिर्मित वशवर्ती १०. निर्माणरति ९. तुषित ८. यामा ७. त्रयस्त्रिंश ६. चातुर्माहाराजिका ५. मनुष्य |
| | अपाय | ४. असुरकाय ३. प्रेत २. तिर्यक १. नर्क | आयुप्रमाण अनिश्चित आयुप्रमाण अनिश्चित आयुप्रमाण अनिश्चित आयुप्रमाण अनिश्चित |

कम्मचतुक्कं कर्म-चतुष्क

५०. जनकं उपत्थम्भकं उपपीळकं उपघातकञ्चेति किच्चवसेन ।
५०. जनक^{१४४}, उपत्थम्भक^{१४५}, उपपीडक^{१४६} र उपघातक^{१४७} गरी कृत्य अनुसार ।

५१. गरुकं आसन्नं आचिण्णं कटत्ताकम्मञ्चेति पाकदानपरियायेन ।
५१. गरुक^{१४८}, आसन्न^{१४९}, आचिण्ण^{१५०}, कटत्ता^{१५१} कर्म गरी विपाक दिने परियाय अनुसार ।

५२. दिट्ठधम्मवेदनीयं उपपज्जवेदनीयं अपरापरियायेदनीयं अहोसिकम्मञ्चेति पाककालवसेन चत्तारि कम्मनि नाम ।
५२. दृष्टिधर्मवेदनीय^{१५२}, उपपद्यवेदनीय^{१५३}, अपरपर्यायवेदनीय^{१५४} र अहोसिकर्म^{१५५} गरी पाककाल अनुसार चार कर्म भनिन्छन् ।

५३. तथा अकुसलं कामावचरकुसलं रूपावचरकुसलं अरूपावचर-
कुसलञ्चेति पाकठानवसेन ।
५३. त्यस्तै अकुशल, कामावचर कुशल, रूपावचर कुशल र अरूपावचर कुशल गरी पाकस्थान अनुसार हुन्छन् ।

***जनक - प्रतिसन्धि प्रवृत्तिकालमा विपाक कृत्यरूपहरूलाई उत्पन्न गर्ने कुशल र अकुशल चेतनालाई जनक कर्म भनिन्छ ।

***उपत्थम्भक - जनककर्मलाई वा जनककर्मबाट उत्पन्न विपाकलाई महत् गर्ने चेतनालाई उपत्थम्भक कर्म भनिन्छ ।

***उपपीडक - नजिक बसेर पीडा दिने कर्मलाई उपपीडक कर्म भनिन्छ ।

***उपघातक - नजिक बसेर घात गर्ने कर्मलाई उपघातक कर्म भनिन्छ ।

***गरुक - धेरै दोष र महानुभाव भएर अन्य कर्मले रोक्न नसक्ने गर्हुँगो कर्मलाई गरुक कर्म भनिन्छ ।

***आसन्न - मरणासन्न कालमा अनुस्मरण वा सम्झिने र त्यसबेला गरेको कर्मलाई आसन्न कर्म वा नजिकको कर्म भनिन्छ ।

***आचिण्ण - दैनिक वा बारम्बार गरिने कर्मलाई आचिण्ण कर्म भनिन्छ ।

***कटत्ता - गरेको मात्र भएको कर्मलाई कटत्ता कर्म भनिन्छ ।

***दृष्टिधर्मवेदनीय - वर्तमान कालमा प्रत्यक्षरूपमा विपाकहरूको अनुभूति गर्ने कर्मलाई दृष्टिधर्मवेदनीय कर्म भनिन्छ ।

***उपपद्यवेदनीय - दृष्टिधर्मवेदनीयबाट उत्पन्न भएर अनन्तरमा अनुभूति हुने भएकोले उपपद्यवेदनीय कर्म भनिन्छ ।

***अपरपर्यायवेदनीय - अन्य जन्ममा अनुभूति हुने भएकोले अपरपर्यायवेदनीय कर्म भनिन्छ ।

***अहोसिकर्म - जानी-नजानी भएको कर्मलाई अहोसिक कर्म भनिन्छ । यसको विपाक हुन पनि सक्दछ, नहुन पनि सक्दछ ।

चतुर्विध कर्मको तालिका नं. ५०

| | |
|-------------------|--|
| कृत्यानुसार | - जनक कर्म - उपष्टम्भक कर्म - उपपीडक कर्म - उपघातक कर्म |
| विपाकानुसार | - गरुक कर्म - आसन्न कर्म - आचिण्ण कर्म - कटत्ता कर्म |
| विपाक कालानुसार | - दृष्टिधर्मवेदनीय - उपपद्यवेदनीय - अपरपर्यायवेदनीय - अहोसिकर्म |
| विपाक स्थानानुसार | - अकुशल - कामावचर कुशल - रूपावचर कुशल - अरूपावचर कुशल |

५४. तत्थ अकुसलं कायकम्मं वचीकम्मं मनोकम्मञ्चेति कम्मद्वारवसेन त्रिविधं होति ।

५४. त्यहाँ अकुशल कायकर्म, वचीकर्म र मनोकर्म गरी कर्मद्वारानुसार त्रिविध हुन्छन् ।

५५. कथं? प्राणातिपातो अदिन्नादानं कामेसुमिच्छाचारो चेति कायविज्जत्तिसङ्घाते कायद्वारे बाहुल्लवुत्तितो कायकम्मं नाम ।

५५. कसरी? प्राणातिपात, अदिन्नादान, काममिथ्याचार गरी कायविज्ञप्ति भन्ने कायद्वारमा धैरजसो प्रवृत्त हुनेभएकाले कायकर्म भनिन्छ ।

५६. मुसावादो पिसुणवाचा फरुसवाचा सम्फप्पलापो चेति वचीविज्जत्तिसङ्घाते वचीद्वारे बाहुल्लवुत्तितो वचीकम्मं नाम ।

५६. मृषावाद^{१५६}, पिशुनवाक्^{१५७}, परुषवाक्^{१५८} र सम्फप्पलाप^{१५९} गरी वचीविज्ञप्ति भन्ने वचीद्वारमा धैरजसो प्रवृत्त हुनेभएकाले वाक्कर्म भनिन्छ ।

^{१५६}मृषावाद - सत्यरूपमा नभएको वस्तु र परिकल्पना मात्र गरेर त्यसलाई सत्यको रूपमा भनिने कुरालाई मृषावाद भनिन्छ ।

^{१५७}पिशुनवाक् - एकता भएकोलाई फुटाएर वा विभक्ति पारेर भिन्नता अथवा प्रियभावलाई शुन्य पारिने कुरालाई पिशुनवाक् भनिन्छ ।

^{१५८}परुषवाक् - धोच्ने शब्द वा चिर्ने वा कटोर शब्द प्रयोग गरी बोलिने कुरालाई परुषवाक् (फरुसवाक्) भनिन्छ ।

^{१५९}सम्फप्पलाप - उपकार नहुने, काम नलाग्ने, हित र सुखलाई नाश गर्ने कुरालाई सम्फप्पलाप भनिन्छ ।

५७. अभिज्ज्ञा ब्यापादो मिच्छादिद्वि चेति अञ्जत्रापि विञ्जत्तिया मनस्मियेव बाहुल्लवुत्तितो मनोकम्मं नाम।

५७. अभिघ्या^{१६०}, व्यापाद^{१६१}, मिथ्यादृष्टि^{१६२} गरी विज्ञप्तिबाट अन्य स्थान मनमा नै धैरसो प्रवृत्त हुनेभएकाले मनोकर्म भनिन्छ।

५८. तेसु पाणातिपातो फरुसवाचा ब्यापादो च दोसमूलेन जायन्ति।

५८. तीमध्ये प्राणातिपात परुषवाक् र व्यापाद द्वेषमूलले उत्पन्न हुन्छ।

५९. कामेसुमिच्छाचारो अभिज्ज्ञा मिच्छादिद्वि च लोभमूलेन।

५९. काममिथ्यचार, अभिघ्या र मिथ्यादृष्टि लोभमूलले।

६०. सेसानि चत्तारिपि द्वीहि मूलेहि सम्भवन्ति।

६०. शेष चार दुवै मूलले उत्पन्न हुन्छन्।

६१. चित्तुप्पादवसेन पनेतं अकुशलं सब्बथापि द्वादसविधं होति।

६१. चित्तोत्पादानुसार यी अकुशल सबै नै बाह्रविध हुन्छन्।

६२. कामावचरकुसलम्पि कायद्वारे पवत्तं कायकम्मं, वचीद्वारे पवत्तं वचीकम्मं, मनोद्वारे पवत्तं मनोकम्मञ्चेति कम्मद्वारवसेन तिविधं होति।

६२. कामावचर कुशल पनि कायद्वारमा प्रवृत्त कायकर्म हो, वचीद्वारमा प्रवृत्त वचीकर्म हो, मनोद्वारमा प्रवृत्त मनोकर्म हो भनी कर्मद्वारानुसार त्रिविध हुन्छन्।

६३. तथा दानसीलभावनावसेन।

६३. त्यस्तै दान, शील, भावनानुसार।

६४. चित्तुप्पादवसेन पनेतं अट्ठविधं होति।

६४. चित्तोत्पादानुसार यी आठविध हुन्छन्।

६५. दानसीलभावनापचायनवेय्यावच्चपत्तिदानपत्तानुमोदनधम्मस्सवन-धम्मदेसना दिद्विजुकम्मवसेन दसविधं होति।

६५. दान, शील, भवना, अपचायन^{१६३}, वैयावृत्य^{१६४}, पत्तिदान^{१६५},

“अभिघ्या - अरुको सम्पत्तिमा लोभ गर्ने तथा अरुको सम्पत्ति आफ्नो नाममा राखेलाई अभिघ्या भनिन्छ।

“व्यापाद - अरु मानिसहरू नाश होस् भनी मनमा द्वेष भाव राख्नुलाई व्यापाद भनिन्छ।

“मिथ्यादृष्टि - कर्मको फल छैन भन्ने विपरीत हेराइलाई मिथ्यादृष्टि भनिन्छ।

“अपचायन - जेष्ठहरूलाई गौरव राख्नुलाई अपचायन भनिन्छ।

“वैयावृत्य - जेष्ठहरूलाई सेवा गर्नुलाई वैयावृत्य भनिन्छ।

“पत्तिदान - आफूलाई प्राप्त भएको कुशल बौद्धिद्विजुलाई पत्तिदान भनिन्छ।

प्राप्तानुमोदन^{६६}, धर्मश्रवन, धर्मदेसना र दृष्टि ऋजुकर्म^{६७} अनुसार दसविध हुन्छन्।

६६. तं पनेतं वीसतिविधमिपि कामावचरकम्ममिच्चेव सङ्गं गच्छति।

६६. ती बीसविधलाई कामावचरकर्म भनी गणना गरिन्छ।

६७. रूपावचरकुसलं पन मनोकम्ममेव, तज्ज भावनामयं अप्पनाप्पत्तं, ज्ञानङ्गभेदेन पञ्चविधं होति।

६७. रूपावचरकुसल मात्र मनोकर्म नै हो, ती भावनामय अर्पणामा पुगेको हो, ध्यानाङ्ग भेदानुसार पञ्चविध हुन्छन्।

६८. तथा अरूपावचरकुसलञ्च मनोकम्मं, तमिपि भावनामयं अप्पनाप्पत्तं। आरम्भणभेदेन चतुर्विधं होति।

६८. त्यस्तै अरूपावचर कुशल मनोकर्म हो, ती पनि भावनामय अर्पणामा पुगेको हो, आरम्भणको भेदानुसार चतुर्विध हुन्छन्।

६९. एत्थाकुसलकम्ममुद्धचरहितं अपायभूमियं पटिसन्धिं जनेति, पवत्तियं पन सब्बमिपिद्वादसविधं सत्ताकुसलपाकानि सब्बथापि कामलोके रूपलोके च यथारहं विपच्चति।

६९. यहाँ अकुशलकर्म औद्धत्यरहित भएको अपायभूमिमा प्रतिसन्धि गराउँछ, प्रवृत्तिमा सबै बाह्यविध सात अकुशलविपाक सबै नै कामलोकमा र रूपलोकमा यथायोग्यानुसार विपाक दिन्छन्।

७०. कामावचरकुसलमिपि कामसुगतियमेव पटिसन्धिं जनेति, तथा पवत्तियञ्च महाविपाकानि अहेतुकविपाकानि पन अट्टपि सब्बथापि कामलोके रूपलोके च यथारहं विपच्चति।

७०. कामावचर कुशल पनि काम सुगतिमा नै प्रतिसन्धि गराउँछ, त्यस्तै प्रवृत्ति र महाविपाकहरू अहेतुक विपाकहरू आठ सबै नै कामलोकमा र रूपलोकमा यथायोग्यानुसार फल दिन्छन्।

७१. तत्थापि तिहेतुकमुक्कडं कुसलं तिहेतुकं पटिसन्धिं दत्त्वा पवत्ते सोलस विपाकानि विपच्चति।

७१. त्यहाँ पनि त्रिहेतुक उत्कृष्ट कुशल त्रिहेतुक प्रतिसन्धि दिएर प्रवृत्त भएको बेलामा सोह्र विपाकहरू फल दिन्छन्।

७२. तिहेतुकमोमकं द्विहेतुकमुक्कडञ्च कुसलं द्विहेतुकं पटिसन्धिं दत्त्वा

^{६६}प्राप्तानुमोदन - अरुले गरेका कुशल कर्मलाई अनुमोदन गर्नुलाई प्राप्तानुमोदन भनिन्छ।

^{६७}ऋजुकर्म - सीधा दृष्टि भएकोलाई दृष्टि ऋजुकर्म भनिन्छ।

पवत्ते तिहेतुकरहितानि द्वादस विपाकानि विपच्यति ।

७२. त्रिहेतुक हिन र द्विहेतुक उत्कृष्ट कुशल द्विहेतुक प्रतिसन्धि दिएर प्रवृत्त भएको बेलामा त्रिहेतुकरहित बाह्र विपाकहरू फल दिन्छन् ।

७३. द्विहेतुकमोमकं पन कुसलं अहेतुकमेव पटिसन्धि देति, पवत्ते च अहेतुकविपाकानेव विपच्यति ।

७३. द्विहेतुक हीन कुशलले अहेतुक नै प्रतिसन्धि दिन्छन्, प्रवृत्ति भएको बेलामा अहेतुक विपाक नै फल दिन्छन् ।

७४. असङ्घारं ससङ्घार-विपाकानि न पच्यति ।

ससङ्घारमसङ्घारविपाकानीति केचन ॥

तेसं द्वादस पाकानि, दसाडु च यथाक्कमं ।

यथावुत्तानुसारेण यथासम्भवमुद्दिसे ॥

७४. असंस्कारले संसंस्कार विपाकहरू उत्पन्न गराउँदैन ।

संसंस्कारले असंस्कार विपाक पनि भनी केहीले भनिएका छन् ॥

तिनीहरूका, बाह्र विपाक, दस र आठ यथाक्रमानुसार ।

उक्तकथनानुसार यथासम्भवरूपले देखाउनुपर्दछ ॥

७५. रूपावचरकुसलं पन पठमज्झानं परित्तं भावेत्वा ब्रह्मपारिसज्जेसु उप्पज्जति ।

७५. रूपावचर कुशल प्रथमध्यानलाई अलिकति भावना गरेर ब्रह्मपारिषद्यमा उत्पन्न हुन्छन् ।

७६. तदेव मज्झिमं भावेत्वा ब्रह्मपुरोहितेसु ।

७६. त्यही नै मध्यमरूपमा भावना गरेर ब्रह्मपुरोहितमा ।

७७. पणीतं भावेत्वा महाब्रह्मेसु ।

७७. प्रणीतरूपमा भावना गरेर महाब्रह्ममा ।

७८. तथा दुतियज्झानं ततियज्झानञ्च परित्तं भावेत्वा परित्ताभेसु ।

७८. त्यस्तै द्वितीयध्यान, तृतीयध्यान अलिकति भावना गरेर परित्राभामा ।

७९. मज्झिमं भावेत्वा अप्पमाणाभेसु ।

७९. मध्यमरूपले भावना गरेर अप्रमाणभामा ।

८०. पणीतं भावेत्वा आभस्सरेसु ।

८०. प्रणीतरूपले भावना गरेर आभाश्वरमा ।

८१. चतुर्थज्ज्ञानं परित्तं भावेत्वा परित्तसुभेसु ।
 ८१. चतुर्थध्यानलाई अलिकति भावना गरेर परित्रशुभामा ।
८२. मज्झिमं भावेत्वा अप्पमाणसुभेसु ।
 ८२. मध्यमरूपले भावना गरेर अप्रमाणशुभामा ।
८३. पणीतं भावेत्वा सुभकिण्हेसु ।
 ८३. प्रणीतरूपले भावना गरेर शुभकृष्णामा ।
८४. पञ्चमज्ज्ञानं भावेत्वा वेहप्फलेसु ।
 ८४. पञ्चमध्यानलाई भावना गरेर बृहत्फलमा ।
८५. तदेव सञ्जाविरागं भावेत्वा असञ्जसत्तेसु ।
 ८५. ती नै संज्ञाविरागलाई भावना गरेर असंज्ञासत्त्वमा ।
८६. अनागामिनो पन सुद्धावासेसु उप्पज्जन्ति ।
 ८६. अनागामीहरू शुद्धावासमा उत्पन्न हुन्छन् ।
८७. अरूपावचरकुसलञ्च यथाक्कमं भावेत्वा आरुप्पेसु उप्पज्जन्तीति ।
 ८७. अरूपावचर कुशललाई यथाक्रमानुसार भावना गरेर आरूप्यमा उत्पन्न हुन्छन् ।

८८. इत्थं महग्गतं पुज्जं, यथाभूमिववत्थितं ।
 जनेति सदिसं पाकं, पटिसन्धिपवत्तियं ॥
८८. यसरी महग्गत पुण्य, यथाभूमि व्यवस्थित गरिएको छ ।
 उत्पन्न गराउँछ सदृश विपाक, प्रतिसन्धि प्रवृत्तिमा ॥

इदमेत्थ कम्मचतुक्कं ।
 यो यहाँ कर्म चतुष्क हो ।

चुतिपटिसन्धिककमो
 च्युतिप्रतिसन्धिक्रम

८९. आयुक्खयेन कम्मक्खयेन उभयक्खयेन उपच्छेदककम्मुना चेति
 चतुधा मरणुप्पत्ति नाम ।
 ८९. आयुक्षयले, कर्मक्षयले, उभयक्षयले र उपच्छेदक कर्मले गरी चतुर्विध
 मरणोत्पत्ति भनिन्छ ।

९०. तथा च मरन्तानं पन मरणकाले यथारहं अभिमुखीभूतं भवन्तरे
 पटिसन्धिजनकं कम्मं वा, तं कम्मकरणकाले रूपादिकमुपलद्धपुब्बमुपकरण-

भूतञ्च कम्मनिमित्तं वा, अनन्तरमुप्पज्जमानभवे उपलभितब्बमुपभोगभूतञ्च गतिनिमित्तं वा कम्मबलेन छन्नं द्वारानं अञ्जतरस्मिं पच्चुपट्ठाति, ततो परं तमेव तथोपट्ठितं आरम्भणं आरब्ध विपच्चमानककम्मनुरूपं परिसुद्धं उपक्किलिद्धं वा उपलभितब्बभवानुरूपं तत्थोणतं चित्तसन्तानं अभिण्हं पवत्तति बाहुल्लेन, तमेव वा पन जनकभूतं कम्मं अभिनवकरणवसेन द्वारप्पत्तं होति ।

९०. त्यस्तै मर्न लागेकोलाई मरणकालमा यथायोग्यानुसार अभिमुखी भएको भवान्तरमा प्रतिसन्धिजनक कर्म वा त्यो कर्म हुने बेलामा रूपादि पूर्वोपलब्ध उपकरणभूत कर्मनिमित्त वा अनन्तरमा उत्पन्न हुने भवमा उपलब्धव्य उपभोगभूत गतिनिमित्त वा कर्मबलले छद्दारमध्ये कुनै एकमा प्रत्युपस्थित हुन्छ, त्यसपछि त्यही नै प्रत्युपस्थित आरम्भणलाई लिएर फल दिने कर्मानुरूपले परिशुद्ध वा उपक्किलिष्ट वा उपलब्धव्य भवानुसार त्यो भवमा नै अवतरण भएको चित्तसन्ततिमा सँधै प्रवृत्त बाहुल्य भएको हुन्छ, त्यही नै जनकभूत कर्म अभिनवकरण अनुसार द्वारमा पुग्दछ ।

९१. पच्चासन्नमरणस्स तस्स वीथिचित्तावसाने भवङ्गखये वा चवनवसेन पच्चुप्पन्नभवपरियोसानभूतं च्युतिचित्तं उप्पज्जित्वा निरुज्झति, तस्मिं निरुद्धावसाने तस्सानन्तरमेव तथागहितं आरम्भणं आरब्ध सवत्थुकं अवत्थुकमेव वा यथारहं अविज्जानुसयपरिक्खित्तेन तण्हानुसयमूलकेन सङ्घारेन जनियमानं सम्पयुत्तेहि परिग्यहमानं सहजातानमधिट्ठानभावेन पुब्बङ्गमभूतं भवन्तरपटिसन्धानवसेन पटिसन्धिसङ्घातं मानसं उप्पज्जमानमेव पटिट्ठाति भवन्तरे ।

९१. चाँडै मर्न लगेको सत्त्वको वीथिचित्तको अन्तमा भवङ्गक्षय वा च्युति अनुसार वर्तमान भवको अवसान भएको च्युति चित्त उत्पन्न भएर निरोध हुन्छ, त्यही निरोधको अवसानमा त्यहीको अनन्तरमा नै त्यसरी ग्रहण गरिएको आरम्भणको कारणले वस्तुसहित वा वस्तुरहित भएको यथायोग्यानुसार अविद्या अनुसयले धेरिएको तृष्णा अनुसय मूल भएको संस्कारले उत्पन्न गराएको सम्प्रयुक्त परिगृहित गरिरहेको सहजातको आधारले पूर्वगामिभूत भवान्तर प्रतिसन्धि अनुसार जोड्न सक्ने चित्त उत्पन्न भएर भवमा प्रतिष्ठित नै हुन्छन् ।

९२. मरणासन्नवीथियं पनेत्थ मन्दप्पवत्तानि पञ्चेव जवनानि पाटिकङ्कितब्बानि, तस्मा यदि पच्चुप्पन्नारम्भणेसु आपाथगतेसु धरन्तेस्वेव मरणं होति, तदा पटिसन्धिभवङ्गानमिं पच्चुप्पन्नारम्भणता लब्धतीति कत्वा कामावचरपटिसन्धिया छद्दारगहितं कम्मनिमित्तं गतिनिमित्तञ्च पच्चुप्पन्नमतीतारम्भणं उपलब्धति, कम्मं पन अतीतमेव, तञ्च मनोद्धारगहितं, तानि पन सब्बानिपि परित्तधम्मभूतानेवारम्भणानि ।

१२. यहाँ मरणासन्न वीथिमा मन्द प्रवृत्ति पाँच पटक जवनहरूलाई इच्छित हुन्छन्, त्यसैले यदि वर्तमान आरम्भणमा प्रकट हुन आइरहेको बेलामा नै मरण भएमा, त्यसबेला प्रतिसन्धि भवङ्ग पनि वर्तमान आरम्भण भएको उपलब्ध छ भनी कामावचर प्रतिसन्धिलाई छद्मगृहित कर्मनिमित्त र गतिनिमित्त वर्तमान अतीतारम्भण उपलब्ध हुन्छ, कर्म अतीतको नै हुन्छ, त्यो मनोद्वारगृहित हुन्छ, ती सबै नै परित्तधर्मभूत आरम्भण नै हुन्छन्।

१३. रूपावचरपटिसन्धिया पन पञ्जत्तिभूतं कम्मनिमित्तमेवारम्भणं होति।

१३. रूपावचर प्रतिसन्धिको प्रज्ञप्तिभूत कर्मनिमित्त नै आरम्भण हुन्छन्।

१४. तथा अरूपपटिसन्धिया च महग्गतभूतं पञ्जत्तिभूतञ्च कम्मनिमित्तमेव यथारहमारम्भणं होति।

१४. त्यस्तै अरूप प्रतिसन्धिको महग्गतभूत र प्रज्ञप्तिभूत कर्मनिमित्त नै यथायोग्यानुसार आरम्भण हुन्छन्।

१५. असञ्जसत्तानं पन जीवितनवकमेव पटिसन्धिभावेन पतिट्ठति, तस्मा ते रूपपटिसन्धिका नाम।

१५. असंज्ञा सत्त्वहरूका जीवितनवक नै प्रतिसन्धिको भावले प्रतिष्ठित हुन्छन्, त्यसैले ती रूप प्रतिसन्धिक भनिन्छ।

१६. अरूपा अरूपपटिसन्धिका।

१६. अरूपीलाई अरूप प्रतिसन्धिक।

१७. सेसा रूपारूपपटिसन्धिका। Digital

१७. शेष भएकालाई रूप-अरूप प्रतिसन्धिक।

१८. आरुप्पचुतिया होन्ति, हेट्टिमारुप्पवज्जिता।

परमारुप्पसन्धी च, तथा कामतिहेतुका॥

रूपावचरचुतिया अहेतुरहिता सियुं।

सब्बा कामतिहेतुम्हा, कामेस्वेव पनेतरा॥

१८. आरूप्य चुति पश्चात् हुन्छन्, तलको आरूप्य वर्जित।

परम आरूप्य सन्धि र, त्यस्तै काम त्रिहेतुक॥

रूपावचर चुति पश्चात् अहेतुकरहित हुन्छन्।

सबै काम त्रिहेतुकबाट, काममा नै अन्य हुन्छन्।

अयमेत्थ चुतिपटिसन्धिककमो।
यो यहाँ चुति प्रतिसन्धि कर्म हो।

९९. इच्चैवं गहितपटिसन्धिकानं पन पटिसन्धिनिरोधानन्तरतो पभुति तमेवारम्मणमारब्ध तदेव चित्तं याव चुतिचित्तुप्पादा असति वीथिचित्तुप्पादे भवस्स अङ्गभावेन भवङ्गसन्ततिसङ्घातं मानसं अब्बोच्छिन्नं नदीसोतो विय पवत्तति ।

९९. उपरोक्त गृहित प्रतिसन्धिकहरूलाई प्रतिसन्धि निरोधको अनन्तरबाट भएको त्यही नै आरम्भको कारणले त्यही नै चित्तलाई जबसम्म च्युतिचित्तोत्पाद हुँदैन वीथिचित्तोत्पादमा भवको अङ्ग भएको भवङ्गसन्तति भन्ने चित्त निरन्तर नदीको स्रोतझैं प्रवृत्त हुन्छन् ।

१००. परियोसाने च चवनवसेन चुतिचित्तं हुत्वा निरुज्झति ।

१००. अन्तमा च्युति अनुसार च्युतिचित्त भएर निरोध हुन्छ ।

१०१. ततो परञ्च पटिसन्धादयो रथचक्कमिव यथाक्कमं एव परिवत्तन्ता पवत्तन्ति ।

१०१. त्यसपछि प्रतिसन्धि आदि रथको चक्काझैं यथाक्रमानुसार नै धुन्दै प्रवृत्त हुन्छन् ।

१०२. पटिसन्धिभवङ्गवीथियो, चुतिचेह तथा भवन्तरे ।

पुन सन्धि भवङ्गमिच्चयं, परिवत्तति चित्तसन्तति ॥

पटिसङ्घायपनेतमद्भुवं अधिगन्त्वा पदमच्च्युतं बुधा ।

सुसमुच्छिन्नसिनेहबन्धना, सममेस्सन्ति चिराय सुब्बता ॥

१०२. प्रतिसन्धि भवङ्ग वीथि, च्युति त्यस्तै भवान्तरमा ।

फेरि सन्धि भवङ्ग यो, धुमिरहन्छ चित्त सन्तति ॥

विचार गरेर यो अधुवलाई अच्युतपदलाई प्रज्ञावानले बोध गर्दछन् ।

रात्ररी स्नेह बन्धनबाट छुटेकाले,

दीर्घकालसम्म रात्रो आचरण भएकाले प्राप्त गर्दछन् ॥

इति अभिधम्मत्थसङ्गहे वीथिमुत्तसङ्गहविभागो नाम पञ्चमो परिच्छेदो ।
यसरी अभिधर्मार्थसंग्रहमा वीथिमुत्तसंग्रह विभाग भन्ने पाचौँ परिच्छेद समाप्त ।

६. रूपपरिच्छेदो

६. रूपपरिच्छेद

१. एतावता विभक्ता हि, सप्पभेदप्पवत्तिका ।
चित्तचेतसिका धम्मा, रूपं दानि पवुच्चति ॥
१. उपरोक्त विभाज गरेको, प्रभेदसहितको प्रवृत्तिहरू ।
चित्त-चैतसिक धर्महरू, अब रूपलाई बताउनेछ ॥
२. समुद्देशा विभागा च, समुद्धाना कलापतो ।
पवत्तिकमतो चेति, पञ्चधा तत्थ सङ्गहो ॥
२. समुद्देश^{१६८} विभाग, समुत्थान^{१६९}, कलाप^{१७०} ।
प्रवृत्तिक्रम^{१७१} गरी, पञ्चविध त्यहाँ संग्रह हुन्छन् ॥

रूपसमुद्देशो

रूपसमुद्देश

३. चत्तारि महाभूतानि, चतुन्नञ्च महाभूतानं उपादायरूपन्ति दुविधम्पेतं
रूपं एकादसविधेन सङ्गहं गच्छति ।
३. चार महाभूत, चार महाभूतको उपादायरूप^{१७२} गरी दुईविध भएको यो
रूपलाई एघारविधले संग्रह गरिएको छ ।
४. कथं? पथवीधातु आपोधातु तेजोधातु वायोधातु भूतरूपं नाम ।
४. कसरी? पृथ्वीधातु, आपोधातु, तेजोधातु र वायुधातुलाई भूतरूप
भनिन्छ ।
५. चक्खु सोतं घानं जिक्खा कायो प्रसादरूपं नाम ।
५. चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा र कायलाई प्रसादरूप^{१७३} भनिन्छ ।
६. रूपं सद्दो गन्धो रसो आपोधातुविवज्जितं भूतत्तयसङ्घातं फोडुब्बं
गोचररूपं नाम ।

^{१६८} समुद्देश - संक्षिप्त रूपमा देखाउनु

^{१६९} समुत्थान - उत्पत्ति

^{१७०} कलाप - समूह

^{१७१} प्रवृत्तिक्रम - उत्पत्तिक्रम

^{१७२} उपादायरूप - आधार लिएर वा आश्रय लिएर उत्पन्न हुने रूप

^{१७३} प्रसादरूप - स्वच्छ, निर्मलता, पारदर्शी, उज्ज्वल, अथवा प्रसन्न रूपलाई प्रसादरूप भनिन्छ । अर्थात् सम्बद्ध आलम्बनहरूको प्रतिभासित हुनको लागि केही कलापहरूमा स्वच्छ धातु हुन्छन्, त्यसैलाई प्रसादरूप भनिन्छ ।

६. रूप, शब्द, गन्ध, रस र आपोधातु वर्जित भूतत्रय भन्ने स्पष्टव्यलाई गोचररूप भनिन्छ ।

७. इत्थत्तं पुरिसत्तं भावरूपं नाम ।
७. स्त्रीत्व र पुरुषत्वलाई भावरूप भनिन्छ ।

८. हृदयवत्थु हृदयरूपं नाम ।
८. हृदयवस्तुलाई हृदयरूप भनिन्छ ।

९. जीवित्तिन्द्रियं जीवितरूपं नाम ।
९. जीवित्तिन्द्रियलाई जीवितरूप भनिन्छ ।

१०. कबलीकारो आहारो आहाररूपं नाम ।
१०. गौंस-गौंस गर्नुपर्ने आहारलाई आहाररूप भनिन्छ ।

११. इति च अट्टारसविधम्पेतं रूपं सभावरूपं सलक्षणरूपं निष्फन्नरूपं रूपरूपंसम्मसनरूपन्ति च सङ्गहं गच्छति ।

११. यसरी यो अट्टारविध रूपलाई स्वभावरूप सलक्षणरूप, निष्पन्नरूप^{१७४}, रूपरूप र सम्पर्शनरूप^{१७५} भनी संग्रह गरिएको छ ।

१२. आकासधातु परिच्छेदरूपं नाम ।
१२. आकासधातुलाई परिच्छेदरूप^{१७६} भनिन्छ ।

१३. कायविञ्जति वचीविञ्जति विञ्जतिरूपं नाम ।
१३. कायविज्ञप्ति र वचीविज्ञप्तिलाई विज्ञप्तिरूप भनिन्छ ।

१४. रूपस्स लहुता मुदुता कम्मञ्जता विञ्जतिद्वयं विकाररूपं नाम ।
१४. रूपको हलुकापन, मृदुता, कर्मण्यता र विज्ञप्ति द्वयलाई विकाररूप भनिन्छ ।

१५. रूपस्स उपचयो सन्तति जरता अनिच्चता लक्षणरूपं नाम ।
१५. रूपको उत्पत्ति, सन्तति, जीर्णभाव र अनित्यतालाई लक्षणरूप भनिन्छ ।

१६. जातिरूपमेव पनेत्थ उपचयसन्ततिनामेन पवुच्चतीति एकादसविधम्पेतं रूपं अट्टवीसतिविधं होति सरूपवसेन ।

^{१७४} निष्पन्नरूप - उत्पन्न गराउने रूप

^{१७५} सम्पर्शनरूप - अनित्य, दुःख र अनात्मा अनुसार गौडरूपले हेर्नुलाई सम्पर्शनरूप भनिन्छ ।

^{१७६} परिच्छेदरूप - खाली ठाउँलाई परिच्छेदरूप भनिन्छ ।

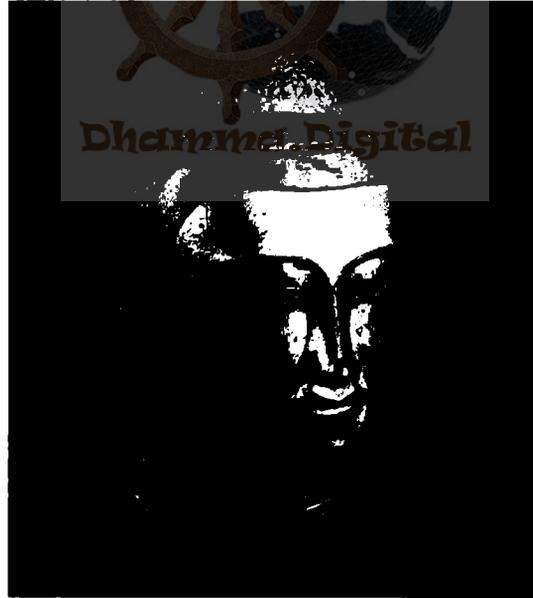
१६. यहाँ जातिरूपलाई नै उत्पत्ति अवस्था र सन्तति नामद्वारा भनिन्छ
भनी एघारविध यो रूप अठाइसविध हुन्छ स्वरूपअनुसार।

१७. कथं? -

१७. कसरी? -

भूतप्पसादविसया, भावो हृदयमिच्चपि।
जीविताहाररूपेहि, अट्टासविधं तथा ॥
परिच्छेदो च विञ्जति, विकारो लक्षणन्ति च।
अनिष्फन्ना दस चेति, अट्टवीसविधं भवे ॥
भूत प्रसाद विषय, भाव र हृदय पनि।
जीवित आहाररूप गरी, अठारविध त्यस्तै हुन्छन् ॥
परिच्छेद र विज्ञप्ति, विकार र लक्षण गरी।
अनिष्पन्न दस गरी, अठाइसविध हुन्छन् ॥

अयमेत्थ रूपसमुद्देशो।
यो यहाँ रूपसमुद्देश हो।



रूपविभागो रूपविभाग

१८. सब्बञ्च पनेतं रूपं अहेतुकं सप्पच्चयं सासवं सङ्गतं लोकियं कामावचरं अनारम्भणं अप्पहातब्बमेवाति एकविधमि अज्झत्तिकबाहिरादि-वसेन बहुधा भेदं गच्छति।

१८. यी सबै रूप अहेतुक, सप्रत्यय, सास्रव, संस्कृत, लौकिक, कामावचर, अनारम्भण र अप्रहातव्य गरी एकविध पनि अध्यामिक र बाहिरिक अनुसार बहुविध भेद गरिएको छ।

१९. कथं? पसादसङ्घातं पञ्चविधमि अज्झत्तिकरूपं नाम, इतरं बाहिररूपं।

१९. कसरी? प्रसाद भन्ने पञ्चविधलाई आध्यामिकरूप भनिन्छ, अर्को बाहिरिकरूप।

२०. पसादहृदयसङ्घातं छब्बिधमि वत्थुरूपं नाम, इतरं अवत्थुरूपं।

२०. प्रसाद हृदय भन्ने छविधलाई वस्तुरूप भनिन्छ, अर्को अवस्तुरूप।

२१. पसादविज्जत्तिसङ्घातं सत्तविधमि द्वाररूपं नाम, इतरं अद्वाररूपं।

२१. प्रसाद र विज्ञप्ति भन्ने सातविधलाई द्वाररूप भनिन्छ, अर्को अद्वाररूप।

२२. पसादभावजीवितसङ्घातं अट्ठविधमि इन्द्रियरूपं नाम, इतरं अनिन्द्रियरूपं।

२२. प्रसाद, भाव र जीवित भन्ने आठविधलाई इन्द्रियरूप भनिन्छ, अर्को अइन्द्रियरूप।

२३. पसादविसयसङ्घातं द्वादसविधमि ओळारिकरूपं सन्तिकेरूपं, सप्पटिघरूपञ्च, इतरं सुखुरूपं दूरेरूपं अप्पटिघरूपञ्च।

२३. प्रसाद र विषय भन्ने बाह्रविधलाई औलारिकरूप, सन्तिकेरूप र सप्रतिघरूप भनिन्छ, अर्को सूक्ष्मरूप, दूरेरूप र अप्रतिघरूप भनिन्छ।

२४. कम्मजं उपादिन्नरूपं, इतरं अनुपादिन्नरूपं।

२४. कर्मजलाई उपादिन्नरूप भनिन्छ, अर्को अनुपादिन्नरूप भनिन्छ।

२५. रूपायतनं सनिदस्सनरूपं, इतरं अनिदस्सनरूपं।

२५. रूपायतनलाई सनिदर्शनरूप भनिन्छ, अर्को अनिदर्शनरूप भनिन्छ।

२६. चक्खादिद्वयं असम्पत्तवसेन, घानादित्तयं सम्पत्तवसेनाति पञ्चविधमि गोचरग्गाहिकरूपं, इतरं अगोचरग्गाहिकरूपं।

२६. चक्षु आदि दुई नपुगेको अनुसार, घ्राणादि तीन पुगेको अनुसार गरी पञ्चविधलाई गोचरगाहिकरूप भनिन्छ, अर्को अगोचरगाहिकरूप।

२७. वण्णो गन्धो रसो ओजा भूतचतुक्कञ्चेति अट्टविधमि अविनिब्भोगरूपं, इतरं विनिब्भोगरूपं।

२७. वर्ण, गन्ध, रस, ओजा र भूतचतुष्क गरी आठविधलाई अविनिर्भोगरूप^{१७७} भनिन्छ, अर्को विनिर्भोगरूप।

२८. इच्चैवमट्टवीसतिविधमि च विचक्खणा।

अज्झत्तिकादिभेदेन, विभजन्ति यथारहं॥

२८. यसरी उपरोक्त अनुसार अठाइसविधलाई विद्वानहरूद्वारा।

आध्यात्मिकको भेदानुसार, विभाजन गर्दछन् यथायोग्यानुसार॥

अयमेत्थ रूपविभागो।

यो यहाँ रूपविभाग हो।

रूपसमुद्धाननयो

रूपसमुत्थान (उत्पत्ति) नय

२९. कम्मं चित्तं उतु आहारो चेति चत्तारि रूपसमुद्धानानि नाम।

२९. कर्म, चित्त, ऋतु र आहार गरी चारलाई रूपसमुत्थान भनिन्छ।

३०. तत्थ कामावचरं रूपावचरञ्चेति पञ्चवीसतिविधमि कुसलाकुसल-कम्ममभिसङ्गतं अज्झत्तिकसन्ताने कम्मसमुद्धानरूपं पटिसन्धिमुपादाय खणे खणे समुद्वापेति।

३०. त्यहाँ कामावचर र रूपावचर गरी पञ्चसविधलाई कुशल-अकुशल कर्म अभिसंस्कृत आध्यात्मिक सन्तानमा कर्मसमुत्थान रूपलाई प्रतिसन्धिदेखि लिएर क्षण-क्षणमा उत्पन्न गराइन्छ।

३१. अरूपविपाकद्विपञ्चविज्जाणवज्जितं पञ्चसत्ततिविधमि चित्तं चित्तसमुद्धानरूपं पठमभवङ्गमुपादाय जायन्तमेव समुद्वापेति।

३१. अरूपविपाक र द्विपञ्चविज्ञान वर्जित पचहत्तरविध चित्तलाई चित्तसमुत्थानरूपले प्रथम भवङ्गलाई लिएर उत्पन्न हुँदा नै उत्पन्न गराइदिन्छ।

^{१७७} अविनिर्भोगरूप - मुद्वाउन नसकिने रूप

३२. तत्थ अप्पनाजवनं इरियापथम्पि सन्नामेति ।
 ३२. त्यहाँ अर्पणा जवन इर्यापथ^{१७८}लाई पनि उत्पन्न गराइदिन्छ ।
३३. वोट्टब्बनकामावचरजवनाभिञ्जा पन विञ्जत्तिम्पि समुट्ठापेन्ति ।
 ३३. वोट्टप्पन, कामावचर जवन र अभिञ्जाले विज्ञप्तिलाई पनि उत्पन्न गराइदिन्छ ।
३४. सोमनस्सजवनानि पनेत्थ तेरस हसनम्पि जनेन्ति ।
 ३४. यहाँ सौमनस्य जवन तेहले हसनलाई उत्पन्न गराइदिन्छ ।
३५. सीतुण्होतुसमञ्जाता तेजोधातु ठितिप्पत्ताव उतुसमुट्ठानरूपं अज्झत्तञ्च बहिद्धा च यथारहं समुट्ठापेति ।
 ३५. शीत, उष्णऋतु भन्ने तेजोधातुले, स्थितिमा पुग्दा ऋतु समुत्थान रूपलाई आध्यामिक र बाहिरिक, यथायोग्यानुसार उत्पन्न गराइदिन्छ ।
३६. ओजासङ्घातो आहारो आहारसमुट्ठानरूपं अज्झोहरणकाले ठानप्पत्तोव समुट्ठापेति ।
 ३६. ओजा भन्ने आहारले आहार समुत्थान रूपलाई निल्ले समयको स्थिति पुग्दा नै उत्पन्न गराइदिन्छ ।
३७. तत्थ हृदयइन्द्रियरूपानि कम्मजानेव ।
 ३७. त्यहाँ हृदय र इन्द्रिय रूपहरू कर्मज नै हुन् ।
३८. विञ्जत्तिद्वयं चित्तजमेव ।
 ३८. विज्ञप्ति द्वय चित्तज नै ।
३९. सट्ठो चित्तोतुजो ।
 ३९. शब्द चित्त र ऋतुज ।
४०. लहुतादित्तयं उतुचित्ताहारेहि सम्भोति ।
 ४०. हलुकापनादि तीन ऋतु, चित्त र आहारले उत्पन्न गराइदिन्छ ।
४१. अविनिब्भोगरूपानि चेव आकासधातु च चतूहि सम्भूतानि ।
 ४१. अविनिर्भोगरूप र आकाशधातु चार कारणले उत्पन्न हुन्छन् ।
४२. लक्खणरूपानि न कुतोचि जायन्ति ।
 ४२. लक्षणरूपहरू कुनै कारणले पनि उत्पन्न हुँदैनन् ।

^{१७८} इर्यापथ - शरीरको क्रियाकलापलाई इर्यापथ भनिन्छ । जस्तै - बस्ने, उठ्ने, हिँड्नु, गर्ने, सुत्ने हुन् ।

४३. अङ्गारस पत्ररस, तेरस द्वादसाति च।
कम्मचित्तोतुकाहारजानि होन्ति यथाक्कमं ॥

४३. अठार पन्ध्र, तेह र बाह्र।

कर्म चित्त ऋतु र आहारज हुन्छन् यथाक्रमानुसार ॥

४४. जायमानादिरूपानं, सभावत्ता हि केवलं।
लक्खणानि न जायन्ति, केहिचीति पकासितं ॥

४४. उत्पद्यमान आदि रूपको स्वभावले केवल।
लक्षणहरू उत्पन्न हुँदैनन्, केहीले प्रकाश गरेका छन् ॥

अयमेत्थ रूपसमुद्धाननयो।
यो यहाँ रूपसमुत्थाननय हो।

कलापयोजना कालपयोजना

४५. एकुप्पादा एकनिरोधा एकनिस्सया सहवुत्तिनो एकवीसति
रूपकलापा नाम।

४५. एकोत्पाद एकनिरोध एकनिश्रय र सहवर्ती हुने एक्काइसलाई
रूपकलाप (रूपसमूह) भनिन्छ।

४६. तत्थ जीवितं अविनिब्भोगरूपञ्च चक्खुना सह चक्खुदसकन्ति
पवुच्चति। तथा सोतादीहि सद्धिं सोतदसकं घानदसकं जिह्वादसकं कायदसकं
इत्थिभावदसकं पुम्भावदसकं वत्थुदसकञ्चेति यथाक्कमं योजेतब्बं।
अविनिब्भोगरूपमेव जीवितेन सह जीवितनवकन्ति पवुच्चति। इमे नव
कम्मसमुद्धानकलापा।

४६. त्यहाँ जीवित र अविनिर्भोग रूपलाई चक्षुसहित चक्षुदशक भनी
भनिन्छ। त्यस्तै नै श्रोत्रादिसित श्रोत्रदशक, घ्राणदशक, जिह्वादशक, कायदशक,
स्त्रीभावदशक, पुम्भावदशक (पुरुषभाव) र वस्तुदशक गरी यथाक्रमानुसार
मिलाउनुपर्दछ। अविनिर्भोग रूप मात्रै जीवितसित जीवितनवक भनी भनिन्छ। यी
नौ कर्म समुत्थानकलाप हुन्।

४७. अविनिब्भोगरूपं पन सुद्धङ्कं, तदेव कायविज्जत्तिया सह
कायविज्जत्तिनवकं, वचीविज्जत्तिसद्देहि सह वचीविज्जत्तिदसकं, लहुतादीहि
सद्धिं लहुतादेकादसकं, कायविज्जत्तिलहुतादि द्वादसकं, वचीविज्जत्तिसद्द-
लहुतादि तेरसकञ्चेति छ चित्तसमुद्धानकलापा।

४७. अविनिर्भोग रूप शुद्धाष्टक हो, त्यो नै कायविज्ञप्तिरूप

कायविज्ञप्तिनवक हो, वचीविज्ञप्ति र शब्दसित वचीविज्ञप्तिदशक हो, हलुकापनादिसित हलुकापनएकादशक हो, कायविज्ञप्ति हलुकापनादि द्वादशक हो, वचीविज्ञप्ति शब्द हलुकापनादि तेहसक गरी छ चित्त समुत्थान कलाप हुन्।

४८. सुद्धट्टकं सदनवकं लहुतादेकादसकं सदलहुतादि द्वादसकञ्चेति चत्तारो उतुसमुद्धानकलापा।

४८. शुद्धाष्टक शब्दनवक लहुकापनादि एकादशक र शब्द लहुकापनादि द्वादशक गरी चार ऋतु समुत्थान कलाप हुन्।

४९. सुद्धट्टकं लहुतादेकादसकञ्चेति द्वे आहारसमुद्धानकलापा।

४९. शुद्धाष्टक हलुकापनादि एकादशक गरी दुई आहार समुत्थान कलाप हुन्।

५०. तथ सुद्धट्टकं सदनवकञ्चेति द्वे उतुसमुद्धानकलापा बहिन्द्रापि लब्धन्ति, अवसेसा पन सब्बेपि अज्झत्तिकमेवाति।

५०. त्यहाँ शुद्धाष्टक शब्दनवक गरी दुई ऋतु समुत्थान कलाप बाहिरिक पनि उपलब्ध हुन्छन्, अवशेष सबै नै आध्यात्मिक नै हुन्।

५१. कम्मचित्तोतुकाहारसमुद्धाना यथाक्कमं।

नव छ चतुरो द्वेति, कलापा एकवीसति ॥

कलापानं परिच्छेद-लक्खणत्ता विचक्खणा।

न कलापङ्गमिच्चाहु, आकासं लक्खणानि च ॥

५१. कर्म, चित्त, ऋतु र आहार समुत्थान यथाक्रमानुसार।

नौ, छ, चार, दुई गरी कलाप एक्काइस हुन् ॥

कलापको परिच्छेद-लक्षण मात्र विद्वानद्वारा।

कलापको अङ्ग भनी भनेका छैनन्, आकाश र लक्षणहरूलाई ॥

अयमेत्थ कलापयोजना।

यो यहाँ कलापयोजना हो।

९ कर्मसमुत्थान कलाप तालिका नं. ५२

| कर्मसमुत्थान | महाभूत | उपादाय | चक्षुदशक | श्रोत्रदशक | घ्राणदशक | जिह्वादशक | कायदशक | स्त्रीभावदशक | पुरुषभावदशक | वस्तुदशक | जीवितनवक |
|-------------------|--------|--------|----------|------------|----------|-----------|--------|--------------|-------------|----------|----------|
| १. पृथ्वी | • | | • | • | • | • | • | • | • | • | • |
| २. आपो | • | | • | • | • | • | • | • | • | • | • |
| ३. तेजो | • | | • | • | • | • | • | • | • | • | • |
| ४. वायु | • | | • | • | • | • | • | • | • | • | • |
| ५. चक्षु | | • | | | | | | | | | |
| ६. श्रोत्र | | • | | • | | | | | | | |
| ७. घ्राण | | • | | | • | | | | | | |
| ८. जिह्वा | | • | | | | • | | | | | |
| ९. काय | | • | | | | | • | | | | |
| १०. रूप | | • | | | | | | • | • | • | • |
| ११. शब्द | | • | | | | | | | | | |
| १२. गन्ध | | • | | | | | | • | • | • | • |
| १३. रस | | • | | | | | | • | • | • | • |
| स्पर्श | | • | | | | | | | | | |
| १४. स्त्रीत्व | | • | | | | | | • | | | |
| १५. पुरुषत्व | | • | | | | | | | • | | |
| १६. हृदयवस्तु | | • | | | | | | | | • | • |
| १७. जीवितेन्द्रिय | | • | | | | | | | • | • | • |
| १८. आहार | | • | | | | | | | • | • | • |
| १९. परिच्छेद | | • | | | | | | | | | |
| २०. कायविज्ञप्ति | | • | | | | | | | | | |
| २१. वचीविज्ञप्ति | | • | | | | | | | | | |
| २२. लघुता | | • | | | | | | | | | |
| २३. मृदुता | | • | | | | | | | | | |
| २४. कर्मण्यता | | • | | | | | | | | | |
| २५. उपचय | | • | | | | | | | | | |
| २६. सन्तति | | • | | | | | | | | | |
| २७. जरता | | • | | | | | | | | | |
| २८. अनित्यता | | • | | | | | | | | | |
| जम्मा | ४ | २४ | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | ९ |

रूपपवत्तिकमो रूपप्रवृत्तिक्रम

५२. सब्बानिपि पनेतानि रूपानि कामलोके यथारहं अनूतानि पवत्तियं उपलब्धन्ति।

५२. यी सबै रूप कामलोकमा यथायोग्यानुसार अन्यूनरूपले प्रवृत्तिकालमा उपलब्ध हुन्छन्।

५३. पटिसन्धियं पन संसेदजानञ्चेव ओपपातिकानञ्च चक्खुसोतघान-जिह्वाकायभाववत्थुदसकसङ्घातानि सत्त दसकानि पातुभवन्ति उक्कट्टवसेन, ओमकवसेन पन चक्खुसोतघानभावदसकानि कदाचिपि न लब्धन्ति, तस्मा तेसं वसेन कलापहानि वेदितब्बा।

५३. प्रतिसन्धिमा संस्वेदज^{१०९} र औपपातिक^{११०}लाई उत्कृष्टरूपले चक्षुदशक, श्रोत्रदशक, घ्राणदशक, जिह्वादशक, कायदशक, स्त्रीभावदशक, पुम्भावदशक र वस्तुदशक भन्ने सात दशक प्रकट हुन्छन्। हीनानुसार चक्षुदशक, श्रोत्रदशक, घ्राणदशक, भावदशक कदाचित् (कहिलेकाहिँ) उपलब्ध हुँदैनन्, त्यसैले त्यो अनुसार कलापहानि भनी जान्नुपर्दछ।

५४. गम्भसेय्यकसत्तानं पन कायभाववत्थुदसकसङ्घातानि तीणि दसकानि पातुभवन्ति, तथापि भावदसकं कदाचि न लब्धति, ततो परं पवत्तिकाले कमेन चक्खुदसकादीनि च पातुभवन्ति।

५४. गर्भशेय्यक सत्त्वहरूका कायदशक, भावदशक र वस्तुदशक भन्ने तीन दशक प्रकट हुन्छ, त्यहाँ पनि भावदशक कदाचित् उपलब्ध हुँदैनन्, त्यसपछि प्रवृत्तिकालमा क्रमानुसार चक्षुदशकादि प्रकट हुन्छन्।

५५. इच्चेवं पटिसन्धिमुपादाय कम्मसमुद्धाना, दुतियचित्तमुपादाय चित्तसमुद्धाना, टितिकालमुपादाय उतुसमुद्धाना, ओजाफरणमुपादाय आहारसमुद्धाना चेति चतुसमुद्धानरूपकलापसन्तति कामलोके दीपजाला विय, नदीसोतो विय च यावतायुकमब्बोच्छिन्ना पवत्तति।

५५. यसरी प्रतिसन्धिलाई लिएर कर्म समुत्थान, द्वितीय चित्तलाई लिएर चित्त समुत्थान, स्थितिकाललाई लिएर ऋतु समुत्थान र ओजा फैलिएकोलाई लिएर आहार समुत्थान गरी चार समुत्थान रूपकलाप सन्तति कामलोकमा दीपको ज्वालाझैं, नदीको स्रोतझैं आयु भएसम्म निरन्तररूपले उत्पन्न भइरहन्छन्।

^{१०९} संस्वेदज - फोहोरमा उत्पन्न हुने सत्त्वप्राणी

^{११०} औपपातिक - लगातार, तुरुन्ता-तुरुन्तै जन्मिने सत्त्वप्राणी

५६. मरणकाले पन च्युतिचित्तोपरिसत्तरसमचित्तस्स ठितिकालमुपादाय कम्मजरूपानि न उप्पज्जन्ति, पुरेतरमुप्पन्नानि च कम्मजरूपानि च्युतिचित्तसमकालमेव पवत्तित्वा निरुज्झन्ति, ततो परं चित्तजाहारजरूपञ्च वोच्छिज्जति, ततो परं उतुसमुद्धानरूपपरम्परा याव मतकळेवरसङ्घाता पवत्तन्ति ।

५६. मरणकालमा च्युति चित्तको माथि रहेको सत्र चित्तको स्थितिकाललाई लिएर कर्मजरूपहरू उत्पन्न हुँदैनन्, पहिला उत्पन्न भएका कर्मजरूपहरू च्युतिचित्तसितै समान अवस्थासम्म मात्र प्रवृत्ति भएर निरोध हुन्छन्, त्यसपछि चित्त-आहारजरूप विच्छेद हुन्छन्, त्यसपछि ऋतु समुत्थान रूप परम्परादेखि मृतक-शरीर कुहिएको अवस्थासम्म प्रवृत्त हुन्छन् ।

५७. इच्चेवं मतसत्तानं, पुनदेव भवन्तरे ।
पटिसन्धिमुपादाय, तथा रूपं पवत्तति ॥

५७. यसरी मृतसत्त्वहरूलाई, फेरि भवान्तरमा ।
प्रतिसन्धि लिएर, त्यस्तै रूप प्रवृत्त हुन्छन् ॥

५८. रूपलोके पन घानजिक्काकायभावदसकानि च आहारजकलापानि च न लब्धन्ति, तस्मा तेसं पटिसन्धिकाले चक्खुसोतवत्थुवसेन तीणि दसकानि जीवितनवकञ्चेति चत्तारो कम्मसमुद्धानकलापा, पवत्तियं चित्तोतुसमुद्धाना च लब्धन्ति ।

५८. रूपलोकमा ग्राण-जिक्का-काय-भावदशक र आहारज कलापहरू उपलब्ध हुँदैनन्, त्यसैले तिनीहरूका प्रतिसन्धिकालमा चक्षु-श्रोत्रवस्तु अनुसार तीन दशक र जीवितनवक गरी चार कर्म समुत्थान कलाप हुन्छन्, प्रवृत्ति अवस्थामा चित्त र ऋतु समुत्थान उपलब्ध हुन्छन् ।

५९. असञ्जसत्तानं पन चक्खुसोतवत्थुसद्दापि न लब्धन्ति, तथा सब्बानिपि चित्तजरूपानि, तस्मा तेसं पटिसन्धिकाले जीवितनवकमेव, पवत्तियञ्च सद्वज्जितं उतुसमुद्धानरूपं अतिरिच्छति ।

५९. असंज्ञा-सत्त्वलाई चक्षु, श्रोत्र, वस्तु र शब्द उपलब्ध हुँदैन, त्यस्तै सबै चित्तजरूपहरू पनि, त्यसैले तिनीहरूका प्रतिसन्धिकालमा जीवितनवक मात्र हुन्छ, प्रवृत्ति अवस्थामा शब्द वर्जित ऋतु समुत्थान रूप मात्र बाँकी रहन्छ ।

६०. इच्चेवं कामरूपासञ्जीसङ्घातेसु तीसु ठानेसु पटिसन्धिपवत्तिवसेन दुविधा रूपप्पवत्ति वेदितब्बा ।

६०. यसरी काम-रूप-असंज्ञासत्त्व भन्ने तीन स्थानमा प्रतिसन्धि प्रवृत्ति अनुसार द्विविध रूप प्रवृत्ति छन् भनी जान्नुपर्दछ ।

६१. अट्टवीसति कामेसु, होन्ति तेवीस रूपिसु ।
 सत्तरसेव सञ्जीनं, अरूपे नत्थि किञ्चिपि ॥
 सट्ठो विकारो जरता, मरणञ्चोपपत्तियं ।
 न लब्धन्ति पवत्ते तु, न किञ्चिपि न लब्धति ॥
 ६१. अट्टइस काममा, हुन्छन् तेइस रूपमा ।
 सत्र मात्र असंज्ञासत्त्वलोकमा, अरूपमा हुँदैनन् केही पनि ।
 शब्द विकार जिर्णता, मरण र उत्पत्ति ।
 उपलब्ध हुँदैनन् प्रवृत्तिमा, न केही पनि न उपलब्ध हुन्छन् ॥

अयमेत्थ रूपपरिवर्तिककमो ।
 यो यहाँ रूपप्रवृत्तिक्रम हो ।

निब्बानभेदो निर्वाण भेद

६२. निब्बानं पन लोकुत्तरसङ्घातं चतुमग्गजाणेन सच्छिकातब्बं
 मग्गफलानमारम्मणभूतं वानसङ्घाताय तण्हाय निक्खन्तत्ता निब्बानन्ति
 पवुच्चति ।

६२. निर्वाण लोकोत्तर भन्ने चार मार्गज्ञानले साक्षात्कार गर्नुपर्ने मार्गफल
 आरम्मण भएको 'वान' भन्ने तृष्णाबाट निस्कने भएकाले निर्वाण भनी भनिन्छ ।

६३. तदेतं सभावतो एकविधम्पि सउपादिसेसनिब्बानधातु
 अनुपादिसेसनिब्बानधातु चेति दुविधं होति कारणपरियायेन ।

६३. त्यसलाई नै स्वभाविकले एकविध भएता पनि सोपधिशेष निर्वाणधातु
 र अनुपधिशेष निर्वाणधातु गरी द्विविध हुन्छन् कारणपरियाय अनुसार ।

६४. तथा सुञ्जतं अनिमित्तं अप्पणिहितञ्चेति तिविधं होति
 आकारभेदेन ।

६४. त्यस्तै शुन्यता अनिमित्त र अप्रणिहित गरी त्रिविध हुन्छन् आकारभेद
 अनुसार ।

६५. पदमच्च्युतमच्चन्तं, असङ्गतमनुत्तरं ।
 निब्बानमिति भासन्ति, वानमुत्ता महेसयो ॥
 इति चित्तं चेतसिकं, रूपं निब्बानमिच्चपि ।
 परमत्थं पकासेन्ति, चतुधाव तथागता ॥

६५. पद अच्युत अत्यन्त, असंस्कृत अनुत्तरलाई।
निर्वाण भनी भन्दछन्, वानबाट मुक्त भएका महर्षिहरू॥
यसरी चित्त-चैतसिक, रूप निर्वाणलाई पनि।
परमार्थरूपले प्रकाश गर्नुभएका छन्, चतुर्विध तथागतद्वारा॥

इति अभिधम्मत्थसङ्गहे रूपसङ्ग्रहविभागो नाम छट्टो परिच्छेदो।
यसरी अभिधर्मार्थ संग्रहमा रूपसंग्रहविभाग भन्ने छैटौँ परिच्छेद समाप्त।



७. समुच्चयपरिच्छेदो

७. समुच्चयपरिच्छेद

१. द्वासत्ततिविधा वुत्ता, वत्थुधम्मा सलक्खणा ।
तेसं दानि यथायोगं, पवक्खामि समुच्चयं ॥
१. बहत्तरविध बताएँ, वस्तुधर्म लक्षणसहित ।
अब ती यथायोग्यानुसार, भन्नेछु समुच्चयलाई ॥

२. अकुसलसङ्गहो मिस्सकसङ्गहो बोधिपक्खियसङ्गहो सब्बसङ्गहो चेत्ति
समुच्चयसङ्गहो चतुब्बिधो वेदितब्बो ।

२. अकुशलसंग्रह, मिश्रकसंग्रह, बोधिपक्षीयसंग्रह र सर्वसंग्रह गरी
समुच्चयसंग्रह चतुर्विध जान्नुपर्दछ ।

अकुसलसङ्गहो

अकुशलसंग्रह

३. कथं? अकुसलसङ्गहे ताव चत्तारो आसवा - कामासवो भवासवो
दिट्ठ्ठासवो अविज्जासवो ।

३. कसरी? पहिला अकुशलसंग्रहमा चार आसव छन् - कामासव,
भवासव, दृष्टिआसव र अविद्याआसव ।

४. चत्तारो ओघा - कामोघो भवोघो दिट्ठोघो अविज्जोघो ।

४. चार ओघ छन् - कामओघ, भवओघ, दृष्टिओघ र अविद्याओघ ।

५. चत्तारो योगा - कामयोगो भवयोगो दिट्ठियोगो अविज्जायोगो ।

५. चार योग छन् - कामयोग, भवयोग, दृष्टियोग र अविद्यायोग ।

६. चत्तारो गन्था - अभिज्झाकायगन्थो, ब्यापादो कायगन्थो,
सीलब्बतपरामासोकायगन्थो, इदंसच्चाभिनिवेशो कायगन्थो ।

६. चार ग्रन्थ छन् - अविद्या-कायग्रन्थ, ब्यापाद-कायग्रन्थ,
शीलव्रतपरमार्श-कायग्रन्थ र इदंसत्याभिनिवेश-कायग्रन्थ ।

७. चत्तारो उपादाना - कामुपादानं दिट्ठुपादानं सीलब्बतुपादानं
अत्तवादुपादानं ।

७. चार उपादान छन् - काम-उपादान, दृष्टि-उपादान, शीलव्रत-उपादान
र आत्मावाद-उपादान ।

८. छ नीवरणानि - कामच्छन्दनीवरणं ब्यापादनीवरणं थिनमिद्धनीवरणं

उद्धच्चकुक्कुच्चनीवरणं विचिकिच्छानीवरणं अविज्जानीवरणं ।

८. छ नीवरणा छन् - कामच्छन्द-नीवरण, व्यापाद-नीवरण, स्त्यानभिद्ध-नीवरण, औद्धत्य-कौकृत्य-नीवरण, विचिकित्सा-नीवरण र अविद्या-नीवरण ।

९. सत्त अनुसया - कामरागानुसयो भवरागानुसयो पटिघानुसयो मानानुसयो दिट्ठानुसयो विचिकिच्छानुसयो अविज्जानुसयो ।

९. सात्त अनुशय छन् - कामरागानुशय, भवरागानुशय, प्रतिघानुशय, मानानुशय, दृष्ट्यानुशय, विचिकित्सानुशय र अविद्यानुशय ।

१०. दस संयोजनानि - कामरागसंयोजनं रूपरागसंयोजनं अरूपरागसंयोजनं पटिघसंयोजनं मानसंयोजनं दिट्ठिसंयोजनं सीलब्बतपरामास-संयोजनं विचिकिच्छासंयोजनं उद्धच्चसंयोजनं अविज्जासंयोजनं सुत्तन्ते ।

१०. दस संयोजन छन् - कामराग-संयोजन, रूपराग-संयोजन, अरूपराग-संयोजन, प्रतिघ-संयोजन, मान-संयोजन, दृष्टि-संयोजन, शीलब्रतपरामर्श-संयोजन, विचिकित्सा-संयोजन, औद्धत्य-संयोजन र अविद्या-संयोजन ।

११. अपरानिपि दस संयोजनानि - कामरागसंयोजनं भवरागसंयोजनं पटिघसंयोजनं मानसंयोजनं दिट्ठिसंयोजनं सीलब्बतपरामाससंयोजनं विचिकिच्छासंयोजनं इस्सासंयोजनं मच्छरियसंयोजनं अविज्जासंयोजनं अभिधम्मं (विभ०) ।

११. अन्य पनि दस संयोजन छन् - कामराग-संयोजन, भवराग-संयोजन, प्रतिघ-संयोजन, मान-संयोजन, दृष्टि-संयोजन, शीलब्रतपरामर्श-संयोजन, विचिकित्सा-संयोजन, ईर्ष्या-संयोजन, मात्सर्य-संयोजन र अविद्या-संयोजन ।
अभिधर्ममा (विभ०) ।

१२. दस किलेसा - लोभो दोसो मोहो मानो दिट्ठि विचिकिच्छा थिनं उद्धच्चं अहिरिकं अनोत्तपं ।

१२. दस क्लेश छन् - लोभ, द्वेष, मोह, मान, दृष्टि, विचिकित्सा, स्त्यान, औद्धत्य, आहीक्य र अनपत्राय्य ।

१३. आसवादीसुपनेत्थ कामभवनामेन तब्बत्थुका तण्हा अधिप्पेता, सीलब्बतपरामासो इदंसच्चाभिनिवेशो अत्तवादुपादो च तथापवत्तं दिट्ठिगतमेव पवुच्चति ।

१३. आस्रवादिमा यहाँ काम र भव नामले त्यही नै आधार भएको तृष्णाको अभिप्रेत हुन्, शीलब्रतपरामर्श, इदंसत्याभिनिवेश र आत्मावाद उपादान त्यस्तै प्रवृत्त भएको दृष्टिगत भनी भनिएको छ ।

१४. आसवोघा च योगा च, तयो गन्था च वस्थुतो।
 उपादाना दुवे वुत्ता, अद्द नीवरणा सियुं॥
 छळेवानुसया हौन्ति, नव संयोजना मता।
 किलेसा दस वुत्तोयं, नवधा पापसङ्गहो॥
१४. आस्रव ओघ योग र, तीन ग्रन्थ वस्तु अनुसार।
 उपादान दुई भनिएको छ, आठ नीवरण छन्॥
 छ अनुशय छन्, नव संयोजन छन्।
 क्लेश दस बताइयो यो, नवविध पापसंग्रह॥

अनुशय-क्लेश तालिका नं. ५३

| | | | आस्रव | ओघ | योग | ग्रन्थ | उपादान | नीवरण | अनुशय | संयोजन | क्लेश |
|----|----------------|---|-------|----|-----|--------|--------|-------|-------|--------|-------|
| १ | मोह(१४) | ७ | • | • | • | | | • | • | • | • |
| २ | अहीक्य(१५) | १ | | | | | | | | | • |
| ३ | अनपत्राप्य(१६) | १ | | | | | | | | | • |
| ४ | औद्धत्य(१७) | ३ | | | | | | • | | • | • |
| ५ | लोभ(१८) राग | ९ | • | • | • | • | • | • | • | • | • |
| ६ | दृष्टि(१९) | ८ | • | • | • | • | • | • | • | • | • |
| ७ | मान(२०) | ३ | | | | | | | • | • | • |
| ८ | द्वेष(२१) | ५ | | | • | | | • | • | • | • |
| ९ | ईर्ष्या(२२) | १ | | | | | | | | • | |
| १० | मात्सर्य(२३) | १ | | | | | | | | • | |
| ११ | कौकृत्य(२४) | १ | | | | | | • | | | |
| १२ | स्त्यान (२५) | २ | | | | | | • | | | • |
| १३ | मिद्ध(२६) | १ | | | | | | • | | | |
| १४ | विचिकित्सा(२७) | ४ | | | | | | • | • | • | • |
| | जम्मा | | | | | | | | | | |

मिस्सकसङ्गहो
 मिश्रकसंग्रह

१५. मिस्सकसङ्गहे छ हेतू - लोभो दोसो मोहो अलोभो अदोसो अमोहो।

१५. मिश्रकसंग्रहका छ हेतू छन् - लोभ, द्वेष, मोह, अलोभ, अद्वेष र

अमोह ।

१६. सत्त ज्ञानज्ञानि - वितक्को विचारो पीति एकगता सोमनस्सं दोमनस्सं उपेक्खा ।

१६. सात ध्यानाङ्ग छन् - वितर्क, विचार, प्रीति, एकाग्रता, सौमनस्य, दौर्मनस्य र उपेक्षा ।

१७. द्वादस मग्गज्ञानि - सम्मादिट्ठि सम्मासङ्कप्पो सम्मावाचा सम्माकम्मन्तो सम्माआजीवो सम्मावायामो सम्मासति सम्मासमाधि मिच्छादिट्ठि मिच्छासङ्कप्पो मिच्छावायामो मिच्छासमाधि ।

१७. बाह् मारगाङ्ग छन् - सम्यक्-दृष्टि, सम्यक्-सङ्कल्प, सम्यक्-वचन, सम्यक्-कर्मान्त, सम्यक्-आजीव, सम्यक्-व्यायाम, सम्यक्-स्मृति, सम्यक्-समाधि, मिथ्या-दृष्टि, मिथ्या-सङ्कल्प, मिथ्या-व्यायाम र मिथ्या-समाधि ।

१८. बावीसतिन्द्रियानि - चक्षुन्द्रियं सोतिन्द्रियं घानिन्द्रियं जिह्विन्द्रियं कायिन्द्रियं इत्थिन्द्रियं पुरिसिन्द्रियं जीवितिन्द्रियं मनिन्द्रियं सुखिन्द्रियं दुक्खिन्द्रियं सोमनस्सिन्द्रियं दोमनस्सिन्द्रियं उपेक्खिन्द्रियं सद्धिन्द्रियं वीरियिन्द्रियं सतिन्द्रियं समाधिन्द्रियं पञ्जिन्द्रियं अनञ्जातञ्जस्सामीतिन्द्रियं अञ्जिन्द्रियं अञ्जाताविन्द्रियं ।

१८. बाइस इन्द्रिय छन् - चक्षुरिन्द्रिय, श्रोत्रेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय, कायेन्द्रिय, स्त्रीन्द्रिय, पुरुषेन्द्रिय, जीवितेन्द्रिय, मनइन्द्रिय, सुखेन्द्रिय, दुःखेन्द्रिय, सौमनस्येन्द्रिय, दौर्मनस्येन्द्रिय, उपेक्षेन्द्रिय, श्रद्धेन्द्रिय, वीर्येन्द्रिय, स्मृतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय, प्रज्ञेन्द्रिय, अनाज्ञातमाज्ञास्यामीन्द्रिय, आज्ञेन्द्रिय र आज्ञातावीन्द्रिय ।

१९. नव बलानि - सद्धाबलं वीरियबलं सतिबलं समाधिबलं पञ्जाबलं हिरिबलं ओत्तप्पबलं अहिरिकबलं अनोत्तप्पबलं ।

१९. नौ बल छन् - श्रद्धा-बल, वीर्य-बल, स्मृति-बल, समाधि-बल, प्रज्ञा-बल, ही-बल, अपत्राप्य-बल, अहीक्य-बल र अनपत्राप्य-बल ।

२०. चत्तारो अधिपती - छन्दाधिपति वीरियाधिपति चित्ताधिपति वीमंसाधिपति ।

२०. चार अधिपति छन् - छन्द अधिपति, वीर्य अधिपति, चित्त अधिपति र विमंश अधिपति ।

२१. चत्तारो आहारो - कबलीकारो आहारो, फस्तो दुतियो, मनोसञ्चेतना ततिया, विञ्जाणं चतुत्थं ।

२१. चार आहार छन् - कवलीकार आहार, स्पर्श द्वितीय, मनोसंचेतना

तृतीय, विज्ञान चतुर्थ।

२२. इन्द्रियेषु पनेत्थ सोतापत्तिमग्गजाणं अनज्जातज्जस्सामीतिन्द्रियं।
२२. यहाँ इन्द्रियमध्ये स्रोतापत्ति-मार्ग ज्ञानलाई अनाज्ञातमाज्ञास्यामीन्द्रिय भनिन्छ।
२३. अरहत्तफलजाणं अज्जाताविन्द्रियं।
२३. अरहत्त-फल ज्ञानलाई आज्ञातावीन्द्रिय भनिन्छ।
२४. मज्झे छ जाणानि अज्जिन्द्रियानीति पवुच्चन्ति।
२४. बिचमा छ ज्ञानलाई आज्ञेन्द्रिय भनिन्छ।
२५. जीवित्तिन्द्रियञ्च रूपारूपवसेन दुविधं होति।
२५. जीवित्तिन्द्रिय मात्र रूप र अरूप अनुसार द्विविध हुन्छन्।
२६. पञ्चविज्जाणेषु ज्ञानज्ञानि, अवीरियेषु बलानि, अहेतुकेसु मग्गज्ञानि न लब्भन्ति।
२६. पञ्चविज्ञानमा ध्यानाङ्गहरू, अवीर्यमा बलहरू, अहेतुकमा मार्गाङ्गहरू उपलब्ध हुँदैनन्।
२७. तथा विचिकिच्छाचित्ते एकग्गता मग्गिन्द्रियबलभावं न गच्छति।
२७. त्यस्तै विचिकित्सा चित्तमा एकाग्रता, मार्ग, इन्द्रिय र बलको भाव पर्दैनन्।
२८. द्विहेतुकतिहेतुकजवनेस्वेव यथासम्भवं अधिपति एकोव लब्भतीति।
२८. द्विहेतुक र त्रिहेतुक जवनमा मात्रै यथासम्भव अधिपति एउटा मात्र उपलब्ध हुन्छन्।
२९. छ हेतू पञ्च ज्ञानज्ञा, मग्गज्ञा नव वत्थुतो।
सोळसिन्द्रियधम्मा च, बलधम्मा नवेरिता ॥
चत्तारोधिपति वुत्ता, तथाहाराति सत्तधा।
कुसलादि समाकिण्णो, वुत्तो मिस्सकसङ्गहो ॥
२९. छ हेतू पाँच ध्यानाङ्ग, मार्गाङ्ग नौ वस्तु।
सोह इन्द्रिय धर्म र, बलधर्म नौ बताइएको छ ॥
चार अधिपति बताइएको छ, त्यस्तै आहार सातविध।
कुशलादि सममिश्रित भएको, भनी सकेको छु मिश्रक संग्रहलाई ॥

बोधिपक्खियसङ्गहो बोधिपक्षीयसंग्रह

३०. बोधिपक्खियसङ्गहे चत्तारो सतिपट्टाना कायानुपस्सनासतिपट्टानं वेदानुपस्सनासतिपट्टानं चित्तानुपस्सनासतिपट्टानं धम्मनुपस्सनासतिपट्टानं ।

३०. बोधिपक्षीयसंग्रहमा चार स्मृतिप्रस्थान छन् - कायानुपश्यना-स्मृतिप्रस्थान, वेदानुपश्यना-स्मृतिप्रस्थान, चित्तानुपश्यना-स्मृतिप्रस्थान र धर्मानुपश्यना-स्मृतिप्रस्थान ।

३१. चत्तारो सम्पप्पधाना - उप्पन्नानं पापकानं पहानाय वायामो, अनुप्पन्नानं पापकानं अनुप्पादाय वायामो, अनुप्पन्नानं कुसलानं उप्पादाय वायामो, उप्पन्नानं कुसलानं भिय्योभावायवायामो ।

३१. चार सम्यक्-प्रधान छन् - उत्पन्न पापधर्मको प्रहाणको लागि व्यायाम, अनुत्पन्न पापधर्मको अनुत्पादको लागि व्यायाम, अनुत्पन्न कुशलधर्मको उत्पादको लागि व्यायाम र उत्पन्न कुशल धर्मको ज्ञान-ज्ञान उत्पाद (वृद्धि) गर्नको लागि व्यायाम ।

३२. चत्तारो इद्धिपादा - छन्दिद्धिपादो वीरियिद्धिपादो चित्तिद्धिपादो वीमंसिद्धिपादो ।

३२. चार ऋद्धिपाद छन् - छन्द-ऋद्धिपाद, वीर्य-ऋद्धिपाद, चित्त-ऋद्धिपाद र वीमंश-ऋद्धिपाद ।

३३. पञ्चिन्द्रियानि - सद्धिन्द्रियं वीरियिन्द्रियं सतिन्द्रियं समाधिन्द्रियं पञ्चिन्द्रियं ।

३३. पाँच इन्द्रिय छन् - श्रद्धेन्द्रिय, वीर्येन्द्रिय, स्मृतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय र प्रज्ञेन्द्रिय ।

३४. पञ्च बलानि - सद्धाबलं वीरियबलं सतिबलं समाधिबलं पञ्जाबलं ।

३४. पाँच बल छन् - श्रद्धा-बल, वीर्य-बल, स्मृति-बल, समाधि-बल र प्रज्ञा-बल ।

३५. सत्त बोज्झङ्गा - सतिसम्बोज्झङ्गो धम्मविचयसम्बोज्झङ्गो वीरियसम्बोज्झङ्गो पीतिसम्बोज्झङ्गो पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गो समाधिसम्बोज्झङ्गो उपेक्खासम्बोज्झङ्गो ।

३५. सात बोध्यङ्ग छन् - स्मृति-सम्बोध्यङ्ग, धर्मविचय-सम्बोध्यङ्ग, वीर्य-सम्बोध्यङ्ग, प्रीति-सम्बोध्यङ्ग, प्रश्रद्धि-सम्बोध्यङ्ग, समाधि-सम्बोध्यङ्ग र उपेक्षा-

सम्बोध्यङ्ग ।

३६. अट्ट मग्गङ्गानि - सम्मादिट्ठि सम्मासङ्कप्पो सम्मावाचा सम्माकम्मन्तो सम्माआजीवो सम्मावायामो सम्मासति सम्मासमाधि ।

३६. आठ मार्गाङ्ग छन् - सम्यक्-दृष्टि, सम्यक्-सङ्कल्प, सम्यग्-वाक्, सम्यक्-कर्मान्त, सम्यग्-आजीव, सम्यक्-व्यायाम, सम्यक्-स्मृति र सम्यक्-समाधि ।

३७. एत्थ पन चत्तारो सतिपट्ठानाति सम्मासति एकाव पवुच्चति ।

३७. यहाँ चार स्मृतिपस्थानलाई सम्यक्-स्मृति एक गरी भनिन्छ ।

३८. तथा चत्तारो सम्मप्पधानाति च सम्मावायामो ।

३८. त्यस्तै चार सम्यक्-प्रधानलाई सम्यक्-व्यायाम भनिन्छ ।

३९. छन्दो चित्तमुपेक्खा च, सद्धापस्सद्धिपीतियो ।

सम्मादिट्ठि च सङ्कप्पो, वायामो विरतित्तयं ।

सम्मासति समाधीति, चुट्ठसेते सभावतो ।

सत्तत्तिसप्पभेदेन, सत्तथा तत्थ सङ्गहो ॥

३९. छन्द, चित्त, उपेक्षा र, श्रद्धा, प्रश्रब्धि, प्रीति ।

सम्यग्-दृष्टि र सङ्कल्प (वित्तक), व्यायाम (वीर्य) विरति तीन ॥

सम्यक्-स्मृति समाधि (एकाग्रता) गरी, यी चौध स्वभावानुसार ।

सैंतीस भेदानुसार, सातविध त्यहाँ संग्रह हुन्छन् ॥

४०. सङ्कप्पपस्सद्धि च पीतुपेक्खा, छन्दो च चित्तं विरतित्तयञ्च ।

नवेकठाना विरियं नवट्ठ, सती समाधी चतु पञ्च पञ्जा ।

सद्धा दुठानुत्तमसत्तत्तिसधम्मानमेसो पवरो विभागो ॥

४०. सङ्कल्प, प्रश्रब्धि, प्रीति, उपेक्षा, छन्द र चित्त विरति तीन ।

नौ एक स्थानमा वीर्य नौ-आठ, स्मृति समाधि चार पाँच प्रज्ञा ।

श्रद्धा दुई स्थान उत्तम सैंतीस धर्म यो प्रवरको विभाग हो ॥

४१. सब्बे लोकोत्तरे होन्ति, न वा सङ्कप्पपीतियो ।

लोकियेपि यथायोगं, छब्बिसुद्धिपवत्तियं ॥

४१. सबै लोकोत्तरमा हुन्छन्, न सङ्कल्प प्रीतिहरू ।

लौकिकमा यथायोगानुसार, छ विशुद्धिमा प्रवृत्ति हुन्छन् ॥

सब्बसङ्गहो
सर्वसंग्रह

४२. सब्बसङ्गहे पञ्चकखन्धा - रूपकखन्धो वेदनाकखन्धो सञ्जाकखन्धो सङ्खारकखन्धो विञ्जाणकखन्धो ।

४२. सर्वसंग्रहमा पाँच स्कन्ध छन् - रूपस्कन्ध, वेदनास्कन्ध, संज्ञास्कन्ध, संस्कारस्कन्ध र विज्ञानस्कन्ध ।

४३. पञ्चुपादानकखन्धा - रूपुपादानकखन्धो वेदनुपादानकखन्धो सञ्जुपादानकखन्धो सङ्खारुपादानकखन्धो विञ्जाणुपादानकखन्धो ।

४३. पाँच उपादान स्कन्ध छन् - रूप-उपादानस्कन्ध, वेदना-उपादानस्कन्ध, संज्ञा-उपादानस्कन्ध, संस्कार-उपादानस्कन्ध र विज्ञान-उपादानस्कन्ध ।

४४. द्वादसायतनानि - चक्खायतनं सोतायतनं घानायतनं जिह्वायतनं कायायतनं मनायतनं रूपायतनं सद्दायतनं गन्धायतनं रसायतनं फोड्ढ्वायतनं धम्मायतनं ।

४४. बाह् आयतन छन् - चक्षु-आयतन, श्रोत्र-आयतन, घ्राण-आयतन, जिह्वा-आयतन, काय-आयतन, मन-आयतन, रूप-आयतन, शब्द-आयतन, गन्ध-आयतन, रस-आयतन, स्पर्शव्य-आयतन र धर्म-आयतन ।

४५. अट्टारस धातुयो - चक्खुधातु सोतधातु घानधातु जिह्वाधातु कायधातु रूपधातु सद्दधातु गन्धधातु रसधातु फोड्ढ्वाधातु चक्खुविञ्जाणधातु सोतविञ्जाणधातु घानविञ्जाणधातु जिह्वाविञ्जाणधातु कायविञ्जाणधातु मनोधातु धम्मधातु मनोविञ्जाणधातु ।

४५. अठार धातु छन् - चक्षु-धातु, श्रोत्र-धातु, घ्राण-धातु, जिह्वा-धातु, काय-धातु, रूप-धातु, शब्द-धातु, गन्ध-धातु, रस-धातु, स्पर्शव्य-धातु, चक्षुर्विज्ञान-धातु, श्रोत्रविज्ञान-धातु, घ्राणविज्ञान-धातु, जिह्वाविज्ञान-धातु, कायविज्ञान-धातु, मनो-धातु, धर्म-धातु र मनोविज्ञान-धातु ।

४६. चत्तारि अरियसच्चानि - दुक्खं अरियसच्चं, दुक्खसमुदयो अरियसच्चं, दुक्खनिरोधो अरियसच्चं, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं ।

४६. चार आर्यसत्य छन् - दुःख आर्यसत्य, दुःखसमुदय आर्यसत्य, दुःखनिरोधआर्यसत्य र दुःखनिरोधगामिनी प्रदिपदा आर्यसत्य ।

४७. एत्थ पन चेतसिकसुखुमरूपनिब्बानवसेन एकूनसत्तति धम्मा

धम्मायतनधम्मधातूति सङ्घं गच्छन्ति ।

४७. यहाँ चैतसिक सूक्ष्मरूप र निर्वाण अनुसार उन्नसतरी धर्म धर्मायतन धर्मधातु भनी गणना गरिन्छ ।

४८. मनायतनमेव सत्तविज्जाणधातुवसेन भिज्जति ।

४८. मनायतन मात्रै सातविज्ञानधातु अनुसार विभाजित गरिन्छ ।

४९. रूपञ्च वेदना सञ्जा, सेसचेतसिका तथा ।

विज्जाणमिति पञ्चेते, पञ्चक्खन्धाति भासिता ॥

४९. रूप वेदना संज्ञा र, शेष चैतसिक त्यस्तै ।

विज्ञान भनी प्रज्ञप्त गरिएको छ, पञ्चस्कन्ध भनी देशना गरिएको छ ॥

५०. पञ्चुपादानक्खन्धाति तथा तेभूमका मता ।

भेदाभावेन निब्बानं, खन्धसङ्गहनिससटं ॥

५०. पञ्च उपादान स्कन्ध भनी त्यस्तै त्रिभूमिक जान्नुपर्दछ ।

भेदको भावले निर्वाणलाई, स्कन्ध संग्रहमा मुक्त गरिएको छ ॥

५१. द्वारारम्मणभेदेन, भवन्तायतनानि च ।

द्वारालम्बतदुप्पन्न-परियायेन धातुयो ॥

५१. द्वार आरम्मण भेदानुसार, हुन्छन् आयतनहरू र ।

द्वारालम्बन उत्पन्न-परियायले धातुहरू ॥

५२. दुक्खं तेभूमकं वट्टं, तण्हा समुदयो भवे ।

निरोधो नाम निब्बानं, मग्गो लोकोत्तरो मतो ॥

५२. दुःख त्रिभूमिक वृत्त हो, तृष्णा समुदय हो ।

निरोध भन्ने निर्वाण हो, मार्ग लोकोत्तर हो ॥

५३. मग्गयुत्ता फला चेव, चतुसच्चविनिस्सटा ।

इति पञ्चप्पभेदेन, पवुत्तो सब्बसङ्गहो ॥

५३. मार्ग युक्त फल नै, चार सत्य अलग भएको ।

यसरी पाँच प्रभेदानुसार, बताइसकेँ सर्वसंग्रह ॥

इति अभिधम्मत्थसङ्गहे समुच्चयसङ्गहविभागो नाम सत्तमो परिच्छेदो ।
यसरी अधिधर्मार्थ संग्रहमा समुच्चयसंग्रहविभाग भन्ने सातौँ परिच्छेद समाप्त ।

बोधिपक्षिय संग्रह तालिका नं. ५४

| | | | ४ सतिपट्ठान | ४ सम्यक्प्रधान | ५ ऋद्धिपाद | ५ इन्द्रिय | ५ बल | ७ बोध्यङ्ग | ८ मार्गाङ्ग |
|----|-----------------|---|-------------|----------------|------------|------------|------|------------|-------------|
| १ | वीर्य | ९ | | ● | ● | ● | ● | ● | ● |
| २ | सति | ८ | ● | | | ● | ● | ● | ● |
| ३ | प्रज्ञा | ५ | | | ● | ● | ● | ● | ● |
| ४ | समाधि | ४ | | | | ● | ● | ● | ● |
| ५ | श्रद्धा | २ | | | | ● | ● | | |
| ६ | सङ्कल्प | १ | | | | | | | ● |
| ७ | प्रश्रब्धि | १ | | | | | | ● | |
| ८ | प्रीति | १ | | | | | | ● | |
| ९ | उपेक्षा | १ | | | | | | ● | |
| १० | छन्द | १ | | | ● | | | | |
| ११ | चित्त | १ | | | ● | | | | |
| १२ | सम्यक्-वाक् | १ | | | | | | | ● |
| १३ | सम्यक्-कर्मन्ति | १ | | | | | | | ● |
| १४ | सम्यग्-आजीव | १ | | | | | | | ● |

८. पच्यपरिच्छेदो

८. प्रत्यय परिच्छेद

१. येसं सङ्गतधम्मानं, ये धम्मा पच्यया यथा।
तं विभागमिहेदानि, पवक्खामि यथारहं॥

१. जुन संस्कृत धर्मलाई, जुन धर्मले महत्त (प्रत्यय) गर्दछ यस्तै।
त्यो विभाजनलाई, अब भन्नेछु यथायोग्यानुसार।।

२. पटिच्चसमुप्पादनयो पट्टाननयो चेति पच्ययसङ्गहो दुविधो
वेदितब्बो।

२. प्रतीत्यसमुत्पादनय र प्रस्थाननय गरी प्रत्यय संग्रह द्विविध जान्नुपर्दछ।

३. तथ तद्भावभावीभावाकारमतोपलक्खितो पटिच्चसमुप्पादनयो,
पट्टाननयो पन आहच्चपच्ययट्टितिमारब्भ पवुच्चति, उभयं पन वोमिस्सेत्वा
पपञ्चेन्ति आचरिया।

३. त्यहाँ त्यो भएको कारणले अर्को हुने भएकोले त्यस भावाकारलाई
उपलक्ष्य गरेकोलाई मात्र प्रतीत्यसमुत्पादनय हो, पट्टाननय भनेको विशेष
प्रत्ययस्थितिलाई सङ्केत गरेर भनिन्छ, दुवैलाई मिश्रित गरेर विस्तृतरूपमा बताएका
छन् आचार्यहरूले।

पटिच्चसमुप्पादनयो प्रतीत्यसमुत्पादनय

४. तथ अविज्जापच्यया सङ्कारा, सङ्कारपच्यया विज्जाणं,
विज्जाणपच्यया नामरूपं, नामरूपपच्यया सत्तायतनं, सत्तायतनपच्यया फस्सो,
फस्सपच्यया वेदना, वेदनापच्यया तण्हा, तण्हापच्यया उपादानं,
उपादानपच्यया भवो भवपच्यया जाति, जातिपच्यया जरामरणं
सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासा सम्भवन्ति। एवमेतस्स केवलस्स
दुक्खक्खन्धस्स समुदयो होतीति अयमेत्थ पटिच्चसमुप्पादनयो।

४. त्यहाँ अविद्याको कारणले संस्कार, संस्कारको कारणले विज्ञान,
विज्ञानको कारणले नामरूप, नामरूपको कारणले षडायतन, षडायतनको कारणले
स्पर्श, स्पर्शको कारणले वेदना, वेदनाको कारणले तृष्णा, तृष्णाको कारणले
उपादान, उपादानको कारणले भव, भवको कारणले जन्म, जन्मको कारणले
जरामरण, शोक, परिदेव, दुःख, दौर्मनस्य, उपायास (डाहा) हुन्छन्। यसरी केवल

दुःखस्कन्धको उत्पत्ति नै हुन्छ भनी यो यहाँ प्रतित्यसमुत्पाद^{१८१} नय हो।

५. तथ्य तयो अद्धा द्वादसङ्गानि वीसताकारा तिसन्धि चतुसङ्केपा तीणि वट्टानि द्वेमूलानि च वेदितब्बानि।

५. त्यहाँ तीन काल, बाह्र अङ्ग, बीस आकार, तीन सन्धि, चार संक्षेप (भाग, अंश), तीन वर्त (वृत्त) र दुई मूल जान्नुपर्दछ।

६. कथं? अविज्जासङ्घारा अतीतो अद्धा, जातिजरामरणं अनागतो अद्धा, मज्जे अट्टपच्चुप्पन्नो अद्धाति तयो अद्धा।

६. कसरी? अविद्या संस्कार अतीत काल, जाति जरा मरण अनागत काल, बिचको आठ वर्तमान काल भनी तीन काल छन्।

७. अविज्जा सङ्घारा विज्जाणं नामरूपं सळायतनं फस्सो वेदना तण्हा उपादानं भवो जाति जरामरणन्ति द्वादसङ्गानि।

७. अविद्या, संस्कार, विज्ञान, नामरूप, षडायतन, स्पर्श, वेदना, तृष्णा, उपादान, भव, जाति र जरामरण गरी बाह्र अङ्ग हुन्।

८. सोकादिवचनं पनेत्थ निस्सन्दफलनिदस्सनं।

८. यहाँ शोकादि वचनद्वारा जातिको फललाई देखाइएको मात्र हो।

९. अविज्जासङ्घारगहणेन पनेत्थ तणहुपादानभवापि गहिता भवन्ति, तथा तणहुपादानभवगहणेन च अविज्जासङ्घारा, जातिजरामरणगहणेन च विज्जाणादिफलपञ्चकमेव गहितन्ति कत्वा -

९. यहाँ अविद्या संस्कार लिएमा तृष्णा, उपादान र भवलाई पनि लिइएको हुन्छ, त्यस्तै तृष्णा उपादान र भवलाई लिँदा अविद्या र संस्कारलाई, जाति-जरा-मरणलाई लिँदा विज्ञानादि फल पाँच मात्र लिइएको गरेर -

१०. अतीते हेतवो पञ्च, इदानि फलपञ्चकं।

इदानि हेतवो पञ्च, आयति फलपञ्चकन्ति।

वीसताकारा तिसन्धि, चतुसङ्केपा च भवन्ति ॥

१०. अतीतमा हेतु पाँच, अब फल पाँच।

अब हेतु पाँच, पाँच आउने फल पाँच।

बीस आकार, तीन सन्धि, र चार संक्षेप हुन्छन् ॥

११. अविज्जातणहुपादाना च किलेसवट्टं, कम्मभवसङ्घातो भवेकदेसो

^{१८१}प्रतित्यसमुत्पाद - प्रत्यय सामग्रीको कारणले उत्पन्न हुने फललाई प्रतित्यसमुत्पाद भनिन्छ। जस्तै - यो छ भने त्यो हुनेछ, यो उत्पन्न भयो भने त्यो उत्पन्न हुनेछ, यो छैन भने त्यो हुनेछैन, यो निरोध भयो भने त्यो निरोध हुनेछ।

सङ्घारा च कम्मवट्टं, उपपत्तिभवसङ्घातो भवेकदेसो अवसेसा च विपाकवट्टन्ति तीणि वट्टानि ।

११. अविद्या, तृष्णा र उपादानलाई क्लेश वर्त (वृत्त) भनिन्छ । कर्मभव भन्ने भवको केही अंश र संस्कारलाई कर्मवर्त (कर्मवृत्त) भनिन्छ । उपपत्तिभव भन्ने भवको केही अंशबाट अवशेष भएकोलाई विपाकवर्त (विपाक वृत्त) भनी तीन वृत्त छन् ।

१२. अविज्जातण्हावसेन द्वे मूलानि च वेदितव्वानि ।

१२. अविद्या र तृष्णाको अनुसार दुई मूललाई जान्नुपर्दछ ।

१३. तेसमेव च मूलानं, निरोधेन निरुज्झति ।

जरामरणमुच्छाय, पीळितानमभिण्हसो ।

आसवानं समुप्पादा, अविज्जा च पवत्तति ॥

वट्टमाबन्धमिच्चैवं, तेभूमकमनादिकं ।

पटिच्चसमुप्पादोति, पट्टपेसि महामुनि ॥

१३. त्यही मूललाई नै, निरोध भएमा निरोध हुन्छ ।

जरामरणबाट मुर्छा भएर, सँधै पीडा भइरहँदा ।

आस्रवलाई उत्पत्ति गरेर, अविद्या प्रवृत्ति हुन्छन् ॥

यसरी वृत्तमा आबद्ध भएर, त्रैभूमिक अन्त देखिएको छैन ।

प्रतित्यसमुत्पाद हो, भनी महामुनिद्वारा प्रतिष्ठापन गरिएको छ ।

प्रतित्यसमुत्पादको तालिका नं. ५५

| ३ काल | १२ अङ्ग | २० आकार र ४ समूह |
|---------|--|-----------------------------------|
| भूत | १. अविद्या २. संस्कार | भूत ५ हेतु: १, २, ८, ९, १० |
| वर्तमान | ३. विज्ञान ४. नाम-रूप ५. षडायतन ६. स्पर्श ७. वेदना | वर्तमान ५ फल: ३-७ |
| | ८. तृष्णा ९. उपादान १०. भव | वर्तमान ५ हेतु: ८, ९, १०, १, २ |
| भविष्य | ११. जाति १२. जरामरण | भविष्य ५ फल: ३-७ |

नोट:-

तीन सन्धि:-

१. भूत हेतुसित वर्तमान फल (२ र ३ बिच)
२. वर्तमान फलसित वर्तमान हेतु (७ र ८ बिच)
३. वर्तमान हेतुसित भविष्य फल (१० र ११ बिच)

तीन वर्त:-

१. क्लेश वर्त: १, ८, ९
२. कर्म वर्त: २, १० (भाग)
३. विपाक वर्त: ३-७, १० (भाग), ११, १२

दुई मूल:-

१. अविद्या: भूतदेखि वर्तमानसम्म
२. तृष्णा: वर्तमानदेखि भविष्यसम्म

प्रतीयसमुत्पादलाई भिन्नभिन्न तरिकाले देखिने तालिका नं. ५६

| १२ अङ्क | ४ संवेप | त्रिकाल | २० आकार | | | | ३ सन्धि | ३ वर्त | | | २ मूल | |
|------------|---------|---------|------------------|-----------|--------|------------------|---------|--------|------|-------|-------|---|
| | | | १ अतीत ५ हेतु | २ वर्तमान | | ४ भविष्य ५ फल | | क्लेश | कर्म | विपाक | | |
| | | | | २ फल | ३ हेतु | | | | | | | |
| १. अविद्या | १ | अतीत | ▲ | | ● | | | ■ | | | Φ | |
| २. संस्कार | | | ▲ | | ● | | ▲ | | ▼ | | | |
| ३. विज्ञान | २ | वर्तमान | | ● | | ▼ | ● | | | ● | | |
| ४. नामरूप | | | | ● | | ▼ | | | | ● | | |
| ५. षडायतन | | | | ● | | ▼ | | | | ● | | |
| ६. स्पर्श | | | | ● | | ▼ | | | | ● | | |
| ७. वेदना | | | | ● | | ▼ | | ● | | | ● | |
| ८. तृष्णा | | | | ▲ | | ● | | ● | ■ | | | Φ |
| ९. उपादान | ३ | | ▲ | | ● | | ■ | | | | | |
| १० भव | | | ▲ | | ● | | ● | | ▼ | | | |
| ११. जाति | ४ | भविष्य | | ○ | | ○ | ▼ | | | | | |
| १२. जराभरण | | | | ○ | | ○ | | | | | | |

पट्टाननयो पट्टाननयो

१४. हेतुपच्चयो आरम्भणपच्चयो अधिपतिपच्चयो अनन्तरपच्चयो समनन्तरपच्चयो सहजातपच्चयो अञ्जमञ्जपच्चयो निस्सयपच्चयो उपनिस्सयपच्चयो पुरेजातपच्चयो पच्छाजातपच्चयो आसेवनपच्चयो कम्मपच्चयो विपाकपच्चयो आहारपच्चयो इन्द्रियपच्चयो ज्ञानपच्चयो मग्गपच्चयो सम्पयुत्तपच्चयो विप्पयुत्तपच्चयो अत्थिपच्चयो नत्थिपच्चयो विगतपच्चयो अविगतपच्चयोति अयमेत्थ पट्टाननयो।

१४. हेतु-प्रत्यय^{१८२}, आरम्भण-प्रत्यय, अधिपति-प्रत्यय, अनन्तर-प्रत्यय, समनन्तर-प्रत्यय, सहजात-प्रत्यय, अन्योन्य-प्रत्यय, निश्रय-प्रत्यय, उपनिश्रय-प्रत्यय, पूर्वजात-प्रत्यय, पश्चात्-जात-प्रत्यय, आसेवन-प्रत्यय, कर्म-प्रत्यय, विपाक-प्रत्यय, आहार-प्रत्यय, इन्द्रिय-प्रत्यय, ध्यान-प्रत्यय, मार्ग-प्रत्यय, सम्प्रयुक्त-प्रत्यय, विप्रयुक्त-प्रत्यय, अस्ति-प्रत्यय, नास्ति-प्रत्यय, विगत-प्रत्यय र अविगत-प्रत्यय गरी यी यहाँ पट्टान^{१८३}नय (प्रस्थाननय) हो।

१५. छधा नामं तु नामस्स, पञ्चधा नामरूपिणं।

एकधा पुन रूपस्स, रूपं नामस्स चेकधा ॥

पञ्चत्तिनामरूपानि, नामस्स दुविधा द्वयं।

द्वयस्स नवधा चेति, छब्बिधा पच्चया कथं ॥

१५. षट्पञ्चविध नामले नामलाई, पञ्चविध नामरूपलाई।

एकविध फेरि रूपलाई, रूपले नामलाई एकविध।।

प्रज्ञप्ति, नाम र रूपले नामलाई द्विविध द्वय।

द्विविधलाई नवविध गरी, षट्पञ्चविध प्रत्यय छन्, कसरी?।।

१६. अनन्तरनिरुद्धा चित्तचेतसिका धम्मा पचुप्पन्नानं चित्तचेतसिकानं धम्मानं अनन्तरसमनन्तरनत्थिविगतवसेन, पुरिमानि जवनानि पच्छिमानं जवनानं आसेवनवसेन, सहजाता चित्तचेतसिका धम्मा अञ्जमञ्जं सम्पयुत्तवसेनेति च छधा नामं नामस्स पच्चयो होति।

१६. अनन्तर निरोध चित्त-चैतसिकधर्मले वर्तमान चित्त-चैतसिकधर्मलाई अनन्तर-समनन्तर-नास्ति-विगत-प्रत्ययानुसार, पूर्व जवनहरूले पछिको जवनहरूलाई

^{१८२} हेतु-प्रत्यय - यहाँ हेतु भन्नाले लोभ, द्वेष, मोह र अलोभ, अद्वेष, अमोह हो भने प्रत्यय भन्नाले महत्त गर्ने, उपकार गर्ने, देवा दिने हो। त्यसैले हेतु-प्रत्यय भन्नाले माथि उल्लेखित छ हेतुले महत्त, उपकार वा देवा दिनु हो।

^{१८३} पट्टान - पट्टान शब्दमा 'प' उपसर्ग 'प्रकार' अर्थमा प्रयुक्त छ। 'ठान' शब्द प्रत्यय शब्दको पर्याय हुनाले कारण अर्थमा प्रयोग हुन्छ। यहाँ कार्य धर्महरूको कारणभूत प्रत्ययशक्ति एवं शक्तिमान् धर्मसमूह 'ठान' (कारण) अवस्था भनिएको छ।

आसेवनानुसार, सहजात चित्त-चैतसिकधर्मले परम्पर सम्प्रयुक्तानुसार गरी षट्त्रिविध नामले नामलाई मद्दत गर्दछन्।

१७. हेतुज्ञानङ्गमङ्गलानि सहजातानं नामरूपानं हेतादिवसेन, सहजाता चेतना सहजातानं नामरूपानं, नानाक्खणिका चेतना कम्माभिनिब्बतानं नामरूपानं कम्मवसेन, विपाकक्खन्धा अञ्जमञ्जं सहजातानं रूपानं विपाकवसेनेति च पञ्चधा नामं नामरूपानं पच्चयो होति।

१७. हेतु, ध्यानाङ्ग, मार्गाङ्गले सहजात नामरूपहरूलाई हेतु-आदि अनुसार, सहजात चेतनाले सहजात नाम र रूपहरूलाई, नानाक्षणिक चेतनाले कर्माभिनिवृत नाम र रूपहरूलाई क्रमानुसार, विपाकस्कन्धले परस्पर सहजात रूपहरूलाई विपाकानुसार गरी पञ्चविध नामले नामरूपहरूलाई मद्दत गर्दछन्।

१८. पच्छाजाता चित्तचेतसिका धम्मा पुरेजातस्स इमस्स कायस्स पच्छाजातवसेनेति एकधाव नामं रूपस्स पच्चयो होति।

१८. पछि उत्पन्न हुने चित्त चैतसिकधर्मले पूर्व उत्पन्न भइरहेको यो शरीरलाई पश्चात्-जातानुसार गरी एकविध मात्रै नामले रूपलाई मद्दत गर्दछन्।

१९. छ वत्थूनि पवत्तियं सत्तन्नं विञ्जाणधातूनं पञ्चारम्मणानि च पञ्चविञ्जाणवीथिया पुरेजातवसेनेति एकधाव रूपं नामस्स पच्चयो होति।

१९. छ वस्तुहरू प्रवृत्ति कालमा सात विज्ञानधातुलाई पाँच आरम्भण र पाँच विज्ञानवीथिलाई पूर्वजातानुसार गरी एकविध रूपले नै नामलाई मद्दत गर्दछन्।

२०. आरम्भणवसेन उपनिस्सयवसेनेति च दुविधा पञ्जत्तिनामरूपानि नामस्सेव पच्चयाहोन्ति।

२०. आरम्भणानुसार र उपनिश्रयानुसार गरी द्विविध प्रज्ञप्तिनामरूपहरूले नामलाई नै मद्दत गर्दछन्।

२१. तत्थ रूपादिवसेन छब्बिधं होति आरम्भणं।

२१. त्यहाँ रूपादि अनुसार षट्त्रिविध हुन्छन् आरम्भण।

२२. उपनिस्सयो पन तिविधो होति - आरम्भणूपनिस्सयो अनन्तरूपनिस्सयो पकतूपनिस्सयो चेति।

२२. उपनिश्रय मात्र त्रिविध छन् - आरम्भण-उपनिश्रय, अनन्तर-उपनिश्रय र प्रकृति-उपनिश्रय।

२३. तत्थ आरम्भणमेव गरुकतं आरम्भणूपनिस्सयो।

२३. त्यहाँ गरुकृत आरम्भणलाई नै आरम्भण-उपनिश्रय भनिन्छ।

२४. अनन्तरनिरुद्धा चित्तचेतसिका धम्मा अनन्तरूपनिस्सयो ।
२४. अनन्तर-निरोध चित्त-चैतसिकधर्मलाई अनन्तर-उपनिश्रय भनिन्छ ।

२५. रागादयो पन धम्मा सद्धादयो च सुखं दुक्खं पुग्गलो भोजनं
उतुसेनासनञ्च यथारहं अज्झत्तञ्च बहिद्धा च कुसलादि धम्मानं, कम्मं
विपाकानन्ति च बहुधा होति पकतूपनिस्सयो ।

२५. रागादि अकुशलधर्म, श्रद्धादि कुशलधर्म, सुख, दुःख, पुद्गल,
भोजन, ऋतु र शयनासन योग्यतानुसारले आध्यामिक र बाह्य सन्तानमा
कुशलादि धर्मलाई र कर्मविपाक गरी प्रकृति-उपनिश्रय बहुविध छन् ।

२६. अधिपतिसहजातअज्जमज्जनिस्सयआहारइन्द्रियविष्पयुत्तअत्थि-
अविगतवसेनेति यथारहं नवधा नामरूपानि नामरूपानं पच्चया भवन्ति ।

२६. अधिपति-सहजात-अन्योन्य-निश्रय-आहार-इन्द्रिय-विषयुक्त-अस्ति र
अविगतानुसार गरी योग्यतानुसारले नवविध नामरूपले नाम र रूपलाई महत्
गर्दछन् ।

२७. तत्थ गरुकतमारम्मणं आरम्मणाधिपतिवसेन नामानं,
सहजाताधिपति चतुब्बिधोपि सहजातवसेन सहजातानं नामरूपानन्ति च
दुविधो होति अधिपतिपच्चयो ।

२७. त्यहाँ गरुकृत आरम्मणले आरम्मणाधिपति अनुसार नामलाई,
चतुर्विधको सहजाताधिपतिले पनि सहजातानुसार सहजात नाम र रूपलाई गरी
द्विविध अधिपति-प्रत्यय छन् ।

२८. चित्तचेतसिका धम्मा अज्जमज्जं सहजातरूपानञ्च, महाभूता
अज्जमज्जं उपादारूपानञ्च, पटिसन्धिक्खणे वत्थुविपाका अज्जमज्जन्ति च
तिविधो होति सहजातपच्चयो ।

२८. चित्त-चैतसिकधर्मले परस्पर सहजात रूपहरूलाई, महाभूतरूपले
परस्पर उपादारूपहरूलाई, प्रतिसन्धिक्षणमा हृदयवस्तु र विपाक अन्योन्य (परस्पर)
गरी त्रिविध सहजात-प्रत्यय छन् ।

२९. चित्तचेतसिका धम्मा अज्जमज्जं, महाभूता अज्जमज्जं,
पटिसन्धिक्खणे वत्थुविपाका अज्जमज्जन्ति च तिविधो होति
अज्जमज्जपच्चयो ।

२९. चित्त-चैतसिकधर्मले अन्योन्य (परस्पर), महाभूतरूपले अन्योन्य,
प्रतिसन्धिक्षणमा हृदयवस्तु र विपाक अन्योन्य गरी त्रिविध छन् अन्योन्य-प्रत्यय ।

३०. चित्तचेतसिका धम्मा अज्जमज्जं सहजातरूपानञ्च, महाभूता

अञ्जमञ्जं उपादारूपानञ्च, छ वत्थूनि सत्तन्नं विञ्जाणधातूनन्ति च तिविधो होति निस्सयपच्चयो ।

३०. चित्त-चैतसिकधर्म परस्पर सहजात रूपहरूलाई, महाभूरूपले परस्पर उपादाय रूपहरूलाई र छ वस्तु सात विज्ञानधातुलाई गरी त्रिविध निश्रय-प्रत्यय छन् ।

३१. कबलीकारो आहारो इमस्स कायस्स, अरूपिनो आहारा सहजातानं नामरूपानन्ति च दुविधो होति आहारपच्चयो ।

३१. कबलीकार आहारले यो रूपकायलाई, अरूपी आहारले (स्पर्श, मनःसञ्चेतना, विज्ञान) सहजात नाम र रूपहरूलाई गरी द्विविध आहार-प्रत्यय छन् ।

३२. पञ्च पसादा पञ्चन्नं विञ्जाणानं, रूपजीवितेन्द्रियं उपादिन्नरूपानं, अरूपिनो इन्द्रिया सहजातानं नामरूपानन्ति च तिविधो होति इन्द्रियपच्चयो ।

३२. पाँच प्रसादले पाँच विज्ञानलाई, रूपजीवितेन्द्रियले उपादिन्न (कर्मज) रूपहरूलाई, अरूपी इन्द्रियले सहजात नाम र रूपहरूलाई गरी त्रिविध इन्द्रिय-प्रत्यय छन् ।

३३. ओक्कन्तिक्खणे वत्थु विपाकानं, चित्तचेतसिका धम्मा सहजातरूपानं सहजातवसेन, पच्छजाता चित्तचेतसिका धम्मा पुरेजातस्स इमस्स कायस्स पच्छजातवसेन छवत्थूनि पवत्तियं सत्तन्नं विञ्जाणधातूनं पुरेजातवसेनेति च तिविधो होति विप्पयुत्तपच्चयो ।

३३. प्रतिसन्धिक्षणमा हृदयवस्तु र विपाकहरूलाई, चित्त-चैतसिकधर्मले सहजात रूपहरूलाई सहजातानुसार, पछि उत्पन्न भएको चित्त-चैतसिकधर्मले पूर्व उत्पन्न भएको यो रूपकायलाई पश्चात्-जातानुसार छ वस्तु प्रवृत्तिकालमा सात विज्ञानधातुलाई पूर्वजातानुसार गरी त्रिविध विप्रयुक्त-प्रत्यय छन् ।

३४. सहजातं पुरेजातं, पच्छजातञ्च सब्बथा ।
कबलीकारो आहारो, रूपजीवितमिच्चयन्ति ।
पञ्चविधो होति अत्थिपच्चयो अविगतपच्चयो च ॥
३४. सहजात, पूर्वजात र पश्चात्-जात सबै ।
कबलीकार आहार रूपीजीवितेन्द्रिय यो अनि ।
पञ्चविध छ अस्ति-प्रत्यय र अविगत-प्रत्यय गरी ॥

३५. आरम्मणूपनिस्सयकम्मत्थिपच्चयेसु च सब्बेपि पच्चया समोधानं गच्छन्ति ।

३५. आरम्भण, उपनिश्रय, कर्म र अस्ति-प्रत्ययहरूमा सबै नै प्रत्ययहरू अन्तर्गत हुन्छन्।

३६. सहजातरूपन्ति पनेत्थ सब्बत्थापि पवत्ते चित्तसमुद्धानानं, पटिसन्धियं कटत्तारूपानञ्च वसेन दुविधं होतीति वेदितब्बं।

३६. सहजात रूप भन्ने यहाँ सबै नै प्रवृत्तिकालमा चित्त समुद्धान (चित्तज रूप) र प्रतिसन्धिकालमा कटत्ता (कृत्य, कर्मज) रूपानुसार द्विविध छन्।

३७. इति तेकालिका धम्मा, कालमुत्ता च सम्भवा।

अज्झत्तञ्च बहिल्ला च, सङ्घतासङ्घता तथा।

पञ्जत्तिनामरूपानं, वसेन तिविधा ठिता।

पच्चया नाम पद्दाने, चतुवीसति सब्बथा ॥

३७. यसरी त्रिकालिक धर्महरू र कालविमुक्त उत्पन्न हुन्छन्।

आध्यात्मिक र बाह्य, संस्कृत र असंस्कृत तथा।।

प्रज्ञप्ति, नामरूपानुसार त्रिविध छन्।

प्रत्यय भन्ने पद्दानमा, चौबिस छन् सबै गरी।।

३८. तत्थ रूपधम्मा रूपवखन्धोव, चित्तचेतसिकसङ्घाता चत्तारो अरूपिनो खन्धा, निब्बानञ्चेति पञ्चविधम्मि अरूपन्ति च नामन्ति च पवुच्चति।

३८. त्यहाँ रूपधर्महरूलाई नै रूपस्कन्ध, चित्त-चेतसिक भन्ने चार अरूप स्कन्ध र निर्वाण गरी पञ्चविधलाई पनि अरूप भनी बताइएको छ।

पञ्जत्तिभेदो

प्रज्ञप्तिभेद

३९. ततो अवसेसा पञ्जत्ति पन पञ्जापियत्ता पञ्जत्ति, पञ्जापनतो पञ्जत्तीति च दुविधा होति।

३९. त्यसपछि अवशेष प्रज्ञप्ति भन्ने प्रज्ञप्त गर्ने भएकोले 'अर्थप्रज्ञप्ति' र प्रज्ञापन गर्ने भएकोले 'शब्दप्रज्ञप्ति' गरी द्विविध छन्।

४०. कथं? तं तं भूतविपरिणामाकारमुपादाय तथा तथा पञ्जत्ता भूमिपब्बतादिका, सम्भारसन्निवेशाकारमुपादाय गेहरथसकटादिका, खन्धपञ्चकमुपादाय पुरिसपुरगलादिका, चन्दावट्टनादिकमुपादाय दिसाकालादिका, असम्फुट्टाकारमुपादाय कूपगुहादिका, तं तं भूतनिमित्तं भावनाविसेसञ्च उपादाय कसिणनिमित्तादिका चेति एवमादिप्पभेदा पन परमत्थतो अविज्जमानापि अत्थच्छायाकारेण चित्तुप्पादानमारम्भणभूता तं तं

उपादाय उपनिधाय कारणं कत्वा तथा तथा परिकल्पियमाना सङ्घायति समञ्जायति वोहरीयति पञ्जापीयतीति पञ्जतीति पवुच्चति। अयं पञ्जति पञ्जापियत्ता पञ्जति नाम।

४०. कसरी? ती-ती भूतविपरिणाम आकारलाई आधार लिएर त्यसरी त्यसरी प्रज्ञप्त गरी राखेको भूमि पर्वत इत्यादि (संस्थान प्रज्ञप्ति); सामग्रीको समूह भएको आकारलाई आधार लिएर ती-ती आकारले प्रज्ञप्त गरी राखेको घर, रथ, गाडा इत्यादि (समूह प्रज्ञप्ति); स्कन्ध समूह पाँचलाई आधार लिएर ती-ती आकारले प्रज्ञप्त गरी राखेको पुरुष पुद्गल इत्यादि (जाति प्रज्ञप्ति); चन्द्रको वृट्टानुसार घुमिने आदि आकारलाई आधार लिएर ती-ती आकारले प्रज्ञप्त गरी राखेको पूर्वदिशा र कालादि (दिशा-काल प्रज्ञप्ति); असंस्पृष्टाकारादि (पालादि) आकारलाई आधार लिएर ती-ती आकारले गरी राखेको इनार, गुफा, प्वालादि (आकाश प्रज्ञप्ति); ती-ती आकारले प्रकट हुने निमित्तलाई र भावना विशेषलाई आधार लिएर ती-ती आकारले प्रज्ञप्त गरी राखेको कसिण निमित्तादि (निमित्त प्रज्ञप्ति); गरी यी प्रभेदादि परमार्थानुसार विद्यमान नभएतापनि अर्थको छायाकारले चित्तोत्पाद आरम्भणभूत भएको ती-तीको आधार लिएर, महत् लिएर कारण गरी ती-ती आकारले परिकल्पना गरी गणना गर्नुपर्छ। नाम दिनुपर्छ, व्यवहार गर्नुपर्छ, जान्नुपर्छ, प्रज्ञप्त गर्नुपर्छ भनी बताइएको छ। यो प्रज्ञप्तिलाई प्रज्ञप्त गरिराखेकोले प्रज्ञप्ति भनी भनिन्छ।

४१. पञ्जापनतो पञ्जति पन नामनामकम्मादि नामेन परिदीपिता, सा विज्जमानपञ्जति अविज्जमानपञ्जति, विज्जमानेन अविज्जमानपञ्जति, अविज्जमानेन विज्जमानपञ्जति, विज्जमानेन विज्जमानपञ्जति, अविज्जमानेन अविज्जमानपञ्जति चेति छब्बिधा होति।

४१. प्रज्ञप्त गरीराखेकोले प्रज्ञप्तिलाई नामनामकर्मादि नामले दर्शाएको छ। त्यो विद्यमान प्रज्ञप्ति, अविद्यमान प्रज्ञप्ति, विद्यमानले अविद्यमान प्रज्ञप्ति, अविद्यमानले विद्यमान प्रज्ञप्ति, विद्यमानले विद्यमान प्रज्ञप्ति र अविद्यमानले अविद्यमान प्रज्ञप्ति गरी षट्विध छन्।

४२. तत्थ यदा पन परमत्थतो विज्जमानं रूपवेदनादिं एताय पञ्जापेन्ति, तदायं विज्जमानपञ्जति। यदा पन परमत्थतो अविज्जमानं भूमिपब्बतादिं एताय पञ्जापेन्ति, तदायं अविज्जमानपञ्जतीति पवुच्चति। उभिन्नं पन वोमिस्सकवसेन सेसा यथाक्कमं छळभिज्जो, इत्थिसद्दो, चक्खुविज्जाणं, राजपुत्तीति च वेदितब्बा।

४२. त्यहाँ जब परमार्थानुसार विद्यमान रूप वेदनादिलाई त्योद्वारा प्रज्ञप्त गर्दछ, त्यसबेला यसलाई विद्यमानप्रज्ञप्ति भनिन्छ। जब परमार्थानुसार अविद्यमान भूमि पर्वतादिलाई त्योद्वारा प्रज्ञप्त गर्दछ, त्यसबेला यसलाई अविद्यमान प्रज्ञप्ति

भनी भनिन्छ। दुवै (विद्यमान प्रज्ञप्ति र अविद्यमान) प्रज्ञप्ति मिश्रित गरेर (मिलाएर) शेष क्रमानुसार छ-अभिज्ञी, स्त्री-शब्द, चक्षुर्विज्ञान र राजपुत्र भनी जान्नुपर्दछ।

४३. वचीघोसानुसारेण, सोतविज्जाणवीथिया।

पवत्तानन्तरुप्पन्नमनोद्वारस्स गोचरा ॥

अत्था यस्सानुसारेण, विज्जायन्ति ततो परं।

सायं पज्जति विज्जेय्या, लोकसङ्केतनिम्मिता ॥

४३. वचीघोषानुसारले श्रोत्रविज्ञानवीथि।

तदनुवर्तक मनोद्वारको गोचर भएको ॥

अर्थ यसको अनुसारले जानिनेछन् त्यसपछि।

त्यो प्रज्ञप्तिलाई जानिनेछन् लोक सङ्केतको लागि निर्मित भनी ॥

इति अभिधम्मत्थसङ्गहे पच्चयसङ्गहविभागो नाम अट्टमो परिच्छेदो।
यसरी 'अभिधर्मार्थ संग्रह'मा 'प्रत्ययसंग्रहविभाग' भन्ने आठौं परिच्छेद समाप्त।



९. कम्मद्वानपरिच्छेदो

९. कर्मस्थान परिच्छेद

१. समथविपस्सनानं, भावनानमितो परं ।
कम्मद्वानं पवक्खामि, दुविधम्मि यथाक्कमं ॥

१. शमथ र विपश्यना भावना यहाँदेखि ।
कर्मस्थानलाई विशेषरूपले भन्नेछु, द्विविधको क्रमानुसार।^{१८४}

समथकम्मद्वानं
शमथकर्मस्थान

२. तत्थ समथसङ्गहे ताव दस कसिणानि, दस असुभा, दस अनुस्सतियो, चतस्सो अप्पमज्जायो, एका सज्जा, एकं ववत्थानं, चत्तारो आरुप्पा चेत्ति सत्तविधेन समथकम्मद्वानसङ्गहो ।

२. त्यहाँ शमथ संग्रहमा पहिला दस कसिण, दस अशुभ, दस अनुस्मृति, चार अप्रमाण्य, एक संज्ञा, एक व्यवस्थान र चार आरूप्य गरी सप्तविधले शमथ कर्मस्थान संग्रह छन् ।

चरितभेदो
चरित्रभेद

३. रागचरिता दोसचरिता मोहचरिता सद्धाचरिता बुद्धिचरिता वितक्कचरिता चेत्ति छब्बिधेन चरितसङ्गहो ।

३. राग चरित्र, द्वेष चरित्र, मोह चरित्र, श्रद्धा चरित्र, बुद्धि चरित्र, वितर्क चरित्र गरी षट्विध चरित्र संग्रह छन् ।

भावनाभेद
भावना भेद

४. परिकम्मभावना उपचारभावना अप्पनाभावना चेत्ति तिस्रो भावना ।

४. परिकर्म भावना, उपचार भावना र अर्पणा भावना गरी तीन भावना छन् ।

^{१८४} १. यहाँदेखि द्विविधको शमथ र विपश्यना भावना कर्मस्थानलाई क्रमानुसार विशेषरूपले भन्नेछु ।

निमित्तभेदो निमित्त भेद

५. परिक्रमनिमित्तं उग्रहनिमित्तं पटिभागनिमित्तञ्चेति तीणि निमित्तानि च वेदितव्यानि ।

५. परिकर्म निमित्त, उग्रह निमित्त र प्रतिभाग निमित्त गरी तीन निमित्त जानुपर्दछ ।

६. कथं? पथवीकसिणं आपोकसिणं तेजोकसिणं वायोकसिणं नीलकसिणं पीतकसिणं लोहितकसिणं ओदातकसिणं आकासकसिणं आलोककसिणञ्चेति इमानि दस कसिणानि नाम ।

६. कसरी? पृथ्वी कसिण (सम्पूर्ण), आपः (जल) कसिण, तेजः (आगो) कसिण, वायु कसिण, नील (नीलो) कसिण, पीत (पहेँलो) कसिण, लोहित (रातो) कसिण, ओदात (सेतो रङ्ग) कसिण, आकाश कसिण र आलोक (प्रकाश) कसिण गरी यी दस कसिण भनिन्छ ।

७. उद्धुमातकं विनीलकं विपुब्बकं विच्छिद्दकं विक्खायितकं विक्खित्तकं हतविक्खित्तकं लोहितकं पुळवकं अट्टिकञ्चेति इमे दस असुभा नाम ।

७. फुलेको मृतक शरीर, नीलो भएको मृतक शरीर, पिपले भरेको मृतक शरीर, बिचमा प्वाल भएको मृतक शरीर, पशुहरूले खाइएको मृतक शरीर, विक्षिप्त भएको मृतक शरीर, काटेर विक्षिप्त भएको मृतक शरीर, रगत बगिरहेको मृतक शरीर, कीरा परेको मृतक शरीर, र अस्ति मात्र बाँकी भएको मृतक शरीर गरी यी अशुभ भनिन्छन् ।

८. बुद्धानुस्सति धम्मानुस्सति संघानुस्सति सीलानुस्सति चागानुस्सति देवतानुस्सति उपसमानुस्सति मरणानुस्सति कायगतासति आनापानस्सति चेति इमा दस अनुस्सतियो नाम ।

८. बुद्धानुस्मृति, धर्मानुस्मृति, सङ्घानुस्मृति, शीलानुस्मृति, त्यागानुस्मृति, देवतानुस्मृति, उपसमानुस्मृति, मरणानुस्मृति, कायगतास्मृति र आनापानस्मृति गरी यी दस अनुस्मृति भनिन्छन् ।

९. मेत्ता करुणा मुदिता उपेक्खा चेति इमा चतस्सो अप्पमज्जायो नाम, ब्रह्मविहारोति च पवुच्चति ।

९. मैत्री, करुणा, मुदिता र उपेक्षा गरी यी चार अप्रमाण्य भनिन्छ । यसलाई ब्रह्मविहार भनी विशेषरूपले भनिन्छ ।

१०. आहारेपटिकूलसञ्जा एका सञ्जा नाम ।
 १०. खाद्यपदार्थमा प्रतिकूल संज्ञा (सङ्केत) लाई एक संज्ञा भनिन्छ ।
 ११. चतुधातुववस्थानं एकं ववस्थानं नाम ।
 ११. चार धातुलाई छुट्याउनुलाई एक व्यवस्थान (निश्चय) भनिन्छ ।

१२. आकासानञ्चायतनादयो चत्तारो आरुप्पा नामाति सब्बथापि समथनिद्वेसे चत्तालीस कम्मट्टानानि भवन्ति ।

१२. आकाशान्यायतन इत्यादिलाई चार आरूप्य भनी सबै नै शमथ निर्देशमा चालिस कर्मस्थान छन् ।

सप्पायभेदो सप्पाय भेद

१३. चरितासु पन दस असुभा कायगतासतिसङ्घाता कोट्टासभावना च रागचरितस्स सप्पाया ।

१३. चरित्रमध्ये दस अशुभ र कायगतास्मृति भन्ने कोट्टास (भाग, अवयव) भावना राग चरित्रको व्यक्तिलाई उचित हुन्छ ।

१४. चतससो अप्पमञ्जायो नीलादीनि च चत्तारि कसिणानि दोसचरितस्स ।

१४. चार अप्रमाण्य र नील आदि चार कसिण द्वेष चरित्रको व्यक्तिलाई उचित हुन्छ ।

१५. आनापानं मोहचरितस्स वितक्कचरितस्स च ।

१५. आनापानस्मृति मोह चरित्रको र वितर्क चरित्रको व्यक्तिलाई उचित हुन्छ ।

१६. बुद्धानुस्सति आदयो छ सद्धाचरितस्स ।

१६. बुद्धानुस्मृति आदि छ श्रद्धा चरित्रलाई उचित हुन्छ ।

१७. मरणउपसमसञ्जाववस्थानानि बुद्धिचरितस्स ।

१७. मरणानुस्मृति, उपसमानुस्मृति, एक संज्ञा र एक व्यवस्थान बुद्धि चरित्रको व्यक्तिलाई उचित हुन्छ ।

१८. सेसानि पन सब्बानिपि कम्मट्टानानि सब्बेसम्पि सप्पायानि, तत्थापि कसिणेसु पुथुलं मोहचरितस्स, खुद्दकं वितक्कचरितस्सेवाति ।

१८. शेष सबै कर्मस्थानहरू सबै चरित्रका व्यक्तिहरूलाई उचित हुन्छ ।

त्यहाँ कसिणमध्ये ठूलो मोह चरित्रको व्यक्तिलाई र सानो वितर्क चरित्रको व्यक्तिलाई उचित हुन्छ ।

अयमेत्थ सप्पायभेदो ।
यो यहाँ सप्पायभेद हो ।

भावनाभेदो भावना भेद

१९. भावनासु सब्बत्थापि परिकम्मभावना लब्भतेव, बुद्धानुस्सति आदीसु अट्टसु सञ्जाववत्थानेसु चाति दससुकम्मद्वानेसु उपचारभावनाव सम्पज्जति, नत्थि अप्पना ।

१९. भावनामध्ये सबैमा परिकर्म भावना उपलब्ध नै हुन्छ । बुद्धानुस्मृति आदि आठमा, संज्ञा व्यवस्थानमा गरी दस कर्मस्थानमा उपचार भावना मात्र पूर्ण हुन्छन्, अर्पणा हुँदैन ।

२०. सेसेसु पन समतिसकम्मद्वानेसु अप्पनाभावनापि सम्पज्जति ।

२०. शेष तीस कर्मस्थानमा अर्पणा भावना पनि पूर्ण हुन्छन् ।

२१. तत्थापि दस कसिणानि आनापानञ्च पञ्चकज्ज्ञानिकानि ।

२१. त्यहाँ पनि दस कसिण र आनापानस्मृति पञ्चकध्यान हो ।

२२. दस असुभा कायगतासति च पठमज्ज्ञानिका ।

२२. दस अशुभ र कायगतास्मृति प्रथमध्यानको हो ।

२३. मेत्तादयो तयो चतुक्कज्ज्ञानिका ।

२३. मैत्री आदि तीन चतुर्थध्यानको हो ।

२४. उपेक्खा पञ्चमज्ज्ञानिकाति छब्बीसति रूपावचरज्ज्ञानिकानि कम्मद्वानानि ।

२४. उपेक्षा पञ्चम ध्यान भएको गरी छब्बिस रूपावचर ध्यान भएको कर्मस्थान हो ।

२५. चत्तारो पन आरुप्पा आरुप्पज्ज्ञानिकाति ।

२५. चार आरूप्य अरूप ध्यान भएको हो ।

अयमेत्थ भावनाभेदो ।
यो यहाँ भावना भेद हो ।

गोचरभेदो गोचर भेद

२६. निमित्तेसु पन परिकम्मनिमित्तं उग्गहनिमित्तञ्च सब्बत्थापि यथारहं परियायेन लब्धन्तेव ।

२६. निमित्तमध्ये परिकर्म निमित्त र उग्रह निमित्त सबै कर्मस्थानमा यथायोग्य परियाय अनुसार उपलब्ध हुन्छन् ।

२७. पटिभागनिमित्तं पन कसिणासुभकोट्टासआनापानेस्वेव लब्धति, तत्थ हि पटिभागनिमित्तमारब्ध उपचारसमाधि अप्पनासमाधि च पवतन्ति ।

२७. प्रतिभाग निमित्त मात्र कसिण, अशुभ कोट्टास (भाग) र आनापानस्मृतिमा मात्र उपलब्ध हुन्छन् । त्यहाँ प्रतिभाग निमित्तलाई आरम्भ गरेर उपचार समाधि र अर्पणा समाधि प्रवृत्ति हुन्छन् ।

२८. कथं? आदिकम्मिकस्स हि पथवीमण्डलादीसु निमित्तं उग्गहन्तस्स तमारम्भणं परिकम्मनिमित्तन्ति पवुच्चति, सा च भावना परिकम्मभावना नाम ।

२८. कसरी? आदिकर्मिक योगीको पृथ्वीमण्डल आदिमा निमित्तलाई ग्रहण गरी रहेका त्यो आरम्भणलाई परिकर्म निमित्त भनी भनिन्छ । त्यो भावना परिकर्म भावना भनिन्छ ।

२९. यदा पन तं निमित्तं चित्तेन समुग्गहितं होति, चक्खुना पस्सन्तस्सेव मनोद्वारस्स आपाथमागतं, तदा तमेवारम्भणं उग्गहनिमित्तं नाम, सा च भावना समाधियति ।

२९. जब त्यो निमित्तलाई चित्तले राप्ररी ग्रहण गरेको हुन्छ, आँखाले देखेकोझैँ नै मनोद्वारको अगाडि प्रकट हुन आउँछ, त्यसबेला त्यो आरम्भणलाई उग्रहनिमित्त भनिन्छ । त्यो भावना समाधिष्ट हुन्छ ।

३०. तथा समाहितस्स पनेतस्स ततो परं तस्मिं उग्गहनिमित्ते परिकम्मसमाधिना भावनमनुयुञ्जन्तस्स यदा तप्पटिभागं वत्थुधम्मविमुच्चित्तं पञ्जत्तिसङ्घातं भावनामयमारम्भणं चित्ते सन्निसन्नं समप्पित्तं होति, तदा तं पटिभागनिमित्तं समुप्पन्नन्ति पवुच्चति ।

३०. त्यस्तै यो समाधिष्ट भएको योगीलाई पछि त्यही उग्रनिमित्तमा परिकर्म समाधिद्वारा बारम्बार भावनालाई अभ्यास गरिरहँदा जब त्यो वस्तुधर्मले मुक्त भएको प्रतिभागलाई प्रज्ञप्ति भन्ने भावनामय आरम्भण चित्तमा निश्चलरूपले समर्पित हुन्छ, त्यसबेला त्यो प्रतिभागनिमित्त राप्ररी उत्पन्न भएको भनी भनिन्छ ।

३१. ततो पट्टाय परिपन्थविष्पहीना कामावचरसमाधिसङ्घाता उपचारभावना निष्फला नाम होति ।

३१. त्यसवेलादेखि विघ्नबाधा नभएको (नीवरणरहितको) कामावचर समाधि भन्ने उपचारभावना निष्पन्न (सम्पन्न) भएको भनी भनिन्छ ।

३२. ततो परं तमेव पटिभागनिमित्तं उपचारसमाधिना समासेवन्तस्स रूपावचरपठमज्झानमप्पेति ।

३२. त्यसपछि त्यही नै प्रतिभाग निमित्तलाई उपचार समाधिद्वारा रात्रि सेवन गरेका योगीलाई रूपावचर प्रथमध्यान प्राप्त हुन्छ ।

३३. ततो परं तमेव पठमज्झानं आवज्जनं समापज्जनं अधिद्वानं बुद्धानं पच्चवेक्खणा चेति इमाहि पञ्चहि वसिताहि वसीभूतं कत्वा वितक्कादिकमोळारिकङ्गं पहानाय विचारादिसुखुमङ्गुपत्तिया पदहतो यथाक्कमं दुतियज्झानादयो यथारहमप्पेन्ति ।

३३. त्यसपछि त्यही नै प्रथमध्यानलाई आवर्जन, समावर्जन, अधिष्ठान, व्युत्थान र प्रत्यवेक्षण गरी यी पाँच वशीभावले वशीभूत गरी वितर्कादि स्थूल भएको ध्यानाङ्गलाई प्रहाण गर्नको लागि र विचारादि सूक्ष्म ध्यानाङ्गलाई उत्पन्न गर्नको लागि प्रयत्न गरेको योगीलाई क्रमानुसार द्वितीयध्यानादि यथायोग्य प्राप्त हुन्छ ।

३४. इच्छेवं पथवीकसिणादीसु द्वावीसति कम्मद्वानेसु पटिभाग-निमित्तमुपलब्धति ।

३४. यसरी पृथ्वी कसिणादिमध्ये बाइस कर्मस्थाना प्रतिभाग निमित्त प्राप्त हुन्छन् ।

३५. अवसेसेसु पन अप्पमज्जा सत्तपञ्जत्तियं पवत्तन्ति ।

३५. अवशेष कर्मस्थानहरूमध्ये 'अप्रमाण्यहरू' सत्त्वप्रज्ञप्तिमा प्रवृत्ति हुन्छन् ।

३६. आकासवज्जितकसिणेसु पन यं किञ्चि कसिणं उग्घाटेत्वा लद्धुमाकासं अनन्तवसेन परिकम्मं करोन्तस्स पठमारुप्पमप्पेति ।

३६. आकाशवर्जित कसिणमध्ये कुनै एक कसिणलाई उद्घाटन गरेर प्राप्त भएको आकाशप्रज्ञप्तिलाई (आरम्भण गरी) अनन्तरूपले परिकर्म भावना गरेका योगीलाई 'प्रथम अरूपध्यान' प्राप्त हुन्छ ।

३७. तमेव पठमारुप्पविज्जाणं अनन्तवसेन परिकम्मं करोन्तस्स दुतियारुप्पमप्पेति ।

३७. त्यही नै प्रथम अरूप विज्ञानलाई अनन्तरूपले परिकर्म भावना गर्ने योगीलाई 'द्वितीय अरूपध्यान' प्राप्त हुन्छ ।

३८. तमेव पठमारुप्पविज्जाणाभावं पन "नत्थि किञ्ची"ति परिकम्मं करोन्तस्स ततियारुप्पमप्पेति ।

३८. त्यही नै प्रथम अरूप विज्ञानभावलाई 'नास्ति किञ्चित्' भनी परिकर्म भावना गर्ने योगीलाई तृतीय अरूपध्यान प्राप्त हुन्छ ।

३९. ततियारुप्पं "सन्तमेतं, पणीतमेत"न्ति परिकम्मं करोन्तस्स चतुथारुप्पमप्पेति ।

३९. तृतीय अरूप ध्यानलाई 'यो शान्तको हो, यो प्रणीत हो' भनी परिकर्म भावना गर्ने योगीलाई चतुर्थ अरूपध्यान प्राप्त हुन्छ ।

४०. अवसेसेसु च दससु कम्मद्वानेसु बुद्धगुणादिकमारम्मणमारब्ध परिकम्मं कत्वा तस्मिं निमित्ते साधुकमुग्गहिते तत्थेव परिकम्मञ्च समाधियति, उपचारो च सम्पज्जति ।

४०. अवशेष दस कर्मस्थानमध्ये बुद्धगुणादि आरम्मण आरम्भलाई लिएर परिकर्म भावना गरेर त्यो निमित्तमा रात्ररी ग्रहण गरी सकेपछि त्यही नै परिकर्म भावना समाधिष्ट हुन्छ र उपचार भावना पनि सम्पन्न हुन्छ ।

४१. अभिज्जावसेन पवत्तमानं पन रूपावचरपञ्चमज्झानं अभिज्जापादकपञ्चमज्झाना वुड्ढहित्वा अधिद्वेय्यादिकमावज्जेत्वा परिकम्मं करोन्तस्स रूपादीसु आरम्मणेसु यथारहमप्पेति ।

४१. अभिज्ञा अनुसार प्रवृत्त भइरहेको रूपावचर पञ्चमध्यान, अभिज्ञापादक पञ्चमध्यानबाट उठेर अधिष्ठान गर्नुपर्ने आरम्मणलाई विचार गरेर परिकर्म भावना गर्ने योगीलाई रूपादि आरम्मणमा यथायोग्यानुसार प्राप्त हुन्छ ।

४२. अभिज्जा च नाम -

४२. अभिज्ञा भन्ने -

इन्द्रिविधं दिब्बसोतं, परचित्तविजानना ।

पुब्बेनिवासानुस्सति, दिब्बचक्खूति पञ्चधा ॥

ऋद्विविध-अभिज्ञा, दिव्यश्रोत्र-अभिज्ञा, परचित्तविजानन-अभिज्ञा ।

पूर्वनिवासानुस्मृति-अभिज्ञा र दिव्यचक्षु-अभिज्ञा गरी पञ्चविध हुन्छ ॥

अयमेत्थ गोचरभेदो ।

यो यहाँ गौचर भेद हो ।

निर्दिष्टो च समथकम्मट्टाननयो ।
शमथ कर्मस्थान नय समाप्त ।

शमथकर्मस्थानको तालिका नं. ५७

| कर्मस्थान ४० | भावना ३ | | | निमित्त ३ | | | चरित्र ६ | ध्यान |
|--------------------------|---------|-------|--------|-----------|-------|----------|------------|-------|
| १. पृथ्वी कसिण | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | सबै | १-५ |
| २. आपो कसिण | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | सबै | १-५ |
| ३. तेजो कसिण | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | सबै | १-५ |
| ४. वायु कसिण | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | सबै | १-५ |
| ५. नील कसिण | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | द्वेष | १-५ |
| ६. पीत कसिण | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | द्वेष | १-५ |
| ७. लोहित कसिण | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | द्वेष | १-५ |
| ८. ओवात कसिण | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | द्वेष | १-५ |
| ९. आकाश कसिण | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | सबै | १-५ |
| १०. आलोक कसिण | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | सबै | १-५ |
| ११. उद्भूतक | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | राग | १ |
| १२. विनीलक | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | राग | १ |
| १३. विपुलक | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | राग | १ |
| १४. विच्छिद्रक | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | राग | १ |
| १५. विन्कायितक | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | राग | १ |
| १६. विक्खित्तक | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | राग | १ |
| १७. हतविक्खित्तक | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | राग | १ |
| १८. लोहितक | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | राग | १ |
| १९. पुलवक | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | राग | १ |
| २०. अट्टिक | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | राग | १ |
| २१. बुद्धानुस्मृति | परिकर्म | उपचार | × | परिकर्म | उग्रह | × | सर्वा | × |
| २२. धर्मानुस्मृति | परिकर्म | उपचार | × | परिकर्म | उग्रह | × | सर्वा | × |
| २३. सद्धानुस्मृति | परिकर्म | उपचार | × | परिकर्म | उग्रह | × | सर्वा | × |
| २४. शीलानुस्मृति | परिकर्म | उपचार | × | परिकर्म | उग्रह | × | सर्वा | × |
| २५. त्यागानुस्मृति | परिकर्म | उपचार | × | परिकर्म | उग्रह | × | सर्वा | × |
| २६. देवतानुस्मृति | परिकर्म | उपचार | × | परिकर्म | उग्रह | × | सर्वा | × |
| २७. उपसमानुस्मृति | परिकर्म | उपचार | × | परिकर्म | उग्रह | × | बुद्धि | × |
| २८. भरणानुस्मृति | परिकर्म | उपचार | × | परिकर्म | उग्रह | × | बुद्धि | × |
| २९. कायगतानुस्मृति | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | राग | १ |
| ३०. आनापानानुस्मृति | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | प्रतिभाग | मोह वित्तक | १-५ |
| ३१. मैत्री | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | ● | द्वेष | १-४ |
| ३२. करुणा | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | ● | द्वेष | १-४ |
| ३३. मुदिता | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | ● | द्वेष | १-४ |
| ३४. उपेक्षा | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | ● | द्वेष | ५ |
| ३५. आहार प्रतिकूल संज्ञा | परिकर्म | उपचार | × | परिकर्म | उग्रह | × | बुद्धि | × |
| ३६. धातु व्यवस्थान | परिकर्म | उपचार | × | परिकर्म | उग्रह | × | बुद्धि | × |
| ३७. आकाशानन्त्यायतन | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | × | सबै | ५ |
| ३८. विज्ञानन्त्यायतन | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | × | सबै | ५ |
| ३९. आकिञ्चन्यायतन | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | × | सबै | ५ |
| ४०. नैवसंज्ञानासंज्ञायतन | परिकर्म | उपचार | अर्पणा | परिकर्म | उग्रह | × | सबै | ५ |

● सत्त्वप्रज्ञप्तिमा प्रवृत्ति हुने

विपस्सनाकम्मट्टानं
विपश्यना कर्मस्थान

विसुद्धिभेदो
विशुद्धि भेद

४३. विपस्सनाकम्मट्टाने पन सीलविसुद्धि चित्तविसुद्धि दिट्ठिविसुद्धि कङ्खावितरणविसुद्धि मग्गामग्गजाणदस्सनविसुद्धि पटिपदाजाणदस्सनविसुद्धि जाणदस्सनविसुद्धि चेति सत्तविधेन विसुद्धिसङ्गहो।

४३. विपश्यना कर्मस्थानमा शीलविशुद्धि, चित्तविशुद्धि, दृष्टिविशुद्धि, कांक्षावितरण (संशय नाघेरे जाने) विशुद्धि, मार्गामार्गज्ञानदर्शनविशुद्धि, प्रतिपदाज्ञानदर्शनविशुद्धि र ज्ञानदर्शनविशुद्धि गरी सप्तविधले विशुद्धिसंग्रह हुन्।

४४. अनिच्चलक्खणं दुक्खलक्खणं अनत्तलक्खणञ्चेति तीणि लक्खणानि।

४४. अनित्यलक्षण, दुःखलक्षण र अनात्मालक्षण गरी तीन लक्षण हुन्।

४५. अनिच्चानुपस्सना दुक्खानुपस्सना अनत्तानुपस्सना चेति तिस्सो अनुपस्सना।

४५. अनित्यानुपश्यना, दुःखानुपश्यना र अनात्मानुपश्यना गरी तीन अनुपश्यना हुन्।

४६. सम्मसनजाणं उदयब्बयजाणं भङ्गजाणं भयजाणं आदीनवजाणं निब्बिदाजाणं मुच्चितुकम्यताजाणं पटिसङ्खाजाणं सङ्खारुपेक्खाजाणं अनुलोमजाणञ्चेति दस विपस्सनाजाणानि।

४६. सम्मसनज्ञान, उदयब्ययज्ञान, भङ्गज्ञान, भयज्ञान, आदीनवज्ञान, निर्विदाज्ञान, मुच्चितुकाम्यताज्ञान, प्रतिसांख्यज्ञान र संस्कारुपेक्षाज्ञान, अनुलोमज्ञान गरी दस विपश्यनाज्ञान हुन्।

४७. सुञ्जतो विमोक्खो, अनिमित्तो विमोक्खो, अप्पणिहितो विमोक्खो चेति तयो विमोक्खा।

४७. शून्यता विमोक्ष, अनिमित्त विमोक्ष र अप्रणिहित विमोक्ष गरी तीन विमोक्ष हुन्।

४८. सुञ्जतानुपस्सना अनिमित्तानुपस्सना अप्पणिहितानुपस्सना चेति तीणि विमोक्खमुखानि च वेदितब्बानि।

४८. शून्यतानुपश्यना, अनिमित्तानुपश्यना र अप्रणिहितानुपश्यना गरी

तीन विमोक्षमुख जान्नुपर्दछ ।

४९. कथं ? पातिमोक्खसंवरसीलं इन्द्रियसंवरसीलं आजीवपारिसुद्धि-
सीलं पच्चयसन्निस्सितसीलञ्चेति चतुपारिसुद्धिसीलं सीलविसुद्धि नाम ।

४९. कसरी? प्रातिमोक्षसंवर शील, इन्द्रियसंवर शील, आजीवपारिशुद्धि
शील र प्रत्ययसन्निश्चित शील गरी चार पारिशुद्धि शीललाई शीलविशुद्धि भनिन्छ ।

५०. उपचारसमाधि अप्पनासमाधि चेति दुविधोपि समाधि
चित्तविसुद्धि नाम ।

५०. उपचारसमाधि र अर्पणासमाधि गरी द्विविध समाधिलाई चित्तविशुद्धि
भनिन्छ ।

५१. लक्खणरसपच्चुपट्टानपदट्टानवसेन नामरूप परिग्गहो दिट्ठिविसुद्धि
नाम ।

५१. लक्षण, रस, प्रत्युपस्थान र पदस्थान अनुसार नाम र रूप परिग्रह
(ग्रहण) गर्नेलाई दृष्टिविशुद्धि भनिन्छ ।

५२. तेसमेव च नामरूपानं पच्चयपरिग्गहो कङ्खावितरणविसुद्धि नाम ।

५२. ती नै नाम र रूपको प्रत्ययपरिग्रह^{१६}लाई कांखावितरणविशुद्धि
भनिन्छ ।

५३. ततो परं पन तथा परिग्गहितेसु सप्पच्चयेसु तेभूमकसङ्घारेसु
अतीतादि भेदभिन्नेसु खन्धादिनयमारब्ध कलापवसेन सङ्घिपित्वा “अनिच्चं
खयट्ठेन, दुक्खं भयट्ठेन, अनत्ता असारकट्ठेना”ति अट्टानवसेन सन्ततिवसेन
खणवसेन वा सम्मसनजाणेन लक्खणत्तयं सम्मसन्तस्स तेस्वेव पच्चयवसेन
खणवसेन च उदयब्बयजाणेन उदयब्बयं समनुपस्सन्तस्स च -

५३. त्यसपछि त्यसरी परिगृहीत सप्रत्यय, अतीतादि भेद भिन्नभएको
त्रैभूमिक संस्कारमा स्कन्धादि नयलाई आरम्भ गरी कलापानुसार संक्षेप गरेर “क्षय
हुने भएकोले अनित्य; भय हुने भएकोले दुःख; सार नहुने भएकोले अनात्मा
भनिन्छ” । यसरी कालानुसार, सन्तति अनुसार, क्षणानुसार अथवा सम्मसनज्ञानले
तीन लक्षणलाई परामर्श गर्ने योगीको त्यही नै प्रत्ययानुसार, क्षणानुसार र
उदयव्ययज्ञानले उदयव्ययलाई बारम्बार देखिने योगीको (चित्त सन्ततिमा) -

“ओभासो पीति पस्सद्धि, अधिमोक्खो च पग्गहो ।

सुखं जाणमुपट्टानमुपेक्खा च निकन्ति चे”ति ॥

ओभासादि विपस्सनुपक्किलेसपरिपन्थपरिग्गहवसेन मग्गामग्गलक्खण-

^{१६} प्रत्ययपरिग्रह - कारणलाई संग्रह गर्नु

ववत्थानं मग्गामग्गजाणदस्सनविसुद्धि नाम ।

प्रकाश, प्रीति, प्रश्रब्धि, अधिमोक्ष, प्रगह (विशेष वीर्य) ।

सुख वेदना, ज्ञान, स्मृति, उपेक्षा र निकन्ति (सूक्ष्म तृष्णा) ॥

गरी यी प्रकाशादि दस विपश्यनालाई उपक्लिष्ट गर्ने र विघ्नबाधालाई परिग्रहण अनुसार मार्ग र अमार्गको लक्षणलाई छुट्याउने ज्ञानलाई मार्गामार्गज्ञानदर्शनविशुद्धि भनिन्छ ॥

५४. तथा परिपन्थविमुत्तस्स पन तस्स उदयब्बयजाणतो पट्टाय यावानुलोमा तिलक्खणं विपस्सनापरम्पराय पटिपज्जन्तस्स नव विपस्सनाजाणानि पटिपदाजाणदस्सनविसुद्धि नाम ।

५४. त्यसरी प्रतिबन्धकले (उपद्रवले) विमुक्त भएको योगीलाई उदयव्ययज्ञानदेखि अनुलोमज्ञानसम्म त्रिलक्षणलाई विपश्यनाको परम्परानुसार भावना गर्ने योगीलाई उत्पन्न भएको नौ विपश्यना ज्ञानलाई प्रतिपदाज्ञानदर्शनविशुद्धि भनिन्छ ।

५५. तस्सेवं पटिपज्जन्तस्स पन विपस्सनापरिपाकमागम्म “इदानि अप्पना उप्पज्जिस्सती”ति भवङ्गं वोच्छिज्जित्वा उप्पन्नमनोद्वारावज्जनानन्तरं द्वे तीणि विपस्सनाचित्तानि यं किञ्चि अनिच्चादिलक्खणमारब्भ परिकम्मोपचारानुलोमनामेन पवत्तन्ति ।

५५. यसरी आचरण गर्ने त्यो योगीको विपश्यनाज्ञान परिपक्व हुँदा ‘अब अर्पणा उत्पन्न हुनेछ’ भनी भवङ्गलाई छेदन गरेर उत्पन्न भएको मनोद्वारावर्जनको अनन्तरमा दुई वा तीन विपश्यनाचित्तहरू कुनै एक अनित्यादि लक्षणलाई प्रारम्भ गरी परिकर्म, उपचार र अनुलोम भन्ने प्रवृत्त हुन्छन् ।

५६. या सिखाप्पत्ता, सा सानुलोमा सङ्घारुपेक्खा वुड्डानगामिनि-विपस्सनाति च पवुच्चति ।

५६. जुन शिखरमा पुगेको हो, त्यो अनुलोमबाट संस्कार उपेक्षाभावले देखिने ज्ञानलाई व्युत्थानगामिनी विपश्यना भनी भनिन्छ ।

५७. ततो परं गोत्रभुचित्तं निब्बानमालम्बित्वा पुथुज्जनगोत्तमभिभवन्तं, अरियगोत्तमभिसम्भोन्तञ्च पवत्तति ।

५७. त्यसपछि गोत्रभू चित्तले निर्वाणलाई आरम्भण गरी पृथग्जनहरूको गोत्रलाई अभिभूत गरी र आर्यगोत्रमा पुगेर प्रवृत्त हुन्छ ।

५८. तस्सानन्तरमेव मग्गो दुक्खसच्चं परिजानन्तो समुदयसच्चं पजहन्तो, निरोधसच्चं सच्छिकरोन्तो, मग्गसच्चं भावनावसेन अप्पनावीथिमोतरति ।

५८. त्यसको अनन्तरमा नै मार्गले दुःख सत्यलाई जानेर, समुदय सत्यलाई त्यागेर, निरोध सत्यलाई साक्षात्कार गरेर, मार्गसत्यलाई भावनानुसार अर्पणावीथिमा अवतरण हुन्छ ।

५९. ततो परं द्वे तीणि फलचित्तानि पवत्तित्वा भवङ्गपातोव होति, पुन भवङ्गं वोच्छिन्दित्वा पच्चवेक्खणजाणानि पवत्तन्ति ।

५९. त्यसपछि दुई तीन फलचित्तहरू प्रवृत्त भएर भवङ्गमा अवतरण हुन्छ । फेरि भवङ्गलाई छेदन गरेर प्रत्यवेक्षण ज्ञानहरू प्रवृत्त हुन्छन् ।

६०. मग्गं फलञ्च निब्बानं, पच्चवेक्खति पण्डितो ।

हीने किलेसे सेसे च, पच्चवेक्खति वान वा ॥

छब्बिसुद्धिकमेनेवं, भावेतब्बो चतुब्बिधो ।

जाणदस्सनविसुद्धि, नाम मग्गो पवुच्चति ॥

६०. मार्ग, फल र निर्वाणलाई प्रत्यवेक्षण गर्दछन् पण्डितले ।

नाश क्लेशहरूलाई र बाँकी क्लेशहरूलाई प्रत्यवेक्षण गर्ने पनि छन् नगर्ने पनि ॥

यसरी छ विशुद्धिको क्रमले वृद्धि गर्नुपर्ने चतुर्विध ।

ज्ञानदर्शन विशुद्धि भन्ने मार्ग भनिन्छ ॥

अयमेत्थ विसुद्धिभेदो ।
यो यहाँ विशुद्धि भेद हो ।

विमोक्खभेदो
विमोक्ष भेद

६१. तत्थ अनत्तानुपस्सना अत्ताभिनिवेशं मुञ्चन्ती सुञ्जतानुपस्सना नाम विमोक्खमुखं होति ।

६१. त्यहाँ अनात्मानुपश्यनाले आत्मा भन्ने धारणा मुक्त गरेर शून्यतानुपश्यना भन्ने विमोक्षसुख हुन्छ ।

६२. अनिच्चानुपस्सना विपल्लासनिमित्तं मुञ्चन्ती अनिमित्तानुपस्सना नाम ।

६२. अनित्यानुपश्यनाले विपर्यासनिमित्तलाई मुक्त गरेर अनिमित्तानुपश्यना भन्ने विमोक्ष सुख हुन्छ ।

६३. दुक्खानुपस्सना तण्हापणिधिं मुञ्चन्ती अप्पणिहितानुपस्सना नाम ।

६३. दुःखानुपश्यना तृष्णाकांक्षालाई मुक्त गरेर अप्रणिहितानुपश्यना भन्ने विमोक्ष सुख हुन्छ ।

६४. तस्मा यदि वृद्धानगामिनिविपस्सना अनत्ततो विपस्सति, सुञ्जतो विमोक्खो नाम होति मग्गो।

६४. त्यसैले यदि व्युत्थानगामिनी विपश्यनाले अनात्मानुसार देख्यो भने लोकोत्तर मार्ग शून्यता विमोक्ष भन्ने हुन्छ।

६५. यदि अनिच्चतो विपस्सति, अनिमित्तो विमोक्खो नाम।

६५. यदि अनित्यानुसार देख्यो भने लोकोत्तर मार्ग अनिमित्त विमोक्ष भन्ने हुन्छ।

६६. यदि दुक्खतो विपस्सति, अप्पणिहितो विमोक्खो नामाति च मग्गो विपस्सनागमनवसेन तीणि नामानि लभति, तथा फलञ्च मग्गागमनवसेन मग्गवीथियं।

६६. यदि दुःखानुसार देख्यो भने लोकोत्तर मार्ग अप्रणिहित विमोक्ष भन्ने हुन्छ र लोकोत्तर मार्ग विपश्यनागमनानुसार तीन नाम (शून्यता, अनिमित्त र अप्रणिहित) प्राप्त हुन्छ। त्यस्तै लोकोत्तर फल पनि मार्गवीथिमा मार्गगमनानुसार तीन नाम प्राप्त हुन्छ।

६७. फलसमापत्तिवीथियं पन यथावुत्तनयेन विपस्सन्तानं यथासकफलमुप्पज्जमानमि विपस्सनागमनवसेनेव सुञ्जतादिविमोक्खोति च पवुच्चति, आरम्मणवसेन पन सरसवसेन च नामत्तयं सब्बथ सब्बेसमि सममेव च।

६७. फल समापत्तिवीथिमा मात्र उपरोक्त नयानुसार विपश्यना गर्ने योगीहरूलाई स्वमार्गानुसार उत्पन्न हुने फल पनि विपश्यनागमनानुसार शून्यतादि विमोक्ष भनिन्छ, आरम्भणानुसार मात्र आफ्नो गुणानुसार तीन नाम सर्वत्र सबैमा समान हुन्छ।

अयमेत्थ विमोक्खभेदो।
यो यहाँ विमोक्षभेद हो।

पुग्गलभेदो पुद्गल भेद

६८. एत्थ पन सोतापत्तिमग्गं भावेत्वा दिट्ठिविचिकिच्छापहानेन पहीनापायगमनो सत्तक्खत्तुपरमो सोतापन्नो नाम होति।

६८. यहाँ स्रोतापत्ति-मार्गलाई वृद्धि गरेर दृष्टि र विचिकित्सा प्रहाण भएकाले अपायगमन प्रहाण भएका सातपटक मात्र जन्म लिने पुद्गललाई 'स्रोतापन्न' भन्ने हुन्छ।

६९. सकदागामिमगं भावेत्वा रागदोसमोहानं तनुकरत्ता सकदागामी नाम होति सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा ।

६९. सकदागामि-मार्गलाई वृद्धि गरेर राग, द्वेष र मोहलाई पातलो पारी एकपटक मात्र यो मनुष्यलोकमा आउने हुनाले 'सकदागामी' भन्ने हुन्छ ।

७०. अनागामिमगं भावेत्वा कामरागव्यापादानमनवसेसप्पहानेन अनागामी नाम होति अनागन्त्वा इत्थत्तं ।

७०. अनागामि-मार्गलाई वृद्धि गरेर कामराग र व्यापादलाई बाँकी नराखी प्रहाण गर्ने भएकोले यो कामभूमिमा नआउने हुनाले 'अनागामी' भन्ने हुन्छ ।

७१. अरहत्तमगं भावेत्वा अनवसेसकिलेसप्पहानेन अरहा नाम होति खीणासवो लोके अग्गदक्खिणेय्योति ।

७१. अरहत्त-मार्गलाई वृद्धि गरेर बाँकी शेष नराखी क्लेशलाई प्रहाण गर्ने भएकोले अरहन्त भनिन्छ, क्षीणास्रव लोकमा अग्रदक्षिण्य हुन्छन् ।

अयमेत्थ पुग्गलभेदो ।
यो यहाँ पद्गल भेद हो ।

पुद्गलभेद तालिका नं. ५८

| | स्रोतपत्र | सकदागामी | अनागामी | अरहन्त |
|----|----------------|----------|---------|--------|
| १ | मोह(१४) | | | ● |
| २ | अहोवय(१५) | | | ● |
| ३ | अनपत्राप्य(१६) | | | ● |
| ४ | औद्धत्य(१७) | | | ● |
| ५ | लोभ(१८) राग | | ● | - |
| | लोभ(१८) अन्य | | | ● |
| ६ | दृष्टि(१९) | ● | - | - |
| ७ | मान(२०) | | | ● |
| ८ | द्वेष(२१) | | ● | - |
| ९ | ईर्ष्या(२२) | ● | - | - |
| १० | मात्सर्य(२३) | ● | - | - |
| ११ | कौकृत्य(२४) | | ● | - |
| १२ | स्त्यान(२५) | | | ● |
| १३ | मिद्ध(२६) | | | ● |
| १४ | विचिकित्सा(२७) | ● | - | - |
| | जम्मा | ४ | ३ | ८ |

समापत्तिभेदो समापत्ति भेद

७२. फलसमापत्तिवीथियं पनेत्थ सब्बेसम्पि यथासकफलवसेन साधारणाव ।

७२. यहाँ फलसमापत्ति वीथिमा सबै नै आफ्नो फलानुसार साझा (साधारण) नै हुन्छ ।

७३. निरोधसमापत्तिसमापज्जनं पन अनागामीनञ्चेव अरहन्तानञ्च लब्धमिति, तत्थ यथाक्कमं पठमज्झानादिमहग्गतसमापत्तिं समापज्जित्वा वुट्ठाय तत्थ गते सङ्खारधम्मो तत्थ तत्थेव विपस्सन्तो याव आकिञ्चञ्जायतनं गन्त्वा ततो परं अधिद्वेय्यादिकं पुब्बकिच्चं कत्वा नेवसञ्जानासञ्जायतनं समापज्जति, तस्स द्वित्रं अप्पनाजवनानं परतो वोच्छिज्जति चित्तसन्तति, ततो निरोधसमापन्नो नाम होति ।

७३. निरोधसमापत्तिमा बस्ने अनागामी र अरहन्त पुद्गललाई मात्र उपलब्ध हुन्छ । त्यहाँ क्रमानुसार प्रथमध्यानादि महग्गत समापत्तिमा ध्यान बसेर समापत्तिबाट उठेर त्यो उत्पन्न हुने संस्कारधर्मलाई त्यहीं-त्यहीं नै विषयनाद्वारा देखिनेले आकिञ्चन्यायतनध्यानसम्म गएर त्यसपछि उसले अधिष्ठान गर्ने आदि पूर्वकृत्य गरी नैवसंज्ञानासंज्ञायतनध्यान गर्दछ । उसको दुई अर्पणा जवनको पछि चित्तको सन्तति छेदन हुन्छ, त्यसपछि निरोध समापत्तिमा बसेको भन्ने हुन्छ ।

७४. वुट्ठानकाले पन अनागामिनो अनागामिफलचित्तं, अरहतो अरहत्तफलचित्तं एकवारमेव पवत्तित्वा भवङ्गपातो होति, ततो परं पच्चवेक्खणजाणं पवत्तति ।

७४. निरोध समापत्तिबाट उठेको समयमा अनागामीलाई अनागामिफलचित्त र अरहन्तलाई अरहन्तफलचित्त एकपटक मात्र उत्पन्न भएर भवङ्गपात हुन्छ । त्यसपछि प्रत्यवेक्षणज्ञान उत्पन्न हुन्छ ।

अयमेत्थ समापत्तिभेदो ।
यो यहाँ समापत्ति भेद हो ।

निद्धितो च विपस्सनाकम्मट्टाननयो ।
विषयनाकर्मस्थान नय समाप्त ।

उय्योजनं
प्रेरक गाथा

७५. भावेतब्बं पनिच्चेवं, भावनाद्वयमुत्तमं ।

पटिपत्तिरसस्सादं, पत्थयन्तेन सासनेति ॥

७५. यसरी बताइएका अनुसारले उत्तम भावना द्वय वृद्धि गर्नुपर्छ ।
प्रतिपत्ति रसको आनन्दलाई प्रार्थना गर्नेले बुद्धशासनमा ॥

इति अभिधम्मत्थसङ्गहे कम्मद्वानसङ्गहविभागो नाम नवमो परिच्छेदो ।
यसरी 'अभिधर्मार्थ संग्रहमा कर्मस्थानसंग्रहविभाग' भन्ने नवौं परिच्छेद समाप्त ।

विषयना ज्ञानको तालिका नं. ५९

| शील | परिशुद्धिशील | शीलविशुद्धि | आदिकल्याण |
|---------|--------------------------------|-------------------------------|--|
| समाधि | उपचार, अर्पणा | चित्तविशुद्धि | १-५ ध्यान |
| प्रज्ञा | नामरूप परिग्रह | दृष्टिविशुद्धि | १. नामरूप परिग्रहज्ञान |
| | प्रत्यय परिग्रह | कांक्षावितरणविशुद्धि | २. प्रत्यय परिग्रहज्ञान |
| | | मार्गामार्गज्ञानदर्शनविशुद्धि | ३. सम्मसनज्ञान, ४. उदयब्ययज्ञान |
| | विषयना ज्ञान (पृथग्जनगोत्र) | प्रतिपदाज्ञानदर्शनविशुद्धि | ५. उदयब्ययज्ञान ६. भङ्गज्ञान ७. भयज्ञान ८. आदीनवज्ञान ९. निर्विदाज्ञान १०. मुञ्चितुकाम्यताज्ञान ११. प्रतिसाख्यज्ञान १२. संस्कारुपेक्षाज्ञान १३. अनुलोमज्ञान वा गोत्रभूज्ञान |
| | (आर्यगोत्र) | ज्ञानदर्शनविशुद्धि | १४. मार्गज्ञान १५. फलज्ञान १६. प्रतिवेक्षणज्ञान |

निगमनं
निगमन

(क) चारित्तसोभितविसालकुलोदयेन सद्धाभिवृद्धपरिसुद्धगुणोदयेन ।
नम्पव्हयेन पणिधाय परानुकम्पं, यं पत्थितं पकरणं परिनिद्धितं तं ॥

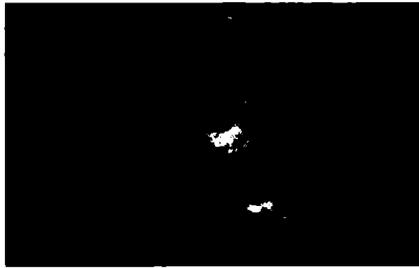
(क) चारित्र शोभित विशाल कुलमा जन्म भएका,
श्रद्धा अभिवृद्धि परिशुद्ध र गुणले विभूषित ।
नम्य भन्ने दाताले अरूमाथि दया राखी प्रणिधान गरी जुन 'अभिधर्मार्थ संग्रह'
भन्ने ग्रन्थको लागि प्रार्थना गर्नुभएको हो त्यो ग्रन्थ समाप्त ॥

(ख) पुञ्जेन तेन विपुलेन तु मूलसोमं, धञ्जाधिवासमुदितोदितमायुकन्तं ।
पञ्जावदातगुणसोभितलज्जिभिक्षू, मञ्जन्तु पुञ्जविभवोदयमङ्गलाय ॥

(ख) त्यो विपुल पुण्यद्वारा महान् निवासस्थान भएका,
प्रसिद्ध मूलसोम भन्ने महानुभावले पूर्ण भएका विहारमा रहेका ।
प्रज्ञादि गुणले विभूषित भएका लज्जाशील भिक्षुहरूले पुण्य,
वैभव, मङ्गल र सुखको उत्पन्न गर्नको लागि मनन गर्नुपर्छ ।

इति अनुरुद्धाचरियेन रचितं अभिधम्मत्थसङ्ग्रहं नाम पकरणं ।
यसरी आचार्य अनुरुद्धद्वारा रचित 'अभिधर्मार्थ संग्रह' भन्ने ग्रन्थ समाप्त ।

Dhamma.Digital



अभिधम्मत्थविभाविनीटीका

गन्थारम्भकथा

- (क) विसुद्धकरुणाजाणं, बुद्धं सम्बुद्धपूजितं ।
धम्मं सद्धम्मसम्भूतं, नत्वा संघं निरङ्गणं ॥
(ख) सारिपुत्तं महाधेरं, परियत्तिविसारदं ।
वन्दित्वा सिरसा धीरं, गरुं गारवभाजनं ॥
(ग) वण्णयिस्सं समासेन, अभिधम्मत्थसङ्ग्रहं ।
आभिधम्मिकभिव्खुनं, परं पीतिविवड्डनं ॥
(घ) पोरणेहि अनेकापि, कता या पन वण्णना ।
न ताहि सब्का सब्बत्थ, अत्थो विज्जातवे इध ॥
(ङ) तस्मा लीनपदानेत्थ, साधिप्पायमहापयं ।
विभावेन्तो समासेन, रचयिस्सामि वण्णनन्ति ॥

गन्थारम्भकथावण्णना

१. परमविचित्तनयसमन्नागतं सकसमयसमयन्तरगहनविग्गाहणसमत्थं सुविमलविपुलपज्जा-
वेय्यत्तिजननं पकरणपिदमारभन्तोयमाचरियो पठमं ताव रतनत्तयपणामाभिधेय्य करणप्पकार-
पकरणाभिधानपयोजनानि दस्सेतुं “सम्मासम्बुद्ध”त्त्यादिमाह ।

एत्थ हि “सम्मासम्बुद्ध...मे०... अभिवादिया”ति इभिना रतनत्तयपणामो वुत्तो,
अभिधम्मत्थसङ्ग्रह”न्ति एतेन अभिधेय्यकरणप्पकारपकरणाभिधानानि अभिधम्मत्थानं इध
सङ्ग्रहेतब्बभावदस्सनेन तेसं इभिना समुदितेन पटिपादेतब्बभावदीपनतो, एकत्थ सङ्ग्रह
कथनाकारदीपनतो, अत्थानुगतसमज्जापरिदीपनतो च । पयोजनं पन सङ्ग्रहपदेन सामत्थियतो
दस्सितमेव अभिधम्मत्थानं एकत्थ सङ्ग्रहे सति तदुग्गहपरिपुच्छादिवसेन तेसं सरूपावबोधस्स,
तम्मूलिकाय च दिट्ठधम्मिकसम्भरायिकत्थसिद्धिया अनायासेन संसिज्जनतो ।

तत्थ रतनत्तयपणामप्ययोजनं ताव बहुधा पपञ्चेन्ति आचरिया, विसेसतो पन
अन्तरायनिवारणं पच्चासीसन्ति । तथा हि वुत्तं सङ्ग्रहकारेहि “तस्सानुभावेन हतन्तरायो”ति^{१८९} ।
रतनत्तयपणामो हि अत्थतो पणामकिरियाभिनिष्फादिका कुसलचेतना, सा च वन्दनेय्यवन्दकानं
खेतज्जासयसम्पदाहि दिट्ठधम्मवेदनीयभूता यथालद्धसम्पत्तिनिमित्तकस्स कम्मस्स अनुबलप्पदानवसेन
तन्निव्वत्तितविपाकसन्ततिया अन्तरायकरानि उपपीठकउपच्छेदक-कम्मनि पटिबाहित्वा तन्निदानानं
यथाधिप्पेतसिद्धिविबन्धकानं रोगादिअन्तरायानमप्यवत्तिं साधेति । तस्मा पकरणारम्भे
रतनत्तयपणामकरणं यथारद्धपकरणस्स अनन्तरायेन परिसमापनत्थज्जेव सोतूनज्ज वन्दनापुब्बङ्गमाय
पटिपत्तिया अनन्तरायेन उग्गहणाधारणादिसंसिज्जनत्थज्ज । अभिधेय्यकथनं पन विदिताभिधेय्यस्सेव
गन्थस्स विज्जूहि उग्गहणादिवसेन पटिपज्जितब्बभावतो । करणप्पकारप्ययोजनसन्दस्सनानि च
सोतुजनसमुस्साहजननत्थं । अभिधानकथनं पन वोहारसुखत्थन्ति अयमेत्थ समुदायत्थो । अयं पन
अवयवत्थो - ससद्धम्मगणुत्तमं अतुलं सम्मासम्बुद्धं अभिवादिय अभिधम्मत्थसङ्ग्रहं भासिस्सन्ति
सम्बन्धो ।

^{१८९} पारा० अङ्क० १.गन्थारम्भकथा

तत्थ सम्मा सामञ्च सब्धम्मे अभिसम्बुद्धोति सम्मा सम्बुद्धो, भगवा। सो हि सङ्कतासङ्कतभेदं सकलम्पि धम्मजातं याथावसरसलक्खणपटिवेधवसेन सम्मा सयं विचितोपचितपारमितासम्भूतेन सयम्भूजाणेन सामं बुद्धिं अज्जासि। यथाह “सयं अभिज्जाय कमुहिसेय्य”^{१८७}, अथ वा बुधधातुस्स जागरणविकसतन्थेसुपि पवत्तनतो सम्मा सामञ्च पटिवुद्धो अनज्जपटिवोधितो हुत्वा सयमेव सवासनसम्मोहनिदाय अच्चन्तं विगतो, दिनकरकिरणसमागमेन परमरुचिरसिरि-सोभगम्पत्तिया विकसितमिव पदुमं अगमग्गजाणसमागमेन अपरिमितगुणगणालङ्कृत-सब्बज्जुतज्जाणम्पत्तिया सम्मा सयमेव विकसितो विकासमनुष्पत्तोत्यत्थो।

यथावुत्तवचनत्थयोगेपि सम्मासम्बुद्धसदस्स भगवति सम्पञ्जावसेन पवत्तता “अतुल”^{१८८}न्ति इभिना विसेसेति। तुलाय सम्मितो तुल्यो, सोयेव तुलो यकारलोपवसेन। अथ वा सम्मितत्थे अकारपच्चयवसेन तुलाय सम्मितो तुलो, न तुलो अतुलो, सीलादीहि गुणेहि केनचि असदितो, नत्थि एतस्स वा तुलो सदितोति अतुलो सदेवके लोके अगगपुगलभावतो। यथाह “यावता, भिक्खवे, सत्ता अपदा वा द्विपदा वा चतुष्पदा वा...पे०... तथागतो तेसं अगमक्खायती”^{१८८}तिआदि।

एत्तावता च हेतुफलसत्तूपकारसम्पदावसेन तीहाकारेहि भगवतो धोमना कता होति। तत्थ हेतुसम्पदा नाम महाकरुणासमायोगो बोधिसम्भारसम्भरणञ्च । फलसम्पदा पन जाणपहानआनुभावरूपकायसम्पदावसेन चतुब्बिधा। तत्थ सब्बज्जुतज्जाणपदद्वानं मग्गजाणं, तम्मूलकानि च दसबलादिजाणानि जाणसम्पदा। सवासनसकलसंकिलेसानमच्चन्तमनुष्पाद-धम्मतापादनं पहानसम्पदा। यथिच्छित्तिनिष्फादने आधिपच्चं आनुभावसम्पदा। सकललोकेनयनाभिसेकभूता पन लक्खणानुव्यञ्जनप्पटिमण्डिता अत्तभावसम्पत्ति रूपकायसम्पदा नाम। सत्तूपकारो पन आसयपयोगवसेन दुविधो। तत्थ देवदत्तादीसु विरोधिसत्तेसुपि निच्चं हितज्जासयता, अपरिपाकगतिन्त्रियानं इन्द्रियपरिपाककालागमनञ्च आसयो नाम। तदज्जसत्तानं पन लाभसक्कारादिनिरपेक्खचित्तस्स यानत्तयमुखेन सब्बदुक्खनिव्यानिकधम्मदेसना पयोगो नाम।

तत्थ पुरिमा द्वे फलसम्पदा “सम्मासम्बुद्ध”^{१८९}न्ति इभिना दस्सिता, इतरा पन द्वे, तथा सत्तूपकारसम्पदा च “अतुल”^{१९०}न्ति एतेन, तदुपायभूता पन हेतुसम्पदा द्वीहिपि सामत्थियतो दस्सिता तथाविधहेतुव्यतिरेकेन तदुभयसम्पत्तीनमसम्भवतो, अहेतुकत्ते च सब्बत्थ तासं सम्भवप्पसङ्गतो।

तदेवं तिविधावत्थासङ्गहितथोमनापुब्बङ्गमं बुद्धरतनं वन्दित्वा इदानि सेसरतनानम्पि पणाममारभन्तो आह “ससद्दम्मगणुत्तम”^{१९१}न्ति। गुणीभूतानम्पि हि धम्मसंघानं अभिवादेतब्बभावो सहयोगेन विज्जायति यथा “सपुत्तदारो आगतोति पुत्तदारस्सापि आगमन”^{१९२}न्ति।

तत्थ अत्तानं धारेन्ते चत्तुसु अपायेसु, वट्टदुक्खेसु च अपतमाने कत्वा धारेतीति धम्मो, चतुमग्गफलनिब्बानवसेन नवविधो, परियत्तिया सह दसविधो वा धम्मो। धारणञ्च पनेतस्स अपायादिनिब्बत्तकिलेसविद्धंसनं, तं अरियमग्गस्स किलेससमुच्छेदकभावतो, निब्बानस्स च आरम्पणभावेन तस्स तदत्थसिद्धिहेतुताय निष्परियायतो लब्धति, फलस्स पन किलेसानं पटिप्पस्सम्भनवसेन मग्गानुकूलप्पवत्तितो, परियत्तिया च तदधिगमहेतुतायाति उभिन्नम्पि परियायतोति ददुब्बं। सत्तं सप्पुरिसानं अरियपुगलानं, सन्तो वा संविज्जमानो न तित्थियपरिकम्पितो अत्ता विय परमत्थतो अविज्जमानो सन्तो वा पसत्थो स्वाक्खाततादिगुणयोगतो न बाहिरकधम्मो विय एकन्तनिन्दितो धम्मोति सद्दम्मो, गणो च सो अट्टन्नं अरियपुगलानं समूहभावतो उत्तमो च सुप्पटिपन्नतादिगुणविसेसयोगतो, गणानं, गणेषु वा देवमनुस्सादि समूहेसु उत्तमो यथावुत्तगुणवसेनाति गणुत्तमो, सह सद्दम्मेन, गणुत्तमेन चाति ससद्दम्मगणुत्तमो, तं ससद्दम्मगणुत्तमं। अभिवादियाति

^{१८७} महाव० ११; म० नि० १.२८५; २.३४१; ध० प० ३५३

^{१८८} अ० नि० ४.३४; ५.३२; इतिवु० ९०

विसेसतो वन्दित्वा, भयलाभुकुलाचारादिविरहेन सक्कच्चं आदरेन कायवचीमनोद्वारेहि वन्दित्वात्यत्थो । भासिस्सन्ति कथेस्सामि । निब्बत्तित्परमत्थभावेन अभि विसिद्धा धम्मा एत्थातिआदिना अभिधम्मो, धम्मसङ्गणीआदिसत्तपकरणं अभिधम्मपिटकं, तत्थ वुत्ता अत्था अभिधम्मत्था, ते सङ्गहन्ति एत्थ, एतेनाति वा अभिधम्मत्थसङ्गहं ।

परमत्थधम्मवण्णना

२. एवं ताव यथाधिप्पेतप्पयोजननिमित्तं रतनत्तयपणामादिकं विधाय इदानि येसं अभिधम्मत्थानं सङ्गहणवसेन इदं पकरणं पट्टपीयति, ते ताव सङ्गपतो उद्दिस्सन्तो आह “तत्थ वुत्ता”त्यादि । तत्थ तस्मि अभिधम्मो सब्बथा कुसलादिवसेन, खन्धादिवसेन च वुत्ता अभिधम्मत्था परमत्थतो सम्मुत्ति उपेत्वा निब्बत्तित्परमत्थवसेन चित्तं विज्जाणवक्खन्थो, चेतसिकं वेदनादिवक्खन्धत्तयं, रूपं भूतुपादायभेदभिन्नो रूपवक्खन्थो, निब्बानं मग्गफलानमारम्भणभूतो असङ्गतधम्मोति एवं चतुधा चतूहाकारोहि टिताति योजना । तत्थ परमो उत्तमो अविपरीतो अत्थो, परमस्स वा उत्तमस्स जाणस्स अत्थो गोचरोति परमत्थो ।

चिन्तेतीति चित्तं, आरम्भणं विजानातीति अत्थो । यथाह “विसयविजाननलक्खणं चित्त”न्ति^{१८९} । सतिपि हि निस्सयसमनन्तरादिपच्चयेन विना आरम्भणेन चित्तमुप्पज्जतीति तस्स तं लक्खणता वुत्ता, एतेन निरारम्भणवादिपत्तं पटिक्खित्तं होति । चिन्तेन्ति वा एतेन करणभूतेन सम्पयुत्तधम्माति चित्तं । अथ वा चिन्तनमत्तं चित्तं । यथापच्चयं हि पवत्तिमत्तमेव यदिदं सभावधम्मो नाम । एवञ्च कत्वा सब्बेसम्मि परमत्थधम्मानं भावसाधनमेव निष्परियायतो लब्धति, कत्तुकरणवसेन पन निब्बचनं परियायकथाति दट्टब्बं । सकसककिच्चेसु हि धम्मानं अत्तप्पधानतासमारोपनेन कत्तुभावो च, तदनुकूलभावेन सहजातधम्मसमूहे कत्तुभावसमारोपनेन पटिपादेतब्बधम्मस्स करणत्तञ्च परियायतोव लब्धति, तथानिदस्सनं पन धम्मसभावविनियुत्तस्स कत्तादिनो अभावपरिदीपनत्थन्ति वेदितब्बं । विचित्तकरणादितोपि चित्तसदत्थं पपञ्चेन्ति । अयं पनेत्थ सङ्गहो-

“विचित्तकरणा चित्तं, अत्तनो चित्तताय वा ।

चित्तं कम्मकिलेसेहि, चित्तं तायति वा तथा ।

चिनोति अत्तसन्तानं, विचित्तारम्भणन्ति चा”ति ॥

चेतसि भवं तदायत्तवुत्तियाति चेतसिकं । न हि तं चित्तेन विना आरम्भणगहणसमत्थं असति चित्ते सब्बेन सब्बं अनुप्पज्जनतो, चित्तं पन केनचि चेतसिकेन विनापि आरम्भणे पवत्ततीति तं चेतसिकमेव चित्तायत्तवुत्तिकं नाम । तेनाह भगवा “मनोपुब्बङ्गमा धम्मा”ति^{१९०}, एतेन सुखादीनं अचेतनत्तनिच्चत्तादयो विष्पटिपत्तियोपि पटिक्खित्ता होन्ति । चेतसि नियुत्तं वा चेतसिकं ।

रुप्पतीति रूपं, सीतुण्हादिविरोधिपच्चयेहि विकारमापज्जति, आपादीयतीति वा अत्थो । तेनाह भगवा “सीतेनपि रुप्पति, उण्हेनपि रुप्पती”त्यादि^{१९१}, रुप्पनञ्चेत्थ सीतादिविरोधिपच्चयसमवाये विसदितुप्पत्तियेव । यदि एवं अरुपधम्मानम्मि रूपवोहारो आपज्जतीति ? नापज्जति सीतादिग्गहणसामत्थियतो विभूततरस्सेव रुप्पनस्साधिप्पेतत्ता । इतरथा हि “रुप्पती”ति अविसेसवचनेनेव परियत्तन्ति किं सीतादिग्गहणेन, तं पन सीतादिना फुट्टस्स रुप्पनं विभूततरं, तस्मा तदेवेत्थाधिप्पेतन्ति आपनत्थं सीतादिग्गहणं कत्तं । यदि एवं कथं ब्रह्मलोके रूपवोहारो, न हि तत्थ

^{१८९} ध० स० अट्ट० १ धम्मदेसवारफस्सपञ्चमकरासिवण्णना

^{१९०} ध० प० १-२

^{१९१} सं० नि० ३.७९

उपघातका सीतादयो अत्थीति? किञ्चापि उपघातका नत्थि, अनुग्गाहका पन अत्थि, तस्मा तंवसेनेत्थ रूप्पनं सम्भवतीति, अथ वा तं सभावानतिवत्तनतो तत्थ रूपवोहारोति अलमतिप्पञ्चेन।

भवाभवं विननतो संसिब्बनतो वानसङ्घाताय तण्हाय निक्खन्तं, निब्बाति वा एतेन रागग्गिआदिकोति निब्बानं।

१. चित्तपरिच्छेदवण्णना

भूमिभेदचित्तवण्णना

३. इदानीं यस्मा विभागवन्तानं धम्मानं सभावविभावनं विभागेन विना न होति, तस्मा यथाउद्दिष्टानं अभिधम्मत्थानं उद्देशकमेव विभागं दस्सेतुं चित्तं ताव भूमिजातिसम्पयोगादिवसेन विभजित्वा निद्विसितुमारभन्तो आह “तत्थ चित्तं तावा”त्यादि। ताव-सद्दो पठमन्ति एतस्सत्थे। यथाउद्दिष्टेषु चतूसु अभिधम्मत्थेषु पठमं चित्तं निद्विसीयतीति अयञ्जेत्थत्थो। चत्तारो विधा पकारा अस्साति चतुब्धिं। यस्मा पनेते चतुष्पुम्माका धम्मा अनुपुब्बपणीता, तस्मा हीनुक्कडुक्कडुत्तरतमानुक्कमेन तेसं निदेसो कतो। तत्थ कामेतीति कामो, कामतण्हा, सा एत्थ अवचरति आरम्भणकरणवसेनाति कामावचरं। कामीयतीति वा कामो, एकादसविधो कामभवो, तस्मिं येभ्य्येन अवचरतीति कामावचरं। येभ्य्येन चरणस्स हि अधिप्पेतत्ता रूपारूपभवेसु पवत्तस्सापि इमस्स कामावचरभावो उपपन्नो होति। कामभवोयेव वा कामो एत्थ अवचरतीति कामावचरो, तत्थ पवत्तस्मिं चित्तं निस्सिते निस्सयवोहारेण कामावचरं “मज्जा उक्कुट्ठिं करोन्ती”त्यादीसु वियाति अलमतिविसारणिया कथाय। होति चेत्थ -

“कामोवचरतीत्येत्थ, कामेवचरतीति वा।

ठानूपचारतो वापि, तं कामावचरं भवे”ति ॥

रूपारूपवचरेसुपि एसेव नयो यथारहं ददुब्बो। उपादानक्खन्धसङ्घातलोकतो उत्तरति अनासवभावेनाति लोकुत्तरं, मग्गचित्तं। फलचित्तं पन ततो उत्तिण्णन्ति लोकुत्तरं। उभयस्मिं वा सह निब्बानेन लोकतो उत्तरं अधिकं यथावुत्तगुणवसेनेवाति लोकुत्तरं।

भूमिभेदचित्तवण्णना निद्विता।

अकुसलचित्तवण्णना

४. इमेसु पन चतूसु चित्तेसु कामावचरचित्तस्स कुसलाकुसलविपाककिरियभेदेन चतुब्धिभावेपि पापाहेतुकवज्जानं एकूनसड्डिया, एकूनवुतिया वा चित्तानं सोभननामेन वोहारकरणत्थं “पापाहेतुकमुत्तानि ‘सोभनानी’ति वुच्चरे”ति एवं वक्खमाननयस्स अनुरूपतो पापाहेतुकेयेव पठमं दस्सेन्तो, तेसु च भवेसु गहितपटिसन्धिकस्स सत्तस्स आदितो वीथिचित्तवसेन लोभसहगतचित्तुप्पादानमेव सम्भवतो तेयेव पठमं दस्सेत्वा तदनन्तरं द्विहेतुकभावसामञ्जेन दोमनस्ससहगते, तदनन्तरं एकहेतुके च दस्सेतुं “सोमनस्ससहगत”न्यादिना लोभमूलं ताव वेदनादिद्विसङ्घारभेदेन अट्टधा विभजित्वा दस्सेति।

तत्थ सुन्दरं मनो, तं वा एतस्स अत्थीति सुमनो, चित्तं, तं समङ्गिपुगलो वा, तस्स भावो तस्मिं अभिधानबुद्धीनं पवत्तिहेतुतायाति सोमनस्सं, मानसिकसुखवेदनायेतं अधिवचनं, तेन सहगतं

एकुप्पादादिवसेन संसद्दं, तेन सह एकुप्पादादिभावं गतन्ति वा सोमनस्ससहगतं। मिच्छा पस्सतीति दिट्ठि। सामञ्जसवचनस्सपि हि अत्थप्पकरणादिना विसेसविसयता होतीति इध मिच्छादस्सनमेव “दिट्ठी”ति वुच्चति। दिट्ठियेव दिट्ठिगतं “सङ्कारगतं धामगत”न्यादीसु विय गत-सहस्स तन्भाववुत्तिता। द्वासट्ठिया वा दिट्ठीसु गतं अन्तोगतं, दिट्ठिया वा गमनपत्तं न एत्थ गन्तब्बो अत्तादिको कोचि अत्थीति दिट्ठिगतं, “इदमेव सच्चं मोघमञ्ज”न्ति पवत्तो अत्तत्तनिययादिअभिनिवेशो, तेन समं एकुप्पादादीहि पकारेहि युत्तन्ति दिट्ठिगतसम्पयुत्तं। सङ्कारोति चित्तं तिक्खभावसङ्कातमण्डनविसेसेन सज्जेति, सङ्कारीयति वा तं एतेन यथावुत्तनयेन सज्जीयतीति सङ्कारो, तत्थ तत्थ किच्चे संसीदमानस्स चित्तस्स अनुबलप्पदानवसेन अत्तनो वा परेसं वा पवत्तपुब्बप्पयोगो, सो पन अत्तनो पुब्बभागप्पवते चित्तसन्ताने चेव परसन्ताने च पवत्ततीति तन्निब्वत्तितो चित्तस्स तिक्खभावसङ्कातो विसेसोविध सङ्कारो, सो यस्स नत्थि तं असङ्कारं, तदेव असङ्कारिकं। सङ्कारेन सहितं ससङ्कारिकं। तथा च वदन्ति-

“पुब्बप्पयोगसम्भूतो, विसेसो चित्तसम्भवी।

सङ्कारो तंवसेनेत्थ, होत्यासङ्कारिकादिता”ति ॥

अथ वा “ससङ्कारिकं असङ्कारिक”न्ति चेत्तं केवलं सङ्कारस्स भावाभावं सन्धाय वुत्तं, न तस्स सहप्पवत्तिसन्धावाभावतोति भिन्नसन्तानप्पवत्तिनोपि सङ्कारस्स इदमत्थिताय तंवसेन निब्वत्तं चित्तं सङ्कारो अस्स अत्थीति ससङ्कारिकं “सलोमको सपक्खको”त्यादीसु विय सह-सहस्स विज्जमानत्थपरिदीपनतो। तन्निपरीतं पन तदभावतो वुत्तनयेन असङ्कारिकं। दिट्ठिगतेन विष्पयुत्तं विसंसद्दन्ति दिट्ठिगतविष्पयुत्तं। उपपत्तितो युत्तितो इक्खति अनुभवति वेदयमानापि मज्झत्ताकारसण्ठितियाति उपेक्खा। सुखदुक्खानं वा उपेता युत्ता अविठ्ठ्ठा इक्खा अनुभवनन्ति उपेक्खा। सुखदुक्खाविरोधिताय हेसा तेसं अनन्तरम्पि पवत्तति। उपेक्खासहगतन्ति इदं वुत्तनयमेव।

कस्मा पनेत्थ अज्जेसुपि फत्सादीसु सम्पयुत्तधम्मेसु विज्जमानेसु सोमनस्ससहगतादिभावोव वुत्तोति? सोमनस्सादीनमेव असाधारणभावतो। फत्सादयो हि केचि सब्बचित्तसाधारणा, केचि कुसलदिताधारणा, मोहादयो च सब्बाकुसलसाधारणाति न तेहि सक्का चित्तं विसेसेतुं, सोमनस्सादयो पन कत्थचि चित्ते होन्ति, कत्थचि न होन्तीति पाकटोव तंवसेन चित्तस्स विसेसो। कस्मा पनेते कत्थचि होन्ति, कत्थचि न होन्तीति? कारणस्स सन्निहितासन्निहितभावतो। किं पन नेसं कारणन्ति? वुच्चतेसभावतो, परिकप्पतो वा हि इद्धारम्पणं, सोमनस्सपटिसन्धिकता, अगम्भीरसभावता च इध सोमनस्सस्स कारणं, इद्दमज्झत्तारम्पणं, उपेक्खापटिसन्धिकता, गम्भीरसभावता च उपेक्खाय, दिट्ठिविपन्नपुग्गलसेवना, सस्सतुच्छेदासयता च दिट्ठिया, बलवउतुभोजनादयो पन पच्चया असङ्कारिकभावस्साति। तस्मा अत्तनो अनुरूपकारणवसेन नेसं उप्पज्जनतो कत्थचि चित्तेयेव सम्भवोति सक्का एतेहि चित्तस्स विसेसो पज्जापेतुन्ति। एवञ्च कत्वा नेसं सतिपि मोहहेतुकभावे लोभसहगतभावोव निगमने वुत्तो।

इमेसं पन अद्दुन्नम्पि अयमुप्पत्तिककमो वेदितब्बो। यदा हि “नत्थि कामेसु आदीनवो”त्यादिना नयेन मिच्छादिट्ठिं पुरक्खत्वा हट्टुट्टो कामे वा परिभुज्जति, दिट्ठमङ्गलादीनि वा सारतो पच्चेति सभावतिक्खेनेव अनुस्साहितेन चित्तेन, तदा पठमं अकुसलचित्तमुप्पज्जति। यदा पन मन्देन समुस्साहितेन चित्तेन, तदा दुतियं। यदा पन मिच्छादिट्ठिं अपुरक्खत्वा केवलं हट्टुट्टो मेधुनं वा सेवति, परसम्पत्ति वा अभिज्जायति, परभण्डं वा हरति सभावतिक्खेनेव अनुस्साहितेन चित्तेन, तदा ततियं। यदा पन मन्देन समुस्साहितेन चित्तेन, तदा चतुत्थं। यदा पन कामानं वा असम्पत्ति आगम्प, अज्जेसं वा सोमनस्सहेतूनं अभावेन चतूसुपि विकम्पेसु सोमनस्सरहिता होन्ति, तदा सेसानि चत्तारि उपेक्खासहगतानि उप्पज्जन्तीति। अट्टपीति पि-सद्दो सम्पण्डनत्थो, तेन वक्खमाननयेन अकुसलकम्मपथेसु नेसं लब्धमानकम्मपथानुरूपतो पवत्तिभेदं कालदेससन्तानारम्पणादिभेदेन अनेकविधतम्पि सङ्गहाति।

५. दुदु मनो, तं वा एतस्साति दुम्पनो, तस्स भावो दोमनस्सं, मानसिकदुक्खवेदनायेतं अधिवचनं, तेन सहगतन्ति दोमनस्ससहगतं। आरम्पणे पटिहञ्जतीति पटिघो, दोसो। चण्डिक्कसभावताय हेस आरम्पणं पटिहनन्तो विय पवत्तति। दोमनस्ससहगतस्स वेदनावसेन अभेदेपि असाधारणधम्मवसेन चित्तस्स उपलक्खणत्थं दोमनस्सग्गहणं, पटिघसम्पयुत्तभावो पन उभिन्नं एकन्तसहचारिता दस्सनत्थं वुत्तोति ददुब्बं। दोमनस्सञ्चेत्थ अनिद्धारम्पणानुभवनलक्खणो वेदनाक्खन्धपरियापन्नो एको धम्मो, पटिघो चण्डिक्कसभावो सङ्गारक्खन्धपरियापन्नो एको धम्मोति अयमेतेसं वित्सेतो। एत्थ च यं किञ्चि अनिद्धारम्पणं, नवविधआघातवत्थूनि च दोमनस्सस्स कारणं, पटिघस्स कारणञ्चाति ददुब्बं। द्विन्नं पन नेसं चित्तानं पाणातिपातादीसु तिक्खमन्दप्पवत्तिकाले उप्पत्ति वेदितब्बा। एत्थापि निगमने पि-सहस्स अत्थो वुत्तनयानुसारेण ददुब्बो।

६. सभावं विचिनन्तो ताय किञ्छति किलमतीति विचिकिच्छा। अथ वा विचिकिच्छित्तुं दुक्करताय विगता विचिकिच्छा जाणप्पटिकारो इमिस्साति विचिकिच्छा, ताय सम्पयुत्तं विचिकिच्छासम्पयुत्तं। उद्धतस्स भावो उद्धच्चं। उद्धच्चस्स सब्बाकुसलसाधारणभावेपि इध सम्पयुत्तधम्मेषु पधानं हुत्वा पवत्ततीति इदमेव तेन वित्सेत्वा वुत्तं। एवञ्च कत्वा धम्मद्वेषपाळियं सेसाकुसलेसु उद्धच्चं येवापनकवसेन वुत्तं, इध पन “उद्धच्चं उप्पज्जती”ति सरूपेनेव देसितं। होन्ति चेत्थ-

“सब्बाकुसलयुत्तप्पि, उद्धच्चं अन्तमानसे।
बलवं इति तंयेव, वुत्तमुद्धच्चयोगतो ॥
“तेनेव हि मुनिन्देन, येवापनकनामतो।
वत्वा सेसेसु एत्थेव, तं सरूपेन देसित”न्ति ॥

इमानि पन द्वे चित्तानि मूलन्तरविरहतो अतिसम्भूहताय, संसम्पनविक्खिपनवसेन पवत्तविचिकिच्छुद्धच्चसमायोगेण चञ्चलताय च सब्बत्थापि रज्जनदुस्सनरहितानि उपेक्खासहगतानेव पवत्तन्ति, ततोयेव च सभावतिक्खताय उस्साहेतव्वताय अभावतो सङ्गारभेदोपि नेसं नत्थि। होन्ति चेत्थ-

“मूहत्ता चेव संसम्प-विक्खेपा चेकहेतुकं।
सोपेक्खं सब्बदा नो च, भिन्नं सङ्गारभेदतो ॥
“न हि तस्स सभावेन, तिक्खतुस्साहनीयता।
अत्थि संसम्पमानस्स, विक्खिपन्तस्स सब्बदा”ति ॥

मोहेन मुहन्ति अतिसयेन मुहन्ति मूलन्तरविरहतोति मोमूहानि।

७. इच्चेवन्यादि यथावुत्तानं द्वादसाकुसलचित्तानं निगमनं। तत्थ इति-सद्दो वचनवचनीयसमुदायनिदस्सनत्थो। एवं-सद्दो वचनवचनीयपटिपाटिसन्दस्सनत्थो। निपातसमुदायो वा एस वचनवचनीयनिगमनारम्भे। इच्चेवं यथावुत्तनयेन सब्बत्थापि सोमनस्सुपेक्खादिट्टिसम्पयोगादिना पटिघसम्पयोगादिना विचिकिच्छुद्धच्चयोगेनाति सब्बेनापि सम्पयोगादिआकारेण द्वादस अकुसलचित्तानि समत्तानि परिनिट्टितानि, सङ्गहेत्वा वा अत्तानि गहितानि, वुत्तानीत्यत्थो। तत्थ कुसलपटिपक्खानि अकुसलानि मित्तप्पटिपक्खो अमित्तो विय, पटिपक्खभावो च कुसलाकुसलानं यथाक्कमं पहायकपहातव्वभावेन वेदितब्बो।

८. अट्टधात्यादि सङ्गहगाथा। लोभो च सो सुप्पतिट्टितभावसाधनेन मूलसदिसत्ता मूलञ्च, कं एतेसन्ति लोभमूलानि चित्तानि वेदनादिभेदतो अट्टधा सियुं।

तथा दोसमूलानि सङ्गारभेदतो द्विधा। मोहमूलानि सुद्धो मोहोयेव मूलभेतेसन्ति मोहमूलसङ्घातानि सम्पयोगभेदतो द्वे चाति अकुसला द्वादस सियुन्त्यत्थो।

अकुसलचित्तवण्णना निट्टिता।

अहेतुकचित्तवर्णना

९. एवं मूलभेदतो तिविधमि अकुसलं सम्पयोगादिभेदतो द्वादसथा विभजित्वा इदानी अहेतुकचित्तानि निहितन्तो तेसं अकुसलविपाकादिवसेन तिविधभावेपि अकुसलानन्तरं अकुसलविपाकेयव चक्खादिनिस्सयसम्पटिच्छनादिकिच्चभेदेन सत्तथा विभजितुं “उपेक्खासहगतं चक्खुविञ्जाण” न्यादिमाह। तत्थ चक्खति विञ्जाणाधिद्वितं हुत्वा समविसमं आचिक्खन्तं विय होतीति चक्खु। अथ वा चक्खति रूपं अस्सादेन्तं विय होतीति चक्खु। चक्खतीति हि अयं सद्दो “मधुं चक्खति, व्यञ्जनं चक्खती” त्यादीसु विय अस्सादनत्थो होति। तेनाह भगवा- “चक्खुं खो पन, मागण्डिय, रूपारामं रूपरतं रूपसम्मुदित” न्यादि। यदि एवं “सोतं खो, मागण्डिय, सद्दारामं सद्दरतं सद्दसम्मुदित” न्यादिवचनतो^{११२} सोतादीनमि सद्दादिअस्सादनं अत्थीति तेसमि चक्खुसद्दाभिधेयत्ता आपज्जेयाति? नापज्जति निरुद्धत्ता, निरुद्धो हेस चक्खु-सद्दो दद्दुकामतानिदानकम्मजभूतप्पसादलक्खणे चक्खुप्पसादेयेव मयूरादिसद्दा विय सकुणविसेसादीसु, चक्खुना सहबुत्तिया पन भमुकट्टिपरिच्छिन्नो भंसपिण्डोपि “चक्खू” ति वुच्चति।

अद्दुकथायं पन अनेकत्थत्ता धातूनं चक्खति-सद्दस्स विभावनत्थतापि सम्भवतीति “चक्खति रूपं विभावेतीति चक्खू” ति^{११३} वुत्तं। चक्खुस्मि विञ्जाणं तन्निस्सितत्थाति चक्खुविञ्जाणं। तथा हेतं “चक्खुसन्निस्सितरूपविज्ञानलक्खण” न्ति^{११४} वुत्तं।

एवं सोतविञ्जाणादीसुपि यथारहं दद्दुब्बं। “तथा” ति इमिना उपेक्खासहगतभावं अतिदिसति। विञ्जाणाधिद्वितं हुत्वा सुणातीति सोतं। घायति गन्धोपादानं करोतीति घानं।

जीवितनिमित्तं रसो जीवितं, तं अक्कायति तस्मि निन्नतायाति जिह्वा निरुत्तिनयेन। कुच्छित्तानं पापधम्मनं आयो पवत्तिट्टानन्ति कायो। कायिन्दियज्झि फोद्दुब्बग्गहणसभावत्ता तदस्सादवसम्पत्तानं, तम्मूलकानञ्च पापधम्मनं विसेसकारणन्ति तेसं पवत्तिट्टानं विय गय्दति। ससम्भारकायो वा कुच्छित्तानं केसादीनं आयोति कायो। तं सहचरितत्ता पन पसादकायोपि तथा वुच्चति। दु कुच्छितं हुत्वा खनति कायिकसुखं, दुक्खमन्ति वा दुक्खं। दुक्करमोकासदानं एतस्साति दुक्ख” न्तिपि अपरे। पञ्चविञ्जाणग्गहितं रूपादिआरम्भणं सम्पटिच्छति तदाकारम्पवत्तियाति सम्पटिच्छनं। सम्मा तीरीति यथासम्पटिच्छितं रूपादिआरम्भणं वीमसतीति सन्तीरणं। अञ्जमञ्जविरुद्धानं कुसलाकुसलानं पाकाति विपाका, विपक्कभावमापन्नानं अरूपधम्मनमेतं अधिवचनं। एवञ्च कत्वा कुसलाकुसलकम्मसमुद्दानानमि कटत्तारूपानं नत्थि विपाकवोहारो। अकुसलस्स विपाकचित्तानि अकुसलविपाकचित्तानि।

१०. सुखयति कायचित्तं, सुदु वा खनति कायचित्ताबाधं, सुखेन खमितव्वन्ति वा सुखं। “सुकरमोकासदानं एतस्साति सुख” न्ति अपरे। कस्मा पन यथा अकुसलविपाकसन्तीरणं एकमेव वुत्तं, एवमवत्त्वा कुसलविपाकसन्तीरणं द्विधा वुत्तन्ति? इद्दुद्दुमज्जत्तारम्भणवसेन वेदनाभेदसम्भवतो। यदि एवं तत्थापि अनिद्दुअनिद्दुमज्जत्तारम्भणवसेन वेदनाभेदेन भवितव्वन्ति? नयिदमेवं अनिद्दुारम्भणे उप्पज्जितव्वस्सपि दोमनस्सस्स पटिघेन विना अनुप्पज्जनतो, पटिघस्स च एकन्ताकुसलसभावस्स अब्याकत्तेसु असम्भवतो। न हि भिन्नजातिको धम्मो भिन्नजातिकेसु उपलब्धति, तस्मा अत्ताना समानयोगक्खमस्स असम्भवतो अकुसलविपाकेसु दोमनस्सं न सम्भवतीति तस्स तं सहगतता न वुत्ता। अथ वा यथा कोचि बलवता पोथियमानो दुब्बलपुरिसो तस्स पटिप्पहरितुं असक्कोन्तो तस्मि

^{११२} म० नि० २.२०९

^{११३} विसुद्धि० २.५१०

^{११४} थ० स० अद्द० ४३१; विसुद्धि० २.४५४

उपेक्खकोव होति, एवमेव अकुसलविपाकानं परिदुब्बलभावतो अनिद्वारम्मणेपि दोमनस्सुप्पादो नत्थीति सन्तीरणं उपेक्खासहगतमेव ।

चक्खुविज्ञाणादीनि पन चत्तारि उभयविपाकानिपि वत्थारम्मणघट्टनाय दुब्बलभावतो अनिद्वे इद्वेपि च आरम्मणे उपेक्खासहगतानेव । तेसञ्चि चतुत्रम्मि वत्थुभूतानि चक्खादीनि उपादारूपानेव, तथा आरम्मणभूतानिपि रूपादीनि, उपादारूपकेन च उपादारूपकस्स सङ्घट्टनं अतिदुब्बलं पिचुपिण्डकेन पिचुपिण्डकस्स फुसनं विय, तस्मा तानि सब्बथापि उपेक्खासहगतानेव । कायविज्ञाणस्स पन फोदुब्बसङ्घातभूतत्तयमेव आरम्मणन्ति तं कायप्पसादे सङ्घट्टितम्मि तं अतिक्कमित्वा तन्निससयेसु महाभूतेसु पटिहञ्जति ।

भूतरूपेहि च भूतरूपानं सङ्घट्टनं बलवतरं अधिकरणिमत्थके पिचुपिण्डकं टपेत्वा कूटेन पट्टकाले कूटस्स पिचुपिण्डकं अतिक्कमित्वा अधिकरणिगहणं विय, तस्मा वत्थारम्मणघट्टनाय बलवभावतो कायविज्ञाणं अनिद्वे दुक्खसहगतं, इद्वे सुखसहगतन्ति । सम्पटिच्छनयुगळ्हं पन अत्तना असमाननिससयानं चक्खुविज्ञाणादीनमनन्तरं उप्पज्जतीति समाननिससयतो अलद्धानन्तरपच्चयताय सभागूपत्थम्भरहितो विय पुरिसो नातिबलवं सब्बथापि विसयरसमनुभवितुं न सक्कोतीति सब्बथापि उपेक्खासहगतमेव । वुत्तविपरियायतो कुसलविपाकसन्तीरणं इद्वेइद्वमज्जत्तारम्मणेषु सुखोपेक्खासहगतन्ति । यदि एवं आवज्जनद्वयस्स उपेक्खासम्पयोगं कस्मा वक्खति, ननु तम्मि समाननिससयानन्तरं पवत्ततीति? सच्चं, तत्थ पन पुरिमं पुब्बे केनचि अग्गहितेयेव आरम्मणे एकवारमेव पवत्ति, पच्छिमम्मि विसदिसचित्तसन्तानपरावत्तनवसेन ब्यापारन्तरसापेक्खन्ति न सब्बथापि विसयरसमनुभवितुं सक्कोति, तस्मा मज्जत्तवेदना-सम्पयुत्तमेवाति । होन्ति चेत्थ-

“वत्थालम्बसभावानं, भूतिकानञ्चि घट्टनं ।

दुब्बलं इति चक्खादि-चतुचित्तमुपेक्खकं ॥

“कायनिससयफोदुब्ब-भूतानं घट्टनाय तु ।

बलवत्ता न विज्ञाणं, कायिक मज्जवेदनं ॥

“समाननिससयो यस्मा, नत्थानन्तरपच्चयो ।

तस्मा दुब्बलमालम्बे, सोपेक्खं सम्पटिच्छन”न्ति ॥

कुसलस्स विपाकानि, सम्पयुत्तहेतुविरहतो अहेतुकचित्तानि चाति कुसलविपाकाहेतुक-चित्तानि । निब्बत्तकहेतुवसेन निष्फन्नानिपि हेतानि सम्पयुत्तहेतुवसेनेव अहेतुकवोहारं लभन्ति, इतरथा महाविपाकेहि इमेसं नानत्तासम्भवतो । किं पनेत्थ कारणं यथा इधेवं अकुसलविपाकनिगमने अहेतुकगहणं न कतन्ति? ब्यभिचाराभावतो । सति हि सम्भवे, ब्यभिचारे च विसेसनं सात्थकं सिया । अकुसलविपाकानं पन लोभादिसावज्जधम्मविपाकभावेन तब्बिधुरेहि, अलोभादीहि सम्पयोगायोगतो, सयं अब्याकतनिरवज्जसभावानं लोभादि अकुसलधम्मसम्पयोग-विरोधतो च नत्थि कदाचिपि सहेतुकताय सम्भवोति अहेतुकभावाब्यभिचारतो न तानि अहेतुकसदेन विसेसितब्बानि ।

११. इदानि अहेतुकाधिकारे अहेतुककिरियचित्तानिपि किच्चभेदेन तिथा दस्सेतुं “उपेक्खासहगत”न्त्यादि वुत्तं । चक्खादिपञ्चद्वारे घट्टितमारम्मणं आवज्जेति तत्थ आभोगं करोति, चित्तसन्तानं वा भवद्भवसेन पवत्तितुं अदत्वा वीथिचित्तभावाय परिणामेतीति पञ्चद्वारावज्जनं, किरियाहेतुकमनोधातुचित्तं । आवज्जनस्स अनन्तरपच्चयभूतं भवद्भवचित्तं मनोद्वारं वीथिचित्तानं पवत्तिमुखभावतो । तस्मिं दिदुसुतमुतादिवसेन आपाथमागतमारम्मणं आवज्जेति, वुत्तनयेन वा चित्तसन्तानं परिणामेतीति मनोद्वारावज्जनं, किरियाहेतुकमनोविज्ञाणधातुउपेक्खासहगतचित्तं । इदमेव च पञ्चद्वारे यथासन्तीरितं आरम्मणं ववत्थपेतीति वोदुब्बनन्ति च वुच्चति । हसितं उप्पादेतीति हसितुप्पादं, खीणासवानं अनोठारिकारम्मणेषु पहट्टाकारमत्तहेतुकं किरियाहेतुकमनोविज्ञाणधातुसोमनस्ससहगतचित्तं ।

१२. सब्बधापीति अकुसलविपाककुसलविपाककिरियभेदेन। अट्टारसाति गणनपरिच्छेदो। अहेतुकचित्तानीति परिच्छिन्नधम्मनिदस्सनं।

अहेतुकचित्तवण्णना निट्ठिता।

सोभनचित्तवण्णना

१४. एवं द्वादसाकुसलअहेतुकाट्टारसवसेन समतिंस चित्तानि दस्सेत्वा इदानि तब्बिनिमुत्तानं सोभनबोहारं ठपेतुं “पापाहेतुकमुत्तानी”त्यादि वुत्तं। अत्तना अधिसयितस्स अपायादिदुक्खस्स पापनतो पापेहि, हेतुसम्पयोगाभावतो अहेतुकेहि च मुत्तानि चतुवीसत्तिकाभावचरपञ्चतिसमहग्गतलोकुत्तरवसेन एकूनसट्ठिपरिमाणानि, अथ वा अट्ट लोकुत्तरानि ज्ञानङ्गयोगभेदेन पच्चेकं पञ्चधा कत्वा एकनवुत्तिपि चित्तानि सोभनगुणावहनतो, अलोभादिअनवज्जहेतुसम्पयोगतो च सोभनानीति वुच्चरे कथीयन्ति।

कामावचरसोभनचित्तवण्णना

१५. इदानि सोभनेसु कामावचरानमेव पठमं उद्दिट्ठता तेसुपि अब्याकतानं कुसलपुब्बकत्ता पठमं कामावचरकुसलं, ततो तब्बिपाकं, तदनन्तरं तदेकभूमिपरियापन्नं किरियचित्तञ्च पच्चेकं वेदनाज्जाणसङ्गारभेदेन अट्टथा दस्सेतुं “सोभनस्ससहगत”त्यादि वुत्तं। तत्थ जानाति यथासभावं पटिविज्जतीति आणं। सेसं वुत्तनयमेव। एत्थ च बलवसद्दाय दस्सनसम्पत्तिया पच्चयपटिग्गाहकादिसम्पत्तियाति एवमादीहि कारणेहि सोमनस्ससहगतता, पञ्जासंवत्तनिककम्मतो, अब्यापज्जलोकूपपत्तितो, इन्द्रियपरिपाकतो, किलेसदूरीभावतो च आणसम्पयुत्तता, तब्बिपरियायेन उपेक्खासहगतता चेव आणविष्पयुत्तता च, आवाससम्पायादिवसेन कायचित्तानं कल्लभावतो, पुब्बे दानादीसु कतपरिचयतादीहि च असङ्गारिकता, तब्बिपरियायेन ससङ्गारिकता च वेदितब्बा।

तत्थ यदा पन यो देय्यधम्मपटिग्गाहकादिसम्पत्ति, अज्जं वा सोमनस्सहेतुं आगम्म हट्टपहट्टो “अत्थि दिन्न”न्यादिनयम्पवत्तं सम्मादिट्ठि पुरक्खत्वा मुत्तचागतादिवसेन असंसीदन्तो अनुस्साहितो परेहि दानादीनि पुज्जानि करोति, तदास्स चित्तं सोमनस्ससहगतं आणसम्पयुत्तं असङ्गारिकं होति। यदा पन वुत्तनयेनेव हट्टुट्टो सम्मादिट्ठि पुरक्खत्वापि अमुत्तचागतादिवसेन संसीदमानो परेहि वा उस्साहितो करोति, तदास्स तदेव चित्तं ससङ्गारिकं होति। यदा पन जातिजनस्स पटिपत्तिदस्सनेन जातपरिचया बालदारका भिक्खू दिस्वा सोमनस्सजाता सहसा किञ्चिदेव हत्थगतं ददन्ति वा बन्दन्ति वा, तदा तेसं तत्तियं चित्तं उप्पज्जति। यदा पन “देथ, बन्दथा”ति जातीहि उस्साहिता एवं पटिपज्जन्ति, तदा चतुत्थं चित्तं उप्पज्जति। यदा पन देय्यधम्मपटिग्गाहकादीनं असम्पत्तिं, अज्जेसं वा सोमनस्सहेतुनं अभावं आगम्म चतूसुपि विकप्पेसु सोमनस्सरहिता होन्ति, तदा सेसानि चत्तारि उपेक्खासहगतानि उप्पज्जन्तीति। अट्टपीति पि-सदेन दसपुज्जकिरियादिवसेन अनेकविधतं सम्पिण्डेति। तथा हि वदन्ति-

“कमेन पुज्जवत्थूहि, गोचराधिपतीहि च।

कम्महीनादितो चेव, गणेय्य नयकोविदो”ति ॥

इमानि हि अट्ट चित्तानि दसपुज्जकिरियवत्थुवसेन पवत्तनतो पच्चेकं दस दसाति कत्वा असीति चित्तानि होन्ति, तानि च छसु आरम्भणेषु पवत्तनतो पच्चेकं छग्गुणितानि सासीतिकानि चत्तारि सतानि होन्ति, अधिपतिभेदेन पन आणविष्पयुत्तानं चत्तालीसाधिकद्विसत्तपरिमाणानं वीमंसाधिपतिसम्पयोगाभावतो तानि तिण्णं अधिपतीनं वसेन तिगुणितानि वीसाधिकानि सत्तसतानि, तथा आणसम्पयुत्तानि च चतुन्नं अधिपतीनं वसेन चतुग्गुणितानि ससट्ठिकानि नव

सतानीति एवं अधिपतिवसेन सहस्रं सासीतिकानि च छ सतानि होन्ति, तानि कायवचीमनोकम्पसङ्घातकम्पतिकवसेन तिगुणितानि चत्तालीसाधिकानि पञ्च सहस्रानि होन्ति, तानि च हीनमङ्घिमपणीतभेदतो तिगुणितानि वीससताधिकपन्नरससहस्रानि होन्ति। यं पन वुत्तं आचरियबुद्धदत्तत्थेरेन-

“सत्तरस सहस्रानि, द्वे सतानि असीति च।
कामावचरपुञ्जानि, भवन्तीति विनिहिसे”ति॥

तं अधिपतिवसेन गणनपरिहानि अनादियित्वा सोतपतितवसेन वुत्तन्ति दट्टब्बं, कालदेसादिभेदेन पन नेसं भेदो अप्पमेय्योव।

कुच्छित्ते^{१९५} पापधम्मे सलयन्ति कम्पेन्ति विद्धंसेन्ति अपगमेन्तीति वा कुसलानि। अथ वा कुच्छिताकारेण सन्ताने सयनतो पवत्तनतो कुससङ्घाते पापधम्मे लुनन्ति छिन्दन्तीति कुसलानि। अथ वा कुच्छित्ते पापधम्मे सानतो तनुकरणतो ओसानकरणतो वा कुससङ्घातेन जाणेन, सद्वादिधम्मजातेन वा लातब्बानि सहजातउपनिस्सयभावेन यथारहं पवत्तेतब्बानीति कुसलानि, तानेव यथावुत्तत्थेन कामावचरानि कुसलचित्तानि चाति कामावचरकुसलचित्तानि।

१६. यथा पनेतानि पुञ्जकिरियवसेन, कम्मद्वारवसेन, कम्मवसेन, अधिपतिवसेन च पवत्तन्ति, नेवं विपाकानि दानादिवसेन अप्पवत्तनतो, विञ्जत्तिसमुद्गापनाभावतो, अविपाकसभावतो, छन्दादीनि पुरक्खत्वा अप्पवत्तितो च, तस्मा तंवसेन परिहापेत्वा यथारहं गणनभेदो योजेतब्बो। इमानिपि इड्डइड्डमज्झत्तारम्पणवसेन यथाक्कमं सोमनस्सुपेक्खासहितानि। पटिसन्धादिवसम्पवत्तियं कम्मस्स बलवावलवभावतो, तदारम्पणप्पवत्तियं येभ्य्येन जवनानुरूपतो, कदाचि तत्थापि कम्मानुरूपतो च जाणसम्पयुत्तानि, जाणविप्पयुत्तानि च होन्ति। यथापयोगं विना सम्पयोगञ्च यथाउपट्टितेहि कम्मादिपच्चयोहि उतुभोजनादिसप्पायासप्पायवसेन असङ्घारिकसङ्घारिकानि।

१७. किरियचित्तानिपि कुसले वुत्तनयेन यथारहं सोमनस्ससहगतादिता वेदितब्बा।

१८. सहेतुककामावचरकुसलविपाककिरियचित्तानीति एत्थ सहेतुकगहणं विपाककिरियापेक्खं वित्सेसनं कुसलस्स एकन्तसहेतुकत्ता। होति हि यथालाभयोजना, “सक्खरकथलम्पि मच्छगुम्बम्पि चरन्तम्पि तिड्ढन्तम्पी”त्यादीसु^{१९६} विय सक्खरकथलस्स चरणायोगतो मच्छगुम्बापेक्खाय चरणकिरिया योजीयतीति।

१९. सहेतुककामावचरपुञ्जपाककिरिया वेदनाजाणसङ्घारभेदेन पच्चेकं वेदनाभेदतो दुविधत्ता, जाणभेदतो चतुब्बिधत्ता, सङ्घारभेदतो अट्टविधत्ता च सम्पिण्डेत्वा चतुवीसति मताति योजना। ननु च वेदनाभेदो ताव युत्तो तासं भिन्नसभावत्ता। जाणसङ्घारभेदो पन कथन्ति? जाणसङ्घारानं भावाभावकतोपि भेदो जाणसङ्घारकतोव यथा वस्सकतो सुभिक्षो दुब्भिक्षोति, तस्मा जाणसङ्घारकतो भेदो जाणसङ्घारभेदोति न एत्थ कोचि विरोधोति।

२०. इदानि सब्बानिपि कामावचरचित्तानि सम्पिण्डेत्वा दस्सेतुं “कामे तेवीसा”त्यादि वुत्तं। कामे भवे सत्त अकुसलविपाकानि, सहेतुकाहेतुकानि सोढस कुसलविपाकानीति एवं तेवीसति विपाकानि द्वादस अकुसलानि, अट्ट कुसलानीति पुञ्जापुञ्जानि वीसति अहेतुका तिस्रो सहेतुका अट्टाति एकादस किरिया चाति सब्बथापि कुसलाकुसलविपाककिरियानं अन्तोगधभेदेन चतुपञ्जासेव कालदेससन्तानादिभेदेन अनेकविधभावेपीत्यत्थो।

कामावचरसोभनचित्तवण्णना निट्ठिता।

^{१९५} ध० स० अट्ट० १

^{१९६} दी० ति० १.२४९

रूपावचरचित्तवण्णना

२१. इदानि तदनन्तरुद्धिदस्स रूपावचरस्स निहेसक्कमो अनुप्पत्तोति तस्स ज्ञानङ्गयोगभेदेन पञ्चधा विभागं दस्सेतुं “वितक्क...पे०... सहित” न्यादिमाह।

वितक्को च विचारो च पीति च सुखञ्च एकगता चाति इमेहि सहितं वितक्कविचारपीतिसुखेकगतासहितं। तत्थ आरम्भणं वितक्केति सम्पयुत्तधम्मे अभिनिरोपेतीति वितक्को, सो सहजातानं आरम्भणाभिनिरोपनलक्खणो, यथा हि कोचि गामवासी पुरिसो राजवल्लभं सम्बन्धिनं मित्तं वा निस्साय राजगेहं अनुपविसति, एवं वितक्कं निस्साय चित्तं आरम्भणं आरोहति। यदि एवं कथं अवितक्कं चित्तं आरम्भणं आरोहतीति? तस्मिं वितक्कबलेनेव अभिनिरोहति। यथा हि सो पुरिसो परिचयेन तेन विनापि निरासङ्को राजगेहं पविसति, एवं परिचयेन वितक्केन विनापि अवितक्कं चित्तं आरम्भणं अभिनिरोहति। परिचयोति चेत्थ सवितक्कचित्तस्स सन्ताने अभिण्हप्पवत्तिवसेन निब्बत्ता चित्तभावना। अपि चेत्थ पञ्चविञ्जाणं अवितक्कस्मि वत्थारम्भणसङ्घट्टनबलेन, दुत्तियज्झानादीनि च हेड्डिमभावनावलेन अभिरोहन्ति।

आरम्भणे तेन चित्तं विचरतीति विचारो। सो आरणुमज्जनलक्खणो। तथा हेस “अनुसन्धानता”ति^{११०} निद्दिट्ठो। एत्थ च विचारतो ओळारिकट्टेन, तस्सेव पुब्बङ्गमट्टेन च पठमघण्टाभिघातो विय चेतसो पठमाभिनिपातो वितक्को, अनुरवो विय अनुसञ्चरणं विचारो। विष्कारवाचेत्थ वितक्को चित्तस्स परिष्फन्दनभूतो, आकासे उप्पतितुकामस्स सकुणस्स पक्खविक्खेपो विय, पटुमाभिमुखपातो विय च गन्थानुबन्धचेतसा भमरस्स, सन्तवुत्ति विचारो चित्तस्स नातिपरिष्फन्दनभूतो, आकासे उप्पतितस्स सकुणस्स पक्खप्पसारणं विय, पटुमस्स उपरिभागे परिभमनं विय च पटुमाभिमुखपतितस्स भमरस्स।

पिनयति कायचित्तं तप्पेति, वहेतीति वा पीति, सा सम्पियायनलक्खणा, आरम्भणं कल्लतो गहणलक्खणाति वुत्तं होति, सम्पयुत्तधम्मे सुखयतीति सुखं, तं इट्ठानुभवनलक्खणं सुभोजनरसस्सादको राजा विय। तत्थ आरम्भणप्पटिलाभे पीतिया विसेतो पाकटो कन्तारखिन्नस्स वनन्तोदकदस्सेन विय, यथालद्धस्स अनुभवने सुखस्स विसेतो पाकटो यथादिट्ठउदकस्स पानादीसु वियाति। नानारम्भणविक्खेपाभावेन एकं आरम्भणं अगं इमस्साति एकगं, चित्तं, तस्स भावो एकगता, समाधि। सो अविक्खेपलक्खणो। तस्स हि वसेन ससम्पयुत्तं चित्तं अविक्खित्तं होति।

पठमञ्च देसनावकमतो चैव उप्पत्तिकमतो च आदिभूतत्ता तं ज्ञानञ्च आरम्भणूपनिज्झानतो, पच्चनीकज्ञापनतो चाति पठमज्झानं, वितक्कादिपञ्चकं। ज्ञानङ्गसमुदाये येव हि ज्ञानवोहारो नेभिआदिअङ्गसमुदाये रथवोहारो विय, तथा हि वुत्तं विभङ्गे “ज्ञानन्ति वितक्को विचारो पीति सुखं चित्तस्सेकगता”ति^{११८}। पठमज्झानेन सम्पयुत्तं कुसलचित्तं पठमज्झानकुसलचित्तं।

कस्मा पन अञ्जेसु फस्सादीसु सम्पयुत्तधम्मेसु विज्जमानेसु इमेयेव पञ्च ज्ञानङ्गवसेन वुत्ताति? वुत्तये- उपनिज्झानकिच्चवन्तताय, कामच्छन्दादीनं उजुपटिपक्खभावतो च। वितक्को हि आरम्भणे चित्तं अभिनिरोपेति। विचारो अनुप्पबन्धेति, पीति चस्स पीननं, सुखञ्च उपब्रूहनं करोति, अथ नं ससम्पयुत्तधम्मं एतेहि अभिनिरोपनानुप्पबन्धनपीननउपब्रूहनेहि अनुगहिता एकगता समाधानकिच्चेन अत्तानं अनुवत्तापेन्ती एकत्तारम्भणे समं, सम्मा च आधियति। इन्द्रियसमतावसेन समं पटिपक्खधम्म्यानं दूरीभावेन लीनुद्धच्चाभावेन सम्मा च टपेतीति एवमेते समेव उपनिज्झानकिच्चं आवेणिकं। कामच्छन्दादिपटिपक्खभावे पन समाधि कामच्छन्दस्स पटिपक्खो रागप्पणिधिया

^{११०} ध० त्ठ० ८

^{११८} विभ० ५६९

उजुपच्चनीकभावतो । कामच्छन्दवसेन हि नानारम्भणेहि पलोभितस्स परिभ्रमन्तस्स चित्तस्स समाधानं एकग्गताय होति । पीति व्यापादस्स पामोज्जसभावत्ता ।

वितक्को धिनमिद्धस्स योनिस्तो सङ्कप्पनवसेन सविप्फारप्पवत्तित्तो सुखं अवूपसमानुतापसभावस्स उद्धच्चकुक्कुच्चस्स वूपसन्तसीतलसभावत्ता । विचारो विचिकिच्छाय आरम्भणे अनुमज्जनवसेन पञ्जापतिरूपसभावत्ता । एवं उपनिज्झानकिच्चवन्तताय, कामच्छन्दादीनं उजुपटिपक्खभावतो च इमेयेव पच्च ज्ञानङ्गभावेन ववत्थिताति । यथाहु-

“उपनिज्झानकिच्चत्ता, कामादिपटिपक्खतो ।

सन्तेसुपि च अज्जेसु, पच्चेव ज्ञानसज्जिता”ति ॥

उपेक्खा पनेत्त सन्तवुत्तिसभावत्ता सुखेव अन्तोगधाति दट्टब्बं । तेनाहु-

“उपेक्खा सन्तवुत्तित्ता, सुखमिच्चेव भासिता”ति^{१९९} ॥

पहानङ्गादिवसेन पनस्स विसेसो उपरि आवि भविस्सति, तथा अरूपावचरलोकुत्तरेसुपि लब्भमानकविसेसो । अथेत्थ कामावचरकुसलेसु विय सङ्गारभेदो कस्मा न गहितो ।

इदम्पि हि केवलं समथानुयोगवसेन पटिलद्धं ससङ्गारिकं, मग्गाधिगमवसेन पटिलद्धं असङ्गारिकन्ति सक्का वतुन्ति? नयिदमेवं मग्गाधिगमवसेनसत्तित्तो पटिलद्धस्सापि अपरभागे परिकम्पवसेनेव उप्पज्जनतो, तस्मा सब्बस्सपि ज्ञानस्स परिकम्पसङ्गातपुब्बाभिसङ्गारेण विना केवलं अधिकारवसेन अनुप्पज्जनतो “ससङ्गारिक”न्तिपि, अधिकारेण च विना केवलं परिकम्पाभिसङ्गारेण अनुप्पज्जनतो “ससङ्गारिक”न्तिपि न सक्का वतुन्ति । अथ वा पुब्बाभिसङ्गारवसेनेव उप्पज्जमानस्स न कदाचि असङ्गारिकभावो सम्भवतीति “असङ्गारिक”न्ति च व्यभिचाराभावतो “ससङ्गारिक”न्ति च न वुत्तन्ति ।

पि-सद्देन चेत्थ चतुक्कपच्चकनयवसेन सुद्धिकनवको, तच्च दुक्खप्पटिपदादन्धाभिज्जा-दुक्खप्पटिपदाखिप्पाभिज्जासुखप्पटिपदादन्धाभिज्जासुखप्पटिपदाखिप्पाभिज्जावसेन पटिपदाचतुक्केण योजेत्वा देसितत्ता चत्तारो नवका, परित्तं परित्तारम्मणं, परित्तं अप्पमाणारम्मणं, अप्पमाणं परित्तारम्मणं, अप्पमाणं अप्पमाणारम्मणन्ति आरम्मणचतुक्केण योजितत्ता चत्तारो नवका, “दुक्खप्पटिपदं दन्धाभिज्जं परित्तं परित्तारम्मणं, दुक्खप्पटिपदं दन्धाभिज्जं परित्तं अप्पमाणारम्मण”न्त्यादिना आरम्मणप्पटिपदाभिस्सकनयवसेन सोळस नवकाति पच्चवीसति नवकाति एवमादिभेदं सङ्गण्हाति ।

२२. ज्ञानविसेसेन निब्बन्तित्तविपाको एकन्ततो तं तं ज्ञानसदिसोवाति विपाकं ज्ञानसदिसमेव विभत्तं । इममेव हि अत्थं दीपेतुं भगवता विपाकनिद्देशेपि कुसलं उद्दिसित्वाव तदनन्तरं महग्गतलोकुत्तरविपाका विभत्ता ।

२५. रूपावचरमानसं ज्ञानभेदेन पच्चहि चतुहि तीहि द्वीहि पुन द्वीहि ज्ञानङ्गेहि सम्पयोगभेदेन पच्चधा पच्चङ्गिकं चतुरङ्गिकं तिवङ्गिकं दुवङ्गिकं पुन दुवङ्गिकन्ति पच्चविधं

होति अविसेसेन, पुन तं पुञ्जपाककिरियानं पच्चके पच्चन्नं पच्चन्नं भेदा पच्चदसधा भवेत्यत्थो ।

रूपावचरचित्तवण्णना निट्ठिता ।

अरूपावचरचित्तवण्णना

२६. इदानि अरूपावचरं आरम्मणभेदेन चतुधा विभजित्वा दस्सेन्तो आह “आकासानञ्चायतना”तिआदि । तत्थ उप्पादादिअन्तरहितताय नास्स अन्तोत्ति अनन्तं, आकासच्च

^{१९९} विभ० अङ्क० २३२; विसुद्धि० २.६४४

तं अनन्तञ्चाति आकासानन्तं, कसिणुग्घाटिमाकासो। “अनन्ताकास”न्ति च वत्तब्बे “अग्याहितो”त्यादीसु विय विसेसनस्स परनिपातवसेन “आकासानन्त”न्ति वुत्तं। आकासानन्तमेव आकासानञ्चं सकत्थे भावपच्चयवसेन। आकासानञ्चमेव आयतनं ससम्पयुत्तधम्मस्स ज्ञानस्स अधिद्वानट्टेन देवानं देवायतनं वियाति आकासानञ्चायतनं। तस्मिं अप्पनाप्पत्तं पटमारुप्पज्झानमि इध “आकासानञ्चायतन”न्ति वुत्तं यथा पथवीकसिणारम्मणं ज्ञानं “पथवीकसिण”न्ति। अथ वा आकासानञ्चं आयतनं अस्साति आकासानञ्चायतनं, ज्ञानं, तेन सम्पयुत्तं कुसलचित्तं आकासानञ्चायतनकुसलचित्तं।

विज्जाणमेव अनन्तं विज्जाणानन्तं, पटमारुप्पविज्जाणं। तज्झि उप्पादादिअन्तवन्तमि अनन्ताकासे पवत्तनतो अत्तानं आरम्भ पवत्ताय भावनाय उप्पादादिअन्तं अगहेत्वा अनन्ततो फरणवसेन पवत्तनतो च “अनन्त”न्ति वुच्चति। विज्जाणानन्तमेव विज्जाणञ्चं आकारस्स रस्सत्तं, न-कारस्स लोपञ्च कत्वा। दुतियारुप्पविज्जाणेन वा अञ्चितब्बं पापुणितब्बन्ति विज्जाणञ्चं, तदेव आयतनं दुतियारुप्पस्स अधिद्वानत्ताति विज्जाणञ्चायतनं। सेसं पुरिमसमं।

नास्स पटमारुप्पस्स किञ्चनं अप्पमत्तकं अन्तमसो भङ्गमत्तमि अवसिट्ठं अत्थीति अकिञ्चनं, तस्स भावो आकिञ्चञ्चं, पटमारुप्पविज्जाणाभावो। तदेव आयतनन्त्यादि पुरिमसदिसं।

ओढारिकाय सञ्जाय अभावतो, सुखुमाय च सञ्जाय अत्थिताय नेवस्स ससम्पयुत्तधम्मस्स सञ्जा अत्थि, नापि असञ्चं अविज्जमानसञ्चन्ति नेवसञ्जानासञ्चं, चतुत्थारुप्पज्झानं। दीघं कत्वा पन “नेवसञ्जानासञ्च”न्ति वुत्तं। नेवसञ्जानासञ्चमेव आयतनं मनायतनधम्मयतनपरियापन्नत्ताति नेवसञ्जानासञ्चायतनं। अथ वा सञ्जाव विपस्सनाय गोचरभावं गत्वा निब्बेदजननसङ्घातस्स पटुसञ्जाकिच्चस्स अभावतो नेवसञ्जा च उण्होदके तेजोधातु विय सङ्घारावसेसुखुमभावेन विज्जमानत्ता न असञ्जाति नेवसञ्जानासञ्जा, सा एव आयतनं इमस्स ससम्पयुत्तधम्मस्स ज्ञानस्स निस्सयादिभावतोति नेवसञ्जानासञ्चायतनं। सञ्जावसेन चेत्य ज्ञानूपलक्खणं निदस्सनमत्तं। वेदनादयोपि हि तस्मिं ज्ञाने नेववेदनावेदनादिकायेवाति। नेवसञ्जानासञ्चायतनेन सम्पयुत्तं कुसलचित्तं नेवसञ्जानासञ्चायतनकुसलचित्तं। पि-सहेन चेत्य आरम्पणप्पटिपदाभिस्सकनयवसेन सोढसक्खतुकदेसन^{३००}, अञ्चमि च पाळियं आगतनयभेदं सङ्गह्हाति।

३०. आरम्पणानं अतिक्कमितब्बानं, कसिणाकासविज्जाणतदभावसङ्घातानं आलम्बितब्बानञ्च आकासादिचतुन्नं गोचरानं पभेदेन आरुप्पमानसं चतुब्बिधं होति। तज्झि यथाक्कमं पञ्चमज्झानारम्मणं कसिणनिमित्तं अतिक्कम्म तदुग्घाटेन लद्धं आकासमालम्बित्वा तमि अतिक्कम्म तत्थ पवत्तं विज्जाणमालम्बित्वा तमि अतिक्कम्म तदभावभूतं अकिञ्चनभावमालम्बित्वा तमि अतिक्कम्म तत्थ पवत्तं ततियारुप्पविज्जाणमालम्बित्वा पवत्तति, न पन रूपावचरकुसलं विय पुरिमपुरिमअङ्गातिक्कमवसेन पुरिमपुरिमस्सापि आरम्पणं गहेत्वा। तेनाहु आचरिया-

“आरम्पणातिक्कमतो, चतस्सोपि भवन्तिमा।

अङ्गातिक्कममेतासं, न इच्छन्ति विभाविनो”ति^{३०१}।

अरूपावचरचित्तवण्णना निट्ठिता।

सोभनचित्तवण्णना निट्ठिता।

^{३००} ध० स० २६५-२६८

^{३०१} ध० स० अट्ठ० २६८

लोकुत्तरचित्तवर्णना

३१. इदानीं लोकुत्तरकुसलं चतुमगगयोगतो, फलञ्च तदनुसम्पत्तिया चतुधा विभजित्वा दस्सेतुं “सोतापत्तिमग्गचित्त” न्यादि वुत्तं। निब्बानं पतिसवनतो उपगमनतो, निब्बानमहासमुद्घनिन्नताय सोतसदिसत्ता वा “सोतो”ति वुच्चति अरियो अट्टङ्गिको मग्गो, तस्स आपत्ति आदितो पज्जनं पापुणं पठमसमन्नागमो सोतापत्ति आ-उपसग्गस्स आदिकम्पनि पवत्तनतो। निब्बानं मग्गेति, निब्बानत्थिकेहि वा मग्गीयति, किलेसे मारेत्तो गच्छतीति वा मग्गो, तेन सम्पयुत्तं चित्तं मग्गचित्तं, सोतापत्तिया लद्धं मग्गचित्तं सोतापत्तिमग्गचित्तं। अथ वा अरियमग्गसोतस्स आदितो पज्जनं एतस्साति सोतापत्ति, पुग्गलो, तस्स मग्गो सोतापत्तिमग्गो, तेन सम्पयुत्तं चित्तं सोतापत्तिमग्गचित्तं।

सकिं एकवारं पटिसन्धिवसेन इयं मनुस्सलोकं आगच्छतीति सकदागामी, इध पत्वा इध परिनिब्बायी, तत्थ पत्वा तत्थ परिनिब्बायी, इध पत्वा तत्थ परिनिब्बायी, तत्थ पत्वा इध परिनिब्बायी, इध पत्वा तत्थ निब्बत्तित्वा इध परिनिब्बायीति पञ्चसु सकदागामीसु पञ्चमको इधाधिप्पेतो। सो हि इतो गन्त्वा पुन सकिं इध आगच्छतीति। तस्स मग्गो सकदागामिमग्गो। किञ्चापि मग्गसमङ्गिनो तथागमनासम्भवतो फलट्टोयेव सकदागामी नाम, तस्स पन कारणभूतो पुरिमुपन्नो मग्गो मग्गन्तरावच्छेदनत्थं फलट्टेन विसेसेत्वा वुच्चति “सकदागामिमग्गो”ति। एवं अनागामिमग्गोति। सकदागामिमग्गेन सम्पयुत्तं चित्तं सकदागामिमग्गचित्तं।

पटिसन्धिवसेन इयं कामधातुं न आगच्छतीति अनागामी, तस्स मग्गो अनागामिमग्गो, तेन सम्पयुत्तं चित्तं अनागामिमग्गचित्तं। अग्गदक्खिण्येयभावेन पूजाविसेसं अरहतीति अरहा, अथ वा किलेससङ्घाता अरयो, संसारचक्कस्स वा अरा किलेसा हता अनेनाति अरहा, पापकरणे रहाभावतो वा अरहा, अट्टमको अरियपुग्गलो, तस्स भावो अरहत्तं, चतुत्थफलस्सेतं अधिवचनं, तस्स आगमनभूतो मग्गो अरहत्तमग्गो, तेन सम्पयुत्तं चित्तं अरहत्तमग्गचित्तं।

पि-सदेन एकेकस्स मग्गस्स नयसहस्सवसेन चतुञ्चं चतुसहस्सभेदं सच्चविभङ्गे^{३०२} आगतं सट्टिसहस्सभेदं नयं हेट्टा वुत्तयेन अनेकविधत्तम्पि सङ्गण्हाति। तत्थायं नयसहस्सभत्तपरिदीपना, कथं? सोतापत्तिमग्गो ताव ज्ञाननामेन पटिपदाभेदं अनामसित्वा केवलं सुञ्जतो अप्पणिहितोति द्विधा विभत्तो, पुन पटिपदाचतुक्केन योजेत्वा पच्चेकं चतुधा विभत्तोति एवं ज्ञाननामेन दसधा विभत्तो। तथा मग्गसतिपट्टानसम्प्यधानइद्विपादइन्द्रियबलबोज्झङ्गसच्चसमथधम्मखन्धआयतनधातु-आहारफस्सवेदनासञ्जाचेतनाचित्तनामेहिपि पच्चेकं दसदसाकारेहि विभत्तो तथा तथा बुज्जनकानं पुग्गलानं वसेन। तस्मा ज्ञानवसेन दसमग्गादीनं एकूनवीसतिया वसेन दस दसाति वीसतिया ठानेसु द्वे नयसतानि होन्ति। पुन तानि चतूहि अधिपतीहि योजेत्वा पच्चेकं चतुधा विभत्तानीति एवं अधिपतीहि अभिस्सेत्वा द्वे सतानि, भिस्सेत्वा अट्ट सतानीति सोतापत्तिमग्गे नयसहस्सं होति, तथा सकदागामिमग्गादीसुपि।

३२. सोतापत्तिया लद्धं, सोतापत्तिस्स वा फलचित्तं विपाकभूतं चित्तं सोतापत्तिफलचित्तं। अरहत्तञ्च तं फलचित्तञ्चाति अरहत्तफलचित्तं।

३४. चतुमगगप्यभेदेनाति इन्द्रियानं अपाटवपाटवतरत्तमभेदेन भिन्नसामत्थियताय सक्कायदिट्टिविचिकिच्छासीलब्धतपरामासानं निरवसेसप्यहानं कामरागव्यापादानं तनुभावापादानं तेसमेव निरवसेसप्यहानं रूपारूपरागमानुद्धच्चाविज्जानं अनवसेसप्यहानन्ति एवं संयोजनप्यहानवसेन चतुब्धिधानं सोतापत्तिमग्गादीनं अट्टङ्गिकमग्गानं सम्पयोगभेदेन चतुमगगसङ्घातं लोकुत्तरकुसलं चतुधा

^{३०२} वि३० २०६; वि३० अट्ट० २०६-२१४

होति, विपाकं पन तस्सेव कुसलस्स फलत्ता तदनुरूपतो तथा चतुधाति एवं अनुत्तरं अत्तनो उत्तरितराभावेन अनुत्तरसङ्घातं लोकुत्तरं चित्तं अट्ठधा मतन्ति योजना।

किरियानुत्तरस्स पन असम्भवतो द्वादसविधता न वुत्ता। कस्मा पन तस्स असम्भवोति? मग्गस्स एकचित्तवर्णिकात्ता। यदि हि मग्गचित्तं पुनप्पुनं उप्पज्जेय्य, तदुप्पत्तिया किरियभावो सक्का वत्तुं। तं पन किलेससमुच्छेदकवसेनेव उपलभितव्वतो एकवारप्पवत्तेनेव च तेन असनिसम्पातेन विय तरुआदीनं समूलविद्धंसनस्स तं तं किलेसानं अच्चन्तं अप्पवत्तिया साधितत्ता पुन उप्पज्जमानेपि कातब्बाभावतो दिट्ठधम्मसुखविहारत्थञ्च फलसमापत्तिया एव निब्बानारम्भणवसेन पवत्तनतो न कदाचि सेक्खानं असेक्खानं वा उप्पज्जति। तस्मा नत्थि सब्बथापि लोकुत्तरकिरियचित्तन्ति।

लोकुत्तरचित्तवण्णना निट्ठिता।

चित्तगणनसङ्गहवण्णना

३५. “द्वादसाकुसलानेव”त्यादि यथावुत्तानं चतुभूमिकचित्तानं गणनसङ्गहो।

३६. एवं जातिवसेन सङ्गहं दस्सेत्वा पुन भूमिवसेन दस्सेत्तुं “चतुपञ्जासथा कामे”त्यादि वुत्तं। कामे भवे चित्तानि चतुपञ्जासथा ईरये, रूपे भवे पन्नरस ईरये, आरुप्पे भवे द्वादस ईरये, अनुत्तरे पन नवविधे धम्मसमुदाये चित्तानि अट्ठधा ईरये, कथेय्यात्थो। एत्थ च कामत्तण्हादिविसयभावेन कामभवादिपरियापन्नानि चित्तानि सकसकभूमितो अञ्जत्थ पवत्तमानानिपि कामभवादीसु चित्तानीति वुत्तानि, यथा मनुस्सित्थिया कुच्छिस्मि निब्बत्तोपि तिरच्छानगतो तिरच्छानयोनिपरियापन्नत्ता तिरच्छानेस्सेव सङ्गहति।

कत्थचि अपरियापन्नानि नवविधलोकुत्तरधम्मसमूहेकदेसभूतानि “रुक्खे साखा”त्यादीसु विय अनुत्तरे चित्तानीति वुत्तानि। अथ वा “कामे, रूपे”ति च उत्तरपदलोपनिहेसो।

आरुप्पे भवानि आरुप्पानि। नत्थि एतेसं उत्तरं चित्तन्ति अनुत्तरानीति उपयोगबहुवचनवसेन कामे कामावचरानि चित्तानि चतुपञ्जासथा ईरये, रूपे रूपावचरानि चित्तानि पन्नरस ईरये, आरुप्पे आरुप्पानि चित्तानि द्वादस ईरये। अनुत्तरे लोकुत्तरानि चित्तानि अट्ठधा ईरयेति एवमेत्थ सम्बन्धो दट्ठव्वो।

३७. इत्थं यथावुत्तेन जातिभेदभिन्नचतुभूमिकचित्तभेदवसेन एकूननवुत्तिप्पभेदं कत्वा मानसं चित्तं विचक्खणा विसेसेन अत्थचक्खणसभावा पण्डिता विभजन्ति। अथ वा एकवीससत्तं एकुत्तरवीसाधिकं सत्तं विभजन्ति।

चित्तगणनसङ्गहवण्णना निट्ठिता।

वित्थारगणनवण्णना

३८. ज्ञानङ्गवसेन पठमज्ज्ञानसदिसत्ता पठमज्ज्ञानञ्च तं सोतापत्तिमग्गचित्तञ्चेति पठमज्ज्ञानसोतापत्तिमग्गचित्तं। पादकज्ज्ञानसम्मसितज्ज्ञानपुग्गलज्ज्ञासयेसुपि, हि अञ्जतरवसेन तं तं ज्ञानसदिसत्ता वित्तक्कादिअङ्गपातुभावेन चत्तारोपि मग्गा पठमज्ज्ञानादिवोहारं लभन्ता पच्चेकं पञ्चधा विभजन्ति। तेनाह “ज्ञानङ्गयोगभेदेना”त्यादि, तत्थ पठमज्ज्ञानादीसु यं यं ज्ञानं समापज्जित्वा ततो ततो बुद्ध्यै सङ्घारे सम्मसन्तस्स बुद्धानगामिनिविपस्सना पवत्ता, तं पादकज्ज्ञानं बुद्धानगामिनिविपस्सनाय पदद्धानभावतो। यं यं ज्ञानं सम्मसन्तस्स सा पवत्ता, तं सम्मसितज्ज्ञानं। “अहो वत्त मे पठमज्ज्ञानसदिसो मग्गो पञ्चङ्गिको, दुत्तियज्ज्ञानादीसु वा अञ्जतरसदिसो चतुरङ्गादिभेदो मग्गो भवेय्या”ति एवं योगावचरस्स उप्पन्नज्ज्ञासयो पुग्गलज्ज्ञासयो नाम।

तत्थ येन पठमज्झानादीसु अञ्जतरं ज्ञानं समापज्जित्वा ततो बुद्ध्य पकिण्णकसङ्घारे सम्मसित्वा मग्गो उप्पादितो होति, तस्स सो मग्गो पठमज्झानादीसु तं तं पादकज्झानसदिसो होति। सचे पन विपस्सनापादकं किञ्चि ज्ञानं नत्थि, केवलं पठमज्झानादीसु अञ्जतरं ज्ञानं सम्मसित्वा मग्गो उप्पादितो होति, तस्स सो सम्मसितज्झानसदिसो होति। यदा पन यं किञ्चि ज्ञानं समापज्जित्वा ततो बुद्ध्य अञ्जतरं सम्मसित्वा मग्गो उप्पादितो होति, तदा पुग्गलज्झासयवसेन द्वीसु अञ्जतरसदिसो होति।

सचे पन पुग्गलस्स तथाविधो अज्झासयो नत्थि, हेट्ठिमहेट्ठिमज्झानतो बुद्ध्य उपरुपरिज्ञानधम्मे सम्मसित्वा उप्पादितमग्गो पादकज्झानं अनपेक्खित्वा सम्मसितज्झानसदिसो होति। उपरुपरिज्ञानतो पन बुद्ध्य हेट्ठिमहेट्ठिमज्झानधम्मे सम्मसित्वा उप्पादितमग्गो सम्मसितज्झानं अनपेक्खित्वा पादकज्झानसदिसो होति। हेट्ठिमहेट्ठिमज्झानतो हि उपरुपरिज्ञानं बलवतरन्ति। वेदनानियमो पन सब्बत्थापि बुद्धानगामिनिविपस्सनानियमेन होति। तथा सुक्खविपस्सकस्स सकलज्झानङ्गनियमो। तस्स हि पादकज्झानादीनं अभावेन तेसं वसेन नियमाभावतो विपस्सनानियमेन पञ्चङ्गिकोव मग्गो होतीति। अपिच समापत्तिलाभिन्नोपि ज्ञानं पादकं अकत्वा पकिण्णकसङ्घारे सम्मसित्वा उप्पादितमग्गोपि विपस्सनानियमेनेव पञ्चङ्गिकोव होतीति अयमेत्थ अट्टकथादितो उद्धटो विनिच्छयसारो। थेरवाददस्सनादिवसप्पवतो पन पपञ्चो अट्टकथादीसु वुत्तनयेन वेदितब्बो। यथा चेत्थ, एवं सब्बत्थापि वित्थारनयो तत्थ तत्थ वुत्तनयेन गहेतब्बो। गन्थभीरुकजनानुगहत्थं पनेत्थ सङ्केपकथा अधिप्पेता।

४२. यथा रूपावचरं चित्तं पठमादिपञ्चविधज्ञानभेदेन ग्हति “पठमज्झान” न्यादिना वुच्चति, तथा अनुत्तरम्मि चित्तं “पठमज्झानसोतापत्तिमग्गचित्त” न्यादिना ग्हति।

आरुप्पञ्चापि उपेक्खेकग्गतायोगेन अङ्गसमताय पञ्चमज्झाने ग्हति, पञ्चमज्झानवोहारं लभतीत्यत्थो। अथ वा रूपावचरं चित्तं अनुत्तरञ्च पठमादिज्ञानभेदे “पठमज्झानकुसलचित्तं, पठमज्झानसोतापत्तिमग्गचित्तन्त्यादिना यथा ग्हति, तथा आरुप्पञ्चापि पञ्चमे ज्ञाने ग्हतीति योजना। आचरियस्सापि हि अयमेव योजना अधिप्पेताति दिस्सति नामरूपपरिच्छेदे उजुकमेव तथा वुत्तता। वुत्तञ्हि तत्थ-

“रूपावचरचित्तानि, ग्हन्तानुत्तरानि च।

पठमादिज्ञानभेदे, आरुप्पञ्चापि पञ्चमे”ति^{२०३} ॥

तस्माति यस्मा रूपावचरं विय अनुत्तरम्मि पठमादिज्ञानभेदे ग्हति, आरुप्पञ्चापि पञ्चमे ग्हति, यस्मा वा ज्ञानङ्गयोगभेदेन एकेकं पञ्चधा कत्वा अनुत्तरं चित्तं चत्तालीसविधन्ति वुच्चति, रूपावचरलोकुत्तरानि विय च पठमादिज्ञानभेदे, तथा आरुप्पञ्चापि पञ्चमे ग्हति, तस्मा पठमादिकमेकेकं ज्ञानं लोकियं तिविधं, लोकुत्तरं अट्टविधन्ति एकादसविधं। अन्ते तु ज्ञानं तेवीसत्तिविधं तिविधरूपावचरद्वादसविधअरूपावचरअट्टलोकुत्तरवसेनात्यत्थो।

४३. पादकज्झानादिवसेन गणनवुट्ठि कुसलविपाकेस्वेव सम्भवतीति तेसमेव गणनं एकवीससतगणनाय अङ्गभावेन दस्सेन्तो आह “सत्तत्तिसा”त्यादि।

इति अभिधम्मत्थविभाविनया नाम अभिधम्मत्थसङ्ग्रहवण्णनाय चित्तपरिच्छेदवण्णना निट्ठिता।

^{२०३} नाम० परि० २४

२. चेतसिकपरिच्छेदवण्णना

सम्पयोगलक्खणवण्णना

१. एवं ताव चित्तं भूमिजातिसम्पयोगसङ्घारज्ञानारम्भणमगगभेदेन यथारहं विभजित्वा इदानीं चेतसिकविभागस्स अनुप्यत्तता पटमं ताव चतुब्बिधसम्पयोगलक्खणसन्दस्सनवसेन चेतसिकलक्खणं टपेत्वा, तदनन्तरं अज्जसमानअकुसलसोभनवसेन तीहि रासीहि चेतसिकधम्मं उद्दिसित्वा, तेसं सोळसहाकारेहि सम्पयोगं, तैत्तिसविधेन सङ्गहज्ज्व दस्सेतुं “एकुप्पादनरोधा चा”त्यादि आरद्धं। चित्तेन सह एकतो उप्पादो च निरोधो च येसं ते एकुप्पादनरोधा। एकं आलम्बणज्ज्व वत्थु च येसं ते एकालम्बणवत्थुका। एवं चतूहि लक्खणेहि चेतोयुत्ता चित्तेन सम्पयुत्ता द्विपज्जास लक्खणा धारणतो धम्मा नियतयोगिन्नो, अनियतयोगिन्नो च चेतसिका मता।

तत्थ यदि एकुप्पादमत्तेनेव चेतोयुत्ताति अधिप्पेता, तदा चित्तेन सह उप्पज्जमानानं रूपधम्मानम्पि चेतोयुत्ता आपज्जेय्याति एकनिरोधगहणं। एवम्पि चित्तानुपरिवत्तिनो विज्जत्तिद्वयस्स पसङ्गो नसक्का निवारेतुं, तथा “एकतो उप्पादो वा निरोधो वा एतेसन्ति एकुप्पादनरोधा”ति परिकम्पेन्तस्स पुरेतरमुप्पज्जित्वा चित्तस्स भङ्गलक्खणे निरुज्जमानानम्पि रूपधम्मानन्ति एकालम्बणगहणं। ये एवं तिविधलक्खणा, ते नियमतो एकवत्थुयेवातिदस्सनत्थं एकवत्थुकगहणन्ति अलमतिप्पपज्जेन।

सम्पयोगलक्खणवण्णना निद्धिता।

अज्जसमानचेतसिकवण्णना

२. कथन्ति सरूपसम्पयोगाकारानं कथेतुकम्प्यतापुच्छा। फुसतीति फस्सो^{२०४}, स्वायं फुसनलक्खणो।

अयज्झि अरूपधम्मोपि समानो आरम्भणे फुसनाकारेनेव पवत्तति, सा चस्स फुसनाकारप्यवत्ति अम्बिलखादकादीनं पस्सन्तस्स परस्स खेलुप्पादादि विय दडुब्बा। वेदयति आरम्भणरसं अनुभवतीति वेदना, सा वेदयितलक्खणा। आरम्भणरसानुभवनज्झि पत्वा तेससम्पयुत्तधम्मा एकदेसमत्तेनेव रसं अनुभवन्ति, एकंसतो पन इस्सरवताय वेदनाव अनुभवति। तथा हेसा “सुभोजनरसानुभवनकराजा विया”ति बुत्ता। सुखादिवसेन पनस्सा भेदं सयमेव वक्खति। नीलादिभेदं आरम्भणं सज्जानाति सज्जं कत्वा जानातीति सज्जा, सा सज्जाननलक्खणा। सा हि उप्पज्जमाना दारुआदीसु वड्ढकिआदीनं सज्जाणकरणं विय पच्छा सज्जाननस्स कारणभूतं आकारं गहेत्वा उप्पज्जति। निमित्तकारिकाय तावेतं युज्जति, निमित्तेन सज्जानन्तिया पन कथन्ति? सापि पुन अपराय सज्जाय सज्जाननस्स निमित्तं आकारं गहेत्वा उप्पज्जतीति न एत्थ कोचि असम्भवो।

चेतेति अत्तना सम्पयुत्तधम्मं आरम्भणे अभिसन्दहति, सङ्गताभिसङ्घरणे वा व्यापारमापज्जतीति चेतना। तथा हि अयमेव अभिसङ्घरणे पधानत्ता विभङ्गे सुत्तन्तभाजिनिये सङ्घारक्खन्धं विभजन्तेन “सङ्घत्तमभिसङ्घरोन्तीति सङ्घारा”ति^{२०५} वत्वा “चक्खुसम्पफस्सजा चेतना”त्यादिना^{२०६} निद्धिटा। सा चेतयितलक्खणा, जेट्ठिसिस्समहावड्ढकिआदयो विय सकिच्चपरकिच्चसाधिकानि दडुब्बं। एकगतावितक्कविचारपीतीनं सरूपविभावनं हेट्ठा आगतमेव।

^{२०४} थ० स० अ० १ धम्मदेसवारफस्सपज्ज्वमकरासिवण्णना

^{२०५} सं० नि० ३.७९

^{२०६} विभ० २१

जीवन्ति तेन सम्पयुक्तधम्माति जीवितं, तदेव सहजातानुपालने आधिपच्चयोगेन इन्द्रियन्ति जीवित्तिन्द्रियं, तं अनुपालनलक्षणं उप्पलादिअनुपालकं उदकं विय। करणं कारो, मनस्मि कारो मनसिकारो, सो चेतसो आरम्भणे सपन्नाहारलक्षणो। वितक्को हि सहजातधम्मानं आरम्भणे अभिनिरोपनसभावता ते तत्थ पक्खिपन्तो विय होति, चेतना अत्तना आरम्भणग्गहणेन यथारुब्हे धम्मेपि तत्थ तत्थ नियोजेन्ती बलनायको विय होति, मनसिकारो ते आरम्भणाभिमुखं पयोजनतो आजानीयानं पयोजनकसारथि वियाति अयमेतेसं विसेसो। धम्मानञ्चि तं तं याथावसरसलक्षणं सभावतो पटिविज्झित्वा भगवता ते ते धम्मा विभत्ताति भगवति सद्दाय “एवं विसेसा इमे धम्मा”ति ओकमेत्वा उग्गहणपरिपुच्छादिवसेन तेसं सभावसमधिगमाय योगो करणीयो, न पन तत्थ तत्थ विष्पटिपज्जन्तेहि सम्मोहो आपज्जितब्बोति अयमेत्थ आचरियानं अनुसासनी। सब्बेसम्पि एकूननवुत्तिचित्तानं साधारणा नियमतो तेसु उप्पज्जनतोति सब्बचित्तसाधारणा नाम।

३. अधिमुच्चनं अधिमोक्खो, सो सन्निट्टानलक्षणो, आरम्भणे निच्चलभावेन इन्द्रखीलो विय दडुब्बो। वीरानं भावो, कम्मं, विधिना ईरयितब्बं पवत्तेतब्बन्ति वा वीरियं, उस्ताहो, सो सहजातानं उपत्थम्भनलक्षणो। वीरियवसेन हि तेसं ओलीनवुत्तिता न होति। एवञ्च कत्वा इमस्स वितक्कादीहि विसेसो सुपाकटो होति। छन्दनं छन्दो, आरम्भणेन अत्थिकता, सो कत्तुकामतालक्षणो। तथा हेस “आरम्भणग्गहणे चेतसो हत्थप्पसारणं विया”ति^{१००} वुच्चति। दानवत्थुविस्सज्जनवसेन पवत्तकालेपि चेस विस्सज्जितब्बेन तेन अत्थिकोव खिपितब्बउसूनं गहणे अत्थिको इस्सासो विय। सोभनेसु तदितरेसु च पकारेन किण्णा विष्पकिण्णाति पकिण्णका।

४. सोभनापेक्खाय इतरे, इतरापेक्खाय सोभना च अञ्जे नाम, तेसं समाना न उद्भवसद्दादयो विय अकुसलादिसभावायेवाति अञ्जसमाना।

अञ्जसमानचेतसिकवण्णना निट्ठिता।

अकुसलचेतसिकवण्णना

५. एवं ताव सब्बचित्तसाधारणवसेन, पकिण्णकवसेन च सोभनेतरसभावे तेरस धम्मे उद्दिसित्वा इदानि हेट्ठा चित्तविभागे निट्ठिद्वानुक्कमेन अकुसलधम्मपरियापन्ने पटमं, ततो सोभनधम्मपरियापन्ने च दस्सेतुं “मोहो”त्यादि वुत्तं। अहेतुका पन आवेणिकधम्मा नत्थीति न ते विसुं वुत्ता। आरम्भणे मुप्फ्ठीति मोहो, अञ्जाणं, सो आरम्भणसभावच्छादनलक्षणो। आरम्भणग्गहणवसप्पवत्तोपि हेस तस्स यथासभावप्पटिच्छादनाकआरेनेव पवत्तति। न हिरीयति न लज्जतीति अहिरिको, पुगलो, धम्मसमूहो वा। अहिरिकस्स भावो अहिरिकं, तदेव अहिरिकं। न ओत्तप्पतीति अनोत्तप्पं। तत्थ गूथतो गामसूकरो विय कायदुच्चरितादितो अजिगुच्छनलक्षणं अहिरिकं, अग्गितो सलभो विय ततो अनुत्तासलक्षणं अनोत्तप्पं। तेनाहु पोराना-

“जिगुच्छति नाहिरिको, पापा गूथाव सूकरो।

न भायति अनोत्तप्पी, सलभो विय पावका”ति॥

उद्भवत्तस भावो उद्भवत्तं, तं चित्तस्स अवूपसमलक्षणं पासाणाभिघातसमुद्भवत्तभस्सं विय। लुब्धतीति लोभो, सो आरम्भणे अभिसङ्गलक्षणो मक्कटालेपो विय।

चित्तस्स आलम्बितुकामतामत्तं छन्दो, लोभो तत्थ अभिगिज्जनन्ति अयमेतेसं विसेसो। “इदमेव सच्चं, मोघमञ्ज”न्ति भिच्छाभिनिवेसलक्षणो दिट्ठि। जाणञ्चि आरम्भणं यथासभावतो जानाति, दिट्ठि यथासभावं विजहित्वा अयाथावतो गण्हातीति अयमेतेसं विसेसो। “सेय्योहमस्मी”त्यादिना मञ्जतीति मानो, सो उण्णतिलक्षणो। तथा हेस

^{१००} ध० स० अट्ठ० १ येवापनकवण्णना

“केतुकम्पतापच्युपद्धानो”ति^{२०८} वुत्तो। दुस्सतीति दोसो, सो चण्डिक्कलक्खणो पहाटासीविसो विय, इस्सतीति इस्सा, सा परसम्पत्तिउसूयनलक्खणा। मच्छरस्स भावो मच्छरियं, “मा इदं अच्छरियं अज्जेसं होतु, मय्मेव होतू”ति पवत्तं वा मच्छरियं, तं अत्तसम्पत्तिनिगूहनलक्खणं। कुच्छितं कतन्ति कुकत्तं। कताकतदुच्चरितसुचरितं।

अकतम्पि हि कुकत्त”न्ति बोहरन्ति “यं मया अकत्तं। तं कुकत्त”न्ति। इध पन कताकत्तं आरब्भ उप्पन्नो विष्पटिसारचित्तुप्पादो कुकत्तं, तस्स भावो कुक्कुच्चं, तं कताकतदुच्चरित-सुचरितानुसोचनलक्खणं। थिनं थिनं, अनुस्साहनावसंसीदनवसेन संहतभावो। मिद्धं मिद्धं, विगतसामत्थियता, असत्तिविधातो वा, तत्थ थिनं चित्तस्स अकम्पज्जतालक्खणं, मिद्धं वेदनादिक्खन्धत्तयस्साति अयमेतेसं वित्तेसो। तथा हि पाठियं^{२०९} “तत्थ कतमं थिनं? या चित्तस्स अकल्लता अकम्पज्जता। तत्थ कतमं मिद्धं? या कायस्स अकल्लता अकम्पज्जता”त्यादिना इमेसं निदेसो पवत्तो। ननु च “कायस्सा”ति वचनतो रूपकायस्सपि अकम्पज्जता मिद्धन्ति तस्स रूपभावोपि आपज्जतीति? नापज्जति, तत्थ तत्थ आचरियेहि आनीतकारणवसेनेवस्स पटिक्खित्तता। तथा हि मिद्धवादिमतप्पटिक्खेपनत्थं तेसं वादनिक्खेपपुब्बकं अडुकथादीसु बहुधा वित्थारन्ति आचरिया। अयं पनेत्थ सङ्गहो-

“केचि मिद्धम्पि रूपन्ति, वदन्तेतं न युज्जति।
 पहातब्बेसु वुत्तत्ता, कामच्छन्दादयो विय ॥
 “पहातब्बेसु अक्खात-मेतं नीवरणेषु हि।
 रूपन्तु न पहातब्ब-मक्खातं दस्सनादिना ॥
 “न तुहं भिक्खवे रूपं, पजहेथा”ति पाठतो।
 पहेय्यभावलेसोपि, यत्थ रूपस्स दिस्सति ॥
 “तत्थ तब्बिसयच्छन्द-रागहानि पकासिता।
 वुत्तञ्जि तत्थ यो छन्द-रागक्खेपोतिआदिकं ॥
 “रूपारूपेषु मिद्धेषु, अरूपं तत्थ देसितं।
 इति चे नत्थि तं तत्थ, अविसेसेन पाठतो ॥
 “सक्का हि अनुमातुं यं, मिद्धं रूपन्ति चिन्तितं।
 तम्पि नीवरणं मिद्ध-भावतो इतरं विय ॥
 “सम्पयोगाभिधाना च, न तं रूपन्ति निच्छयो।
 अरूपीनञ्जि खन्धानं, सम्पयोगो पवुच्चति ॥
 “तथारूप्ये समुप्पत्ति, पाठतो नत्थि रूपता।
 निद्दा खीणासवानन्तु, कायगेलज्जतो सिया”ति ॥

अकुसलचेतसिकवण्णना निद्धिता।

सोभनचेतसिकवण्णना

६. सदहतीति सद्दा, बुद्धादीसु पसादो, सा सम्पयुत्तधम्मानं पसादनलक्खणा उदकप्पसादकमणि विय। सरणं सति, असम्भोसो, सा सम्पयुत्तधम्मानं सारणलक्खणा। हिरीयति कायदुच्चरितादीहि जिगुच्छतीति हिरी, सा पापतो जिगुच्छनलक्खणा। ओत्तप्पतीति ओत्तप्पं, तं

^{२०८} ध० स० अ३० ४००

^{२०९} ध० स० ११६२-११६३

पापतो उतासलक्खणं। अत्तगारववसेन पापतो जिगुच्छनतो कुलवधू विय हिरी, परगारववसेन पापतो उतासनतो वेसिया विय ओत्तपं। लोभप्पटिपक्खो अलोभो, सो आरम्मणे चित्तस्स अलग्गतालक्खणो मुत्तभिक्षु विय। दोसप्पटिपक्खो अदोसो, सो अचण्डिककलक्खणो अनुकूलमितो विय। तेसु धम्मेषु मज्झत्तता तत्रमज्झत्तता, सा चित्तचेतसिकानं अज्झुपेक्खनलक्खणा समप्पवत्तानं अस्सानं अज्झुपेक्खको सारथि विय।

कायस्स पस्सम्भनं कायप्पस्सद्धिं। चित्तस्स पस्सम्भनं चित्तप्पस्सद्धिं। उभोपि चेता कायचित्तदरथवूपसमलक्खणा। कायस्स लहुभावो कायलहुता। तथा चित्तलहुता। ता कायचित्तगरुभाववूपसमलक्खणा। कायस्स मुदुभावो कायमुदुता। तथा चित्तमुदुता। ता कायचित्तथद्धभाववूपसमलक्खणा। कम्मनि साधु कम्मज्जं, तस्स भावो कम्मज्जता, कायस्स कम्मज्जता कायकम्मज्जता। तथा चित्तकम्मज्जता। ता कायचित्तअकम्मज्जभाववूपसमलक्खणा। पगुणस्स भावो पागुज्जं, तदेव पागुज्जता, कायस्स पागुज्जता कायपागुज्जता।

तथा चित्तपागुज्जता। ता कायचित्तानं गेलज्जवूपसमलक्खणा। कायस्स उजुकभावो कायजुकता। तथा चित्तजुकता। ता कायचित्तानं अज्जवलक्खणा। यथाक्कमं पनेता कायचित्तानं सारम्भादिकरथातुक्खोभपटिपक्खपच्चयसमुद्धाना, कायोति चेत्य वेदनादिक्खन्धत्तयस्स गहणं। यस्मा वेते द्वे द्वे धम्माव एकतो हुत्वा यथासकं पटिपक्खधम्मं हनन्ति, तस्मा इधेव दुविधता वुत्ता, न समाधिआदीसु। अपिच चित्तप्पस्सद्धिआदीहि चित्तस्सेव पस्सद्धादिभावो होति, कायप्पस्सद्धिआदीहि पन रूपकायस्सपि तंसमुद्धानपणीतरूपफरणवसेनाति तदत्थसन्दस्सनत्थञ्चेत्थ दुविधता वुत्ता। सोभनानं सब्बेसम्पि साधारणा नियमेन तेसु उप्पज्जनतोति सोभनसाधारणा।

७. सम्मा वदन्ति एतायाति सम्मावाचा, वचीदुच्चरितविरति। सा चतुब्बिधा मुसावादा वेरमणि, पिसुणवाचा वेरमणि, फरुसवाचा वेरमणि, सम्फप्पलापा वेरमणीति। कम्ममेव कम्मन्तो सुत्तन्तवनन्तादयो विय। सम्मा पवत्तो कम्मन्तो सम्माकम्मन्तो, कायदुच्चरितविरति। सा तिविधा पाणातिपाता वेरमणि, अदिन्नादाना वेरमणि, कामेसुमिच्छाचारा वेरमणीति। सम्मा आजीवन्ति एतेनाति सम्माआजीवो, मिच्छाजीवविरति। सो पन आजीवहेतुककायवचीदुच्चरिततो विरमणवसेन सत्तविधो, कुहनलपनादिमिच्छाजीवविरमणवसेन बहुविधो वा। तिविधापि पनेता पच्चेकं सम्पत्तसमादानसमुच्छेदविरतिवसेन तिविधा विरतियो नाम यथावुत्तदुच्चरितेहि विरमणतो।

८. करोति परदुक्खे सति साधूनं हृदयखेदं जनेति, किरति वा विक्खिपति परदुक्खं, किणाति वा तं हिंसति, किरियति वा दुक्खित्तसु पसारियतीति करुणा, सा परदुक्खापनयनकामतालक्खणा। ताय हि परदुक्खं अपनीयतु वा, मा वा, तदाकारेनेव सा पवत्तति। मोदन्ति एतायाति मुदिता, सा परसम्पत्तिअनुमोदनलक्खणा, अप्पमाणसत्तारम्मणत्ता अप्पमाणा, ता एव अप्पमज्जा। ननु च “चतस्सो अप्पमज्जा”ति वक्खति, कस्मा पनेत्थ द्वेयेव वुत्ताति? अदोसतत्रमज्झत्तताहि मेत्तुपेक्खानं गहितत्ता। अदोसोयेव हि सत्तेसु हित्तज्जासयवसप्पवत्तो मेत्ता नाम। तत्रमज्झत्ततायेव तेसु पटिधानुनयवूपसमप्पवत्ता उपेक्खा नाम। तेनाहु पोराणा-

“अब्बापादेन मेत्ता हि, तत्रमज्झत्तताय च।

उपेक्खा गहिता यस्मा, तस्मा न गहिता उभो”ति^{२१०} ॥

पकारेन जानाति अनिच्चादिवसेन अवबुज्झतीति पज्जा, सा एव यथासभाववबोधने आधिपच्चयोगतो इन्द्रियन्ति पञ्चिन्द्रियं। अथ सज्जाविज्जाणपज्जानं किं नानाकरणन्ति? सज्जा ताव नीलादिवसेन सज्जाननमत्तं करोति, लक्खणप्पटिवेधं कातुं न सक्कोति। विज्जाणं लक्खणप्पटिवेधम्मि साधेति, उस्सक्कित्वा पन मगं पापेतुं न सक्कोति। पज्जा पन तिविधम्मि करोति, बालगामिकहेरिज्जिकानं कहापणावबोधनमेत्थ निदस्सनन्ति। जाणविप्पयुत्तसज्जाय चेत्य

^{२१०} अभिध० ७०

आकारगहणवसेन उप्पज्जनकाले विज्जाणं अब्बोहारिकं, सेसकाले बलवं। जाणसम्पयुत्ता पन उभोपि तदनुगतिका होन्ति। सब्बथापि पञ्चवीसतीति सम्बन्धो।

१. “तेरसज्जसमाना”त्यादि तीहि रासीहि वुत्तानं सङ्गहो।

सोभनचेतसिकवण्णना निट्ठिता।

सम्पयोगनयवण्णना

१०. चित्तेन सह अवियुत्ता चित्तावियुत्ता, चेतसिकाति वुत्तं होति। उप्पज्जतीति उप्पादो, चित्तमेव उप्पादो चित्तुप्पादो। अज्जत्थ पन ससम्पयुत्तं चित्तं चित्तुप्पादोति वुच्चति “उप्पज्जति चित्तं एतेनाति उप्पादो, धम्मसमूहो, चित्तञ्च तं उप्पादो चाति चित्तुप्पादो”ति कत्वा। समाहारद्वन्द्वेपि हि पुल्लिङ्गं कत्थचि सहविदू इच्छन्ति।

तेसं चित्तावियुत्तानं चित्तुप्पादेसु पच्चेकं सम्पयोगो इतो परं यथायोगं पवुच्चतीति सम्बन्धो।

अज्जसमानचेतसिकसम्पयोगनयवण्णना

१३. सभावेन अवितक्कत्ता द्विपञ्चविज्जाणानि वज्जितानि एतेहि, तेहि वा एतानि वज्जितानीति द्विपञ्चविज्जाणवज्जितानि, चतुचत्तालीस कामावचरचित्तानि। तेसु चेव एकादससु पठमज्ज्ञानचित्तेसु च वितक्को जायति सेसानं भावनाबलेन अवितक्कत्ताति अधिप्पायो।

१४. तेसु चेव पञ्चपञ्जासवितक्कचित्तेसु, एकादससु दुत्तियज्ज्ञानचित्तेसु चाति छसट्ठिचित्तेसु विचारो जायति।

१५. द्विपञ्चविज्जाणेहि, विचिकिच्छासहगतेन चाति एकादसहि वज्जितेसु अट्टसत्तचित्तेसु अधिमोक्खो जायति।

१६. पञ्चद्वारावज्जनेन, द्विपञ्चविज्जाणेहि, सम्पटिच्छनद्वयेन, सन्तीरणत्तयेन चाति सोळसहि वज्जितेसु तेसत्ततिया चित्तेसु वीरियं जायति।

१७. दोमनस्ससहगतेहिद्वीहि, उपेक्खासहगतेहि पञ्चपञ्जासचित्तेहि, कायविज्जाणद्वयेन, एकादसहि चतुत्थज्ज्ञानेहि चाति सत्तचित्तेहि वज्जितेसु एकपञ्जासचित्तेसु पीति जायति।

१८. अहेतुकेहि अट्टारसहि, मोमूहेहि द्वीहि चाति वीसतिया चित्तेहि वज्जितेसु एकूनसत्तचित्तेसु छन्दो जायति।

१९. ते पनाति पकिण्णकविज्जिता तं सहगता च। यथाक्कमन्ति वितक्कादि छपकिण्णकवज्जिततंसहितकमानुरूपतो। “छसट्ठि पञ्चपञ्जासा”त्यादि एकवीससतगणनवसेन, एकूननवुत्तिगणनवसेन च यथारहं योजेतब्बं।

अज्जसमानचेतसिकसम्पयोगनयवण्णना निट्ठिता।

अकुसलचेतसिकसम्पयोगनयवण्णना

२०. “सब्बाकुसलसाधारणा”ति वत्वा तदेव समत्थेतुं “सब्बेसुपी”त्यादि वुत्तं। यो हि कोचि पाणातिपातादीसु पटिपज्जति, सो सब्बोपि मोहेन तत्थ अनादीनवदस्सावी अहिरिकेन ततो अजिगुच्छन्तो, अनोत्तप्पेन अनोत्तप्पन्तो, उद्धच्चेन अवूपसन्तो च होति, तस्मा ते सब्बाकुसलेसु उपलब्धन्ति।

२१. लोभसहगतचित्तेस्वेवाति एव-कारो अधिकारत्थायपि होतीति “दिट्ठिसहगतचित्तेसू” ति आदीसुपि अवधारणं ददुब्बं। सक्कायादीसु हि अभिनिविसन्तस्स तत्थ ममायनसम्भवतो दिट्ठि लोभसहगतचित्तेस्वेव लब्धति। मानोपि अहमानवसेन पवत्तनतो दिट्ठिसदिसोव पवत्ततीति दिट्ठिया सह एकचित्तुप्पादेन पवत्तति केसरसीहो विय अपरेन तथाविधेन सह एकगुहायं, न चापि दोसमूलादीसु उप्पज्जति अत्तसिनेहसत्त्रिस्सयभावेन एकन्तलोभपदट्टानत्ताति सो दिट्ठिविप्पयुत्तेस्वेव लब्धति।

२४. तथा परसम्पत्तिं उसूयन्तस्स, अत्तसम्पत्तिया च परोहि साधारणभावं अनिच्छन्तस्स, कताकतदुच्चरितसुचरिते अनुसोचन्तस्स च तत्थ तत्थ पटिहनवसेनेव पवत्तनतो इस्सामच्छरियकुक्कुच्चानि पटिघचित्तेस्वेव।

२५. अकम्मज्जतापकतिकस्स तथा सभावतिक्खेसु असङ्घारिकेसु पवत्तनायोगतो थिनभिद्दं ससङ्घारिकेस्वेव लब्धति।

२७. सब्बापुञ्जेस्वेव चत्तारो चेतसिका गता, लोभमूलेयव यथासम्भवं तयो गता, दोसमूलेस्वेव डीसु चत्तारो गता, तथा ससङ्घारेयव द्वयन्ति योजना। विचिकिच्छा विचिकिच्छाचित्ते चाति च-सद्दो अवधारणे। विचिकिच्छा विचिकिच्छाचित्तेयेवाति सम्बन्धो।

अकुसलचेतसिकसम्पयोगनयवण्णना निट्ठिता।

सोभनचेतसिकसम्पयोगनयवण्णना

२९. लोकुत्तरचित्तेसु पादकज्झानादिवसेन कदाचि सम्पासङ्कप्पविरहो सिया, न पन विरतीनं अभावो मग्गस्स कायदुच्चरितादीनं समुच्छेदवसेन, फलस्स च तदनुकूलवसेन पवत्तनतोति वुत्तं “विरतियो पना”त्यादि। सब्बथापीति सब्बेहिपि तं तं दुच्चरितदुराजीवानं विधमनवसम्पवत्तेहि आकारेहि। न हि एतासं लोकियेसु विय लोकुत्तरेसुपि मुसावादादीनं विसुं विसुं पहानवसेन पवत्ति होति सब्बेसमेव दुच्चरितदुराजीवानं तेन तेन मग्गेन केसज्जि सब्बसो, केसज्जि अपायगमनीयादिअवत्थाय पहानवसेन एकक्खणे समुच्छिन्दनतो। ननु चायमत्थो “एकतोवा”ति इमिनाव सिद्धोति? तं न, तिस्सत्तं एकतोवुत्तिपरिदीपनमत्तेन चतुब्बिधवचीदुच्चरितादीनं पटिपक्खाकारप्पवत्तिया अदीपितत्ता।

केचि पन इममत्थं असल्लक्खेत्वाव “सब्बथापी”ति इदं अतिरित्त”न्ति वदन्ति, तत्थ तेसं अज्जाणमेव कारणं। “नियता”ति इमिनापि लोकियेसु विय कदाचि सम्भवं निवारोति। तथा हेता लोकियेसु येवापनकवसेन देसिता, इध पन सरूपेनेव। कामावचरकुसलेस्वेवाति अवधारणेन कामावचरविपाककिरियेसु महग्गतेसु च सम्भवं निवारोति। तथा चेव उपरि वक्खति। कदाचीति मुसावादादिएकेकदुच्चरितेहि पटिविरमणकाले। कदाचि उप्पज्जन्तापि न एकतो उप्पज्जन्ति वीतिक्कमित्तव्ववत्थुसङ्घातानं अत्तनो आरम्भणानं सम्भवापेक्खत्ताति वुत्तं “विसुं विसुं”न्ति।

३०. अप्पनाप्पत्तानं अप्पमज्जानं न कदाचि सोमनस्सरहिता पवत्ति अत्थीति “पञ्चम...पे०... चित्तेसु चा”ति वुत्तं। विनीवरणादिताय महत्तं गतानि, महन्तेहि वा ज्ञायीहि गतानि पत्तानीति महग्गतानि। नाना हुत्वाति भिन्नारम्भणत्ता अत्तनो आरम्भणभूतानं दुक्खितसुखितसत्तानं आपाथगमनापेक्खताय विसुं विसुं हुत्वा। एत्थाति इमेसु कामावचरकुसलचित्तेसु, करुणामुदिताभावनाकाले अप्पनावीथितो पुब्बे परिचयवसेन उपेक्खासहगतचित्तेहिपि परिकम्मं होति, यथा तं पगुणगन्थं सज्जायन्तस्स कदाचि अज्जविहितस्सपि सज्जायन्, यथा च पगुणविपस्सनाय सङ्घारे सम्मसन्तस्स कदाचि परिचयबलेन जाणविप्पयुत्तचित्तेहिपि सम्मसनन्ति उपेक्खासहगतकामावचरेसु करुणामुदितानं असम्भववादो केचिवादो कतो।

अप्यनावीथियं पन तासं एकन्ततो सोमनस्ससहगतेस्वेव सम्भवो दट्टब्बो भिन्नजातिकस्स विय भिन्नवेदनस्सपि आसेवनपच्चयाभावतो।

३२. तयो सोळसचित्तेसूति सम्मावाचादयो तयो धम्मा अट्टलोकुत्तरकामावचरकुसलवसेन सोळसचित्तेसु जायन्ति।

३३. एवं नियतानियतसम्पयोगवसेन वुत्तेसु अनियतधम्मे एकतो दस्सेत्वा सेसानं नियतभावं दीपेतुं “इस्सामच्छेरा”त्यादि वुत्तं। इस्सामच्छेरकुक्कुच्चविरतिकरुणादयो नाना कदाचि जायन्ति, मानो च कदाचि “सेय्योहमस्मी”त्यादिवसम्पवत्तियं जायति। थिनमिद्धं तथा कदाचि अकम्मञ्जतावसम्पवत्तियं सह अञ्जमञ्जं अविष्पयोगिवसेन जायतीति योजना। अथ वा मानो चाति एत्थ च-सहं “सहा”ति एत्थापि योजेत्वा थिनमिद्धं तथा कदाचि सह च ससङ्कारिकपटिघे, दिट्ठिगतविष्पयुत्तससङ्कारिकेसु च इस्सामच्छरियकुक्कुच्चेहि, मानेन च सद्दिं, कदाचि तदितरससङ्कारिकचित्तसम्पयोगकाले, तं सम्पयोगकालेपि वा नाना च जायतीति योजना दट्टब्बा। अपरे पन आचरिया “मानो च थिनमिद्धञ्च तथा कदाचि नाना कदाचि सह च जायती”ति एत्तकमेव योजेसुं।

३४. सेसाति यथावुत्तेहि एकादसहि अनियतेहि इतरे एकचत्तालीस। केचि पन “यथावुत्तेहि अनियतयेवापनकेहि सेसा नियतयेवापनका”ति वण्णेन्ति, तं तेसं मतिमत्तं, इध येवापनकनामेन केसञ्चि अनुद्धत्ता। केवलञ्हेत्थ नियतानियतवसेन चित्तुप्पादेसु यथारहं लब्भमानचेतसिकमत्तसन्दस्सनं आचरियेन कत्तं, न येवापनकनामेन केचि उद्धटाति।

एवं ताव “फस्सादीसु अयं धम्मो एत्तकेसु चित्तेसु उपलब्धी”ति चित्तपरिच्छेदवसेन सम्पयोगं दस्सेत्वा इदानि “इमस्मि चित्तुप्पादे एत्तका चेतसिका”ति चेतसिकरासिपरिच्छेदवसेन सङ्गहं दस्सेतुं “सङ्गहञ्चा”त्यादि वुत्तं।

सोभनचेतसिकसम्पयोगनयवण्णना निट्ठिता।

सम्पयोगनयवण्णना निट्ठिता।

सङ्गहनयवण्णना

३५. “छत्तिंसा”त्यादि तत्थ तत्थ यथारहं लब्भमानकधम्मवसेन गणनसङ्गहो।

३६. पठमज्झाने नियुत्तानि चित्तानि, तं वा एतेसं अत्थीति पठमज्झानिकचित्तानि। अप्पमज्झानं सत्तारम्मणत्ता, लोकुत्तरानञ्च निब्बानारम्मणत्ता वुत्तं “अप्पमज्जावज्जिता”ति। “तथा”ति इमिना अञ्जसमाना, अप्पमज्जावज्जिता सोभनचेतसिका च सङ्गहं गच्छन्तीति आकट्ठति। उपेक्खासहगताति वितक्कविचारपीतिसुखवज्जा सुखडानं पविट्ठुपेक्खाय सहगता। पञ्चकज्झानवसेनाति वितक्कविचारे विसुं विसुं अतिक्कमित्वा भावेन्तस्स नातितिक्खजाणस्स वसेन देसितस्स ज्ञानपञ्चकस्स वसेन। ते पन एकतो अतिक्कमित्वा भावेन्तस्स तिक्खजाणस्स वसेन देसितचतुक्कज्झानवसेन दुतियज्झानिकेसु वितक्कविचारवज्जितानं सम्भवतो चतुधा एव सङ्गहो होतीति अधिप्पायो।

३७. तैत्तिसद्वयं चतुत्थपञ्चमज्झानचित्तेसु।

महग्गतचित्तसङ्गहनयवण्णना

३८. तीसूति कुसलविपाककिरियवसेन तिविधेसु सीलविसुद्धिवसेन सुविसोधितकाय-वचीपयोगस्स केवलं चित्तसमाधानमत्तेन महग्गतज्झानानि पवत्तन्ति, न पन कायवचीकम्पानं

विसोधनवसेन, नापि दुच्चरितदुराजीवानं समुच्छिन्दनपटिप्पस्सम्भनवसेनाति वुत्तं “विरतिवज्जिता”ति। पच्चेकमेवाति विसुं विसुंयेव। पन्नरससूति रूपावचरवसेन तीसु, आरुप्पवसेन द्वादससूति पन्नरससु। अप्पमज्जायो न लब्धन्तीति एत्थ कारणं वुत्तमेव।

महग्गतचित्तसङ्गहनयवण्णना निट्ठिता।

कामावचरसोभनचित्तसङ्गहनयवण्णना

४०. पच्चेकमेवाति एकेकायेव। अप्पमज्जानं हि सत्तारम्पणत्ता, विरतीनञ्च वीतक्कमित्तव्ववत्थुविसयत्ता नत्थि तासं एकचित्तुप्पादे सम्भवोति लोकियविरतीनं एकन्तकुसलसभावत्ता नत्थि अब्याकतेसु सम्भवोति वुत्तं “विरतिवज्जिता”ति। तेनाह “पञ्च सिक्खापदा कुसलायेवा”ति^{२११}। इतरथा सद्दासतिआदयो विय “सिया कुसला, सिया अब्याकता”ति वदेय्य। फलस्स पन मग्गपटिविम्बभूतत्ता, दुच्चरितदुराजीवानं पटिप्पस्सम्भनतो च न लोकुत्तरविरतीनं एकन्तकुसलता युत्ताति तासं तत्थ अग्गहणं। कामावचरविपाकानम्पि एकन्तपरित्तरम्पणत्ता, अप्पमज्जानञ्च सत्तारम्पणत्ता, विरतीनम्पि एकन्तकुसलता वुत्तं “अप्पमज्जाविरतिवज्जिता”ति।

ननु च पञ्जत्तादिआरम्पणम्पि कामावचरकुसलं होतीति तस्स विपाकेनपि कुसलसदिसारम्पणेन भवित्तव्वं यथा तं महग्गतलोकुत्तरविपाकेहीति? नयिदमेवं, कामतण्हाधीनस्स फलभूतत्ता। यथा हि दासिया पुत्तो मातरा इच्छितं कातुं असक्कोत्तो सामिकेनेव इच्छित्तिच्छित्तं करोति, एवं कामतण्हायत्तताय दासिसदिसस्स कामावचरकम्मस्स विपाकभूतं चित्तं तेन गहितारम्पणं अग्गहेत्वा कामतण्हारम्पणमेव गण्हातीति। द्वादसधाति कुसलविपाककिरियभेदेसु पच्चेकं चत्तारो चत्तारो दुक्काति कत्वा तीसु द्वादसधा।

४२. इदानि इमेसु पठमज्जानिकादीहि दुतियज्जानिकादीनं भेदकरधम्मे दस्सेतुं “अनुत्तरे ज्ञानधम्मा”त्यादि वुत्तं। अनुत्तरे चित्ते वितक्कविचारपीतिसुखवसेन ज्ञानधम्मा विसेसका भेदका। मज्झिमे महग्गते अप्पमज्जा, ज्ञानधम्मा च। परित्तेसु कामावचरेसु विरती, जाणपीती च अप्पमज्जा च विसेसका, तत्थ विरती कुसलेहि विपाककिरियानं विसेसका, अप्पमज्जा कुसलकिरियेहि विपाकानं, जाणपीती पन तीसु पठमयुगढादीहि दुतिययुगढादीनन्ति दट्ठव्वं।

कामावचरसोभनचित्तसङ्गहनयवण्णना निट्ठिता।

अकुसलचित्तसङ्गहनयवण्णना

४४. दुतिये असङ्कारिकेति दिट्ठिविप्पयुत्ते असङ्कारिके लोभमानेन तथेव अज्जसमाना, अकुसलसाधारणा च एकूनवीसति धम्माति सम्बन्धो।

४५. ततियेति उपेक्खासहगतदिट्ठिसम्पयुत्ते असङ्कारिके।

४६. चतुत्थेति दिट्ठिविप्पयुत्ते असङ्कारिके।

४७. इस्सामच्छरियकुक्कुच्चानि पनेत्थ पच्चेकमेव योजेतव्वानि भिन्नारम्पणत्तायेवाति अधिप्पायो।

^{२११} वि० ७१५

५०. अधिमोक्खस्स निच्छयाकारप्पवत्तितो देव्हकसभावे विचिकिच्छाचित्ते सम्भवो नत्थीति “अधिमोक्खविरहिता”ति वुत्तं।

५१. एकूनवीसति पटमदुतियअसङ्कारिकेसु, अट्टारस ततियचतुत्थअसङ्कारिकेसु, वीस पञ्चमे असङ्कारिके, एकवीस पटमदुतियससङ्कारिकेसु, वीसति ततियचतुत्थससङ्कारिकेसु, द्वावीस पञ्चमे ससङ्कारिके, पन्नरस मोमूहद्वयेति एवं अकुसले सत्तथा टिताति योजना।

५२. साधारणाति अकुसलानं सब्बेसमेव साधारणभूता चत्तारो समाना च छन्दपीतिअधिमोक्खवज्जिता अज्जसमाना अपरे दसाति एते चुइस धम्मा सब्बाकुसलयोगिनोति पवुच्चन्तीति योजना।

अकुसलचित्तसङ्गहनयवण्णना निट्ठिता।

अहेतुकचित्तसङ्गहनयवण्णना

५४. “तथा”ति इमिना अज्जसमाने पच्चासति।

५६. मनोविज्जाणधातुया विय विसिद्धमननकिच्चायोगतो मननमत्ता धातूति मनोधातु। अहेतुकपटिसन्धियुगळेति उपेक्खासन्तीरणद्वये।

५८. द्वादस हसनचित्ते, एकादस बोद्धब्बनसुखसन्तीरणेसु, दस मनोधातुत्तिकाहेतुक-पटिसन्धियुगळेवसेन पञ्चसु, सत्त द्विपञ्चविज्जाणेसूति अट्टारसाहेतुकेसु चित्तुप्पादेसु सङ्गहो चतुब्बिधो होतीति योजना।

५९. तेत्तिसविधसङ्गहोति अनुत्तरे पञ्च, तथा महग्गते, कामावचरसोभने द्वादस, अकुसले सत्त, अहेतुके चत्तारोति तेत्तिसविधसङ्गहो।

६०. इत्थं यथावुत्तनयेन चित्तावियुत्तानं चेतसिकानं चित्तपरिच्छेदवसेन वुत्तं सम्पयोगञ्च चेतसिकरासिपरिच्छेदवसेन वुत्तं सङ्गहञ्च जत्वा यथायोगं चित्तेन समं भेदं उदिसे “सब्बचित्तसाधारणा ताव सत्त एकूननवुत्तिचित्तेसु उप्पज्जनतो पञ्चेकं एकूननवुत्तिविधा, पकिण्णकेसु वितक्को पञ्चपञ्जासचित्तेसु उप्पज्जनतो पञ्चपञ्जासविधो”त्यादिना कथेय्याति अत्थो।

अहेतुकचित्तसङ्गहनयवण्णना निट्ठिता।

इति अभिधम्मत्थविभाविनया नाम अभिधम्मत्थसङ्गहवण्णनाय चेतसिकपरिच्छेदवण्णना निट्ठिता।

३. पकिण्णकपरिच्छेदवण्णना

१. इदानि यथावुत्तानं चित्तचेतसिकानं वेदनादिविभागतो, तं तं वेदनादिभेदभिन्नचित्तुप्पादविभागतो च पकिण्णकसङ्गहं दस्सेतुं “सम्पयुत्ता यथायोग”न्यादि आरद्धं। यथायोगं सम्पयुत्ता चित्तचेतसिका धम्मा सभावतो अत्तनो अत्तनो सभाववसेन एकूननवुत्तिविधमि चित्तं आरम्भणविजाननसभावसामज्जेन एकविधं, सब्बचित्तसाधारणो फस्सो फुसससभावेन एकविधोत्यादिना तेपञ्जास होन्ति।

२. इदानि तेसं धम्मानं यथारहं वेदना...पे०... वत्थुतो सङ्गहो नाम वेदनासङ्गहादिनामको पकिण्णकसङ्गहो चित्तुप्पादवसेनेव तं तं वेदनादिभेदभिन्नचित्तुप्पादानं वसेनेव न कत्थचि तं विरहेन नीयते उपनीयते, आहरीयतीत्यत्थो।

वेदनासङ्ग्रहवर्णना

३. तथाति तेषु षसु सङ्गहेसु। सुखादिवेदनानं, तं सहगतचित्तुप्पादानञ्च विभागवसेन सङ्गहो वेदनासङ्गहो। दुक्खतो, सुखतो च अञ्जा अदुक्खमसुखा म-कारागमवसेन।

ननु च “द्वेमा, भिक्खवे, वेदना सुखा दुक्खा”ति^{२१२} वचनतो द्वे एव वेदनाति? सच्चं, तं पन अनवज्जपक्खिकं अदुक्खमसुखं सुखवेदनायं, सावज्जपक्खिकञ्च दुक्खवेदनायं सङ्गहेत्वा वुत्तं। यम्पि कत्थचि सुत्ते “यं किञ्चि वेदयितमिदमेत्थ दुक्खस्सा”ति^{२१३} वचनं, तं सङ्घारदुक्खताय सब्बवेदनानं दुक्खसभावत्ता वुत्तं। यथाह- “सङ्घारानिच्चतं, आनन्द, मया सन्धाय भासितं सङ्घारविपरिणामतञ्च यं किञ्चि वेदयितमिदमेत्थ दुक्खस्सा”ति^{२१४}। तस्मा तित्तोयेव वेदनाति दडुब्बा। तेनाह भगवा- “तित्तो इमा, भिक्खवे, वेदना सुखा दुक्खा अदुक्खमसुखा चा”ति^{२१५}। एवं तिविधापि पनेता इन्द्रियदेसनायं “सुखिन्द्रियं दुक्खिन्द्रियं सोमनस्सिन्द्रियं दोमनस्सिन्द्रियं उपेक्खिन्द्रिय”न्ति^{२१६} पञ्चधा देसिताति तं वसेनपेत्थ विभागं दस्सेतुं “सुखं दुक्ख”न्त्यादि वुत्तं। कायिकमानसिकसातासातभेदतो हि सुखं दुक्खञ्च पच्चेकं द्विधा विभजित्वा “सुखिन्द्रियं सोमनस्सिन्द्रियं दुक्खिन्द्रियं दोमनस्सिन्द्रिय”न्ति^{२१७} देसिता, उपेक्खा पन भेदाभावतो उपेक्खिन्द्रियन्ति एकधाव। यथा हि सुखदुक्खानि अञ्जथा कायस्स अनुगहमुपघातञ्च करोन्ति, अञ्जथा मनसो, नेवं उपेक्खा, तस्मा सा एकधाव देसिता, तेनाहु पोराणा-

“कायिकं मानसं दुक्खं, सुखञ्चोपेक्खवेदना।

एकं मानसमेवेति, पञ्चधिन्द्रियभेदतो”ति^{२१८} ॥

तत्थ इट्टफोडुब्बानुभवनलक्खणं सुखं। अनिट्टफोडुब्बानुभवनलक्खणं दुक्खं। सभावतो, परिकम्पतो वा इट्टानुभवनलक्खणं सोमनस्सं। तथा अनिट्टानुभवनलक्खणं दोमनस्सं। मज्झत्तानुभवनलक्खणा उपेक्खा।

५. चतुचत्तालीस पच्चेकं लोकियलोकुत्तरभेदेन एकादसविधत्ता।

७. सेसानीति सुखदुक्खसोमनस्सदोमनस्ससहगतेहि अवसेसानि अकुसलतो ष, अहेतुकतो चुदस, कामावचरसोभनतो द्वादस, पञ्चमज्झानिकानि तेवीसाति सब्बानिपि पञ्चपञ्जास।

वेदनासङ्ग्रहवर्णना निट्टिता।

Dhamma.Digital

हेतुसङ्ग्रहवर्णना

१०. लोभादिहेतूनां विभागवसेन, तं सम्पयुत्तवसेन च सङ्गहो हेतुसङ्गहो। हेतवो नाम षड्विधा भवन्तीति सम्बन्धो। हेतुभावो पन नेसं सम्पयुत्तानं सुप्पत्तिट्टितभावसाधनसङ्घातो मूलभावो। लद्धहेतुपञ्चया हि धम्मा विरुद्धमूला विय पादपा थिरा होन्ति, न अहेतुका विय जलत्तले सेवालसदिसा। एवञ्च कत्वा एते मूलसदिसताय “मूलानी”ति च बुच्चन्ति। अपरे पन “कुसलादीनां कुसलादिभावसाधनं हेतुभावो”ति वदन्ति, एवं सति हेतूनां अत्तनो कुसलादिभावसाधनो अञ्जो हेतु

^{२१२} सं० नि० ४.२६७

^{२१३} सं० नि० ४.२५९

^{२१४} सं० नि० ४.२५९; इतित्तु० अट्ट० ५२

^{२१५} इतित्तु० ५२-५३; सं० नि० ४.२४९-२५१

^{२१६} विभ० २१९

^{२१७} विभ० २१९

^{२१८} सं० सं० ७४

मगितब्बो सिया। अथ सेससम्पयुत्तहेतुपटिवद्धो तेसं कुसलादिभावो, एवम्पि मोमूहवित्तसम्पयुत्तस्स हेतुनो अकुसलभावो अप्पटिवद्धो सिया। अथ तस्स सभावतो अकुसलभावोपि सिया, एवं सति सेसहेतूनम्पि सभावतोव कुसलादिभावोति तेसं विय सम्पयुत्तधम्मानम्पि सो हेतुपटिवद्धो न सिया। यदि च हेतुपटिवद्धो कुसलादिभावो, तदा अहेतुकानं अब्याकतभावो न सियाति अलमतिनिप्पीठनेन। कुसलादिभावो पन कुसलाकुसलानं योनिसोअयोनिसोमनसिकारप्पटिवद्धो। यथाह- “योनिसो, भिक्खवे, मनसिकरोतो अनुप्पन्ना चेव कुसला धम्मा उप्पज्जन्ति, उप्पन्ना च कुसला धम्मा अभिवहन्ती”त्यादि^{१९९}, अब्याकतानं पन अब्याकतभावो निरनुसयसन्तानप्पटिवद्धो कम्मप्पटिवद्धो अविपाकभावप्पटिवद्धो चाति दट्टुब्बं।

१६. इवानि हेतूनं जातिभेदं दस्सेतुं “लोभो दोसो चा”त्यादि वुत्तं।

हेतुसङ्ग्रहवण्णना निद्धिता।

किच्चसङ्ग्रहवण्णना

१८. पटिसन्धादीनं किच्चानं विभागवसेन, तं किच्चवन्तानञ्च परिच्छेदवसेन सङ्ग्रहो किच्चसङ्ग्रहो। भवतो भवस्स पटिसन्धानं पटिसन्धिकिच्चं। अविच्छेदम्पवत्तिहेतुभावेन भवस्स अङ्गभावो भवङ्गकिच्चं। आवज्जनकिच्चादीनि हेट्टा वुत्तवचनत्थानुसारेण यथारहं योजेतब्बानि। आरम्भणे तं तं किच्चसाधनवसेन अनेकक्खत्तुं, एकक्खत्तुं वा जवमानस्स विय पवत्ति जवनकिच्चं। तं तं जवनग्गहितारम्भणस्स आरम्भणकरणं तदारम्भणकिच्चं। निब्बत्तभवतो परिगब्हनं चुतिकिच्चं।

१९. इमानि पन किच्चानि ठानवसेन पाकटानि होन्तीति तं दानि पभेदतो दस्सेतुं “पटिसन्धी”त्यादि वुत्तं, तत्थ पटिसन्धिया ठानं पटिसन्धिठानं। कामं पटिसन्धिविनिमुत्तं ठानं नाम नत्थि, सुखग्गहणत्थं पन “सिलापुत्तकस्स सरिर”त्यादीसु विय अभेदेपि भेदपरिकम्पनाति दट्टुब्बं। एवं सेसेसुपि। दस्सनादीनं पञ्चन्नं विञ्जाणानं ठानं पञ्चविञ्जाणठानं। आदि-सहेन सम्पटिच्छनठानादीनं सङ्ग्रहो।

तत्थ चुतिभवङ्गानं अन्तरा पटिसन्धिठानं। पटिसन्धिआवज्जनानं, जवनावज्जनानं, तदारम्भणावज्जनानं, वोट्टुब्बनावज्जनानं, कदाचि जवनचुतीनं, तदारम्भणचुतीनञ्च अन्तरा भवङ्गठानं। भवङ्गपञ्चविञ्जाणानं, भवङ्गजवनानञ्च अन्तरा आवज्जनठानं। पञ्चद्वारावज्जनसम्पटिच्छनानमन्तरा पञ्चविञ्जाणठानं। पञ्चविञ्जाणसन्तीरणानमन्तरा सम्पटिच्छनठानं। सम्पटिच्छनवोड्डुब्बनानमन्तरा सन्तीरणठानं। सन्तीरणजवनानं, सन्तीरणभवङ्गानञ्च अन्तरा वोड्डुब्बनठानं। वोड्डुब्बनतदारम्भणानं, वोड्डुब्बनभवङ्गानं, वोड्डुब्बनचुतीनं, मनोद्वारावज्जनतदारम्भणानं, मनोद्वारावज्जनभवङ्गानं, मनोद्वारावज्जनचुतीनञ्च अन्तरा जवनठानं। जवनभवङ्गानं, जवनचुतीनञ्च अन्तरा तदारम्भणठानं।

जवनपटिसन्धीनं, तदारम्भणपटिसन्धीनं, भवङ्गपटिसन्धीनं वा अन्तरा चुतिठानं नाम।

२०. द्वे उपेक्खासहगतसन्तीरणानि सुखसन्तीरणस्स पटिसन्धिवसम्पवत्तिभावाभावतोति अधिप्पायो। एवञ्च कत्वा पट्टाने “उपेक्खासहगतं धम्मं पटिच्च उपेक्खासहगतो धम्मो उप्पज्जति न हेतुपच्चया”ति^{२२०} एवमागतस्स उपेक्खासहगतपदस्स विभङ्गे “अहेतुकं उपेक्खासहगतं एकं खन्धं पटिच्च द्वे खन्धा, द्वे खन्धे पटिच्च एको खन्धो, अहेतुकपटिसन्धिकखणे उपेक्खासहगतं एकं खन्धं पटिच्च द्वे खन्धा, द्वे खन्धे पटिच्च एको खन्धो”ति^{२२१} एवं पवत्तिपटिसन्धिवसेन पटिच्चनयो उद्धटो,

^{१९९} अ० नि० १.६७

^{२२०} पट्टा० ४.१३.१७९

^{२२१} पट्टा० ४.१३.१७९

पीतिसहगतसुखसहगतपदविभङ्गे पन “अहेतुकं पीतिसहगतं एकं खन्धं पटिच्चतयो खन्धा...पे०...
 द्वे खन्धा। अहेतुकं सुखसहगतं एकं खन्धं पटिच्च द्वे खन्धा ...पे०... एको खन्धो”ति^{२२२}
 पवत्तिवसेनेव उद्धटो, न पन “अहेतुकपटिसन्धिवखणे”त्यादिना पटिसन्धिवसेन, तस्मा
 यथाधम्मसासने अवचनम्मि अभावमेव दीपेतीति न तस्स पटिसन्धिवसेन पवत्ति अत्थि। यत्थ पन
 लब्भमानस्सपि कस्सचि अवचनं, तत्थ कारणं उपरि आवि भविस्सति।

२५. मनोद्वारावज्जनस्स परित्तरम्मणे दत्तिक्खत्तुं पवत्तमानस्सपि नत्थि जवनकिच्चं तस्स
 आरम्मणरसानुभवनाभावतोति वुत्तं “आवज्जनद्वयवज्जितानी”ति। एवञ्च कत्वा वुत्तं अट्टकथायं
 “जवनट्टाने ठत्वा”ति^{२२३}। इतरथा “जवनं हुत्वा”ति वत्तब्बं सियाति।
 कुसलाकुसलफलकिरियचित्तानीति एकवीसति लोकियलोकुत्तरकुसलानि, द्वादस अकुसलानि, चत्तारि
 लोकुत्तरफलचित्तानि, अट्टारस तेभूभककिरियचित्तानि। एकचित्तक्खणिकम्मि हि लोकुत्तरमग्गादिकं तं
 सभाववन्तताय जवनकिच्चं नाम, यथा एकेकगोचरविसयम्मि सब्बञ्जुतञ्जाणं
 सकलविसयावबोधनसामत्थिययोगतो न कदाचि तं नामं विजहतीति।

२७. एवं किच्चभेदेन वुत्तानेव यथासकं लब्भमानकिच्चगणनवसेन सम्मिण्डेत्वा दस्सेतुं “तेसु
 पना”त्यादि वुत्तं।

३३. पटिसन्धादयो चित्तुप्पादा नामकिच्चभेदेन पटिसन्धादीनं नामानं, किच्चानञ्च भेदेन,
 अथ वा पटिसन्धादयो नाम तन्नामका चित्तुप्पादा पटिसन्धादीनं किच्चानं भेदेन चुट्टस, ठानभेदेन
 पटिसन्धादीनंयेव ठानानं भेदेन दसधा पकासिताति योजना। एककिच्चठानद्विकिच्चठानतिकिच्चठान-
 चतुकिच्चठानपञ्चकिच्चठानानि चित्तानि यथाक्कमं अट्टसट्ठि, तथा द्वे च नव च अट्ट च द्वे चाति
 निदिसेति सम्बन्धो।

किच्चसङ्गहवण्णना निट्ठिता।

द्वारसङ्गहवण्णना

३५. द्वारानं, द्वारप्पवत्तचित्तानञ्च परिच्छेदवसेन सङ्गहो द्वारसङ्गहो। आवज्जनादीनं
 अरूपधम्मनं पवत्तिमुखभावतो द्वारानि वियाति द्वारानि।

३६. चक्खुमेवाति पसादचक्खुमेव।

३७. आवज्जनादीनं मनानं, मनोयेव वा द्वारन्ति मनोद्वारं। भवङ्गन्ति आवज्जनानन्तरं
 भवङ्गं। तेनाहु पोरणा- “सावज्जनं भवङ्गन्तु, मनोद्वारन्ति वुच्चती”ति।

३९. तत्थाति तेसु चक्खादिद्वारेसु चक्खुद्वारे छत्तालीस चित्तानि यथारहमुप्पज्जन्तीति
 सम्बन्धो। पञ्चद्वारावज्जनमेकं, चक्खुविज्जाणादीनि उभयविपाकवसेन सत्त, वोट्टब्बनमेकं,
 कामावचरजवनानि च कुसलाकुसलनिरावज्जनकिरियवसेन एकून्तिस, तदारम्मणानि च
 अग्गहितग्गहणेन अट्टेवाति छत्तालीस। यथारहन्ति इट्ठादिआरम्मणे योनिस्तोअयोनिस्तोमनसिकार-
 निरनुसयसन्तानादीनं अनुरूपवसेन। सब्बथापीति आवज्जनादितदारम्मणपरियोसानेन सब्बेनपि
 पकारेन कामावचरानेवाति योजना। सब्बथापि चतुपञ्जास चित्तानीति वा सम्बन्धो। सब्बथापि तं तं
 द्वारिकवसेन टितानि अग्गहितग्गहणेन चक्खुद्वारिकेसु छत्तालीसचित्तेसु सोतविज्जाणादीनं चतुत्रं
 युगठानं पक्खेपेन चतुपञ्जासपीत्यन्धो।

४१. चक्खादिद्वारेसु अप्पवत्तनतो, मनोद्वारसङ्घातभवङ्गतो आरम्मणन्तरग्गहणवसेन
 अप्पवत्तितो च पटिसन्धादिवसेन पवत्तानि एकून्वीसति द्वारविमुत्तानि।

^{२२२} पट्टा० ४.१३.१४४, १६७

^{२२३} ध० स० अट्ट० ४९८ विपाकुद्वारकथा

४२. द्विपञ्चविज्जाणानि सकसकद्वारे, छब्बीसति महग्गतलोकुत्तरजवनानि मनोद्वारेयेव उप्पज्जनतो छत्तिस चित्तानि यथारहं सकसकद्वारानुरूपं एकद्वारिकचित्तानि।

४५. पञ्चद्वारेसु सन्तीरणतदारम्पणवसेन, मनोद्वारे च तदारम्पणवसेन पवत्तनतो छद्वारिकानि चेव पटिसन्धादिवसप्पवत्तिया द्वारविमुत्तानि च।

४७. पञ्चद्वारिकानि च छद्वारिकानि च पञ्चछद्वारिकानि। छद्वारिकानि च तानि कदाचि द्वारविमुत्तानि चाति छद्वारिकविमुत्तानि। अथ वा छद्वारिकानि च छद्वारिकविमुत्तानि चाति छद्वारिकविमुत्तानीति एकदेससरूपेकसेसो दट्ठब्बो।

द्वारसङ्ग्रहवण्णना निट्ठिता।

आलम्बणसङ्ग्रहवण्णना

४८. आरम्पणानं सरूपतो, विभागतो, तं विसयचित्ततो च सङ्ग्रहो आलम्बणसङ्ग्रहो। वण्णविकारं आपज्जमानं रूपयति हृदयङ्गतभावं पकासेतीति रूपं, तदेव दुब्बलपुरिसेन दण्डादि विय चित्तचेतसिकेहि आलम्बीयति, तानि वा आगन्त्वा एत्थ रमन्तीति आरम्पणन्ति रूपारम्पणं। सद्दीयतीति सद्दो, सोयेव आरम्पणन्ति सद्दारम्पणं। गन्धयति अत्तनो वत्थुं सूवेति “इदमेत्थ अत्थी”ति पेसुज्जं करोन्तं विय होतीति गन्धो, सोयेव आरम्पणं गन्धारम्पणं। रसन्ति तं सत्ता अस्सादेन्तीति रसो, सोयेव आरम्पणं रसारम्पणं। फुसीयतीति फोट्ठब्बं, तदेव आरम्पणं फोट्ठब्बारम्पणं। धम्मोयेव आरम्पणं धम्मारम्पणं।

४९. तथाति तेसु रूपादिआरम्पणेषु, रूपमेवाति वण्णायतनसङ्घातं रूपमेव। सद्दादयोति सद्दायतनादिसङ्घाता सद्दादयो, आपोधातुवज्जितभूतत्तयसङ्घातं फोट्ठब्बायतनञ्च।

५०. पञ्चारम्पणपसादानि ठपेत्वा सेसानि सोळस सुखुमरूपानि।

५१. पच्चुप्पन्नन्ति वत्तमानं।

५२. छब्धिधम्पीति रूपादिवसेन छब्धिधम्पि। विनासाभावतो अतीतादिकालवसेन नवत्तब्बता निब्बानं, पज्जति च कालविमुत्तं नाम। यथारहन्ति कामावचरजवनअभिज्जासेस-महग्गतादिजवनानं अनुरूपतो। कामावचरजवनानञ्छि हसितुप्पादवज्जानं छब्धिधम्पि तिकालिकं, कालविमुत्तञ्च आरम्पणं होति। हसितुप्पादस्स तिकालिकमेव। तथा हिस्स एकन्तपरित्तरम्पणतं वक्खति। दिब्बचक्खादिवसप्पवत्तस्स पन अभिज्जाजवनस्स यथारहं छब्धिधम्पि तिकालिकं, कालविमुत्तञ्च आरम्पणं होति। विभागो पनेत्थ नवमपरिच्छेदे आवि भविस्सति। सेसानं पन कालविमुत्तं, अतीतञ्च यथारहमारम्पणं होति।

५३. द्वार...पे०... सङ्घातानं छब्धिधम्पि आरम्पणं होतीति सम्बन्धो, तं पन नेसं आरम्पणं न आवज्जनस्स विय केनचि अग्गहितमेव गोचरभावं गच्छति, न च पञ्चद्वारिकजवनानं विय एकन्तपच्चुप्पन्नं, नापि मनोद्वारिकजवनानं विय तिकालिकमेव, अविसेसेन कालविमुत्तं वा, नापि मरणासन्नतो पुरिमभागजवनानं विय कम्मकम्मनिमित्तादिवसेन आगमसिद्धिवोहारविनिमुत्तन्ति आह “यथासम्भवं...पे०... सम्मत”न्ति। तत्थ यथासम्भवन्ति तं तं भूमिकपटिसन्धिभवङ्गुत्तीनं तं तं द्वारगगहितादिवसेन सम्भवानुरूपतो। कामावचरानञ्छि पटिसन्धिभवङ्गानं ताव रूपादिपञ्चारम्पणं छद्वारगगहितं यथारहं पच्चुप्पन्नमतीतञ्च कम्मनिमित्तसम्मतमारम्पणं होति, तथा चुत्तिचित्तस्स अतीतमेव। धम्मारम्पणं पन तेसं तिण्णन्नम्पि मनोद्वारगगहितमेव अतीतं कम्मकम्मनिमित्तसम्मतं, तथा रूपारम्पणं एकमेव मनोद्वारगगहितं एकन्तपच्चुप्पन्नं गतिनिमित्तसम्मतन्ति एवं कामावचरपटिसन्धादीनं यथासम्भवं छद्वारगगहितं पच्चुप्पन्नमतीतञ्च कम्मकम्मनिमित्तगतिनिमित्त-सम्मतमारम्पणं होति।

महग्गतपटिसन्धादीसु पन रूपावचरानं, पठमततियारूपानञ्च धम्मारम्भणमेव मनोद्वारग्गहितं पञ्जत्तिभूतं कम्मनिमित्तसम्मत्तं, तथा दुतियचतुत्थारूपानं अतीतमेवाति एवं महग्गतपटिसन्धि- भवङ्गचुतीनं मनोद्वारग्गहितं पञ्जत्तिभूतं, अतीतं वा कम्मनिमित्तसम्मत्तमेव आरम्भणं होति।

येभ्य्येन भवन्तरे छद्वारग्गहितान्ति बाहुल्लेन अतीतानन्तरभवे मरणासन्नपवत्त- छद्वारिकजवनेहि गहितं। असञ्जीभवतो चुतानञ्जि पटिसन्धिविसयस्स अनन्तरातीतभवे न केनचि द्वारेण गहणं अत्थीति तदेवेत्थ येभ्य्यग्गहणेन ब्यभिचारितं। केवलञ्जि कम्मबलेनेव तेसं पटिसन्धिया कम्मनिमित्तादिकमारम्भणं उपट्टाति। तथा हि सच्चसङ्घे असञ्जीभवतो चुतस्स पटिसन्धिनिमित्तं पुच्छित्वा-

“भवन्तरकत्तं कम्मं, यमोकासं लभे ततो।

होति सा सन्धि तेनेव, उपट्टापित्तगोचरे”ति^{२२४} ॥

केवलं कम्मबलेनेव पटिसन्धिगोचरस्स उपट्टानं वुत्तं। इतरथा हि जवनग्गहितस्सपि आरम्भणस्स कम्मबलेनेव उपट्टापियमानत्ता “तेनेवा”ति सावधारणवचनस्स अधिप्यायसुञ्जता आपज्जेय्याति। ननु च तेसम्पि पटिसन्धिगोचरो कम्मभवे केनचि द्वारेण जवनग्गहितो सम्भवतीति? सच्चं सम्भवति कम्मकम्मनिमित्तसम्मत्तो, गतिनिमित्तसम्मत्तो पन सब्बेसम्पि मरणकालेयेव उपट्टातीति कुतो तस्स कम्मभवे गहणसम्भवो। अपिचेत्थ मरणासन्नपवत्तजवनेहि गहितमेव सन्धाय “छद्वारग्गहित”न्ति वुत्तं, एवञ्च कत्त्वा आचरियेन इमस्मियेव अधिकारे परमत्थविनिच्छये वुत्तं-

“मरणासन्नसत्तस्स, यथोपट्टित्तगोचरं।

छद्वारेसु तमारब्भ, पटिसन्धि भवन्तरे”ति^{२२५} ॥

“पच्चुप्पन्न”न्त्यादिना अनागतस्स पटिसन्धिगोचरभावं निवारति। न हि तं अतीतकम्म- कम्मनिमित्तानि विय अनुभूतं, नापि पच्चुप्पन्नकम्मनिमित्तगतिनिमित्तानि विय आपाथगतञ्च होतीति, कम्मकम्मनिमित्तादीनञ्च सरूपं सयमेव वक्खति।

५४. तेसुति रूपादिपच्चुप्पन्नादिकम्मादिआरम्भणेषु विञ्जाणेषु। रूपादीसु एकेकं आरम्भणं एतेसन्ति रूपादिएकेकारम्भणानि।

५५. रूपादिकं पञ्चविधम्पि आरम्भणमेतस्साति रूपादिपञ्चारम्भणं।

५६. सेसानीति द्विपञ्चविञ्जाणसम्पटिच्छनेहि अवसेसानि एकादस कामावचरविपाकानि। सब्बथापि कामावचरारम्भणानीति सब्बेनपि छद्वारिकद्वारविभुत्तछद्वारम्भणवसप्पवत्ताकारेण निब्बत्तानिपि एकन्तकामावचरसभावछद्वारम्भणगोचरानि। एत्थ हि विपाकानि ताव सन्तीरणदिवसेन रूपादिपञ्चारम्भणे, पटिसन्धादिवसेन छद्वारम्भणसङ्घाते कामावचरारम्भणेयेव पवत्तन्ति।

हसनचित्तम्पि पधानसारूप्यद्वानं दिस्वा तुस्सन्तस्स रूपादिपञ्चारम्भणे, भण्डभाजनद्वाने महासदं सुत्वा “एवरूपा लोलुप्पतण्हा मे पहीना”ति तुस्सन्तस्स सद्धारम्भणे, गन्धादीहि चेतियपूजनकाले तुस्सन्तस्स गन्धारम्भणे, रससम्पन्नं पिण्डपातं सन्नद्वाराही भाजेत्वा परिभुञ्जनकाले तुस्सन्तस्स रसारम्भणे, आभिसमाचारिकवत्तपरिपूरणकाले तुस्सन्तस्स फोट्टुब्बारम्भणे, पुब्बेनिवासजाणादीहि गहितकामावच- रधम्मं आरब्भ तुस्सन्तस्स धम्मारम्भणेति एवं परित्तधम्मपरियापन्नेस्वेव छसु आरम्भणेषु पवत्तन्ति।

५७. द्वादसाकुसलअट्टजाणविप्पयुत्तजवनवसेन वीसति चित्तानि अत्तनो जठभावतो लोकुत्तरधम्मे आरब्भ पवत्तित्तुं न सक्कोन्तीति नवविधलोकुत्तरधम्मे वज्जेत्वा तेभूमकानि, पञ्जत्तिञ्च आरब्भ पवत्तन्तीति आह “अकुसलानि चेवा”त्यादि। इमेसु हि अकुसलतो चत्तारो दिट्ठिगतसम्पयुत्तचित्तुप्पादा परित्तधम्मे आरब्भ परामसनअस्सादनाभिनन्दनकाले कामावचरारम्भणा,

^{२२४} स० स० १७१

^{२२५} परम० वि० ८९

तेनेवाकारेण सत्तवीसति महग्गतधम्मे आरब्ध पवत्तियं महग्गतारम्भणा, सम्भुत्तिधम्मे आरब्ध पवत्तियं पञ्जत्तारम्भणा। दिट्ठिविप्पयुत्तचित्तुप्पादापि तेयेव धम्मे आरब्ध केवलं अस्सादनाभिनन्दनवसेन पवत्तियं, पटिघसम्पयुत्ता च दुस्सनविप्पटिसारवसेन, विचिकिच्छासहगतो अनिट्ठुङ्गमनवसेन, उद्धच्चसहगतो विक्खिणवसेन, अवूपसमवसेन च पवत्तियं परित्तमहग्गतपञ्जत्तारम्भणो, कुसलतो चत्तारो, किरियतो चत्तारोति अट्टु जाणविप्पयुत्तचित्तुप्पादा सेक्खपुधुज्जनखीणासवानं असक्कच्चदानपच्चवेक्खणधम्मस्सवनादीसु परित्तधम्मे आरब्ध पवत्तिकाले कामावचरारम्भणा, अतिपगुणज्ज्ञानपच्चवेक्खणकाले महग्गतारम्भणा, कसिणनिमित्तादीसु परिकम्मादिकाले पञ्जत्तारम्भणाति दट्टुब्बं।

५८. अरहत्तमग्गफलवज्जितसम्भारम्भणानि सेक्खपुधुज्जनसन्तानेस्वेव पवत्तनतो। सेक्खापि हि ठपेत्वा लोकियचित्तं अरहतो मग्गफलसङ्घातं पाटिपुग्गलिकचित्तं जानितुं न सक्कोन्ति अनधिगतत्ता, तथा पुधुज्जनादयोपि सोतापन्नादीनं, सेक्खानं पन अत्तनो अत्तनो मग्गफलपच्चवेक्खणेसु परसन्तानगतमग्गफलारम्भणाय अभिञ्जाय परिकम्मकाले, अभिञ्जाचित्तेनेव मग्गफलानं परिच्छिन्दनकाले च अत्तनो अत्तनो समानानं, हेट्टिमानञ्च मग्गफलधम्मे आरब्ध कुसलजवनानं पवत्ति अत्थीति अरहत्तमग्गफलस्सेव पटिक्खेपो कतो। कामावचरमहग्गतपञ्जत्तिनिब्बानानि पन सेक्खपुधुज्जनानं सक्कच्चदानपच्चवेक्खणधम्मस्सवन-सङ्कारसम्मसनकसिणपरिकम्मादीसु तं तदारम्भणिकाभिञ्जानं परिकम्मकाले, गोत्रभुवोदानकाले, दिब्बचक्खादीहि रूपविज्ञानादिकाले च कुसलजवनानं गोचरभावं गच्छन्ति।

५९. सब्बथापि सम्भारम्भणानीति कामावचरमहग्गतसम्भलोक्तरपञ्जत्तित्तेनेव सब्बथापि सम्भारम्भणानि, न पन अकुसलादयो विय सम्पदेससम्भारम्भणानीत्यत्थो। किरियजवनानञ्चि सम्भञ्जुतञ्जाणादिवसम्पवत्तियं, वोट्टुब्बनस्स च तं तं पुरेचारिकवसम्पवत्तियं न च किञ्चि अगोचरं नाम अत्थि।

६०. पटमत्तियारुप्पारम्भणत्ता आरुप्पेसु दुतियचतुत्थानि महग्गतारम्भणानि।

६१. सेसानि...पे०... पञ्जत्तारम्भणानीति पन्नरस रूपावचरानि, पटमत्तियारुप्पानि चाति एकवीसति कसिणादिपञ्जतीसु पवत्तनतो पञ्जत्तारम्भणानि।

६२. तेवीसतिकामावचरविपाकपञ्चद्वारावज्जनहसनवसेन पञ्चवीसति चित्तानि परित्थम्हि कामावचरारम्भणे येव भवन्ति। कामावचरञ्चि महग्गतादयो उपादाय मन्दानुभावताय परिसमन्ततो अत्तं खण्डितं वियाति परित्तं। “छ चित्तानि महग्गतेयेवा”त्यादिना सब्बत्थ सावधारणयोजना दट्टुब्बा।

आलम्बणसङ्ग्रहवण्णना निट्ठिता।

वत्थुसङ्ग्रहवण्णना

६४. वत्थुविभागतो, तब्बत्थुकचित्तपरिच्छेदवसेन च सङ्ग्रहो वत्थुसङ्ग्रहो। वसन्ति एतेसु चित्तचेतसिका तन्निससयत्ताति वत्थूनि।

६५. तानि कामलोके सब्बानिपि लब्धन्ति परिपुण्णिन्द्रियस्स तत्थेव उपलब्धनतो। पि-सट्ठेन पन अन्धबधिरादिवसेन केसञ्चि असम्भवं दीपेति।

६६. घानादित्तयं नत्थि ब्रह्मानं कामविरागभावनावसेन गन्धरसफोटुब्बेसु विरत्तताय तब्बिसयप्पसादेसुपि विरागसभावतो। बुद्धदस्सनधम्मस्सवनादिअत्थं पन चक्खुसोतेसु अविरत्तभावतो चक्खादिद्वयं तत्थ उपलब्धन्ति।

६७. अरूपलोके सब्बानिपि छ वत्थूनि न संविज्जन्ति अरूपीनं रूपविरागभावनाबलेन तत्थ सब्बेन सब्बं रूपप्पवत्तिया अभावतो।

६८. पञ्चविज्ञाणानेव निस्सत्तनिज्जीवडेन धातुयोति पञ्चविज्ञाणधातुयो ।

६९. मननमत्ता धातु मनोधातु ।

७०. मनोयेव विसिद्धविज्ञाननकिच्चयोगतो विज्ञाणं निस्सत्तनिज्जीवडेन धातु चाति मनोविज्ञाणधातु । मनसो विज्ञाणधातूति वा मनोविज्ञाणधातु । सा हि मनतोयेव अनन्तरपच्चयतो सम्भूयमनसोयेव अनन्तरपच्चयभूताति मनसो सम्बन्धिनी होति । सन्तीरणत्तयस्स, अट्टमहाविपाकानं, पटिघट्टयस्स, पटममग्गस्स, हसितुप्पादस्स, पन्नरसरूपावचरानञ्च वसेन पवत्ता यथावुत्तमनोधातुपञ्चविज्ञाणधातूहि अवसेसा मनोविज्ञाणधातु सङ्घाता च तिस धम्मा न केवलं मनोधातुयेव, तथा हृदयं निस्सायेव पवत्तन्तीति सम्बन्धो ।

सन्तीरणमहाविपाकानि हि एकादस द्वाराभावतो, किच्चाभावतो च आरुप्पे न उप्पज्जन्ति । पटिघट्टस्स अनीवरणावत्थस्स अभावतो तं सहगतं चित्तद्वयं रूपलोकेपि नत्थि, पगेव आरुप्पे । पटममग्गोपि परतोयोसपच्चयाभावे सावकानं अनुप्पज्जनतो, बुद्धपच्चेकबुद्धानञ्च मनुस्सलोकतो अञ्जत्थ अनिब्बत्तनतो, हसनचित्तञ्च कायाभावतो, रूपावचरानि अरूपीनं रूपविरागभावनावसेन तदारम्पणेषु ज्ञानेषुपि विरत्तभावतो अरूपभवे न उप्पज्जन्तीति सब्बानिपि एतानि तैत्तिस चित्तानि हृदयं निस्सायेव पवत्तन्ति ।

७१. पञ्चरूपावचरकुसलतो अवसेसानि द्वादस लोकियकुसलानि, पटिघट्टयतो अवसेसानि दस अकुसलानि, पञ्चद्वारावज्जनहसनरूपावचरकिरियेहि अवसेसानि तेरस किरियचित्तानि, पटममग्गतो अवसेसानि सत्त अनुत्तरानि चाति इमेसं वसेन द्वेचत्तालीसविधा मनोविज्ञाणधातुसङ्घाता धम्मा पञ्चवोकारभववसेन हृदयं निस्साय वा, चतुवोकारभववसेन अनिस्सायवा पवत्तन्ति ।

७२. कामे भवे छवत्थुं निस्सिता सत्त विज्ञाणधातुयो, रूपे भवे तिवत्थुं निस्सिता धानविज्ञाणादित्तयवज्जिता चतुब्बिधा विज्ञाणधातुयो, आरुप्पे भवे अनिस्सिता एका मनोविज्ञाणधातु मताति योजना ।

७४. कामावचरविपाकपञ्चद्वारावज्जनपटिघट्टयहसनवसेन सत्तवीसति कामावचरानि, पन्नरस रूपावचरानि, पटममग्गोति तेचत्तालीस निस्सायेव जायरे, ततोयेव अवसेसा आरुप्पविपाकवज्जिता द्वेचत्तालीस निस्साय च अनिस्साय च जायरे, पाकारुप्पा चत्तारो अनिस्सितायेवाति सम्बन्धो ।

वत्थुसङ्गहवण्णना निद्विता ।

इति अभिधम्मत्थविभाविनिया नाम अभिधम्मत्थसङ्गहवण्णनाय पकिण्णकपरिच्छेदवण्णना निद्विता ।

४. वीथिपरिच्छेदवण्णना

१. इच्चेवं यथावुत्तनयेन चित्तुप्पादानं चतुब्बं खन्धानं उत्तरं वेदनासङ्गहादिविभागतो उत्तमं पभेदसङ्गहं कत्वा पुन कामावचरादीनं तिण्णं भूमीनं, द्विहेतुकादिपुग्गलानञ्च भेदेन लक्खित्तं “इदं एत्तकेहि परं, इमस्स अनन्तरं एत्तकानि चित्तानी”ति एवं पुब्बापरचित्तेहि नियामितं पटिसन्धिपवत्तीसु चित्तुप्पादानं पवत्तिसङ्गहं नाम तन्नामकं सङ्गहं यथासम्भवतो समासेन पवक्खापीति योजना ।

२. वत्थुद्वारारम्पणसङ्गहा हेट्टा कथितापि परिपुण्णं कत्वा पवत्तिसङ्गहं दस्सेतुं पुन निक्खित्ता ।

३. विसयानं द्वारेसु, विसयेसु च चित्तानं पवत्ति विसयप्पवत्ति ।

४. तत्थाति तेसु छसु छक्केसु ।

वीथिछक्कवण्णना

६. “चक्खुद्वारे पवत्ता वीथि चित्तपरम्परा चक्खुद्वारवीथी”त्यादिना द्वारवसेन, “चक्खुविज्जाणसम्बन्धिनी वीथि तेन सह एकारम्भणएकद्वारिकताय सहचरणभावतो चक्खुविज्जाणवीथी”त्यादिना विज्जाणवसेन वा वीथीनं नाम योजना कातब्बाति दस्सेतुं “चक्खुद्वारवीथी”त्यादि वुत्तं।

वीथिछक्कवण्णना निट्ठिता।

वीथिभेदवण्णना

७. “अतिमहन्त”न्यादीसु एकचित्तक्खणातीतं हुत्वा आपाधागतं सोळसचित्तक्खणायुकं अतिमहन्तं नाम। द्वितित्तक्खणातीतं हुत्वा पन्नरसचुद्दसचित्तक्खणायुकं महन्तं नाम। चतुचित्तक्खणतो पट्टाय याव नवचित्तक्खणातीतं हुत्वा तेरसचित्तक्खणतो पट्टाय याव अट्टचित्तक्खणायुत्तं परित्तं नाम। दसचित्तक्खणतो पट्टाय याव पन्नरसचित्तक्खणातीतं हुत्वा सत्तचित्तक्खणतो पट्टाय याव द्वितित्तक्खणायुकं अतिपरित्तं नाम। एवञ्च कत्वा वक्खति “एकचित्तक्खणातीतानी”त्यादि। विभूतं पाकटं। अविभूतं अपाकटं।

वीथिभेदवण्णना निट्ठिता।

पञ्चद्वारवीथिवण्णना

८. कथन्ति केन पकारेण अतिमहन्तादिवसेन विसयववत्थानन्ति पुच्छित्वा चित्तक्खणवसेन तं पकासेतुं “उप्पादटिती”त्यादि आरद्धं। उप्पज्जनं उप्पादो, अत्तपटिलाभो।

भञ्जनं भङ्गो, सरूपविनासो। उभिन्नं वेमज्जे भङ्गाभिमुखप्पवत्ति टिति नाम। केचि पन चित्तस्स टित्तिक्खणं पटिसेधेन्ति। अयञ्चि नेसं अधिप्पायो- चित्तयमके^{२२६} “उप्पन्नं उप्पज्जमान”न्ति एवमादिपदानं विभङ्गे “भङ्गक्खणे उप्पन्नं, नो च उप्पज्जमानं, उप्पादक्खणे उप्पन्नञ्चेव उप्पज्जमानञ्चा”त्यादिना^{२२७} भङ्गुप्पादाव कथिता, न टित्तिक्खणो। यदि च चित्तस्स टित्तिक्खणोपि अत्थि, “टित्तिक्खणे भङ्गक्खणे चा”ति वत्तब्बं सिया। अथ मतं “उप्पादो पञ्जायति, वयो पञ्जायति, टित्तस्स अञ्जथत्तं पञ्जायतीति”^{२२८} सुत्तन्तपाटतो टित्तिक्खणो अत्थी”ति, तत्थपि एकस्मि धम्मो अञ्जथत्तस्स अनुप्पज्जनतो, पञ्जाणवचनतो च पबन्धटित्तियेव अधिप्पेता, न च खणठिति, न च अभिधम्मो लब्धमानस्स अवचने कारणं अत्थि, तस्मा यथाधम्मसासने अवचनम्मि अभावमेव दीपेतीति। तत्थ वुच्चते यथेव हि एकधम्मधारभावेपि उप्पादभङ्गानं अञ्जो उप्पादक्खणो, अञ्जो भङ्गक्खणोति उप्पादावत्थाय भिन्ना भङ्गावत्था इच्छिता। इतरथा हि “अञ्जोयेव धम्मो उप्पज्जति, अञ्जो निरुज्जती”ति आपज्जेय्य, एवमेव उप्पादभङ्गावत्थाहि भिन्ना भङ्गाभिमुखावत्थापि इच्छितब्बा, सा टिति नाम। पाळियं पन वेनेय्यज्जासयानुरोधेन नयदस्सनवसेन सा न वुत्ता। अभिधम्मदेसनापि हि कदाचि वेनेय्यज्जासयानुरोधेन पवत्तति, यथा रूपस्स उप्पादो उपचयो सन्ततीति द्विधा भिन्दित्वा देसितो, सुत्ते च “तीणिमानि, भिक्खवे, सङ्कतस्स सङ्कतलक्खणानि। कतमानि तीणि? उप्पादो पञ्जायति, वयो पञ्जायति, टित्तस्स अञ्जथत्तं पञ्जायती”ति एवं

^{२२६} विभ० मूलटी० २० पकिण्णककथावण्णना; यम० २.चित्तयमक.८१, १०२

^{२२७} यम० २.चित्तयमक.८१, १०२

^{२२८} अ० नि० ३.४७

सङ्गतधम्मस्सेव लक्खणदस्सनत्थं उप्पादादीनं वुत्तता न सक्का पबन्धस्स पञ्जत्तिसभावस्स असङ्गतस्स ठिति तत्थ वुत्ताति विञ्जातुं। उपसग्गस्स च धात्वत्थेयैव पवत्तनतो “पञ्जायती”ति एतस्स विञ्जायतीति अत्थो। तस्मा न एत्तावता चित्तस्स ठितिक्खणो पटिबाहितुं युत्तोति सुवुत्तमेतं “उप्पादठितिभङ्गवसेना”ति।

एवञ्च कत्वा वुत्तं अट्टकथायम्पि “एकेकस्स उप्पादठितिभङ्गवसेन तयो तयो खणा”ति^{२२९}।

१. अरूपं लहुपरिणामं, रूपं गरुपरिणामं गाहकगाहेतब्बभावस्स तं तं खणवसेन उप्पज्जनतोति आह “तानी”त्यादि। तानीति तादिसानि। सत्तरसत्तं चित्तानं खणानि विय खणानि सत्तरसचित्तक्खणानि, तानि चित्तक्खणानि सत्तरसाति वा सम्बन्धो। विसुं विसुं पन एकपञ्जास चित्तक्खणानि होन्ति। रूपधम्मानन्ति विञ्जत्तिलक्खणरूपवज्जानं रूपधम्मानं। विञ्जत्तिद्वयञ्जि एकचित्तक्खणायुकं। तथा हि तं चित्तानुपरिवत्तिधम्मेषु वुत्तं। लक्खणरूपेषु च जाति चेव अनिच्चता च चित्तस्स उप्पादभङ्गक्खणेहि समानायुका, जरता पन एकनपञ्जासचित्तक्खणायुका। एवञ्च कत्वा वदन्ति- “तं सत्तरसचित्तायु, विना विञ्जत्तिलक्खण”न्ति^{२३०}।

केचि^{२३१} पन “पटिच्चसमुप्पादट्टकथायं ‘एत्तावता एकादस चित्तक्खणा अतीता होन्ति, अथावसेसपञ्चचित्तक्खणायुके’ति^{२३२} वचनतो सोढसचित्तक्खणानि रूपधम्मानमायुं। उप्पज्जमानमेव हि रूपं भवङ्गचलनस्स पच्चयो होती”ति वदन्ति, तयिदमसारं “पटिसन्धिचित्तेन सहुप्पन्नं कम्मजरूपं ततो पट्टाय सत्तरसमेन सद्धिं निरुज्जति, पटिसन्धिचित्तस्स ठितिक्खणे उप्पन्नं अट्टारसमस्स उप्पादक्खणे निरुज्जती”त्यादिना^{२३३} अट्टकथायमेव सत्तरसचित्तक्खणस्स आगतत्ता। यत्थ पन सोढसचित्तक्खणानेव पञ्जायन्ति, तत्थ चित्तप्पवत्तिया पच्चयभावयोग्यक्खणवसेन नयो नीतो। हेट्टिमकोटिया हि एकचित्तक्खणम्पि अतिक्कन्तस्सेव रूपस्स आपाथागमनसामत्थियन्ति अलमतिवित्थारेन।

१०. एकचित्तस्स खणं विय खणं एकचित्तक्खणं, तं अतीतं एतेसं, एतानि वा तं अतीतानीति एकचित्तक्खणातीतानि। आपाथमागच्छन्तीति रूपसद्धारम्मणानि सकसकट्टाने ट्वाव गोचरभावं गच्छन्तीति आभोगानुरूपं अनेककलापगतानि आपाथं आगच्छन्ति, सेसानि पन धानादिनिस्सयेसु अल्लीनानेव विञ्जाणुप्पत्तिकारणानीति एकेककलापगतानिपि। एकेककलापगतापि हि पसादा विञ्जाणस्स आधारभावं गच्छन्ति, ते पन भवङ्गचलनस्स अनन्तरपच्चयभूतेन भवङ्गेन सद्धि उप्पन्ना। “आवज्जनेन सद्धि उप्पन्ना”ति अपरे।

द्विक्खत्तुं भवङ्गे चलितेति विसदिसविञ्जाणुप्पत्तिहेतुभावसङ्घातभवङ्गचलनवसेन पुरिमगहितारम्मणस्मिंयेव द्विक्खत्तुं भवङ्गे पवत्ते। पञ्चसु हि पसादेसु योग्यदेसावत्थानवसेन आरम्मणे घट्टिते पसादघट्टनानुभावेन भवङ्गसन्तति वोच्छिज्जमाना सहसा अनोच्छिज्जित्वा यथा वेगेन धावन्तो ठातुकामोपि पुरिसो एकद्विपदवारे अतिक्कमित्वाव तिड्ढति, एवं द्विक्खत्तुं उप्पज्जित्वाव ओच्छिज्जति। तत्थ पटमचित्तं भवङ्गसन्ततिं चालेत्तं विय उप्पज्जतीति भवङ्गचलनं, दुतियं तस्स ओच्छिज्जनाकारेन उप्पज्जनतो भवङ्गुपच्छेदोति वोहरन्ति। इध पन अविसेसेन वुत्तं “द्विक्खत्तुं भवङ्गे चलिते”ति।

ननु च रूपादिना पसादे घट्टिते तन्निसितस्सेव चलनं युत्तं, कथं पन हदयवत्थुनिसितस्स भवङ्गस्साति? सन्ततिवसेन एकाबद्धता। यथा हि भेरिया एकस्मि तले ठितसक्खराय मक्खिकाय निसिन्नाय अपरस्मि तले दण्डादिना पहटे अनुक्कमेन भेरिचम्मवरत्तादीनं चलनेन सक्खराय चलिताय मक्खिकाय उप्पत्तित्वा गमनं होति, एवमेव रूपादिना पसादे घट्टिते तन्निससयेसु महाभूतेसु चलितेसु

^{२२९} विभ० अट्ट० २६ पकिण्णककथा

^{२३०} स० स० ६०

^{२३१} विभ० मूलटी० २०

^{२३२} विसुद्धि० २.६२३; विभ० अट्ट० २२७

^{२३३} विभ० अट्ट० २६ पकिण्णककथा

अनुक्कमेन तं सम्बन्धानं सेसरूपानमि चलनेन हृदयवत्थुम्हि चलिते तन्निस्सितस्स भवङ्गस्स चलनाकारेण पवति होति। वुत्तञ्च-

“घट्टिते अञ्जवत्थुम्हि, अञ्जनिस्सितकम्पनं।
एकाबद्धेन होतीति, सक्खरोपमया वदे”ति^{२३४} ॥

भवङ्गसोतन्ति भवङ्गप्पवाहं। आवज्जन्तन्ति “किं नामेत”न्ति वदन्तं विय आभोगं कुरुमानं। पस्सन्तन्ति पच्चक्खतो पेक्खन्तं। ननु च “चक्खुना रूपं दिस्वा”ति^{२३५} वचनतो चक्खुन्द्रियमेव दस्सनकिच्चं सादेति, न विञ्जाणन्ति? नयिदमेवं, रूपस्स अन्धभावेन रूपदस्सने असमत्थभावतो। यदि च तं रूपं पस्सति, तथा सति अञ्जविञ्जाणसमङ्गिनोपि रूपदस्सनप्पत्तङ्गो सिया। यदि एवं विञ्जाणस्स तं किच्चं साधेति, विञ्जाणस्स अप्पटिबन्धत्ता अन्तरितरूपस्सपि दस्सनं सिया। होतु अन्तरितस्सपि दस्सनं, यस्स फलिकादितिरोहितस्स आलोकपटिबन्धो नत्थि, यस्स पन कुट्टादिअन्तरितस्स अलोकपटिबन्धो अत्थि। तत्थ पच्चयाभावतो विञ्जाणं नुप्पज्जतीति न तस्स चक्खुविञ्जाणेण गहणं होति। “चक्खुना”ति पनेत्थ तेन द्वारेण करणभूतेनाति अधिप्पायो। अथ वा निस्सितकिरिया निस्सयप्पटिबद्धा वुत्ता यथा “मञ्चा उक्कुट्ठि करोन्ती”ति।

सम्पटिच्छन्तन्ति तमेव रूपं पटिगण्हन्तं विय। सन्तीरयमानन्ति तमेव रूपं वीमंसन्तं विय। ववत्थपेन्तन्ति तमेव रूपं सुट्ठु सल्लक्खेन्तं विय। योनिसोमनसिकारादिवसेन लद्धो पच्चयो एतेनाति लद्धपच्चयं। यं किञ्चि जवनन्ति सम्बन्धो। मुच्छामरणासन्नकालेषु च छप्पञ्चपि जवनानि पवत्तन्तीति आह “येभुय्येना”ति। जवनानुबन्धानीति पटिसोतगाभिनावं नदीसोतो विय किञ्चि कालं जवनं अनुगतानि। तस्स जवनस्स आरम्भणं आरम्भणमेतेसन्ति तदारम्भणानि “ब्रह्मस्सरो”त्यादीसु विय मज्जेपदलोपवसेन, तदारम्भणानि च तानि पाकानि चाति तदारम्भणपाकानि। यथारहन्ति आरम्भणजवनसत्तानुरूपं। तथा पवति पन सयमेव पकासयिस्सति, भवङ्गपातोति वीथिचित्तवसेन अप्पवत्तित्वा चित्तस्स भवङ्गपातो विय, भवङ्गवसेन उप्पत्तीति वुत्तं होति। एत्थ च वीथिचित्तप्पवत्तिया मुखगहणत्थं अम्बोपमादिकं आहरन्ति, तत्रिदं अम्बोपमामत्तं^{२३६} एको किर पुरिसो फलितम्बरुक्खमूले ससीसं पारुपित्वा निदायन्तो आसन्ने पतितस्स एकस्स अम्बफलस्स सद्देन पबुज्जित्वा सीसतो वत्थं अपनेत्वा चक्खुं उम्मीलेत्वा दिस्वा च तं गहेत्वा महित्वा उपसिद्धित्वा पक्कभावं जत्वा परिभुज्जित्वा मुखगतं सह सेम्हेन अज्जोहरित्वा पुन तत्थेव निदायति। तत्थ पुरिसस्स निदायनकालो विय भवङ्गकालो, फलस्स पतितकालो विय आरम्भणस्स पसादघट्टनकालो, तस्स सद्देन पबुद्धकालो विय आवज्जनकालो, उम्मीलेत्वा ओलोकितकालो विय चक्खुविञ्जाणप्पवत्तिकालो, गहितकालो विय सम्पटिच्छनकालो, महनकालो विय सन्तीरणकालो, उपसिद्धनकालो विय वोट्टुब्बनकालो, परिभोगकालो विय जवनकालो, मुखगतं सह सेम्हेन अज्जोहरणकालो विय तदारम्भणकालो, पुन निदायनकालो विय पुन भवङ्गकालो।

इमाय च उपमाय किं दीपितं होति? आरम्भणस्स पसादघट्टनमेव किच्चं, आवज्जनस्स विसयाभुजनमेव, चक्खुविञ्जाणस्स दस्सनभत्तमेव, सम्पटिच्छनादीनञ्च पटिगण्हनादिमत्तमेव, जवनस्सेव पन आरम्भणरसानुभवनं, तदारम्भणस्स च तेन अनुभूतस्सेव अनुभवन्ति एवं किच्चवसेन धम्मानं अञ्जमञ्जं असंकिण्णता दीपिता होति। एवं पवत्तमानं पन चित्तं “आवज्जनं नाम हुत्वा भवङ्गानन्तरं होति, त्वं दस्सनादीसु अञ्जतरं हुत्वा आवज्जनानन्तरं”त्यादिना नियुज्जे कारके असत्तिपि उत्तुबीजनियामादि^{२३७} विय चित्तनियामवसेनेव पवत्ततीति वेदितव्वं।

११. एत्तावता सत्तरस चित्तक्खणानि परिपून्तीति सम्बन्धो।

^{२३४} स० स० १७६

^{२३५} दी० नि० १.२१३; अ० नि० ३.६२; विथ० ५१७

^{२३६} ध० स० अ६० ४९८ विपाकुद्धारकथा

^{२३७} ध० स० अ६० ४९८ विपाकुद्धारकथा

१२. अप्यहोन्तातीतकन्ति अप्यहोन्तं हुत्वा अतीतं। नत्थि तदारम्मणुप्पादोति चुदसचित्तक्खणायुके ताव आरम्मणस्स निरुद्धताव तदारम्मणं नुप्पज्जति। न हि एकवीथियं केसुचि पच्चुप्पन्नारम्मणेषु कानिचि अतीतारम्मणानि होन्ति। पन्नरसचित्तक्खणायुकेसुपि जवनुप्पत्तितो परं एकमेव चित्तक्खणं अवसिद्दन्ति द्विक्खत्तुं तदारम्मणुप्पत्तिया अप्यहोनकभावतो नत्थि दुतियतदारम्मणस्स उप्पत्तीति पटमप्पि नुप्पज्जति। द्विक्खत्तुमेव हि तदारम्मणुप्पत्ति पाठियं नियमिता चित्तप्पवत्तिगणनायं सब्बारेसु “तदारम्मणानि द्वे”ति^{२३८} द्विन्नमेव चित्तवारानं आगतता। यं पन परमत्थविनिच्छये वुत्तं-“सकिं द्वे वा तदालम्बं, सकिमावज्जनादयो”ति^{२३९}, तं मज्झिमभाणकमतानुसारेण वुत्तन्ति दडुब्बं। यस्मा पन मज्झिमभाणकानं वादो हेड्डा वुत्तपाठिया असंसन्दनतो सम्मोहविनोदनीयं^{२४०} पटिक्खित्तोव, तस्मा आचरियेनपि अत्तना अनधिप्पेततायेव इध चेव नामरूपपरिच्छेदे च सकिं तदारम्मणुप्पत्ति न वुत्ता।

१३. वोडुब्बनुप्पादतो परं छचित्तक्खणावसिद्ध्युक्तमि आरम्मणं अप्पायुकभावेन परिदुब्बलत्ता जवनुप्पत्तिया पच्चयो न होति। जवनज्झि उप्पज्जमानं नियमेन सत्तचित्तक्खणायुकेयेव उप्पज्जतीति अधिप्पायेनाह “जवनमि अनुप्पज्जित्वा”ति। हेतुमि चायं त्वापच्चयो, जवनस्सपि अनुप्पत्तियाति अत्थो। इतरथा हि अपरकालकिरियाय समानकतुकता न लब्धतीति। द्विक्खत्तुन्ति द्विक्खत्तुं वा तिक्खत्तुं वा। केचि पन “तिक्खत्तु”न्ति इदं वचनसिलिद्दतामत्तप्पयोजन”न्ति वदन्ति, तं पन तेसं अभिनिवेसमतं। न हि “द्विक्खत्तुं वोडुब्बनमेव परिवत्तती”ति वुत्तेपि वचनस्स असिलिद्दभावो अत्थि, न च तिक्खत्तुं पवत्तिया बाधकं किञ्चि वचनं अडुकथादीसु अत्थि। एवञ्च कत्वा तत्थ तत्थ सीहळसंवण्णनाकारापि “द्विक्खत्तुं वा तिक्खत्तुं वा”इच्चेव वण्णेन्ति। वोडुब्बनमेव परिवत्ततीति वोडुब्बनमेव पुनप्पुनं उप्पज्जति। तं पन अप्पत्वा अन्तरा चक्खुविञ्जाणादीसु टत्वा चित्तप्पवत्तिया निवत्तनं नत्थि।

आनन्दाचरियो पनेत्थ^{२४१} “आवज्जना कुसलकुसलानं खन्धानं अनन्तरपच्चयेन पच्चयो”ति^{२४२} आवज्जनाय कुसलकुसलानं अनन्तरपच्चयभावस्स वुत्तता वोडुब्बनावज्जनानञ्च अत्थन्तराभावतो सति उप्पत्तियं वोडुब्बनं कामावचरकुसलकुसलकिरियजवनानं एकन्ततो अनन्तरपच्चयभावेनेव पवत्तेय्य, नो अञ्जथाति मुच्छाकालादीसु मन्दीभूतवेगताय जवनपारिपूरिया परित्तरम्मणं नियमितब्बं, न वोडुब्बनस्स द्विक्खत्तुं पवत्तियाति दीपेति।

किञ्चापि एवं दीपेति, तिहेतुकविपाकानि पन अनन्तरपच्चयभावेन वुत्तानेव। खीणासवानं चुतिवसेन पवत्तानि न कस्सचि अनन्तरपच्चयभावं गच्छन्तीति तानि विय वोडुब्बनमि पच्चयवेकल्लतो कुसलकुसलादीनं अनन्तरपच्चयो न होतीति न न सक्का वत्तुं, तस्मा अडुकथासु आगतनयेनेवेत्थ परित्तरम्मणं नियमितन्ति।

१४. नत्थि वीथिचित्तुप्पादो उपरिमकोटिया सत्तचित्तक्खणायुकस्सपि द्विक्खत्तुं वोडुब्बनुप्पत्तिया अप्यहोनकभावतो वीथिचित्तानं उप्पादो नत्थि, भवङ्गपातोव होतीति अधिप्पायो। भवङ्गचलनमेवाति अवधारणफलं दस्सेत्तुं “नत्थि वीथिचित्तुप्पादो”ति वुत्तं। अपरे पन “नत्थि भवङ्गपच्छेदो”ति अवधारणफलं दस्सेन्ति, तं पन वीथिचित्तुप्पादाभाववचनेनेव सिद्धं। सति हि वीथिचित्तुप्पादे भवङ्गं उपच्छिज्जति। भवङ्गपच्छेदनामेन पन हेड्डापि विसुं अवुत्तता इध अविसेत्सेन वुत्तं।

^{२३८} विभ० अट्ट० २२७

^{२३९} परम० वि० ११६

^{२४०} विभ० अट्ट० २२७

^{२४१} ध० स० मूलटी० ४९८ विपाकद्वारकथावण्णना

^{२४२} पट्टा० १.१.४१७

१५. सब्बसो वीथिचित्तुप्पत्तिया अभावतो पच्छिमवारोविधमोघवारवसेन वुत्तो, अञ्जत्थ^{२४३} पन दुत्तियततियवारापि तदारम्मणजवनेहि सुञ्जत्ता “मोघवारा”ति वुत्ता। आरम्मणभूताति विसयभूता, पच्चयभूता च। पच्चयोपि हि “आरम्मण”न्ति वुच्चति “न लच्छति मारो ओतारं, न लच्छति मारो आरम्मण”न्त्यादीसु^{२४४} विय। तेनेवेत्थ मोघवारस्सपि आरम्मणभूता विसयप्पवत्तीति सिद्धं। अतिपरित्तारम्मणञ्जि मोघवारपञ्जापनस्स पच्चयो होति। इतरथा हि भवङ्गचलनस्स सकसकगोचरेयेव पवत्तनतो पच्छिमवारस्स अतिपरित्तारम्मणे पवत्ति नत्थीति “चतुब्रं वारानं आरम्मणभूता”ति वचनं दुरुपपादनं सियाति।

१६. पञ्चद्वारे यथारहं तं तं द्वारानुरूपं, तं तं पच्चयानुरूपं, तं तं आरम्मणादिअनुरूपञ्च उप्पज्जमानानि वीथिचित्तानि आवज्जनदस्सनादिसम्पटिच्छनसन्तीरण-बोडुब्बनजवनतदारम्मणवसेन अविसेसतो सत्तेव होन्ति। चित्तुप्पादा चित्तानं विसुं विसुं उप्पत्तिवसेन उप्पज्जमानचित्तानियेव वा चतुदस आवज्जनादिपञ्चकसत्तजवनतदारम्मणद्वयवसेन। वित्थारा पन चतुपञ्जास सब्बेसमेव कामावचरानं यथासम्भवं तत्थ उप्पज्जनतो, एत्थाति विसयप्पवत्तिसङ्गहे।

पञ्चद्वारवीथिवण्णना निद्धिता।

मनोद्वारवीथि

परित्तजवनवारवण्णना

१७. मनोद्वारिकचित्तानं अतीतानागतमि आरम्मणं होतीति तेसं अतिमहन्तादिवसेन विसयववत्थानं कातुं न सक्काति विभूताविभूतवसेनेवेतं नियमेतुं “यदि विभूतमारम्मण”न्त्यादि वुत्तं।

१९. एत्थाति मनोद्वारे। एकचत्तालीस पञ्चद्वारावेणिकानं द्विपञ्चविञ्जाणमनोधातुत्तय-वसेन तेरसचित्तानं तत्थ अप्पवत्तनतो।

परित्तजवनवारवण्णना निद्धिता।

अप्पनाजवनवारवण्णना

२०. विभूताविभूतभेदो नत्थि आरम्मणस्स विभूतकालेयेव अप्पनासम्भवतो।

२१. तत्थ हि छब्बीसतिमहग्गतलोकुत्तरजवनेसु यं किञ्चि जवनं अप्पनावीथिमोत्तरतीति सम्बन्धो। परिकम्पोपचारानुलोमगोत्रभुनामेन यथाक्कमं उप्पज्जित्वा निरुद्धेति योजना। पटमचित्तञ्जि अप्पनाय परिकम्पत्ता पटिसङ्कारकभूतत्ता परिकम्पं। दुत्तियं समीपचारित्ता उपचारं। नाच्चासन्नोपि हि नातिदूरप्पवत्ति समीपचारी नाम होति, अप्पनं उपेच्च चरतीति वा उपचारं। तत्तियं पुब्बभागे परिकम्पानं, उपरिअप्पनाय च अनुकूलत्ता अनुलोमं। चतुत्थं परित्तगोत्तस्स, पुधुज्जनगोत्तस्स च अभिभवन्तो, महग्गतगोत्तस्स, लोकुत्तरगोत्तस्स च भावनतो वड्डनतो गोत्रभु, इमानि चत्तारि नामानि चतुक्खत्तुं पवत्तियं अनवसेसतो लब्धन्ति, तिक्खत्तुं पवत्तियं पन उपचारानुलोमगोत्रभुनामेनेव लब्धन्ति।

^{२४३} ध० स० अ० ४९८ विपाकुद्वारकथा

^{२४४} दी० नि० ३.८०

अदुक्थाय^{२४५} पन पुरिमानं तिण्णं, द्विञ्चं वा अविसेसेनपि परिकम्मादिनामं वुत्तं, चतुक्खत्तुं, तिक्खत्तुमेव वा पञ्चमं, चतुत्थं वा उप्पज्जितब्बअप्पनानुरूपतोति अधिप्पायो। परिकम्मादिनामानं अनवसेसतो लब्भमानवारदस्सनत्थं “चतुक्खत्तु”न्ति आदितो वुत्तं, गणनपटिपाटिवसेन पन “पञ्चमं वा”ति ओसाने वुत्तं।

यथारहन्ति खिप्पाभिञ्जदन्थाभिञ्जानुरूपं। खिप्पाभिञ्जस्स हि तिक्खत्तुं पवत्तकामावचरजवनानन्तरं चतुत्थं अप्पनाचित्तमुप्पज्जति। दन्थाभिञ्जस्स चतुक्खत्तुं पवत्तजवनानन्तरं पञ्चमं अप्पना उप्पज्जति, यस्मा पन अलद्धासेवनं अनुलोमं गोत्रभुं उप्पादेतुं न सक्कोति, लद्धासेवनमपि च छट्ठं सत्तमं भवङ्गस्स आसन्नभावेन पपातासन्नपुरिसो विय अप्पनावसेन पतिट्टातुं न सक्कोति, तस्मा चतुत्थतो ओरं, पञ्चमतो परं वा अप्पना न होतीति दट्टुब्बं। यथाभिनीहारवसेनाति रूपारूपलोकुत्तरमग्गफलानुरूपसमथविपस्सनाभावनाचित्ताभिनीहरणानुरूपतो, अप्पनाय वीथि अप्पनावीथि। “ततो परं भवङ्गपातोव होती”ति एत्तकेयेव वुत्ते चतुत्थं, पञ्चमं वा ओत्तिण्णअप्पनातो परं भवङ्गपातोव होति, न मग्गानन्तरं फलचित्तं, समापत्तिवीथियञ्च ज्ञानफलचित्तानि पुनप्पुनन्ति गण्हेय्युन्ति पुन “अप्पनावसाने”ति वुत्तं। निकायन्तरिया किर लोकियप्पनासु पठमकप्पनातो परं सत्तमजवनपूरणत्थं दत्तिक्खत्तुं कामावचरजवनानमपि पवत्ति वण्णेन्तीति तेसं मतिनिसेधनत्थं “भवङ्गपातोवा”ति सावधारणं वुत्तं।

२२. तत्थाति तेसु अट्टजाणसम्पयुत्तकामावचरजवनेसु, तेसु च छब्बीसतिमहग्गतलोकुत्तर-जवनेसु। तत्थाति वा तस्मि अप्पनावारे। सोमनस्ससहगतजवनानन्तरन्ति सोमनस्ससहगतानं चतुञ्चं कुसलकिरियजवनानं अनन्तरं। सोमनस्ससहगतावाति चतुक्कज्ज्ञानस्स, सुक्खविपस्सकादीनं मग्गफलस्स च वसेन सोमनस्ससहगताव, न पन उपेक्खासहगता भिन्नवेदनानं अञ्जमञ्जं आसेवनपच्चयभावस्स अनुदट्टत्ता। पाटिकद्धितब्बाति पसंसितब्बा, इच्छितब्बाति वुत्तं होति। तत्थापीति तस्मि एकवेदनजवनवारेपि। कुसलजवनानन्तरन्ति चतुब्धिजाणसम्पयुत्तकुसल-जवनानन्तरं कुसलजवनमप्येति, न किरियजवनं भिन्नसन्ताने निब्बत्तनतो। हेट्ठिमञ्च फलत्तयमप्येति समापत्तिवीथियन्त्यधिप्पायो।

२३. सुखपुञ्जम्हा सोमनस्ससहगततिहेतुककुसलद्वयतो परं अग्गफलविपाककिरिय-वज्जितलोकियलोकुत्तरचतुक्कज्ज्ञानजवनवसेन दत्तिसं, उपेक्खका तिहेतुककुसलद्वयतो परं तथेव पञ्चमज्ज्ञानानि द्वादसं, सुखितक्रियतो तिहेतुकद्वयतो परं किरियज्ज्ञानचतुक्कस्स, अग्गफलचतुक्कस्स च वसेन अट्ट, उपेक्खका तिहेतुकद्वयतो परं उपेक्खासहगतरूपारूपकिरिय-पञ्चकस्स, अग्गफलस्स च वसेन छ अप्पना सम्भोन्ति।

२४. एत्थाति वीथिसङ्गहाधिकारे।

अप्पनाजवनवारवण्णना निट्ठिता।

मनोद्वारवीथिवण्णना निट्ठिता।

अप्पनाजवनवारवण्णना निट्ठिता।

तदारम्पणनियमवण्णना

२५. सब्बत्थापीति पञ्चद्वारमनोद्वारेपि।

२६. इट्ठेति इट्ठमज्झते। अतिइट्ठारम्पणज्झि विसुं वक्खति। कुसलविपाकानि पञ्चविज्जाणसम्पटिच्छन-सन्तीरणतदारम्पणानीति सम्बन्धो। इट्ठमज्झते सन्तीरणतदारम्पणानि उपेक्खासहगतानेवाति आह “अतिइट्ठे पन सोमनस्ससहगतानेवा”ति। विपाकस्स हि कम्मानुभावतो पवत्तमानस्स आदासे मुखनिमित्तं विय निब्बिकम्पताय पकप्पेत्वा गहणाभावतो यथारम्पणमेव वेदनायोगो होति, कुसलाकुसलानं पन अप्पहीनविपल्लासेसु सन्तानेसु पवत्तिया अतिइट्ठेपि इट्ठमज्झतानिद्वाराकारतो, अनिट्ठेपि इट्ठइट्ठमज्झत्ताकारतो गहणं होति। तथा हि अस्सद्वादीनं बुद्धादीसु अतिइट्ठारम्पणेसुपि उपेक्खाजवनं होति, तित्थियादीनञ्च दोमनस्सजवनं, गम्भीरपकत्तिकादीनञ्च पटिककूलारम्पणे उपेक्खाजवनं, सुनखादीनञ्च तत्थ सोमनस्सजवनं, पुरिमपच्छाभागप्पवत्तानि पन विपाकानि यथावत्थुकानेव। अपिच असुचिदस्सने सुमनायमानानं सुनखादीनन्ति। चक्खुविज्जाणादीनं पन अतिइट्ठानिट्ठेसु पवत्तमानानमि उपेक्खासहगतभावे कारणं हेट्ठा कथितमेव।

२७. तत्थापीति तदारम्पणेसुपि। सोमनस्ससहगतकिरियजवनावसानेति सहेतुकाहेतुकसुखसहगतकिरियपञ्चकावसाने। खीणासवानं चित्तविपल्लासाभावेन किरियजवनानिपि यथारम्पणमेव पवत्तन्तीति वुत्तं “सोमनस्ससहगतकिरियजवनावसाने”त्यादि। केचि पन आचरिया “पट्टाने”^{२४६} ‘कुसलाकुसले निरुद्धे विपाको तदारम्पणता उप्पज्जती’ति^{२४७} कुसलाकुसलानमेवानन्तरं तदारम्पणं वुत्तन्ति नत्थि किरियजवनानन्तरं तदारम्पणुप्पादो”ति वदन्ति। तत्थ वुच्चते- यदि अब्बाकतानन्तरमि तदारम्पणं वुच्च्येय्य। परित्तरम्पणे वोट्टब्बनानन्तरमि तस्स पवत्ति मज्जेय्युन्ति किरियजवनानन्तरं तदारम्पणं न वुत्तं, न पन अलब्धनतो। लब्धमानस्सपि हि केनचि अधिप्पायेन कत्थचि अवचनं दिस्सति, यथा तं धम्मसङ्गहे लब्धमानमि हृदयवत्थु देसनाभेदपरिहारत्थं न वुत्तन्ति।

२८. दोमनस्स...पे०... उपेक्खासहगतानेव भवन्ति, न सोमनस्ससहगतानि अज्जमज्झं विरुद्धसभावता। तेनेव हि पट्टाने दोमनस्सानन्तरं सोमनस्सं, तदनन्तरञ्च दोमनस्सं अनुद्धटं। तथा हि “सुखाय वेदनाय सम्पयुत्तो धम्मो सुखाय वेदनाय सम्पयुत्तस्स धम्मस्स अनन्तरपच्चयेन पच्चयो”त्यादिना^{२४८} सुखदुक्खवेदनाय सम्पयुत्ता धम्मा अत्तनो अत्तनो समानवेदनासम्पयुत्तानं अदुक्खमसुखवेदनाय सम्पयुत्तकानञ्च अनन्तरपच्चयभावेन द्वीसु द्वीसु वारेसु वुत्ता, अदुक्खमसुखवेदनाय सम्पयुत्तका पन समानवेदनासम्पयुत्तानं, इतरवेदनाद्वयसम्पयुत्तानञ्च धम्मानं अनन्तरपच्चयभावेन तीसु वारेसूति एवं वेदनात्तिके सत्तेव अनन्तरपच्चयवारा वुत्ता। यदि च दोमनस्सानन्तरं सोमनस्सं, सोमनस्सानन्तरं वा दोमनस्सं उप्पज्जेय्य, सुखदुक्खवेदनासम्पयुत्तानमि अज्जमज्झं अनन्तरपच्चयवसेन द्वे वारे वट्ठेत्वा नव वारा वत्तब्बा सियुं, न पनेवं वुत्ता। तस्मा न तेसं तदनन्तरं उप्पत्ति अत्थि। एत्थ च “सोमनस्ससहगतकिरियजवनावसाने”त्यादिना अयमि नियमो अनुज्जातो-

“परित्तकुसलादोस-पापसातक्रियाजवा।
पञ्चस्वेकं तदालम्बं, सुखितेसु यथारहं ॥
“पापाकामसुभा चैव, सोपेक्खा च क्रियाजवा।
सोपेक्खेसु तदालम्बं, छस्वेकमनुरूपतो”ति ॥

^{२४६} ध० स० मूलटी० ४९८ विपाकद्वारकथावण्णना

^{२४७} पट्टा० ३.१.९८

^{२४८} पट्टा० १.२.४५

अयञ्चि जवनेन तदारम्पणनियमो अब्यभिचारी। “जाणसम्पयुत्तजवनतो जाणसम्पयुत्त-
तदारम्पण”न्त्यादिनयम्पवत्तो पन अनेकन्तिको। येभुय्येन हि अकुसलजवनेसु परिचितस्स कदाचि
कुसलजवनेसु जवितेसु, कुसलजवनेसु वा परिचितस्स कदाचि अकुसलजवनेसु जवितेसु
अकुसलानन्तरं पवत्तपरिचयेन तिहेतुकजवनतोपि परं अहेतुकतदारम्पणं होति, तथा कुसलानन्तरं
पवत्तपरिचयेन अकुसलजवनतो परं तिहेतुकतदारम्पणमि, पटिसन्धिनिब्वत्तकम्मतो पन
अञ्जकम्मेन तदारम्पणम्पवत्तियं वत्तब्बमेव नत्थि। तथा च वुत्तं पट्टाने “अहेतुके खन्धे अनिच्चतो
दुक्खतो अनत्ततो विपस्सन्ति, कुसलाकुसले निरुद्धे अहेतुको विपाको तदारम्पणता उप्यज्जति,
कुसलाकुसले निरुद्धे सहेतुको विपाको तदारम्पणता उप्यज्जती”ति^{२४९}।

तस्माति यस्मा दोमनस्सजवनावसाने उपेक्खासहगतानेव होन्ति। तस्मा दोमनस्ससहगत-
जवनावसाने उपेक्खासहगतसन्तीरणं उप्यज्जतीति सम्बन्धो। ‘सोमनस्सपटिसन्धिकस्सा’ति इमिनाव
भवङ्गपाताभावो दीपितोव होति दोमनस्सानन्तरं सोमनस्साभावतोति तं अवत्वा तदारम्पणाभावमेव
परिकम्पेन्तो आह “यदि तदारम्पणसम्भवो नत्थी”ति।

सोमनस्सपटिसन्धिकस्स तित्थियादिनो बुद्धादिअतिइड्डारम्पणे पि पटिहतचित्तस्स
दोमनस्सजवने जविते वुत्तनयेन सोमनस्सतदारम्पणस्स अतिइड्डारम्पणे च उपेक्खासहगततदारम्पणस्स
अनुप्यज्जनतो, केनचि वा असप्पायेन परिहीनलोकियज्झानं आरब्ध “पणीतधम्मो मे नट्टो”ति
विष्पटिसारं जनेन्तस्स दोमनस्सजवने सति अकामावचरारम्पणे तदारम्पणाभावतो यदि तदारम्पणस्स
उप्यत्तिसम्भवो नत्थीति अधिष्पायो।

परिचितपुब्बन्ति पुब्बे परिचितं, तस्मि भवे येभुय्येन गहितपुब्बं। उपेक्खासहगतसन्तीरणं
उप्यज्जति निरावज्जनमि। यथा तं निरोधा वुड्डहन्तस्स फलचित्तन्त्यधिष्पायो। यथाहु-

“निरावज्जं कथं चित्तं, होति नेतञ्चि सम्मतं।

नियमो न विनावज्जं, निरोधा फलदस्सना”ति॥

केन पन किच्चेन इदं चित्तं पवत्ततीति? तदारम्पणकिच्चेन ताव न पवत्तति जवनारम्पणस्स
अग्गहणतो, नापि सन्तीरणकिच्चेन यथासम्पटिच्छित्तस्स सन्तीरणवसेन अप्यवत्तनतो,
पटिसन्धियुतीसु वत्तब्बमेव नत्थि, पारिसेसतो पन भवस्स अङ्गभावतो भवङ्गकिच्चेनाति युत्तं सिया।
आचरियधम्मपालत्थेरेनपि^{२५०} हि अयमत्थो दस्सितोव। यं पन पटिसन्धिभवङ्गानं धम्मतो,
आरम्पणतो च समानतं वक्खति, तं येभुय्यतोति दट्टब्बं। न हि इदमेकं ठानं वज्जेत्वा
पटिसन्धिभवङ्गानं विसदिसता अत्थि। तमनन्तरित्वाति तं अत्तनो अनन्तरं अब्यवहितं कत्वा,
तदनन्तरन्त्यत्थो।

२९. कामावचर...पे०... इच्छन्तीति एत्थ कामावचरजवनावसानेयेव तदारम्पणं इच्छन्ति
कामतण्हानिदानकम्मनिब्वत्तत्ता। न हि तं कामतण्हाहेतुकेन कम्मना जनितं अतंसभावस्स
रूपारूपावचरलोकुत्तरजवनस्स अनन्तरं उप्यज्जति। किकारणा? अजनकत्ता, जनकसमानत्ताभावतो
च। यथा हि गेहतो बहि निक्खमितुकामो बालको जनकं, तं सदिसं वा अङ्गुलियं गेहत्वा
निक्खमति, नाञ्जं राजपुरिसादिं, एवं भवङ्गविसयतो अञ्जत्थ पवत्तमानं तदारम्पणं जनकं
कामावचरकुसलाकुसलं, तं सदिसं वा कामावचरकिरियजवनं अनुबन्धति, न पन तस्स विसदिसानि
महगतलोकुत्तरजवनानि। तथा कामावचरसत्तानमेव तदारम्पणं इच्छन्ति, न ब्रह्मानं
तदारम्पणपूनिस्सयस्स कामावचरपटिसन्धिबीजस्साभावतो। तथा कामावचरधम्मस्वेव आरम्पणभूतेसु
इच्छन्ति। न इतरेसु अपरिचितत्ता। यथा हि सो बालको जनकं, तं सदिसं वा अनुगच्छन्तोपि

^{२४९} पट्टा० ३.१.९८

^{२५०} ध० स० अनुटी० ४९८ विपाकुद्धारकथावण्णना

अरञ्जादिअपरिचितद्वानं गच्छन्तं अननुबन्धित्वा पमुखङ्गणादिहि परिचितद्वानेयेव अनुबन्धित, एवमिदमपि रूपावचरादिअपरिचितारम्भणं आरम्भ पवत्तन्तं नानुबन्धितं ।

अपिच कामतण्हायत्तकम्मजनितत्तापि एतं कामतण्हाण्णेषु परित्तधम्मस्वेव पवत्ततीति वुत्तोवायमत्थो । होन्ति चेत्थ-

“जनकं तं समानं वा, जवनं अनुबन्धितं ।
न तु अञ्जं तदालम्बं, बालदारकलीलया ॥
“बीजस्साभावतो नत्थि, ब्रह्मानमपि इमस्स हि ।
पटिसन्धिमनो बीजं, कामावचरसञ्जितं ॥
“ठाने परिचितेयेव, तं इदं बालको विय ।
अनुयातीति नाञ्जत्थ, होति तण्हावसेन वा”ति ॥

ननु च “कामावचरपटिसन्धिबीजाभावतो”ति वुत्तं, तथा च चक्खुविञ्जाणादीनमपि अभावो आपज्जतीति ? नापज्जति इन्द्रियम्पवत्तिआनुभावतो, द्वारवीथिभेदे चित्तनियमतो च ।

तदारम्भणनियमवण्णना निद्विता ।

जवननियमवण्णना

३२. मन्दप्पवत्तियन्ति मरणासन्नकाले वत्थुदुब्बलताय मन्दीभूतवेगत्ता मन्दं हुत्वा पवत्तियं । मरणकालादीसूति आदि-सहेन मुच्छाकालं सङ्गहाति ।

३३. भगवतो ...पे०... वदन्तीति भगवतो यमकपाटिहारियकालादीसु उदकक्खन्धअग्गिक्खन्धम्पवत्तनादिअत्थं विसुं विसुं पादकज्झानं समापज्जित्वा ततो बुद्धाय ज्ञानधम्मं विसुं विसुं आवज्जेन्तस्स आवज्जनवसिताय मत्थकप्पत्तिया आवज्जनतप्परोव चित्ताभिनीहारो होतीति यथावज्जितज्ञानङ्गारम्भणानि चत्तारि, पञ्चवा पञ्चवेक्खणजवनचित्तानि पवत्तन्तीति वदन्ति^{२५१} अट्टकथाचरिया । “भगवतो”ति च इदं निदस्सनमत्तं अञ्जेसमि धम्मसेनापतिआदीनं एवरूपे अच्चायिककाले अपरिपुण्णजवनानं पवत्तन्तो । तथा च वुत्तं अट्टकथायं “अयञ्च मत्थकप्पत्ता वसिता भगवतो यमकपाटिहारियकाले अञ्जेसं वा एवरूपे काले”ति^{२५२} । “चत्तारि पञ्च वा”ति च पनेतं तिक्खिन्द्रियमुदिन्द्रियवसेन गहेतब्बन्ति आचरियधम्मपालत्थेरेन^{२५३} वुत्तं, तस्मा भगवतो चत्तारि, अञ्जेसं पञ्चपीति युत्तं विय दिस्सति ।

३४. आदिकम्मिकस्साति आदितो कतयोगकम्मस्स । पठमं निब्बत्ता अप्पना पठमकप्पना । अभिञ्जाजवनानमपि “पठमकप्पनाया”ति अधिकारो सियाति आह “सब्बदापी”ति, पठमुत्पत्तिकाले, चिण्णवसीकाले च पञ्चाभिञ्जाजवनानि एकवारमेव जवन्तीत्यत्थो ।

३५. मग्गायेव उप्पज्जनतो मग्गुप्पादा । यथारहन्ति पञ्चमं वा चतुत्थं वा उप्पन्नमग्गानुरूपं । सत्तजवनपरमत्ता हि एकावज्जनवीथिया चतुत्थं उप्पन्नमग्गतो परं तीति फलचित्तानि, पञ्चमं उप्पन्नमग्गतो परं द्वे वा होन्ति ।

३६. निरोधसमापत्तिकालेति निरोधस्स पुब्बभागे । चतुत्थारूपजवनन्ति कुसलकिरियानं अञ्जतरं नेवसञ्जानासञ्जायतनजवनं । अनागामिखीणासवायेव निरोधसमापत्तिं समापज्जन्ति, न सोतापन्नसकदाभिन्नोति वुत्तं “अनागामिफलं वा अरहत्तफलं वा”ति । विभत्तिविपल्लासो चेत्थ दट्टब्बो “अनागामिफले वा अरहत्तफले वा”ति । तेनाह “निरुद्धे”ति । यथारहन्ति तं तं पुगलानुरूपं ।

^{२५१} विसुद्धि० १.७८

^{२५२} विसुद्धि० १.७८

^{२५३} विसुद्धि० महा० १.७८

३८. सब्बथापि समापत्तिवीथियन्ति सकलायपि ज्ञानसमापत्तिवीथियं, फलसमापत्तिवीथियञ्च ।

३९. परित्तानि जवनानि सत्तखत्तुं मतानि उक्कंसकोटिया। मग्गाभिज्जा पन सत्किं एकवारमेव मता। अवसेसानि अभिज्जामग्गवज्जितानि महग्गतलोकुत्तरजवनानि बहूनिपि लब्धन्ति समापत्तिवीथियं अहोरत्तम्पि पवत्तनतो। अपि-सद्देन लोकियज्जानानि पटमकम्पनायं, अन्तिफलद्वयञ्च निरोधानन्तरं एकवारं, फलचित्तानि मग्गानन्तरं द्दत्तिक्खत्तुम्पीति सम्पिण्डेति।

जवननियमवण्णना निट्ठिता ।

पुग्गलभेदवण्णना

४०. इदानि दुहेतुकाहेतुकापायिकाहेतुकतिहेतुकवसेन चतुब्बिधानं पुथुज्जनानं, मग्गट्टफलद्ववसेन अट्टविधानं अरियानन्ति द्वादसन्नं पुग्गलानं उप्पज्जनकवीथिचित्तपरिच्छेददस्सनत्थं पटमं ताव तेसं वज्जितब्बचित्तानि दस्सेतुमाह “दुहेतुकानमहेतुकानञ्चा”त्यादि। पटिसन्धिविज्जाणसहगतालोभादोसवसेन द्वे हेतू इमेसन्ति द्विहेतुका।

तादिसानं हेतून् अभावतो अहेतुका। म-कारो पदसन्धिकरो। अप्पनाजवनानि न लब्धन्ति विपाकावरणसम्भावतो। द्विहेतुकाहेतुकपटिसन्धि हि “विपाकावरण”न्ति बुच्चति। अप्पनाजवनाभावतोयेव अरहत्तं नत्थीति किरियजवनानि न लब्धन्ति।

४१. “सहेतुकं^{२५४} भवङ्गं अहेतुकस्स भवङ्गस्स अनन्तरपच्चयेन पच्चयो”ति पाठतो अहेतुकानम्पि नानाकम्पेन द्विहेतुकतदारम्पणं सम्भवति, द्विहेतुकानं वत्तब्बमेव नत्थि। मूलसन्धिया पन जठभावतो उभिन्नम्पि नत्थि तिहेतुकतदारम्पणन्ति आह “तथा जाणसम्पयुत्तविपाकानि चा”ति। आचरियजोतिपालत्थेरेन पन “सहेतुकं भवङ्ग”न्ति अविसेसेन वुत्तत्ता अहेतुकानम्पि तिहेतुकतदारम्पणं वत्ता इध जाणसम्पयुत्तविपाकाभाववचनस्स परिहासवसेन “सो एव पुच्छित्तब्बो, यो तस्स कत्ता”ति कुत्तं, तं पन परिहासवसेन वुत्तम्पि आचरियं पुच्छित्वाव विजाननत्थं वुत्तवचनं विय टित्तं। तथा हि आचरियेनेवेत्थ कारणं परमत्थविनिच्छये वुत्तं-

“जाणपाका न वत्तन्ति, जठत्ता मूलसन्धिया”ति।^{२५५}

अपरे पन “यथा अहेतुकानं सहेतुकतदारम्पणं होति, एवं द्विहेतुकानं तिहेतुकतदारम्पणम्पी”ति वण्णेन्ति, तेसं मतानुरोधेन च इधापि जाणसम्पयुत्तविपाकपटिक्खेपो अहेतुकेयेव सन्धायाति वदन्ति। तत्थ पन पमाणपाठाभावतो आचरियेन उभिन्नम्पि साधारणवसेन जाणसम्पयुत्तविपाकाभावे कारणं वत्ता समकमेव चित्तपरिच्छेदस्स दस्सितत्ता तेसं वचनं वीमसित्वा सम्पटिच्छित्तब्बं। अहेतुकापेक्खाय वेत्थ “सुगतिय”न्ति वचनं, तं पन अत्थतो अनुज्जातद्विहेतुकविपाकानं तत्थेव सम्भवदस्सनपरं। तेनाह “दुग्गतियं पना”त्यादि।

४३. तिहेतुकेसूति पटिसन्धिविज्जाणसहगतालोभादोसामोहवसेन तिहेतुकेसु पुथुज्जादीसू नवविधपुग्गलेसु।

४५. दिट्ठी ...पे०... सेक्खानन्ति सिक्खाय अपरिपूरकारिताय सिक्खनसीलताय “सेक्खा”ति लद्धनापानं सोतापन्नसकदागामीनं पुग्गलानं पटममग्गेनेव सक्कायादिट्ठिविचिकिच्छानं पहीनत्ता तं सहगतजवनानि चेव च-सद्देन आकट्टित्तानि खीणासवावेणिकानि किरियजवनानि च न लब्धन्ति।

^{२५४} पट्टा० ३.१.१०२

^{२५५} परम० वि० २७१

४६. पटिघजवनानि चाति दोमनस्सजवनानि चेव दिट्ठिसम्पयुत्तविचिकिच्छासहगतकिरिय-
जवनानि च ।

४७. लोकुत्तर...पे०... समुप्यज्जन्तीति चतुञ्चं मग्गानं एकचित्तवखणिकभावेन पुग्गलन्तरेसु
असम्भवतो, हेट्ठिमहेट्ठिमानञ्च उपरुपरिसमापत्तिया अनधिगतत्ता, उपरुपरिपुग्गलानञ्च
असमुग्घाटितकम्मकिलेसनरोधेन पुथुज्जनेहि विय सोतापन्नानं सोतापन्नादीहि पुग्गलन्तरभावूपगमनेन
पटिप्पस्सद्धत्ता च अट्ठपि लोकुत्तरजवनानि यथासकं मग्गफलद्वानं अरियानमेव समुप्यज्जन्ति ।

४८. इदानि तेसं तेसं पुग्गलानं यथापटिक्खित्तजवनानि वज्जेत्वा पारिसेसतो
लब्भमानजवनानि सम्पिण्डेत्वा दस्सेतुं “असेक्खान”न्त्यादि वुत्तं । तिविधसिक्खाय परिपूरकारिभावतो
असेक्खानं खीणासवानं तेत्तिसविधकुसलकुसलस्स, हेट्ठिमफलत्तयस्स, वीथिमुत्तानञ्च
नवमहग्गतविपाकानं वसेन पञ्चचत्तालीसवज्जितानि सेसानि तेवीसतिकामावचरविपाकवीसतिकिरिय-
जरहत्तफलवसेन चतुवत्तालीस वीथिचित्तानि सम्भवा यथालाभं कामभवे टित्तानं वसेन उद्विसे ।

सेक्खानं अट्टारसकिरियजवनदिट्ठिविचिकिच्छासहगतपञ्चकअग्गफलमहग्गतविपाकवसेन
तेत्तिस वज्जेत्वा तेवीसतिकामावचरविपाकआवज्जनद्वयएकवीसतिकुसलसत्ताकुसलहेट्ठिमफलत्तय-वसेन
छप्पञ्जास वीथिचित्तानि यथासम्भवं उद्विसे अविसेसतो । विसेसतो पन सोतापन्नसकदागामीनं
एकपञ्जास, अनागामीनं एकूनपञ्जास, अवसेसानं चतुञ्चं पुथुज्जनानं अट्टारसकिरियजवन-
सब्बलोकुत्तरमहग्गतविपाकवसेन पञ्चवत्तिस वज्जेत्वा अवसेसानि कामावचरविपाक-
आवज्जनद्वयलोकियकुसलकुसलवसेन चतुपञ्जास वीथिचित्तानि यथासम्भवतो उद्विसे अविसेसतो ।
विसेसतो पन तिहेतुकानं चतुपञ्जासेव लब्भन्ति, दिहेतुकाहेतुकानं जाणसम्पयुत्तविपाक-
अप्पनाजवनवज्जितानि एकचत्तालीस, आपायिकानं तानेव दिहेतुकविपाकवज्जितानि सत्तत्तिस
वीथिचित्तानीति दट्ठब्बं ।

पुग्गलानं वसेन चित्तप्पवत्तिभेदो पुग्गलभेदो ।

पुग्गलभेदवण्णना निट्ठिता ।

भूमिविभागवण्णना

४९. सब्बानिपि वीथिचित्तानि उपलब्भन्ति छत्रं द्वारानं, सब्बेसञ्च पुग्गलानं तत्थ
सम्भवतो । यथारहन्ति तं तं भवानुरूपं, तं तं पुग्गलानुरूपञ्च ।

५२. त्यादिना धानविञ्जाणादीनम्मि पटिक्खेपो हेस्सतीति रूपावचरभूमियं
पटिघजवनतदारम्मणानेव पटिक्खित्तानि । सब्बत्थापीति कामभवे, रूपभवे, अरूपभवे च ।

५४. कामभवे यथारहं वीथिमुत्तवज्जानि असीति वीथिचित्तानि, रूपभवे
पटिघद्वयअट्टतदारम्मणधानादि-विञ्जाणछक्कवीथिमुत्तकवसेन पञ्चवीसति वज्जेत्वा सेसानि
आवज्जनद्वयनवअहेतुकविपाकतेपञ्जासजवनवसेन चतुसट्ठि, अरूपे भवे तेवीसतिकामावचरविपाक-
पटममग्गपञ्चदसरूपावचरपटिघद्वयआरुप्पविपाककिरियमनोधेतुहस-नवसेन सत्तचत्तालीस वज्जेत्वा
सेसानि छब्बीसति परित्तजवनअट्टआरुप्पजवनसत्तलोकुत्तरजवनमनोद्वारावज्जनवसेन द्वेचत्तालीस
चित्तानि लब्भरे उपलब्भन्ति ।

केचि पन “रूपभवे अनिट्टारम्मणाभावतो इधागतानयेव ब्रह्मानं अकुसलविपाकसम्भवोति
तानि परिहापेत्वा पञ्चपरित्तविपाकेहि सद्धिं रूपभवे सट्ठियेव वीथिचित्तानी”ति वदन्ति । इध पन तत्थ
ठत्वापि इमं लोकं पस्सन्तानं अनिट्टारम्मणस्स असम्भवो न सक्का वत्तुन्ति तेहि सद्धियेव तत्थ
चतुसट्ठि वुत्तानि । एवञ्च कत्वा वुत्तं धम्मनुसारणियं “यदा ब्रह्मानो कामावचरं अनिट्टारम्मणं
आलम्बन्ति, तदा तं सुगतियम्मि अकुसलविपाकचक्खुसोतविञ्जाण-मनोधेतुसन्तीरणानं उप्पत्ति
सम्भवती”ति ।

भूमिवसेन विभागो भूमिविभागो ।

भूमिविभागवर्णना निद्रिता ।

५५. यथासम्भवन्ति तं तं द्वारेषु, तं तं भवेषु वा सम्भवानुरूपतो । यावतायुकन्ति पटिसन्धितो परं भवनिकन्तिवसेन पवत्तमनोद्वारिकचित्तवीथितो पट्टाय चुतिचितावसानं, ततो पुब्बे पवत्तभवद्भावसानं वा अब्बोच्छिन्ना असति निरोधसमापत्तियन्ति अधिप्पायो ।

इति अभिधम्मत्थविभाविनिया नाम अभिधम्मत्थसङ्ग्रहवर्णनाय वीथिपरिच्छेदवर्णना निद्रिता ।

५. वीथिमुत्तपरिच्छेदवर्णना

१. एतावता वीथिसङ्ग्रहं दस्सेत्वा इदानि वीथिमुत्तसङ्ग्रहं दस्सेतुमारभन्तो आह “वीथिचित्तवसेनेव” न्यादि । एवं यथावुत्तनयेन वीथिचित्तवसेन पवत्तियं पटिसन्धितो अपरभागे चुतिपरियोसानं पवत्तिसङ्ग्रहो नाम सङ्ग्रहो उदीरितो, इदानि तदनन्तरं सन्धियं पटिसन्धिकाले, तदासन्नताय तं गहणेनेव गहितचुतिकाले च पवत्तिसङ्ग्रहो वुच्चतीति योजना ।

भूमिचतुक्कवर्णना

३. पुञ्जसम्पत्ता अया येभुय्येन अपगतोति अपायो, सोयेव भूमि भवन्ति एत्थ सत्ताति अपायभूमि । अनेकविधसम्पत्तिअधिद्वानताय सोभना गन्तव्वतो उपपज्जितव्वतो गतीति सुगति, कामतण्हासहचरिता सुगति कामसुगति, सायेव भूमीति कामसुगतिभूमि । एवं सेसेसुपि ।

४. अयतो सुखतो निग्गतोति निरयो । तिरो अञ्चिताति तिरच्छाना, तेसं योनि तिरच्छानयोनि । यवन्ति ताय सत्ता अभिस्सितापि समानजातिताय भिस्सिता विय होन्तीति योनि । सा पन अत्थतो खन्धानं पवत्तिवसेसो । पक्कडेन सुखतो इता गताति पेता, निज्जामतण्हिकादिभेदानं पेतानं विसयो पेतिविसयो । एत्थ पन तिरच्छानयोनिपेत्तिविसयगहणेन खन्धानंयेव गहणं तेसं तादिसस्स परिच्छिन्नोकासस्स अभावतो । यत्थ वा ते अरञ्जपव्वतपादादिके निबद्धवासं वसन्ति, तादिसस्स ठानस्स वसेन ओकासोपि गहेतव्वो । न सुरन्ति इस्सरियकीळादीहि न दिव्वन्तीति असुरा, पेतसुरा । इतरे पन न सुरा सुरप्पटिपक्खाति असुरा, इध च पेतसुरानमेव गहणं इतरेसं तावत्तिसेसु गहणस्स इच्छितत्ता । तथा हि वुत्तं आचरियेन—“तावत्तिसेसु देवेषु, वेपचित्तासुरा गता”ति ।^{२५६}

५. सतिसुरभावब्रह्मचरिययोग्यतादिगुणेहि उक्कट्टमनताय मनो उस्सन्नं एतेसन्ति मनुस्सा । तथा हि परमसतिनेपक्कादिप्पत्ता बुद्धादयोपि मनुस्सभूतायेव । जम्बुदीपवासिनो चेत्थ निप्परियायतो मनुस्सा । तेहि पन समानरूपादिताय सद्धिं परित्तदीपवासीहि इतरमहादीपवासिनोपि “मनुस्सा”ति वुच्चन्ति । लोकिया पन “मनुनो आदिखत्तियस्स अपच्चं पुत्ताति मनुस्सा”ति वदन्ति । मनुस्सानं निवासभूता भूमि इध मनुस्सा । एवं सेसेसुपि ।

चतुसु महाराजेसु भत्ति एतेसं, चतुन्नं वा महाराजानं निवासद्वानभूते चातुमहाराजे भवाति चातुमहाराजिका । माघेन माणवेन सद्धिं तेत्तिस सहपुञ्जकारिनो एत्थ निव्वत्ताति तं सहचरितद्वानं तेत्तिसं, तदेव तावत्तिसं, तं निवासो एतेसन्ति तावत्तिसाति वदन्ति । यस्मा पन “सहस्सं

^{२५६} नाम० परि० ४३८

चातुमहाराजिकानं सहस्सं तावतिसान”न्ति^{२५७} वचनतो सेसचक्कवाळेसुपि छकामावचरदेवलोका अत्थि, तस्मा नाममत्तमेव एतं तस्स देवलोकस्साति गहेतब्बं। दुक्खतो याता अपयाताति यामा। अत्तनो सिरिसम्पत्तिया तुसं पीतिं इता गताति तुसिता। निम्माने रति एतेसन्ति निम्मानरतिनो। परनिम्मितेसु भोगेसु अत्तनो वसं वत्तेन्तीति परनिम्मितवसवत्तिनो।

७. महाब्रह्मानं परिचारिकता तेसं परिसति भवाति ब्रह्मपारिसज्जा। तेसं पुरोहितद्वाने ठितत्ता ब्रह्मपुरोहिता। तेहि तेहि ज्ञानादीहि गुणविसेसेहि ब्रूहिता परिवुद्धाति ब्रह्मानो, वण्णवन्तताय चेव दीघायुकतादीहि च ब्रह्मपारिसज्जादीहि महन्ता ब्रह्मानोति महाब्रह्मानो। तयोपेते पणीतरतनपभावभासितसमानतलवासिनो।

८. उपरिमेहि परित्ता आभा एतेसन्ति परित्ताभा। अप्पमाणा आभा एतेसन्ति अप्पमाणाभा। वलाहकतो विज्जु विय इतो चितो च आभा सरति निस्सरति एतेसं सप्पीतिकज्झाननिब्बत्तक्खन्धसन्तानत्ताति आभस्सरा। दण्डदीपिकाय वा अच्चि विय एतेसं सरीरतो आभा छिज्जित्वा छिज्जित्वा पतन्ती विय सरति निस्सरतीति आभस्सरा। यथावुत्ताय वा पभाय आभासनसीलाति आभस्सरा। एतेपि तयो पणीतरतनपभावभासितेकतलवासिनो।

९. सुभाति एकग्घना अचला सरीराभा वुच्चति, सा उपरिब्रह्मेहि परित्ता एतेसन्ति परित्तसुभा। अप्पमाणा सुभा एतेसन्ति अप्पमाणासुभा। पभासमुदयसङ्घातेहि सुभेहि किण्णा आकिण्णाति सुभकिण्हा। “सुभाकिण्णा”ति च वत्तब्बे आ-सद्दस्स रस्सत्तं, अन्तिमण-कारस्स च ह-कारं कत्वा “सुभकिण्हा”ति वुत्तं। एतेपि पणीतरतनपभावभासितेकतलवासिनो।

१०. ज्ञानप्पभावनिब्बत्तं विपुलं फलमेतेसन्ति वेहप्फला। सज्जाविरागभावानिब्बत्त-रूपसन्तमित्तता नत्थि सज्जा, तं मुखेन वुत्तावसेसा अरूपक्खन्धा च एतेसन्ति असज्जा। तेयेव सत्ताति असज्जसत्ता। एतेपि पणीतरतनपभावभासितेकतलवासिनो। सुद्धानं अनागामिअरहन्तानमेव आवासाति सुद्धावासा। अनुनयपटिघाभावतो वा सुद्धो आवासो एतेसन्ति सुद्धावासा, तेसं निवासभूमिपि सुद्धावासा।

११. इमेसु पन पटमत्तलवासिनो अप्पकेन कालेन अत्तनो ठानं न विजहन्तीति अविहा। दुतियतलवासिनो न केनचि तप्पन्तीति अतप्पा। ततियतलवासिनो परमसुन्दररूपता सुखेन दिस्सन्तीति सुदस्सा। चतुत्थतलवासिनो सुपरिसुद्धदस्सन्ता सुखेन पस्सन्तीति सुदस्सिनो। पञ्चमत्तलवासिनो पन उक्कट्टसम्पत्तिकता नत्थि एतेसं कनिट्टाभावोति अकनिट्टा।

१२. आकासानज्जायतने पवत्ता पटमारुप्पविपाकभूतचतुक्खन्धा एव, तेहि परिच्छिन्न-ओकासो वा आकासानज्जायतनभूमि। एवं सेसेसुपि।

१३. पुधुज्जना, सोतापन्ना च सकदागामिनो चापि पुग्गला सुद्धावासेसु सब्बथा न लब्धन्तीति सम्बन्धो। पुधुज्जनादीनज्ज पटिक्खेपेन अनागामिअरहन्तानमेव तत्थ लाभो वुत्तो होति।

१४. सेसद्धानेसूति सुद्धावासअपायअसज्जिवज्जितेसु सेसद्धानेसु अरिया, अनरियापि च लब्धन्ति।

भूमिचतुक्कवण्णना निट्ठिता।

पटिसन्धिचतुक्कवण्णना

१६. ओक्कन्तिकखणेति पटिसन्धिकखणे।
 १७. जातिया अन्धो जच्चन्धो। किञ्चापि जातिकखणे अण्डजजलाबुजा सब्बेपि अचक्खुकाव। तथापि चक्खादिउप्पज्जनारहकालेपि चक्खुप्पत्तिविबन्धककम्पट्टिबाहितसामत्थियेन

दित्रपटिसन्धिना, इतरेनपि वा कम्पेन अनुष्पादेतव्वचक्खुको सत्तो जच्चन्धो नाम। अपरे पन “जच्चन्धोति पसूतियंयेव अन्धो, मातुकुच्छियं अन्धो हुत्वा निक्खन्तोति अन्धो, तेन दुहेतुकतिहेतुकानं मातुकुच्छियं चक्खुस्स अविपज्जनं सिद्ध”न्ति वदन्ति। जच्चन्धादीनन्ति एत्थ आदिग्गहणेन जच्चबधिरजच्चमृगजच्चजळजच्चुम्मत्तकपण्डक-उभतोव्यञ्जनकनपुंसकमम्पादीनं सङ्गहो। अपरे पन “एकच्चे अहेतुकपटिसन्धिका अविकलिन्द्रिया हुत्वा थोकं विचारणपकतिका होन्ति, तादिसानम्पि आदिसद्देन सङ्गहो”ति वदन्ति। भुम्मदेवे सिता निस्सिता तग्गतिकत्ताति भुम्मस्सिता। सुखसमुस्सयतो विनिपाताति विनिपातिका।

१८. सब्बथापि कामसुगतियन्ति देवमनुस्सवसेन सत्तविधायपि कामसुगतियं।

२१. तेसूति यथावुत्तपटिसन्धियुत्तेसु पुग्गलेसु, अपायादीसु वा। आयुष्पमाणगणनाय नियमो नत्थि केसञ्चि चिरायुकत्ता, केसञ्चि चिरतरायुकत्ता च। तथाचाहु-

“आपायिकमनुस्सायुपरिच्छेदो न विज्जति।

तथा हि कालो मन्धाता, यक्खा केचि चिरायुनो”ति ॥-

अपायेसु हि कम्ममेव पमाणं, तत्थ निब्बतानं याव कम्मं नखीयति। ताव चवनाभावतो, तथा भुम्मदेवानं। तेसुपि हि निब्बत्ता केचि सत्ताहादिकालं तिड्ढन्ति, केचि कप्पमत्तम्पि, तथा मनुस्सानम्पि कदाचि तेसम्पि असङ्खेय्यायुकत्ता कदाचि दसवस्सायुकत्ता। “यो चिरं जीवति, सो वस्ससतं जीवति, अप्पं वा भिय्यो^{२५८}, दुतियं वस्ससतं न पापुणातो”ति इदं पन अज्जतनकालिके सन्धाय वुत्तं।

२२. दिब्बानि पञ्चवस्ससतानीति मनुस्सानं पञ्जास वस्सानि एकदिनं, तदनुरूपतो माससंवच्छरे परिच्छिन्दित्वा दिब्बप्पमाणानि पञ्चवस्ससतानि आयुष्पमाणं होति। वुत्तम्पि चेत्तं-

“यानि पञ्जास वस्सानि, मनुस्सानं दिनो तर्हिं।

तिंसरत्तिदिवो मासो, मासा द्वादस संवच्छरं।

तेन संवच्छरेनायु, दिब्बं पञ्चसतं मत”न्ति ॥

मनुस्सगणनायाति मनुस्सानं संवच्छरगणनाय। ततो चतुग्गुणन्ति चातुमहाराजिकानं पञ्जासमानुस्सकवस्सपरिभितं दिवसं, दिब्बानि च पञ्चवस्ससतानि दिग्गुणं कत्वा दिब्बवस्ससहस्सानि तावतिसानं सम्भवतीति एवं दिवससंवच्छरदिग्गुणवसेन चतुग्गुणं, तं पन दिब्बगणनाय वस्ससहस्सं, मनुस्सगणनाय सट्ठिवस्ससतसहस्साधिकतिकोटिप्पमाणं होति। ततो चतुग्गुणं यामानन्ति तावतिसानमायुष्पमाणतो वुत्तनयेन चतुग्गुणं, दिब्बगणनाय द्विसहस्सं, मनुस्सगणनाय चत्तालीसवस्ससतसहस्साधिका चुद्दस वस्सकोटियो होन्ति। ततो चतुग्गुणं तुसितानन्ति दिब्बानि चत्तारि वस्ससहस्सानि, मनुस्सगणनाय सट्ठिवस्ससतसहस्साधिका सत्तपञ्जास वस्सकोटियो। ततो चतुग्गुणं निम्मानरतीनन्ति दिब्बानि अट्ठवस्ससहस्सानि, मनुस्सगणनाय द्वे वस्सकोटिसतानि चत्तालीसवस्ससतसहस्साधिका तिस वस्सकोटियो च। ततो चतुग्गुणं परनिम्मितवसवत्तीनन्ति दिब्बानि सोढस वस्ससहस्सानि।

२३. मनुस्सगणनं पन सयमेव दस्सेन्तो आह “नवसतज्जा”त्यादि। वस्सानं सम्बन्धि नवसतं एकवीस कोटियो, तथा सट्ठि च वस्ससतसहस्सानि वसवत्तीसु आयुष्पमाणन्ति सम्बन्धो।

२५. दुतियज्झानभूमियन्ति चतुक्कनयवसेन वुत्तं। ततो परं पवत्तियं, चवनकाले च तथारूपमेव भवङ्गचुत्तिवसेन पवत्तित्वा निरुज्झतीति योजना।

२९. तेसूति ताहि गहितपटिसन्धिकेसु ब्रह्मेसु। कप्पस्साति असङ्खेय्यकप्पस्स। न हि ब्रह्मपारिसज्जादीनं तिण्णं महाकप्पवसेन आयुपरिच्छेदो सम्भवति एककप्पेपि तेसं अविनासाभावेन

^{२५८} दी० नि० २.७; सं० नि० १.१४५; अ० नि० ७.७४

परिपुण्णकम्पे असम्भवतो। तथा हेस^{२५९} लोको सत्तवारेसु अग्गिना विनस्सति, अट्टमे वारे उदकेन, पुन सत्तवारेसु अग्गिना, अट्टमे वारे उदकेनाति एवं अट्टसु अट्टकेसु परिपुण्णेसु पच्छिमे वारे वातेन विनस्सति। तत्थ पठमज्झानतलं उपादाय अग्गिना, दुतियततियज्झानतलं उपादाय उदकेन, चतुत्थज्झानतलं उपादाय वातेन विनस्सति। वुत्तम्पि चेत्तं-

“सत्त सत्तग्गिना वारा, अट्टमे अट्टमे दका।

चतुसट्ठि यदा पुण्णा, एको वायुवरो सिया ॥

“अग्गिनाभस्सरा हेट्ठा, आपेन सुभकिण्हतो।

वेहप्फलतो वातेन, एवं लोको विनस्सती”ति ॥-

तस्मा तिण्णम्पि पठमज्झानतलानं एककम्पेपि अविनासाभावतो सकलकम्पे तेसं सम्भवो नत्थीति असङ्ख्येयकम्पवसेन तेसं आयुपरिच्छेदो दट्टब्बो। दुतियज्झानादितलतो पट्टाय पन परिपुण्णस्स महाकम्पस्स वसेन, न असङ्ख्येयकम्पवसेन। असङ्ख्येयकम्पोति च योजनायामवित्थारतो सेतसासपरासितो वस्ससतवस्ससतच्चयेन एकेकबीजस्स हरणेन सासपरासिनो परिक्खयेपि अक्खयसभावस्स महाकम्पस्स चतुत्थभागो। सो पन सत्थरोगदुब्धिक्खानं अज्जतरसंवट्टेन बहूसु विनासमुपगतेसु अवसिट्ठसत्तसन्तानप्पवत्तकुसलकम्मानुभावेन दसवस्सतो पट्टाय अनुक्कमेन असङ्ख्येय्यायुक्कम्पमाणेसु सत्तेसु पुन असद्दम्पसभादानवसेन कमेन परिहायित्वा दसवस्सायुकेसु जातेसु रोगादीनं अज्जतरसंवट्टेन सत्तानं विनासप्पत्तियाव “अयमेको अन्तरकम्पो”ति एवं परिच्छिन्नस्स अन्तरकम्पस्स वसेन चतुसट्ठिअन्तरकम्पमाणो होति, “वीसतिअन्तरकम्पमाणो”ति च बदन्ति।

४५. आकासानज्वायतनं उपगच्छन्तीति आकासानज्वायतनूपगा।

४९. एकमेवाति भूमितो, जातितो, सम्पयुत्तधम्मतो, सङ्घारतो च समानमेव। एकजातियन्ति एकस्मिं भवे।

पटिसन्धिचतुक्कवण्णना निट्ठिता।

कम्मचतुक्कवण्णना

५०. इदानि कम्मचतुक्कं चतुहाकारेहि दस्सेतुं “जनक”न्त्यादि आरद्धं, जनयतीति जनकं। उपत्थम्भेतीति उपत्थम्भकं। उपगन्त्वा पीळेतीति उपपीळकं। उपगन्त्वा धातेतीति उपघातकं।

तत्थ पटिसन्धिपवतीसु विपाककटत्तारूपानं निब्बत्तका कुसलाकुसलचेतना जनकं नाम। सयं विपाकं निब्बत्तेतुं असक्कोन्तम्पि कम्मन्तरस्स चिरतरविपाकनिब्बत्तने पच्चयभूतं, विपाकस्सेव वा सुखदुक्खभूतस्स विच्छेदपच्चयानुप्पत्तिया, उपब्रूहनपच्चयुप्पत्तिया च जनकसाम्थियानुरूपं चिरतरप्पवत्तिपच्चयभूतं कुसलाकुसलकम्मं उपत्थम्भकं नाम।

कम्मन्तरजनितविपाकस्स ब्याधिधातुसमतादिनिमित्तविबाधनेन चिरतरप्पवत्तिविनिबन्धकं यं किञ्चि कम्मं उपपीळकं नाम। दुब्बलस्स पन कम्मस्स जनकसाम्थियं उपहच्च विच्छेदकपच्चयुप्पादनेन तस्स विपाकं पटिवाहित्वा सयं विपाकनिब्बत्तककम्मं उपघातकं नाम।

जनकोपघातकानज्जे अयं विसेसो- जनकं कम्मन्तरस्स विपाकं अनुपच्छिन्दित्वा विपाकं जनेति, उपघातकं उपच्छेदनपुब्बकन्ति इदं ताव अट्टकथासु^{२६०} सञ्चिदानं। अपरे पन आचरिया “उपपीळककम्मं बह्वाबाधतादिपच्चयोपसंहारेन कम्मन्तरस्स विपाकं अन्तरन्तरा विबाधति। उपघातकं पन तं सब्बसो उपच्छिन्दित्वा अज्जस्स ओकासं देति, न पन सयं विपाकनिब्बत्तकं। एवञ्चि

^{२५९} विसुद्धि० २.४०९

^{२६०} विसुद्धि० २.६८७; अ० नि० अट्ट० २.३.३४

जनकतो इमस्स विसैसो सुपाकटो”ति वदन्ति। किच्चवसेनाति जननउपत्थम्भन-
उपपीठनउपच्छेदनकिच्चवसेन।

५१. गरुकन्ति महासावज्जं, महानुभावञ्च अञ्जेन कम्मेन पटिबाहितुं असक्कुण्येयकम्मं।
आसन्नन्ति मरणकाले अनुस्सरितं, तदा कतञ्च। आचिण्णन्ति अभिण्हसो कत्तं, एकवारं कत्वापि
वा अभिण्हसो समासेवितं। कटत्ताकम्पन्ति गरुकादिभावं असम्पत्तं कतमत्ततोयेव कम्पन्ति
वत्तब्बकम्मं।

तत्थ कुसलं वा होतु अकुसलं वा, गरुकागरुकेसु यं गरुकं अकुसलपक्खे
मातुघातकादिकम्मं, कुसलपक्खे महग्गतकम्मं वा, तदेव पठमं विपच्चति सतिपि आसन्नादिकम्मे
परित्तं उदकं ओत्थरित्वा गच्छन्तो महोघो विय। तथा हि तं “गरुक”न्ति वुच्चति। तस्मिं असति
दूरासन्नेसु यं आसन्नं मरणकाले अनुस्सरितं, तदेव पठमं विपच्चति, आसन्नकाले कते वत्तब्बमेव
नत्थि। तस्मिंमि असति आचिण्णानाचिण्णेसु च यं आचिण्णं सुसील्यं वा, दुस्सील्यं वा, तदेव
पठमं विपच्चति। कटत्ताकम्मं पन लद्धासेवनं पुरिमानं अभावेन पटिसन्धि आकड्ढतीति गरुकं
सब्बपठमं विपच्चति। गरुके असति आसन्नं, तस्मिंमि असति आचिण्णं, तस्मिंमि असति
कटत्ताकम्मं। तेनाह “पाकदानपरियायेना”ति, विपाकदानानुक्कमेनात्यत्थो। अभिधम्मावतारादीसु
पन आसन्नतो आचिण्णं पठमं विपच्चन्तं कत्वा वुत्तं। यथा पन गोगणपरिपुण्णस्स वजस्स द्वारे विवटे
अपरभागे दम्मगवबलवगवेसु सन्तेसुपि यो वजद्वारस्स आसन्नो होति, अन्तमसो दुब्बलजरगवोपि,
सोयेव पठमत्तरं निक्खमति, एवं गरुकतो अञ्जेसु कुसलाकुसलेसु सन्तेसुपि मरणकालस्स आसन्नता
आसन्नमेव पठमं विपाकं देतीति इध तं पठमं वुत्तं।

५२. दिट्ठधम्मो पच्चक्खभूतो पच्चुप्पन्नो अत्तभावो, तत्थ वेदितब्बं विपाकानुभवनवसेनाति
दिट्ठधम्मवेदनीयं। दिट्ठधम्मतो अनन्तरं उपपज्जित्वा वेदितब्बं उपपज्जवेदनीयं।

अपरे अपरे दिट्ठधम्मतो अञ्जस्मिं यत्थ कत्थचि अत्तभावे वेदितब्बं कम्मं
अपरापरियवेदनीयं। अहोसि एव कम्मं, न तस्स विपाको अहोसि, अत्थि, भविस्सति चाति एवं
वत्तब्बकम्मं अहोसिकम्मं।

तत्थ पटिपक्खेहि अनभिभूतताय, पच्चयविसैसेन पटिलद्धविसैसताय च बलवभावप्पत्ता
तादिसस्स पुब्बाभिसद्धारस्स वसेन सातिसया हुत्वा तस्मियेव अत्तभावे फलदायिनी पठमजवनचेतना
दिट्ठधम्मवेदनीयं नाम। सा हि वुत्तप्पकारेन बलवजनसन्ताने गुणविसैसयुत्तेसु
उपकारानुपकारवसप्पवत्तिया, आसेवनालाभेन अप्पविपाकताय च इतरद्वयं विय
पवत्तसन्तानुपरभापेक्खं, ओकासलाभापेक्खञ्च कम्मं न होतीति इधेव पुप्फमत्तं विय
पवत्तिविपाकमत्तं अहेतुकफलं देति। अत्थसाधिका पन सत्तमजवनचेतना सन्निडापकचेतनाभूता
वुत्तनेन पटिलद्धविसैसा अनन्तरत्तभावे विपाकदायिनी उपपज्जवेदनीयं नाम। सा च पटिसन्धि
दत्त्वाव पवत्तिविपाकं देति। पटिसन्धिया पन अदित्राय पवत्तिविपाकं देतीति नत्थि। चुति अनन्तरञ्चि
उपपज्जवेदनीयस्स ओकासो। पटिसन्धिया पन दित्राय जातिसतेपि पवत्तिविपाकं देतीति आचरिया।
यथावुत्तकआरणविरहतो दिट्ठधम्मवेदनीयादिभावं असम्पत्ता आदिपरियोसानचेतनानं मज्जे पवत्ता पञ्च
चेतना विपाकदानसभावस्स अनुपच्छिन्नता यदा कदाचि ओकासलाभे सति पटिसन्धिपवत्तीसु विपाकं
अभिनिष्फादेन्ती अपरापरियवेदनीयं नाम। सकसककालातीतं पन पुरिमकम्मद्वयं, तत्तियमि च
संसारप्पवत्तिया वोच्छिन्नाय अहोसिकम्मं नाम।

पाककालवसेनाति पच्चुप्पन्ने, तदनन्तरे, यदा कदाचीति एवं पुरिमानं तिण्णं
यथापरिच्छिन्नकालवसेन, इतरस्स तं कालाभाववसेन च। अहोसिकम्मस्स हि कालातिवकमतोव तं
वोहारो।

५३. पाकठानवसेनाति पटिसन्धिया विपच्चनभूमिवसेन।

५४. इदानीं अकुसलादिकम्मानं कायकम्मद्वारादिवसेन पवत्तिं, तं निहंसमुखेन च तेषं पाणातिपातादिवसेन दसविधादिभेदञ्च दस्सेतुं “तत्थ अकुसल”न्यादि आरद्धं।

कायद्वारे पवत्तं कम्मं कायकम्मं। एवं वचीकम्पादीनि।

५५. पाणस्स सणिकं पतितुं अदत्त्वा अतीव पातनं पाणातिपातो। कायवाचाहि अदिन्नस्स आदानं अदिन्नादानं। मेधुनवीतिक्कमसङ्घातेसु कामेसु मिच्छा चरणं कामेसु मिच्छाचारो।

तत्थ पाणोति वोहारतो सत्तो, परमत्थतो जीवित्तिन्द्रियं। तस्मिं पाणे पाणसञ्जिनो जीवित्तिन्द्रियुपच्छेदकम्पयोगसमुद्गापिका वधकचेतना पाणातिपातो। परभण्डे तथासञ्जिनो तदादायकम्पयोगसमुद्गापिका धेय्यचेतना अदिन्नादानं। असद्धम्मसेवनवसेन कायद्वारप्पवत्ता अगन्तब्बद्धानवीतिक्कमचेतना कामेसुमिच्छाचारो नाम। सुरापानम्पि एत्थेव सङ्गह्हेतीति वदन्ति रससङ्घातेसु कामेसु मिच्छाचारभावतो। कायविञ्जत्तिसङ्घाते कायद्वारेति कायेन अधिप्पायविञ्जापनतो, सयञ्च कायेन विञ्जेय्यत्ता कायविञ्जत्तिसङ्घाते अभिक्कमादिजनकचित्तज-वायोधात्वाधिककलापस्स विकारभूते सन्थम्भनादीनं सहकारीकारणभूते चोपनकायभावतो, कम्मानं पवत्तिमुखभावतो च कायद्वारसङ्घाते कम्मद्वारे।

किञ्चापि हि तं तं कम्मसहगतचित्तुप्पादेनेव सा विञ्जत्ति जनीयति। तथापि तस्सा तथा पवत्तमानाय तं समुद्गापककम्मस्स कायकम्पादिवोहारो होतीति सा तस्सेव पवत्तिमुखभावेन वत्तुं लब्धमिति। “कायद्वारे वुत्तितो”ति एत्तकेयेव बुत्ते “यदि एवं कम्मद्वारववत्थानं न सिया। कायद्वारे हि पवत्तं ‘कायकम्म’न्ति बुच्चति, कायकम्मस्स च पवत्तिमुखभूतं ‘कायद्वार’न्ति। पाणातिपातादिकं पन वाचाय आणापेन्तस्स कायकम्मं वचीद्वारेपि पवत्ततीति द्वारेन कम्मववत्थानं न सिया, तथा मुसावादादिं कायविकारेन करोन्तस्स वचीकम्मं कायद्वारेपि पवत्ततीति कम्मेन द्वारववत्थानम्पि न सिया”ति अयं चोदना पच्चुपट्टेय्याति बाहुल्लवुत्तिया ववत्थानं दस्सेतुं “बाहुल्लवुत्तितो”ति वुत्तं। कायकम्मञ्चि कायद्वारेयेव बहुलं पवत्तति, अप्पं वचीद्वारे, तस्मा कायद्वारेयेव बहुलं पवत्तनतो कायकम्मभावो सिद्धो वनचरकादीनं वनचरकादिभावो विय। तथा कायकम्ममेव येभुय्येन कायद्वारे पवत्तति, न इतरानि, तस्मा कायकम्मस्स येभुय्येन एत्थेव पवत्तनतो कायकम्मद्वारभावो सिद्धो ब्राह्मणगामादीनं ब्राह्मणगामादिभावो वियाति नत्थि कम्मद्वारववत्थाने कोचि विबन्धोति अयमेत्थाधिप्पायो।

५६. मुसाति अभूतं वत्थु, तं तच्छतो वदन्ति एतेनाति मुसावादो। पिसति सामग्गिं सञ्चुण्णेति विक्खिपति, पियभावं सुञ्जं करोतीति वा पिसुणा। अत्तानम्पि पराम्पि फरुसं करोति, ककचो विय खरसम्फस्साति वा फरुसा। सं सुखं, हितञ्च फलति विसरति विनासेतीति सम्फं, अत्तनो, परेसञ्च अनुपकारं यं किञ्चि, तं पलपति एतेनाति सम्फप्पलापो।

तत्थ अभूतं वत्थुं भूततो परं विञ्जापेतुकामस्स तथा विञ्जापनप्पयोगसमुद्गापिका चेतना मुसावादो। सो परस्स अत्थभेदकरोव कम्मपथो होति, इतरो कम्ममेव। परेसं भेदकामताय, अत्तप्पियकामताय वा परभेदकरवचीपयोगसमुद्गापिका संकिलिडुचेतना पिसुणवाचा, सापि द्वीसु भिन्नेसुयेव कम्मपथो। परस्स मम्मच्छेदकरवचीपयोगसमुद्गापिका एकन्तफरुसचेतना फरुसवाचा। न हि चित्तसणहताय सति फरुसवाचा नाम होति। सीताहरणादिअनत्थविञ्जापनप्पयोगसमुद्गापिका संकिलिडुचेतना सम्फप्पलापो, सो पन परेहि तस्मिं अनत्थे गहितेयेव कम्मपथो। वचीविञ्जत्तिसङ्घाते वचीद्वारेति वाचाय अधिप्पायं विञ्जापेति, सयञ्च वाचाय विञ्जायतीति वचीविञ्जत्तिसङ्घाते वचीभेदकरप्पयोगसमुद्गापकचित्तसमुद्धानपथवीधात्वाधिककलापस्स विकारभूते चोपनवाचाभावतो, कम्मानं पवत्तिमुखभावतो च वचीद्वारसङ्घाते कम्मद्वारे। बाहुल्लवुत्तितोति इदं वुत्तनयमेव।

५७. परसम्पत्तिं अभिमुखं ज्ञायति लोभवसेन चिन्तेतीति अभिज्जा। व्यापज्जति हितसुखं एतेनाति व्यापादो। मिच्छा विपरीततो परस्सतीति मिच्छादिट्ठि।

तत्थ “अहो वत इदं मम सिया”ति एवं परभण्डाभिज्जायनं अभिज्जा, सा परभण्डस्स अत्तनो नामनेनेव कम्मपथो होति। “अहो वतायं सत्तो विनस्सेय्या”ति एवं मनोपदोसो व्यापादो। “नत्थि दिन्न”न्यादिना नयेन विपरीतदस्सनं मिच्छादिट्ठि। एत्थ पन नत्थिकअहेतुक-अकिरियदिट्ठीहियेव कम्मपथभेदो। इमेसं पन अङ्गादिववत्थानवसेन पपञ्चो तत्थ तत्थ^{२६१} आगतनयेन दट्ठब्बो। अञ्जत्रापि विञ्जत्तियाति कायवचीविञ्जत्तिं विनापि, तं असमुट्ठापेत्वापीत्यत्थो। विञ्जत्तिसमुट्ठापकचित्तसम्पयुत्ता चेत्थ अभिज्जादयो चेतनापक्खिकाव होन्ति।

५८. दोसमूलेन जायन्तीति सहजातादिपच्चयेन दोससङ्घातमूलेन, दोसमूलकचित्तेन वा जायन्ति, न लोभमूलादीहि। हसमानापि हि राजानो दोसचित्तेनेव पाणवधं आणापेन्ति, तथा फरुसवाचाव्यापादेसुपि यथारहं दट्ठब्बं। मिच्छादस्सनस्स अभिनिविसितव्वत्थूसु लोभपुब्बङ्गममेव अभिनिविसनतो आह “मिच्छादिट्ठि च लोभमूलेना”ति।

सेसानि चत्तारिपि दीहि मूलेहि सम्भवन्तीति यो ताव अभिमत्तं वत्थुं, अनभिमत्तं वा अत्तबन्धुपरित्ताणादिप्पयोजनं सन्धाय हरति, तस्स अदिन्नादानं लोभमूलेन होति। वेरिन्यातनत्थं हरन्तस्स दोसमूलेन। नीतिपाठकम्ममाणतो दुट्ठनिग्गहणत्थं परसन्तकं हरन्तानं राजूनं, ब्राह्मणानञ्च “सब्बमिदं ब्राह्मणानं राजूहि दिन्नं, तेसं पन सब्बदुब्बलभावेन अञ्जे परिभुञ्जन्ति, अत्तसन्तकमेव ब्राह्मणा परिभुञ्जन्ती”त्यादीनि वत्त्वा सकसञ्जाय एवं यं किञ्चि हरन्तानं, कम्मफलसम्बन्धापवादीनञ्च मोहमूलेन। एवं मुसावादादीसुपि यथारहं योजेतब्बं।

६३. छसु आरम्भणेषु तिविधकम्मवसेन उप्पज्जमानम्पेतं तिविधनियमेन उप्पज्जतीति आह “तथा दानसीलभावनावसेना”ति। दसथा निहिसियमानानं हि दिन्नं, पुन दिन्नं, तिण्णञ्च यथाक्कमं दानादीसु तीरखेव सङ्गहो। कारणं पनेत्थ परतो वक्खाम। छठारम्भणेषु पन तिविधकम्मदारेसु च नेसं पवत्तियोजना अट्ठकथादीसु^{२६२} आगतनयेन गहेतब्बा।

६५. दीयति एतेनाति दानं, परिच्चागचेतना। एवं सेसेसुपि। सीलतीति सीलं, कायवचीकम्मनि समादहति, सम्मा ट्पेतीत्यत्थो, सीलयति वा उपधारेतीति सीलं, उपधारणं पनेत्थ कुसलानं अधिद्वानभावो। तथा हि वुत्तं “सीले पतिट्ठाया”त्यादि^{२६३}। भावेति कुसले धम्मे आसेवति वड्ढेति एतायाति भावना। अपचायति पूजावसेन सामीचि करोति एतेनाति अपचायनं। तं तं किच्चकरणे व्यावटस्स भावो वेय्यावच्चं। अत्तनो सन्ताने निब्बत्ता पत्ति दीयति एतेनाति पत्तिदानं। पत्ति अनुमोदति एतायाति पत्तानुमोदना। धम्मं सुणन्ति एतेनाति धम्मस्सवनं। धम्मं देसेन्ति एतायाति धम्मदेसना। दिट्ठिया उजुकरणं दिट्ठिजुकम्मं।

तत्थ सानुसयसन्तानवतो परेसं पूजानुग्गहकामताय अत्तनो विज्जमानवत्थु-परिच्चजनवसप्पवत्तचेतना दानं नाम, दानवत्थुपरियेसनवसेन, दिन्नस्स सोमनस्सचित्तेन अनुस्सरणवसेन च पवत्ता पुब्बपच्छाभागचेतना एत्थेव समोधानं गच्छन्ति। एवं सेसेसुपि यथारहं दट्ठब्बं। निच्चसीलादिवसेन पञ्च, अट्ठ, दस वा सीलानि समादियन्तस्स, परिपूरेन्तस्स, असमादियित्वापि सम्पत्तकायवचीदुच्चरिततो विरमन्तस्स, पब्बजन्तस्स, उपसम्पदमाळके संवरं समादियन्तस्स, चतुपारिसुद्धिसीलं परिपूरेन्तस्स च पवत्तचेतना सीलं नाम। चत्तालीसाय कम्मदानेषु, खन्धादीसु च भूमीसु परिकम्मसम्पसनवसप्पवत्ता अप्पनं अप्पत्ता गोत्रभुपरियोसान-चेतना भावना नाम, निरवज्जविज्जादिपरियापुणनचेतनापि एत्थेव समोधानं गच्छति।

वयसा, गुणेहि च जेट्ठानं चीवरादीसु पच्चासारहितेन असंकिलिट्ठिज्जासयेन पच्चुट्ठानआसनाभिनीहारादि-विधिना बहुमानकरणचेतना अपचायनं नाम। तेसमेव, गिलानानञ्च यथावुत्तज्जासयेन तं तं किच्चकरणचेतना वेय्यावच्चं नाम। अत्तनो सन्ताने निब्बत्तस्स पुञ्जस्स परेहि

^{२६१} दी० नि० अट्ठ० १.८; ध० स० अट्ठ० १ अकुसलकम्मपथकथा; पारा० अट्ठ० २.१७२

^{२६२} ध० स० अट्ठ० १५६-१५९

^{२६३} सं० नि० १.२३, १९२

साधारणभावं पच्चासीसनचेतना पत्तिदानं नाम। परेहि दिन्नस्स, अदिन्नस्सपि वा पुञ्जस्स मच्छेरमलविनिस्सटेन चित्तेन अब्भानुमोदनचेतना पत्तानुमोदना नाम। एवमिदं धम्मं सुत्वा तत्थ वुत्तनयेन पटिपज्जन्तो “लोकियलोकुत्तरगुणविसेसस्स भागी भविस्सामि, बहुस्सुतो वा हुत्वा परेसं धम्मदेसनादीहि अनुगण्हस्सामी”ति एवं अत्तनो, परेसं वा हितफरणवसम्पवत्तेन असंकिलिद्दुञ्जासयेन हितूपदेससवनचेतना धम्मस्सवनं नाम, निरवज्जविज्जादिसवनचेतनापि एत्थेव सङ्गहति। लाभसक्कारादिनिरपेक्खताय योनिस्तो मनसि करोतो हितूपदेसचेतना धम्मदेसना नाम, निरवज्जविज्जादिउपदिसनचेतनापि एत्थेव सङ्गहं गच्छति। “अत्थि दिन्न”न्यादिनयम्पवत्तसम्मा-दस्सनवसेन दिट्ठिया उजुकरणं दिट्ठिजुकम्मं नाम।

यदि एवं आणविष्पयुत्तचित्तुप्पादस्स दिट्ठिजुकम्मपुञ्जकिरियभावो न लभतीति? नो न लभति पुरिमपच्छिमचेतनान्मि तं तं पुञ्जकिरियास्वेव सङ्गहनतो। किञ्चापि हि उजुकरणवेलायं जाणसम्पयुत्तमेव चित्तं होति, पुरिमपच्छाभागे पन जाणविष्पयुत्तम्मि सम्भवतीति तस्सपि दिट्ठिजुकम्मभावो उपपज्जतीति अलमतिष्पपज्जेन।

इमेसु पन दससु पत्तिदानानुमोदना दाने सङ्गहं गच्छन्ति तं सभावता। दानम्मि हि इस्सामच्छेरानं पटिपक्खं, एतेपि। तस्मा सभानप्पटिपक्खताय एकलक्खणता ते दानमयपुञ्जकिरियवत्थुम्हि सङ्गहन्ति। अपचायनवेय्यावच्चासीलमयपुञ्जेव सङ्गहन्ति चारित्तसीलभावतो। देसनासवनदिट्ठिजुका पन कुसलधम्मासेवनभावतो भावनामये सङ्गहं गच्छन्तीति^{२६४} आचरियधम्मपालत्थेरेन वुत्तं। अपरे पन “देसेन्तो, सुणन्तो च देसनानुसारेण जाणं पेसेत्वा लक्खणानि पटिविज्ज पटिविज्ज देसेति, सुणाति च, तानि च देसनासवनानि पटिवेधमेवाहरन्तीति देसनासवनाभावनामये सङ्गहं गच्छन्तीति”ति वदन्ति। धम्मदानसभावतो देसना दानमये सङ्गहं गच्छतीतिपि सक्का वत्तुं। तथा हि वुत्तं “सब्बदानं धम्मदानं जिनाती”ति^{२६५}। तथा दिट्ठिजुकम्मं सब्बत्थापि सब्बेसं नियमनलक्खणता। दानादीसु हि यं किञ्चि “अत्थि दिन्न”न्यादिनयम्पवत्ताय सम्मादिट्ठिया विसोधितं महफलं होति महानिसंसं, एवञ्च कत्वा दीघनिकायडुकथायं^{२६६} “दिट्ठिजुकम्मं सब्बेसं नियमलक्खण”न्ति वुत्तं। एवं दानसीलभावनावसेन तीसु इतरेसं सङ्गहनतो सङ्गेपतो तिविधमेव पुञ्जकिरियवत्थु होतीति दडुब्बं, तथा चेव आचरियेन हेट्ठा दस्सितं।

६७. मनोकम्ममेव विज्जत्तिसमुद्गापकत्ताभावेन कायद्वारादीसु अप्पवत्तनतो। तज्ज रूपावचरकुसलं भावनामयं दानादिबसेन अप्पवत्तनतो। अप्पनाप्पत्तं पुब्बभागप्पवत्तानं कामावचरभावतो। ज्ञानङ्गभेदेनाति पटिपदादिभेदतो अनेकविधत्तेपि अङ्गातिक्कमवसेन निब्बत्तज्ज्ञानङ्गभेदतो पञ्चविधं होति।

६८. आरम्भणभेदेनाति कसिणुगघाटिमाकासं, आकासविसयं मनो, तदभावो, तदालम्बं विज्जाणन्ति चतुब्बिधन्ति इमेसं चतुन्नं आरम्भणानं भेदेन।

६९. एत्थाति इमेसु पाकट्टानवसेन चतुब्बिधेसु कम्मेषु। उद्धचरहितन्ति उद्धचसहगतचेतनारहितं एकादसविधं अकुसलकम्मं। किं पनेत्थ कारणं अधिमोक्खविरहेन सब्बदुब्बलम्मि विचिकिच्छासहगतं पटिसन्धि आकट्ठति, अधिमोक्खसम्पयोगेन ततो बलवन्तम्मि उद्धचसहगतं नाकट्ठतीति ? पटिसन्धदानसभावाभावतो। बलवं आकट्ठति, दुब्बलं नाकट्ठतीति हि अयं विचारणा पटिसन्धदानसभावेसुयेव। यस्स पन पटिसन्धदानसभावोयेव नत्थि, न तस्स बलवभावो पटिसन्धिआकट्ठने कारणं।

^{२६४} दी० नि० टी० ३.३०५

^{२६५} ध० प० ३५४

^{२६६} दी० नि० अट्ठ० ३.३०५; ध० स० अट्ठ० १५६-१५९ पुञ्जाकिरियवत्थादिकथा

कथं पनेतं विञ्जातब्बं उद्धच्चसहगतस्स पटिसन्धिदानसभावो नत्थीति? दस्सनेनपहातब्बेसु अनागतत्ता। तिविधा हि अकुसला दस्सनेन पहातब्बा, भावनाय पहातब्बा, सिया दस्सनेन पहातब्बा, सिया भावनाय पहातब्बाति। तत्थ दिट्ठिसहगतविकिकिच्छासहगत-चित्तुप्पादा दस्सनेन पहातब्बा नाम पठमं निब्बानदस्सनवसेन “दस्सन”न्ति लद्धनामेन सोतापत्तिमग्गेन पहातब्बत्ता। उद्धच्चसहगतचित्तुप्पादो भावनाय पहातब्बो नाम अग्गमग्गेन पहातब्बत्ता। उपरिमग्गतयज्जि पठममग्गेन दिट्ठनिब्बाने भावनावसेन पवत्तनतो “भावना”ति वुच्चति। दिट्ठिविप्पयुत्तदोमनस्ससहगतचित्तुप्पादा पन सिया दस्सनेन पहातब्बा, सिया भावनाय पहातब्बा तेसं अपायनिब्बत्तकावत्थाय पठममग्गेन, सेसबहलाबहलावत्थाय उपरिमग्गेहि पहीयमानत्ता। तत्थ सिया दस्सनेन पहातब्बम्पि दस्सनेन पहातब्बसामज्जेन इध “दस्सनेन पहातब्ब”न्ति वोहरन्ति।

यदि च उद्धच्चसहगतं पटिसन्धि ददेय्य, तदा अकुसलपटिसन्धिया सुगतियं असम्भवतो अपायेस्वेव ददेय्य। अपायगमनीयञ्च अवस्सं दस्सनेन पहातब्बं सिया। इतरथा अपायगमनीयस्स अप्पहीनत्ता सेक्खानं अपायुप्पत्ति आपज्जति, न च पनेतं युत्तं “चतूहपायेहि च विप्पमुत्तो”^{२६७}, अविनिपातधम्मो”ति”^{२६८} आदिवचनेहि सह विरुद्धनतो। सति च पनेतस्स दस्सनेन पहातब्बभावे “सिया दस्सनेन पहातब्बा”ति इमस्स विभङ्गे वत्तब्बं सिया, न च पनेतं वुत्तन्ति। अथ सिया “अपायगामिनियो रागो दोसो मोहो तदेकट्ठा च किलेसा”ति एवं दस्सनेन पहातब्बेसु वुत्तत्ता उद्धच्चसहगतचेतनाय तत्थ सङ्गहो सक्का वत्तन्ति। तं न, तस्स एकन्ततो भावनाय पहातब्बभावेन वुत्तत्ता। वुत्तञ्हेतं- “कतमे धम्मा भावनाय पहातब्बा? उद्धच्चसहगतो चित्तुप्पादो”ति”^{२६९}, तस्मा दस्सनेन पहातब्बेसु अवचनं इमस्स पटिसन्धिदानाभावं साधेति। ननु च पटिसम्भिदाविभङ्गे-

“यस्मिं समये अकुसलं चित्तं उप्पन्नं होति उपेक्खासहगतं उद्धच्चसम्पयुत्तं रूपारम्पणं वा...पे०... धम्मारम्पणं वा, यं यं वा पनारब्भ तस्मिं समये फस्सो होति...पे०... अविक्खेपो होति, इमे धम्मा अकुसला। इमेषु धम्मेषु जाणं धम्मपटिसम्भिदा, तेसं विपाके जाणं अत्थपटिसम्भिदा”ति”^{२७०}-

एवं उद्धच्चसहगतचित्तुप्पादं उद्धरित्वा तस्स विपाकोपि उद्धटोति कथमस्स पटिसन्धिदानाभावो सम्पटिच्छित्तब्बोति? नायं पटिसन्धिदानं सन्धाय उद्धटो। अथ खो पवत्तिविपाकं सन्धाय। पट्टाने पन-

“सहजाता दस्सनेन पहातब्बा चेतना चित्तसमुद्धानानं रूपानं कम्मपच्चयेन पच्चयो, नानाक्खणिका दस्सनेन पहातब्बा चेतना विपाकानं खन्धानं, कटत्ता च रूपानं कम्मपच्चयेन पच्चयो”ति”^{२७१}-

दस्सनेन पहातब्बचेतनाय एव सहजातानानाक्खणिककम्मपच्चयभावं उद्धरित्वा “सहजाता भावनाय पहातब्बा चेतना चित्तसमुद्धानानं रूपानं कम्मपच्चयेन पच्चयो”ति”^{२७२} भावनाय पहातब्बचेतनाय सहजातकम्मपच्चयभावोव उद्धटो, न पन नानाक्खणिककम्म-पच्चयभावो, न च नानाक्खणिककम्मपच्चयं विना पटिसन्धि आकङ्कनं अत्थि, तस्मा नत्थि तस्स सब्बथापि पटिसन्धिदानन्ति। यं पनेके वदन्ति “उद्धच्चचेतना उभयविपाकम्पि न देति पट्टाने नानाक्खणिककम्मपच्चयभावस्स अनुद्धटत्ता”ति, तं तेसं मतिमत्तं पटिसम्भिदाविभङ्गे उद्धच्चसहगतानम्पि पवत्तिविपाकस्स उद्धटत्ता, पट्टाने च पटिसन्धिविपाकभावमेव सन्धाय

^{२६७} खु० पा० ६.११; सु० नि० २३४

^{२६८} पारा० २१; सं० नि० ५.९९८

^{२६९} ध० स० १४०६

^{२७०} विम० ७३०-७३१

^{२७१} पट्टा० २.८.८९

^{२७२} पट्टा० २.८.८९

नानावर्णिककम्मपचयभावस्स अनुद्धत्ता। यदि हि पवत्तिविपाकं सन्धाय नानावर्णिककम्मपचयभावो बुच्चेय्य, तदा पटिसन्धिविपाकम्मिस्स मज्जेय्युन्ति लब्भमानस्सपि पवत्तिविपाकस्स वसेन नानावर्णिककम्मपचयभावो न बुत्तो, तस्मा न सक्का तस्स पवत्तिविपाकं निवारेतुं। तेनाह “पवत्तियं पना”त्यादि। आचरियबुद्धमित्तादयो पन अत्थि उद्वच्चसहगतं भावनाय पहातब्बम्मि। अत्थि न भावनाय पहातब्बम्मि, तेसु भावनाय पहातब्बं सेक्खसन्तानप्पवत्तं, इतरं पुथुज्जनसन्तानप्पवत्तं, फलदानञ्च पुथुज्जनसन्तानप्पवत्तस्सेव न इतरस्साति एवं उद्वच्चसहगतं दिधा विभजित्वा एकस्स उभयविपाकदानं, एकस्स सब्बथापि विपाकाभावं वण्णेन्ति। यो पनेत्थ तेसं विनिच्छयो, यञ्च तस्स निराकरणं, यञ्च सब्बथापि विपाकाभाववादीनं मतपटिक्खेपनं इध अवुत्तं, तं सब्बं परमत्थमज्जूसादीसु, विसेसतो च अभिधम्मत्थविकासिनिया नाम अभिधम्मावतारसंवण्णनायं वुत्तनयेन वेदितब्बं।

सब्बथापि कामलोकेति सुगतिदुग्गतिवसेन सब्बस्मिम्मि कामलोके। यथारहन्ति द्वारारम्माणानुरूपं। अपायेसुपि यं नागसुपण्णादीनं महासम्पत्तिविसयं विपाकविज्जाणं, यञ्च निरयवासीनं महामोग्गलानत्थेरदस्सनादीसु उप्पज्जति विपाकविज्जाणं, तं कुसलकम्मस्सेव फलं। न हि अकुसलस्स इट्ठविपाको सम्भवति। वुत्तज्जेतं “अट्टानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो, यं अकुसलस्स कम्मस्स इट्ठो कन्तो विपाको संविज्जती”ति^{२७३}, तस्मा कुसलकम्मं अपायेसुपि अहेतुकविपाकानि जनेति। अज्जभूमिकस्स च कम्मस्स अज्जभूमिकविपाकाभावतो कामविरागभावनाय कामतण्हाविसयविज्जाणुप्पादनायोगतो एकन्तसदिसविपाकत्ता च महग्गतानुत्तरकुसलानं रूपावचरकम्मेन अहेतुकविपाकुप्पत्तिया अभावतो रूपलोकेपि यथारहं रूपादिविसयानि तानि अभिनिष्पादेतीति वुत्तं “सब्बथापि कामलोके”त्यादि।

७१. एवं पन विपच्यन्तं कम्मं सोळसकद्वादसकअडुकवसेन तिधा विपच्यतीति दस्सेतुं “तत्थापि”त्यादि वुत्तं। तत्थापीति एवं विपच्यमानेपि कुसलकम्मे। उक्कट्टन्ति कुसलपरिवारलाभतो, पच्छा आसेवनप्पवत्तिया वा विसिट्ठं। यज्झि कम्मं अत्तनो पवत्तिकाले पुरिमपच्छाभागप्पवत्तेहि कुसलकम्मेहि परिवारितं, पच्छा वा आसेवनलाभेन समुदाचिण्णं। तं उक्कट्टं। यं पन करणकाले अकुसलकम्मेहि परिवारितं, पच्छा वा “दुक्कटमेतं मया”ति विष्पटिसारुप्पादनेन परिभावितं, तं ओमकन्ति दडुब्बं।

पटिसन्धिन्ति एकमेव पटिसन्धि। न हि एकेन कम्मेन अनेकासु जातीसु पटिसन्धि होति, पवत्तिविपाको पन जातिसतेपि जातिसहस्सेपि होति। यथाह “तिरच्छानगते दानं दत्त्वा सतगुणा दक्खिणा पाटिकद्धितब्बा”ति^{२७४}। यस्मा पनेत्थ जाणं जच्चन्धादिविपत्तिनिमित्तस्स मोहस्स, सब्बाकुसलस्सेव वा पटिपक्खं, तस्मा तं सम्पयुत्तं कम्मं जच्चन्धादिविपत्तिपच्ययं न होतीति तिहेतुकं अतिदुब्बलम्मि समानं दुहेतुकपटिसन्धिमैव आकट्टति, नाहेतुकं। दुहेतुकञ्च कम्मं जाणसम्पयोगाभावतो जाणफलुप्पादने असमत्थं, यथा तं अलोभसम्पयोगाभावतो अलोभफलुप्पादने असमत्थं अकुसलकम्मन्ति तं अतिउक्कट्टम्मि समानं दुहेतुकमेव पटिसन्धि आकट्टति, न तिहेतुकन्ति वुत्तं “तिहेतुकमोमकं दुहेतुकमुक्कट्टञ्चा”त्यादि।

एत्थ सिया— यथा पटिसम्भिदामग्गे “गतिसम्पत्तिया जाणसम्पयुत्ते अट्टन्नं हेतूनं पच्यया उपपत्ति होती”ति^{२७५} कुसलस्स कम्मस्स जवनक्खणे तिण्णं, निकन्तिक्खणे द्विन्नं, पटिसन्धिक्खणे तिण्णञ्च हेतूनं वसेन अट्टन्नं हेतूनं पच्यया जाणसम्पयुत्तूपपत्ति, तथा “गतिसम्पत्तिया जाणविष्पयुत्ते छन्नं हेतूनं पच्यया उपपत्ति होती”ति^{२७६} जवनक्खणे द्विन्नं, निकन्तिक्खणे द्विन्नं, पटिसन्धिक्खणे

^{२७३} म० नि० ३.१३१; अ० नि० १.२८४-२८६; विभ० ८०९

^{२७४} म० नि० ३.३७९

^{२७५} पटि० म० १.२३१

^{२७६} पटि० म० १.२३३

तदभावे च पणीतभावसन्निधानेन वायोक्त्सिणे केसञ्चि मतेन परिच्छिन्नाकासकसिणे वा भावनाबलेन तेन पटिलभित्तवभावे अरूपस्स अनिब्बत्तिसभावापादनवसेन अरूपविरागभावनं भावेत्वा अञ्जसत्तेसु उप्पज्जन्ति कम्मकिरियवादिनो तित्थिया एवात्यधिप्पायो । ते पन येन इरियापथेन इध मरन्ति । तेनेव तत्थ निब्बत्तन्तीति दट्टुब्बं ।

८६. अनागामिनो पन सुद्धावासेसु उप्पज्जन्तीति अनागामिनोयेव अरिया पुधुज्जनादिकाले, पच्छापि वा पञ्चमज्झानं तिविधम्मि भावेत्वा सद्धादिइन्द्रियवेमत्ततानुक्कमेन पञ्चसु सुद्धावासेसु उप्पज्जन्ति ।

८७. यथाक्कमं भावेत्वा यथाक्कमं आरुप्पेसु उप्पज्जन्तीति योजना यथाक्कमन्ति च पटमारुप्पादिअनुक्कमेन । सव्वम्मि चेतं तस्स तस्सेव ज्ञानस्स आवेणिकभूमिवसेन वुत्तं । निकन्तिया पन सति पुधुज्जनादयो यथालद्धज्झानस्स भूमिभूतेसु सुद्धावासवज्जितेसु यत्थ कत्थचि निब्बत्तन्ति, तथा कामभवेपि कामावचरकम्मबलेन । 'इज्जति, भिक्खवे, सीलवतो चेतोपणिधि विसुद्धता'ति^{२७९} हि वुत्तं । अनागामिनो पन कामरागस्स सब्बसो पहीनत्ता कामभवेसु निकन्ति न उप्पादेन्तीति कामलोकवज्जिते यथालद्धज्झानभूमिभूते यत्थ कत्थचि निब्बत्तन्ति । सुद्धावासेसु हि अनागामिनोयेव निब्बत्तन्तीति नियमो अत्थि । ते पन अञ्जत्थ न निब्बत्तन्तीति नियमो नत्थि ।

एवञ्च कत्वा वुत्तं आचरियेन-

“सुद्धावासेस्वनागामि-पुग्गलावोपपज्जरे ।

कामधातुम्मि जायन्ति, अनागामिविवज्जिता”ति^{२८०} ॥

सुखविपस्सकापि पनेते मरणकाले एकन्तेनेव समापत्तिं निब्बत्तेन्ति समाधिम्मि परिपूरकारीभावतोति दट्टुब्बं । “इत्थियोपि पन अरिया वा अनरिया वा अट्टसमापत्तिलाभिनियो ब्रह्मपारिसज्जेसुयेव निब्बत्तन्ती”ति अट्टकथायं^{२८१} वुत्तं । अपिचेत्थ वेहप्फलअकनिट्ट-चतुत्थारुप्पभवानं सेट्टुभवभावतो तत्थ निब्बत्ता अरिया अञ्जत्थ नुप्पज्जन्ति, तथा अवसेसेसु उपरूपरि ब्रह्मलोकेसु निब्बत्ता हेट्ठिमहेट्ठिमेसु । वुत्तञ्जेतं आचरियेन-

“वेहप्फले अकनिट्ठे, भवग्गे च पतिट्ठिता ।

न पुनाञ्जत्थ जायन्ति, सब्बे अरियपुग्गला ।

ब्रह्मलोकगता हेट्ठा, अरिया नोपपज्जरे”ति^{२८२} ॥

Dhamma.Digital कम्मचतुक्कवण्णना निट्ठिता ।

चुत्तिपटिसन्धिककमवण्णना

८९. “आयुक्खयेना”त्यादीसु सत्तिपि कम्मनुभावे तं तं गतीसु यथापरिच्छिन्नस्स आयुनो परिक्खयेन मरणं आयुक्खयमरणं । सत्तिपि तत्थ तत्थ परिच्छिन्नायुसेसे गतिकालादिपच्चयसामग्गियञ्च तं तं भवसाधकस्स कम्मनो परिनिट्ठितविपाकत्ता मरणं कम्मक्खयमरणं । आयुकम्मनं समकमेव परिक्खीणत्ता मरणं उभयक्खयमरणं । सत्तिपि तस्मिं दुविमे पुरिमभवसिद्धस्स कस्सचि उपच्छेदककम्मनो बलेन सत्थहरणादीहि उपक्कमेहि उपच्छिज्जमानसत्तानानं, गुणमहन्तेसु वा कतेन केनचि उपक्कमेन आयूहितउपच्छेदककम्मनो

^{२७९} अ० नि० ८.३५

^{२८०} परम० वि० २०५

^{२८१} विभ० अट्ट० ८०९; अ० नि० अट्ट० १.१.२७९ आदयो; म० नि० अट्ट० ३.१३०

^{२८२} नाम० परि० ४५२-४५३

पटिबाहितसामथियस्स कम्मस्स तं तं अत्तभावप्पवत्तने असमत्थभावतो दुसिमारकलाबुराजादीनं विय तद्धणेयेव ठानाचावनवसेन पवत्तमरणं उपच्छेदकमरणं नाम। इदं पन नेरयिकानं उत्तरकुरुवासीनं केसज्जि देवानज्ज न होति। तेनाहु-

“उपक्कमेन वा केसज्जुपच्छेदककम्मना”ति^{२८३} ॥

मरणस्स उप्पत्ति पवत्ति मरणुप्पत्ति।

१०. मरणकालेति मरणासन्नकाले। यथारहन्ति तं तं गतीसु उप्पज्जनकसत्तानुरूपं, कत्थचि पन अनुप्पज्जमानस्स खीणासवस्स यथोपट्टितं नामरूपधम्मादिकमेव चुतिपरियोसानानं गोचरभावं गच्छति, न कम्मकम्पनिमित्तादयो। उपलद्धपुब्बन्ति चेतियदस्सनादिवसेन पुब्बे उपलद्धं। उपकरणभूतन्ति पुष्पादिवसेन उपकरणभूतं। उपलभितब्बन्ति अनुभवितब्बं। उपभोगभूतन्ति अच्छराविमानकम्परुक्खनिरयग्गिआदिकं उपभुज्जितब्बं। अच्छराविमानकम्परुक्खमातुकुच्छिआदिगतं हि रूपायतनं सुगतिनिमित्तं। निरयग्गिनिरयपालादिगतं दुग्गतिनिमित्तं। गतिया निमित्तं गतिनिमित्तं।

कम्मबलेनाति पटिसन्धिनिब्बत्तकस्स कुसलकुसलकम्मस्स आनुभावेन। छत्रं द्वारानन्ति वक्खमाननयेन यथासम्भवं छत्रं उपपत्तिद्वारानं, यदि कुसलकम्मं विपच्चति, तदा परिसुद्धं कुसलचित्तं पवत्तति, अथ अकुसलकम्मं, तदा उपक्किलिद्धं अकुसलचित्तन्ति आह “विपच्चमानक...पे०... किलिद्धं वा”ति। तेनाह भगवा “निमित्तस्सादगधितं वा, भिक्खवे, विज्जाणं तिट्ठमानं तिट्ठति, अनुब्बज्जनस्सादगधितं वा, तस्मिं चे समये कालं करोति, ठानमेतं विज्जति, यं द्वित्रं गतीनं अज्जतरं गतिं उपपजेय्य निरयं वा तिरच्छानयोनिं वा”ति^{२८४}। तत्थोणतं वाति तस्मिं उपपज्जितब्बभवे ओणतं विय, तत्थोणतं एवाति वा पदच्छेदो। “बाहुल्लेना”ति एत्थ अधिप्पायो “येभुय्येन भवन्तरे”ति एत्थ वुत्तनयेन दट्ठब्बो। अथ वा “यथारह”न्ति इमिनाव सो सक्का सङ्गहेतुत्ति “बाहुल्लेना”ति इमिना सहसा ओच्छिज्जमानजीवितानं सणिकं मरन्तानं विय न अभिक्खणमेवाति दीपितन्ति विज्जायति। अभिनवकरणवसेनाति तद्धणे करियमानं विय अत्तानं अभिनवकरणवसेन।

११. पच्चासन्नमरणस्साति एकवीथिप्पमाणायुकवसेन, ततो वा किञ्चि अधिकायुकवसेन समासन्नमरणस्स। वीथिचित्तावसानेति तदारम्पणपरियोसानानं, जवनपरियोसानानं वा वीथिचित्तानं अवसाने। तत्थ “कामभवतो चवित्वा तत्थेव उप्पज्जमानानं तदारम्पणपरियोसानानि, सेसानं जवनपरियोसानानी”ति धम्मानुसारणियं वुत्तं। भवङ्गक्खयेवाति यदि एकजवनवीथितो अधिकतरायुसेसो सिया, तदा भवङ्गावसाने वा उप्पज्जित्वा निरुज्जति। अथ एकचित्तक्खणायुसेसो सिया, तदा वीथिचित्तावसाने, तज्ज अतीतकम्मादिविसयमेव। “तस्सानन्तरमेवा”ति इमिना अन्तराभववादिमतं पटिक्खिपति।

यथारहन्ति कम्मकरणकालस्स, विपाकदानकालस्स च अनुरूपवसेन। अथ वा विपच्चमानककम्मनुरूपं अनुसयवसेन, जवनसहजातवसेन वा पवत्तिअनुरूपतोत्थो।

ननु च “अविज्जानुसयपरिक्खित्तेना”त्यादि वुत्तं। जवनसहजातानज्ज कथं अनुसयभावोति? नायं दोसो अनुसयसदिसताय तासम्पि अनुसयवोहारभावतो। इतरथा अकुसलकम्मसहजातानं भवतण्हासहजातानं वा चुतिआसन्नजवनसहजातानज्ज सङ्गहो न सिया। अविज्जाव अप्पहीनट्टेन अनुसयनतो पवत्तनतो अनुसयो, तेन परिक्खित्तेन परिवारितेन। तण्हानुसयोव मूलं पधानं सहकारीकारणभूतं इमस्साति तण्हानुसयमूलको। सङ्गारेनाति कुसलाकुसलकम्मेन कम्मसहजातफस्सादिधम्मसमुदायेन चुतिआसन्नजवनसहजातेन वा, तेन जनियमानं। अविज्जाय हि पटिच्छन्नादीनवविसये तण्हा नामेति, खिपनकसङ्गारसम्पत्ता यथावुत्तसङ्गारा खिपन्ति, यथाहु-

^{२८३} सं० सं० ६२

^{२८४} सं० नि० ४.२३५

“अविज्जातण्हासङ्कार-सहजेहि अपायिनं ।

विसयादीनवच्छादिनमनक्खिपकेहि तु ॥

“अप्पहीनेहि सेसानं, छादनं नमनम्मि च ।

खिपका पन सङ्कारा, कुसलाव भवन्तिहा”ति^{२८५} ॥

सम्पयुतेहि परिगग्रहमानन्ति अत्तना सम्पयुतेहि फत्सादीहि धम्मेहि सम्पयुत्तपच्चयादिना परिवारेत्वा गृहमानं, सहजातानमधिद्वानभावेन पुब्बङ्गमभूतन्ति अत्तना सहजातानं पतिद्वानभावेन पधानभूतं । “मनोपुब्बङ्गमा धम्मा”ति^{२८६} हि वुत्तं । भवन्तरपटिसन्धानवसेनाति पुरिमभवन्तरस्स, पच्छिमभवन्तरस्स च अञ्जमञ्जं एकाबद्धं विय पटिसन्दहनवसेन उप्पज्जमानमेव पतिद्वान्ति, न इतो गत्त्वात्यधिप्पायो । न हि पुरिमभवपरियापन्नो कोचि धम्मो भवन्तरं सङ्कमति, नापि पुरिमभवपरियापन्नहेतूहि विना उप्पज्जति पटिघोसपदीपमुद्दा वियाति अलमतिप्पपच्चेन ।

१२. मन्दं हुत्वा पवत्तानि मन्दप्पवत्तानि । पच्चुप्पन्नारम्भणेषु आपाथगतेसु मनोद्वारे गतिनिमित्तवसेन, पच्चद्वारे कम्मनिमित्तवसेनात्यधिप्पायो । पटिसन्धिभवज्ञानम्मि पच्चुप्पन्नारम्भणता लब्धतीति मनोद्वारे ताव पटिसन्धिया चतुन्नं भवज्ञानञ्च, पच्चद्वारे पन पटिसन्धियाव पच्चुप्पन्नारम्भणभावो लब्धति । तथा हि कस्सचि मनोद्वारे आपाथमागतं पच्चुप्पन्नं गतिनिमित्तं आरम्भ उप्पन्नाय तदारम्भणपरियोसानाय चित्तवीथिया अनन्तरं चुतिचित्ते उप्पन्ने तदनन्तरं पच्चचित्तक्खणायुके आरम्भणे पवत्ताय पटिसन्धिया चतुन्नं भवज्ञानं, पच्चद्वारे च जातकादीहि उपट्टापितेषु देय्यधम्मेसु वण्णादिके आरम्भे यथारहं पवत्ताय चित्तवीथिया चुतिचित्तस्स च अनन्तरं एकचित्तक्खणायुके आरम्भणे पवत्ताय पटिसन्धिया पच्चुप्पन्नारम्भणे पवत्ति उपलब्धतीति अयमेत्थ सङ्केपो, वित्थारो पन विसुद्धिमग्गे^{२८७} विभङ्गदुकथाय^{२८८} वा सङ्कारपच्चयाविज्जाणपदवण्णनायं वुत्तनयेन दट्टब्बो । छद्वारगहितन्ति कम्मनिमित्तं छद्वारगहितं, गतिनिमित्तं छद्वारगहितन्ति यथासम्भवं योजेतब्बं । अपरे पन अविसेसतो वण्णेन्ति । सच्चसङ्केपेपि तेनेवाधिप्पायेन इदं वुत्तं-

“पच्चद्वारे सिया सन्धि, विना कम्मं द्विगोचरे”ति^{२८९} ।

अट्टकथायं^{२९०} पन “गतिनिमित्तं मनोद्वारे आपाथमागच्छती”ति वुत्तत्ता, तदारम्भणाय च पच्चद्वारिकपटिसन्धिया अदस्सितत्ता, मूलटीकादीसु च “कम्मबलेन उपट्टापितं वण्णायतनं सुपिनं पस्सन्तस्स विय दिब्बचक्खुस्स विय च मनोद्वारेयेव गोचरभावं गच्छती”ति^{२९१} नियमेत्वा वुत्तत्ता तेसं वचनं न सम्पटिच्छन्ति आचरिया । “पच्चुप्पन्नञ्चा”ति एत्थ गतिनिमित्तं ताव पच्चुप्पन्नारम्भणं युज्जति, कम्मनिमित्तं पन पटिसन्धिजनककम्मस्सेव निमित्तभूतं अधिप्पेतन्ति कथं तस्स चुतिआसन्नजवनेहि गहितस्स पच्चुप्पन्नभावो सम्भवति । न हि तदेव आरम्भणुपट्टापकं, तदेव पटिसन्धिजनकं भवेय्य उपचित्तभावाभावतो अनस्सादितत्ता च । “कत्तत्ता उपचितत्ता”ति^{२९२} हि वचनतो पुनप्पुनं लद्धासेवनमेव कम्मं पटिसन्धि आकट्टति । पटिसन्धिदामग्गे^{२९३} च निकन्तिक्खणे द्विन्नं हेतून् पच्चयापि सहेतुकपटिसन्धिया वुत्तत्ताकतूपचितम्मि कम्मं तण्हाय अस्सादितमेव विपाकं अभिनिष्कादेति, तदा च पटिसन्धिया समानवीथियं विय पवत्तमानानि चुतिआसन्नजवनानि कथं पुनप्पुनं लद्धासेवनानि सिंयुं, कथञ्च तानि तदा कण्हाय परामट्टानि । अपिच पच्चुप्पन्नं कम्मनिमित्तं

^{२८५} स० स० १६४-१६५

^{२८६} ध० प० १-२

^{२८७} विसुद्धि० २.६२० आदयो

^{२८८} विभ० अट्ट० २२७

^{२८९} स० स० १७३

^{२९०} विसुद्धि० २.६२४-६२५; विभ० अट्ट० २२७

^{२९१} विसुद्धि० महा० २.६२३

^{२९२} ध० स० ४३१

^{२९३} पटि० म० १.२३२

चुतिआसन्नप्यवत्तानं पञ्चद्वारिकजवनानं आरम्भणं होति । “पञ्चद्वारिककम्मञ्च पटिसन्धिनिमित्तकं न होति परिदुब्बलभावतो”ति अट्टकथायं^{२९४} वुत्तन्ति सच्चमेतं । जातकादीहि उपट्टापितेसु पन पुप्फादीसु सन्निहितेस्वेव मरणसम्भवतो तत्थ वण्णादिकं आरब्ध चुतिआसन्नवीथितो पुरिमभागप्यवत्तानं पटिसन्धिजननसमत्थानं मनोद्वारिकजवनानं आरम्भणभूतेन सह समानत्ता तदेकसन्ततिपतितं चुतिआसन्नजवनगहितम्पि पच्चुप्पन्नं वण्णादिकं कम्मनिमित्तभावेन वुत्तं । एवञ्च कत्वा वुत्तं आनन्दाचरियेन “पञ्चद्वारे च आपाथमागच्छन्तं पच्चुप्पन्नं कम्मनिमित्तं आसन्नकतकम्मरम्भणसन्ततियं उप्पन्नं, तं सदिसञ्च दडुब्ब”न्ति^{२९५} ।

१४. यथारहन्ति दुतियचतुत्थपठमतितयानं पटिसन्धीनं अनुरूपतो ।

१८. आरुप्पचुतिया परं हेट्टिमारुप्पवज्जिता आरुप्पपटिसन्धियो होन्ति उपरूपरिरुपीनं हेट्टिमहेट्टिमकम्मस्स अनायूहनतो, उपचारज्ज्ञानस्स पन बलवभावतो तस्स विपाकभूता कामतिहेतुका पटिसन्धियो होन्ति । रूपावचरचुतिया परं अहेतुकरहिता उपचारज्ज्ञानानुभावेनेव दुहेतुकतिहेतुकपटिसन्धियो सियुं, कामतिहेतुम्हा चुतितो परं सब्बा एव कामरूपारूपभवपरियापन्ना यथारहं अहेतुकादि पटिसन्धियो सियुं । इतरो दुहेतुकाहेतुकचुतितो परं कामेस्वेव भवेसु तिहेतुकादिपटिसन्धियो सियुं ।

चुतिपटिसन्धिवकमवण्णना निट्ठिता ।

१९. पटिसन्धिया निरोधस्स अनन्तरतो पटिसन्धिनिरोधानन्तरतो । तदेव चित्तन्ति तं सदिसताय तब्बोहारप्यवत्तता तदेव चित्तं यथा “तानियेव ओसधानी”ति ।

असति वीथिचित्तुप्पादेति अन्तरन्तरा वीथिचित्तानं उप्पादे असति, चुतिचित्तं हुत्वा निरुज्झति तदेव चित्तन्ति सम्बन्धो ।

१०१. परिवत्तन्ता पवत्तन्ति याव वट्टमूलसमुच्छेदात्यधिप्पायो ।

१०२. यथा इह भवेपटिसन्धि चेव भवङ्गञ्च वीथियो च चुति च, तथा पुन भवन्तरे पटिसन्धिभवङ्गन्ति एवमादिका अयं चित्तसन्तति परिवत्ततीति योजना । केचि पन इमस्मि परिच्छेदे वीथिमुत्तसङ्गहस्सेव दस्सितत्ता पटिसन्धिभवङ्गच्युतीनमेव इध गहणं युत्तन्त्याधिप्पायेन “पटिसन्धिभवङ्गवीथियो”ति इमस्स पटिसन्धिभवङ्गप्पवाहाति अत्थं वदन्ति, तं तेसं मतिमत्तं पवत्तिसङ्गहदस्सनावसाने तत्थ सङ्गहितानं सब्बेसमेव निगमनस्स अधिप्पेतत्ता । एवञ्चि सति “पटिसङ्गाय पनेतमद्भव”न्ति एत्थ सब्बेसमेव एत-सद्देन परामसनं सुट्टु उपपन्नं होति । एतं यथावुत्तं वट्टपवत्तं अट्टुवं अनिच्चं पलोकधम्मं पटिसङ्गाय पच्चवेक्खित्वा बुधा पण्डिता चिराय चिरकालं सुब्बता हुत्वा अच्युत्तं धुवं अचवनधम्मं पदं निब्बानं अधिगन्त्वा मग्गफलजाणेन सच्छिकत्वा ततोयेव सुट्टु समुच्छिन्नसिनेहबन्धना समं निरुपधिसेसनिब्बानधातुं एस्सन्ति पापुणिस्सन्ति ।

इति अभिधम्मत्थविभाविनिया नाम अभिधम्मत्थसङ्गहवण्णनाय वीथिमुत्तपरिच्छेदवण्णना निट्ठिता ।

^{२९४} विसुट्ठि० २.६२०; विभ० अट्ट० २२७

^{२९५} विभ० मूलटी० २२७; विसुट्ठि० महा० २.६२३

६. रूपपरिच्छेदवर्णना

१. एवं ताव चित्तचेतसिकवसेन दुविधं अभिधम्मत्थं दस्सेत्वा इदानीं रूपं, तदनन्तरञ्च निब्बानं दस्सेतुमारभन्तो आह “एत्तावता”त्यादि। सप्यभेदप्यवत्तिका उद्देशनिद्देशपटिनिद्देशवसेन तीहि परिच्छेदेहि वुत्तप्यभेदवन्तो, पवत्तिपटिसन्धिवसेन वीहि परिच्छेदेहि वुत्तप्यवत्तिवन्तो च चित्तचेतसिका धम्मा एत्तावता पञ्चहि परिच्छेदेहि विभत्ता हि यस्मा, इदानीं यथानुप्यत्तं रूपं पवुच्चतीति योजना।

२. इदानीं यथापटिञ्जातरूपविभागत्थं मात्तिकं ठपेतुं “समुद्देशा”त्यादि वुत्तं। सद्द्वेषतो उद्दिंसं समुद्देशो। एकविधादिवसेन विभजनं विभागो, समुद्घाति एतस्मा फलन्ति समुद्धानं, कम्मादयो रूपजनकपच्यया। चक्खुदसकादयो कलापा। पवत्तिकमतो चेति भवकालसत्तभेदेन रूपानं उप्यत्तिकमतो।

रूपसमुद्देशवर्णना

३. उपादिन्नानुपादिन्नसन्तानेषु ससम्भारधातुवसेन महन्ता हुत्वा भूता पातुभूताति महाभूता^{२९६}। अथवा अनेकविधअभ्युत्तवित्सेदस्सनेन, अनेकाभूतदस्सनेन वा महन्तानि अभ्युत्तानि, अभूतानि वा एतेसूति महाभूता, मायाकारादयो। तेहि समाना सयं अनीलादिसभावानेव नीलादिउपादायरूपदस्सनादितोति महाभूता। मनापववण्णसण्णानादीहि वा सत्तानं वञ्चिका यक्खिनिआदयो विय मनापइत्थिपुरिसरूपदस्सनादिना सत्तानं वञ्चकता महन्तानि अभूतानि एतेसूति महाभूता। वुत्तमि हेतं-

“महन्ता पातुभूताति, महाभूतसमाति वा।

वञ्चकता अभूतेन, ‘महाभूता’ति सम्पता”ति^{२९७} ॥

अथ वा महन्तपातुभावतो महन्तानि भवन्ति एतेसु उपादारूपानि, भूतानि चाति महाभूतानि। महाभूते उपादाय पवत्तं रूपं उपादायरूपं। यदि एवं “एकं महाभूतं पटिच्च ततो महाभूता”त्यादिवचनतो^{२९८} एकेकमहाभूता सेसमहाभूतानं निस्सया होन्तीति तेसमि उपादायरूपतापसङ्गोति? नयिदमेवं उपादायेव पवत्तरूपानं तं समञ्जासिद्धितो। यञ्चि महाभूते उपादियति, सयञ्च अञ्जेहि उपादीयति। न तं उपादायरूपं। यं पन उपादीयतेव, न केनचि उपादीयति, तदेव उपादायरूपन्ति नत्थि भूतानं तब्बोहारप्पसङ्गो। अपिच चतुत्रं महाभूतानं उपादायरूपन्ति उपादायरूपलक्खणन्ति नत्थि तयो उपादाय पवत्तानं उपादायरूपताति।

४. पथनट्टेन पथवी, तरुपब्बतादीनं पकत्तिपथवी विय सहजातरूपानं पतिट्टानभावेन पक्खायति, उपट्टातीति वुत्तं होति, पथवी एव धातु सलक्खणधारणादितो निस्सत्तनिज्जीवट्टेन सरीरसेलावयवधातुसदिसत्ता चाति पथवीधातु। आपेति सहजातरूपानि पत्थरति, आपायति वा ब्रूहेति ब्रूहेतीति आपो। तेजेति परिपाचेति, निसेति वा तिक्खभावेन सेसभूतत्तयं उस्मापेतीति तेजो। वायति देसन्तरूपत्तिहेतुभावेन भूतसङ्घातं पापेतीति वायो। चतस्सोपि पनेता यथाक्कमं कथिनत्तदवत्तउण्हत्तवित्थम्भनत्तलक्खणाति दट्टब्बं।

५. चक्खादीनं वचनत्थो हेट्टा कथितोव। पसादरूपं नाम चतुत्रं महाभूतानं पसन्नभावहेतुकता। तं पन यथाक्कमं दट्टुकामतासोतुकामताघायितुकामतासायितुकामता-फुसितुकामतानिदानकम्पसमुद्धानभूतप्यसादलक्खणं। तत्थ चक्खु ताव मज्जे कण्हमण्डलस्स

^{२९६} ध० स० अट्ट० ५८४

^{२९७} जमिघ० ६२६

^{२९८} पट्टा० १.१.५३

ऊकासिरम्पमाणे अभिमुखे ठितानं सरीरसण्डानुष्पत्तिपदेसे तेलमिव पिचुपटलानि सत्तक्खिपटलानि ब्यापेत्वा धारणनहापनमण्डनबीजनकिच्चाहि चतूहि धातीहि विय खत्तियकुमारो सन्धारणबन्धनपरिपाचनसमुदीरणकिच्चाहि चतूहि धातूहि कतूपकारं उतुचित्तहारेहि उपत्थम्भियमानं आयुना परिपालियमानं वण्णादीहि परिवारितं यथायोगं चक्खुविज्जाणादीनं वत्थुदारभावं सधेन्तं पवत्तति, इतरं “ससम्भारचक्खू”ति वुच्चति। एवं सोतादयोपि यथाक्कमं सोतविलम्भन्तरे अङ्गुलिवेधनाकारं उपचिततनुतम्बलोमं, नासिकम्भन्तरे अजपदसण्डानं, जिह्मामज्जे उप्पलदलग्गसण्डानं पदेसं अभिव्यापेत्वा पवत्तन्ति, इतरं पन ठपेत्वा कम्मजतेजस्स पतिट्टानडानं केसग्लोमग्नखगसुक्खचम्मानि च अवसेसं सकलसरीरं फरित्वा पवत्तति। एवं सन्नेपि इतरेहि तस्स सङ्गो न होति भिन्ननिस्सयलक्खणत्ता। एकनिस्सयानिपि हि रूपरसादीनि लक्खणभेदतो असंकिण्णाति किं पन भिन्ननिस्सया पसादा।

६. आपोधातुया सुखुमभावेन फुसितुं असक्कुणेय्यत्ता वुत्तं “आपोधातु विवज्जितं भूतत्तयसङ्घात”न्ति। किञ्चापि हि सीतता फुसित्वा गय्दति, सा पन तेजोयेव। मन्दे हि उण्हत्ते सीतबुद्धि सीततासङ्घातस्स कस्सचि गुणस्स अभावतो। तयिदं सीतबुद्धिया अनवदितभावतो विज्जायति पारापारे विय। तथा हि घम्भकाले आतपे ठत्वा छायं पविट्टानं सीतबुद्धि होति, तथेव चिरकालं ठितानं उण्हबुद्धि। यदि च आपोधातु सीतता सिया, उण्हभावेन सह एकस्मि कलापे उपलब्धेय्य, न चेवं उपलब्धति, तस्मा विज्जायति “न आपोधातु सीतता”ति। ये पन “दवता आपोधातु, सा च फुसित्वा गय्दती”ति वदन्ति, ते वत्तब्बा “दवता नाम फुसित्वा गय्दतीति इदं आयस्मन्तानं अभिमानमत्तं सण्डाने विया”ति। वुत्तज्जेतं पोरानेहि-

“दवतासहवुत्तीनि, तीणि भूतानि सम्फुत्तं।

दवत्तं सम्फुत्तामीति, लोकोयमभिमज्जति ॥

“भूते फुसित्वा सण्डानं, मनसा गण्हतो यथा।

पच्चक्खतो फुसापीति, विज्जेय्या दवता तथा”ति ॥

गोचररूपं नाम पच्चविज्जाणविसयभावतो। गावो इन्द्रियानि चरन्ति एत्थाति गोचरन्ति हि आरम्भणस्सेतं नामं। तं पनेतं पच्चविधम्मि यथाक्कमं चक्खुविज्जाणादीनं गोचरभावलक्खणं, चक्खादिपटिहननलक्खणं वा।

७. इत्थिया भावो इत्थत्तं^{१११}। पुरिसस्स भावो पुरिसत्तं।

तत्थ इत्थिलिङ्गनिमित्तकुत्ताकप्पहेतुभावलक्खणं इत्थत्तं, पुरिसलिङ्गादिहेतुभावलक्खणं पुरिसत्तं। तत्थ इत्थीनं अङ्गजातं इत्थिलिङ्गं। सराधिप्पाया इत्थिनिमित्तं “इत्थी”ति सज्जाननस्स पच्चयभावतो। अविसदठानगमननिसज्जादि इत्थिकुत्तं। इत्थिसण्डानं इत्थाकप्पो। पुरिसलिङ्गादीनिपि वुत्तनयेन दट्टब्बानि। अट्टकथायं पन अज्जथा इत्थिलिङ्गादीनि वण्णितानि। तं पन एवं सङ्गहेत्वा वदन्ति-

“लिङ्गं हत्थादिसण्डानं, निमित्तं मिहितादिकं।

कुत्तं सुप्पादिना कीटा, आकप्पो गमनादिक”न्ति ॥

भावरूपं नाम भवति एतेन इत्थादिअभिधानं, बुद्धि चाति कत्वा। तं पनेतं कायिन्द्रियं विय सकलसरीरं फरित्वा तिट्ठति।

८. हृदयमेव मनोधातुमनोविज्जाणधातूनं निस्सयत्ता वत्थु चाति हृदयवत्थु। तथा हि तं धातुद्वयनिस्सयभावलक्खणं, तज्ज हृदयकोसम्भन्तरे अहपसतभत्तं लोहितं निस्साय पवत्तति। रूपकण्डे अवुत्तस्सपि पनेतस्स आगमतो, युत्तितो च अत्थिभावो दट्टब्बो। तत्थ, तं रूपं निस्साय मनोधातु च मनोविज्जाणधातु च वत्तन्ति “यं रूपं मनोधातुया च मनोविज्जाणधातुया च

^{१११} ध० स० अट्ट० ६३२

तंसम्पयुक्तकानञ्च धम्मानं निस्सयपच्चयेन पच्चयो”ति^{१००} एवमागतं पट्टानवचनं आगमो। युक्ति पनेवं ददुब्बा-

“निष्फत्रभूतिकाधारा, द्वे धातू कामरूपिनं।
रूपानुबन्धवुत्तिता, चक्खुविञ्जाणादयो विय ॥
“चक्खादिनिस्सितानेता, तस्सञ्जाधारभावतो।
नापि रूपादिके तेसं, बहिद्वापि पवत्तितो ॥
“न चापि जीवितं तस्स, किच्चन्तरनियुत्तितो।
न च भावद्वयं तस्मिं, असन्तेपि पवत्तितो ॥
“तस्मा तदञ्जं वत्थु तं, भूतिकन्ति विजानियं।
वत्थालम्बदुकानन्तु, देसनाभेदतो इदं।
धम्मसङ्गणिपाठास्मं, न अक्खातं महेसिना”ति ॥

१. जीवन्ति तेनाति जीवितं, तदेव कम्मजरूपपरिपालने आधिपच्चयोगतो इन्द्रियन्ति जीवितिन्द्रियं। तथा हेतं कम्मजरूपपरिपालनलक्षणं। यथासकं खणमतद्वायीनम्पि हि सहजातानं पवत्तिहेतुभावेनेव अनुपालकं। न हि तेसं कम्मयेव ठितिकारणं होति आहारजादीनं आहारादि विय कम्मस्स तङ्गणाभावतो। इदं पन सह पाचनग्गिना अनवसेसउपादिन्नकायं व्यापेत्वा पवत्तिति।

१०. कबळं कत्वा अज्जोहरीयतीति कबळीकारो आहारो, इदञ्च सबत्थुकं कत्वा आहारं दस्सेतुं वुत्तं। सेन्द्रियकायोपत्थम्भनहेतुभूता पन अङ्गमङ्गानुसारी रसहरसङ्घाता अज्जोहरितब्बाहारसिनेहभूता ओजा इध आहाररूपं नाम। तथा हेतं सेन्द्रियकायोपत्थम्भनहेतु-भावलक्षणं, ओजदुमकरूपाहरणलक्षणं वा।

११. कक्खळतादिना अत्तनो अत्तनो सभावेन उपलब्धनतो सभावरूपं नाम। उप्पादादीहि, अनिच्चतादीहि वा लक्खणेहि सहितन्ति सलक्खणं। परिच्छेदादिभावं विना अत्तनो सभावेनेव कम्पादीहि पच्चयेहि निष्फत्रता निष्फरूपं नाम। रूपनसभावो रूपं, तेन युत्तम्पि रूपं, यथा “अरिससो, नीलुप्पल”न्ति, स्वायं रूप-सद्वो रुद्धिया अतंसभावेपि पवत्ततीति अपरेन रूप-सद्वेन विसेसेत्वा “रूपरूप”न्ति वुत्तं यथा “दुक्खदुक्ख”न्ति। परिच्छेदादिभावं अतिक्कमित्वा सभावेनेव उपलब्धनतो लक्खणत्तयारोपनेन सम्पसितुं अरहत्ता सम्पसनरूपं।

१२. न कस्सतीति अकासो। अकासोयेव आकासो, निज्जीवद्वेन धातु चाति आकासधातु। चक्खुदसकादिएकेककलापगतरूपानं कलापन्तरेहि असंकिण्णभावापादनवसेन परिच्छेदकं, तेहि वा परिच्छिज्जमानं, तेसं परिच्छेदमतं वा रूपं परिच्छेदरूपं। तज्जि तं तं रूपकलापं परिच्छिन्दन्तं विय होति। विज्जमानेपि च कलापन्तरभूतेहि कलापन्तरभूतानं सम्फुट्टभावे तं तं रूपविवित्ता रूपपरियन्तो आकासो। येसञ्च सो परिच्छेदो, तेहि सयं असम्फुट्टोयेव। अञ्जथा परिच्छिन्नता न सिया तेसं रूपानं व्यापीभावापत्तितो।

अव्यापिता हि असम्फुट्टता। तेनाह भगवा “असम्फुट्टं चतूहि महाभूतेही”ति^{१०१}।

१३. चलमानकायेन अधिप्पायं विञ्जापेति, सयञ्च तेन विञ्जायतीति कायविञ्जत्ति। सविञ्जाणकसद्वसङ्घातवाचाय अधिप्पायं विञ्जापेति, सयञ्च ताय विञ्जायतीति वचीविञ्जत्ति। तत्थ अभिक्कमादिजनकचित्तसमुट्टानवायोधातुया सहजातरूपसन्धम्भनसन्धारणचलितेसु सहकारीकारणभूतो फन्दमानकायफन्दनतंहेतुकवायोधातुविनिमुत्तो महन्तं पासाणं उक्खिपन्तस्स सब्बथामेन गहणकाले उस्साहनविकारो विय रूपकायस्स परिफन्दनपच्चयभावेन उपलब्धमानो विकारो कायविञ्जत्ति। सा हि फन्दमानकायेन अधिप्पायं विञ्जापेति। न हि विञ्जत्तिविकाररहितेसु रुक्खचलनादीसु “इदमेस

^{१००} पट्टा० १.१.८

^{१०१} ध० स० ६३७

कारेती”ति अधिष्पायगहणं दिद्वन्ति। हत्थचलनादीसु च फन्दमानकायगहणानन्तरं अविज्जायमानन्तरेहि मनोद्वारजवनेहि गह्ममानता सयञ्च कायेन विज्जायति।

कथं पन विज्जत्तिवसेन हत्थचलनादयो होन्तीति? वुच्चते- एकावज्जनवीथियं सत्तसु जवनेसु सत्तमजवनसमुद्धानवायोधातु विज्जत्तिविकारसहिताव पठमजवनादिसमुद्धानाहि वायोधातूहि लद्धोपत्थम्भा देसन्तरुप्पत्तिहेतुभावेन चलयति चित्तजं, पुरिमजवनादिसम्भूता पन सन्थम्भनसन्धारणमतकरा तस्स उपकाराय होन्तीति। यथा हि सत्तहि युगेहि आकाङ्कितब्बसकटे सत्तमयुगयुत्तायेव गोणा हेद्दा छसु युगेषु युत्तगोणेहि लद्धपत्थम्भा सकटं चालेन्ति, पठमयुगादियुत्ता पन उपत्थम्भनसन्धारणमतमेव साधेन्ता तेसं उपकाराय होन्ति, एवंसम्पदमिदं ददुब्बं।

देसन्तरुप्पत्तियेव चेत्थ चलनं उप्पन्नदेसतो केसग्गमत्तम्पि धम्मानं सङ्कमनाभावतो। इतरथा नेसं अब्यापारकता, खणिकता च न सिया। देसन्तरुप्पत्तिहेतुभावोति च यथा अत्तना सहजरूपानि हेट्टिमजवनसमुद्दितरूपेहि पतिट्टित्तद्धानतो अञ्जत्थ उप्पज्जन्ति, एवं तेहि सह तत्थ उप्पत्तियेवाति ददुब्बं, एत्थ पन चित्तजे चलिते तं सम्बन्धेन इतरम्पि चलति नदीसोते पक्खित्तसुक्खगोमयपिण्डं विय। तथा चलयितुं असक्कोन्ति योपि पठमजवनादिसमुद्धानवायोधातुयो विज्जत्तिविकारसहितायेव येन दिसाभागेन अयं अभिक्कमादीनि पवत्तेतुकामो, तदभिमुखभावविकारसम्भवतो। एवञ्च कत्वा मनोद्वारावज्जनस्सपि विज्जत्तिसमुद्दापकत्तं वक्खति। वचीभेदकरचित्तसमुद्धानपथवीधातुया अक्खरुप्पत्तिद्धानगतउपादिन्नरूपेहि सह घट्टनपच्चयभूतो एको विकारो वचीविज्जत्ति। यं पनेत्थ वत्तब्बं, तं कायविज्जत्तियं वुत्तनयेन ददुब्बं।

अयं पन विसेसो- यथा तत्थ “फन्दमानकायगहणानन्तर”न्ति वुत्तं, एवमिध “सुय्यमानसद्दसवनानन्तर”न्ति योजेतब्बं। इध च सन्थम्भनादीनं अभावतो सत्तमजवनसमुद्दितात्यादिनयो न लब्धति। घट्टनेन हि सद्धियेव सद्दो उप्पज्जति। घट्टनञ्च पठमजवनादीसुपि लब्धतेव। एत्थ च यथा उस्सापेत्वा बद्धगोसीसतालपण्णादिरूपानि दिस्वा तदनन्तरप्पवत्ताय अविज्जायमानन्तराय मनोद्वारवीथिया गोसीसादीनं उदकसहचारित्तपकारं सञ्जाणं गहेत्वा उदकगहणं होति, एवं विप्फन्दमानसमुच्चारियमानकायसद्दे गहेत्वा तदनन्तरप्पवत्ताय अविज्जायमानन्तराय मनोद्वारवीथिया पुरिमसिद्धसम्बन्धूपनिस्सयाय साधिष्पायविकारगहणं होतीति अयं दिन्नं साधारणा उपमा।

१४. लहुभावो लहुता। मुदुभावो मुदुता। कम्मञ्जभावो कम्मञ्जता। यथाक्कमञ्जेता अरोगिनो विय रूपानं अगरुता सुपरिमहितचम्मस्स विय अकथिनता सुधन्तसुवण्णस्स विय सरीरकिरियानं अनुकूलभावोति ददुब्बं। अञ्जमञ्जं अविजहन्तस्सपि हि लहुतादित्तयस्स तं तं विकाराधिकरूपेहि नानत्तं वुच्चति, दन्धत्तकरधातुक्खोभप्पटिपक्खपच्चयसमुद्धानो हि रूपविकारो लहुता। थद्धत्तकरधातुक्खोभप्पटिपक्खपच्चयसमुद्धानो मुदुता। सरीरकिरियानं अननुकूलभावकरधातुक्खोभप्पटिपक्खपच्चयसमुद्धानो कम्मञ्जताति।

१५. उपचयनं उपचयो, पठमचयोत्यत्थो “उपञ्जत्त”न्त्यादीसु विय उप-सद्दस्स पठमत्थजोतनतो। सन्तानो सन्तति, पबन्धोत्यत्थो। तत्थ पटिसन्धितो पड्डाय याव चक्खादिदसकानं उप्पत्ति, एत्थन्तरे रूपुप्पादो उपचयो नाम। ततो परं सन्तति नाम। यथासकं खणमतद्वायीनं रूपानं निरोधाभिमुखभाववसेन जीरणं जरा, सायेव जरता, निच्चधुवभावेन न इच्चं अनुपगन्तब्बन्ति अनिच्चं, तस्स भावो अनिच्चता, रूपपरिभेदो। लक्खणरूपं नाम धम्मानं तं तं अवत्थावसेन लक्खणहेतुत्ता।

१६. जातिरूपमेवाति पटिसन्धितो पड्डाय रूपानं खणे खणे उप्पत्तिभावतो जातिसद्दत्तं रूपुप्पत्तिभावेन चतुसन्ततिरूपुप्पटिबद्धवुत्तित्ता रूपसम्मत्तञ्च जातिरूपमेव उपचयसन्ततिभावेन

पवुच्चति पठमुपरिनिच्चत्तसङ्घातपवत्तिआकारभेदतो वेनेय्यवसेन “उपचयो सन्तती”ति^{१०२} विभजित्वा वुत्तता। एवञ्च कत्वा तासं निद्देसे अत्थतो अभेदं दस्सेतुं “यो आयतनानं आचयो, सो रूपस्स उपचयो। यो रूपस्स उपचयो, सा रूपस्स सन्तती”ति^{१०३} वुत्तं। एकादसविधम्पीति सभागसङ्ग्रहवसेन एकादसपकारम्मि।

१७. चत्तारो भूता, पञ्च पसादा, चत्तारो विसया, दुविधो भावो, हदयरूपमिच्चपि इदं जीविताहाररूपेहि डीहि सह अट्टारसविधं, तथा परिच्छेदो च दुविधा विज्जत्ति, तिविधो विकारो, चतुब्बिधं लक्खणन्ति रूपानं परिच्छेदविकारादिभावं विना विसुं पच्चयेहि अनिच्चत्तता इमे अनिष्फन्ना दस चेति अट्टवीसतिविधं भवे।

रूपसमुद्देशवण्णना निट्ठिता।

रूपविभागवण्णना

१८. इदानि यथाउद्दिट्ठरूपानं एकविधादिनयदस्सनत्थं “सब्बञ्च पनेत”न्यादि वुत्तं। सम्पयुत्तस्स अलोभादिहेतुनो अभावा अहेतुकं। यथासकं पच्चयवन्तताय सम्पच्चयं।

अत्तानं आरम्भ पवत्तेहि कामासवादीहि सहितत्ता सासवं। पच्चयेहि अभिसङ्गतता सङ्गतं। उपादानक्खन्धसङ्घाते लोके नियुत्तताय लोकियं। कामतण्हाय अवचरितत्ता कामावचरं।

अरूपधम्म्यानं विय कस्सचि आरम्भणस्स अग्गहणतो नास्स आरम्भणन्ति अनारम्भणं। तदङ्गादिवसेन पहातच्चताभावतो अप्पहातच्चं। इति-सद्दो पकारत्थो, तेन “अब्याकत”न्यादिकं सब्बं एकविधनयं सङ्गण्हाति।

१९. अज्जत्तिकरूपं अत्तभावसङ्घातं अत्तानं अधिकिच्च उद्दिस्स पवत्तता। कामं अञ्जेपि हि अज्जत्तसम्भूता अत्थि, रुद्धीवसेन पन चक्खादिकंयेव अज्जत्तिकं। अथ वा “यदि मयं न होम, त्वं कट्टकलिङ्गरूपमो भविस्ससी”ति वदन्ता विय अत्तभावस्स सातिसयं उपकारत्ता चक्खादीनेव विसेततो अज्जत्तिकानि नाम। अत्तसङ्घातं वा चित्तं अधिकिच्च तस्स द्वारभावेन पवत्ततीति अज्जत्तं, तदेव अज्जत्तिकं। ततो बहिभूतत्ता इतरं तेवीसतिविधं बाहिररूपं।

२०. इतरं बावीसतिविधं अवत्थुरूपं।

२२. अट्टविधम्मि इन्द्रियरूपं पञ्चविज्जाणेषु लिङ्गादीसु सहजरूपपरिपालने च आधिपच्चयोगतो। पसादरूपस्स हि पञ्चविधस्स चक्खुविज्जाणादीसु आधिपच्चं अत्तनो पटुमन्दादिभावेन तेसम्मि पटुमन्दादिभावापादनतो। भावद्वयस्सापि इत्थिलिङ्गादीसु आधिपच्चं यथासकं पच्चयेहि उप्पज्जमानानम्मि तेसं येभुय्येन सभावकसन्तानेयेव तं तदाकारेण उप्पज्जनतो, न पन इन्द्रियपच्चयभावतो। जीवितस्स च कम्मजपरिपालने आधिपच्चं तेसं यथासकं खण्डानस्स जीवितिन्द्रियप्पटिबद्धत्ता। सयञ्च अत्तना टपितधम्मसम्बन्धेनेव पवत्तति नाविको विय।

२३. विसयविसयिभावप्पत्तिवसेन थूलत्ता ओठारिकरूपं। ततोयेव गहणस्स सुकरत्ता सन्तिकेरूपं आसन्नरूपं नाम। यो सयं, निस्सयवसेन च सम्पत्तानं, असम्पत्तानञ्च पटिमुखभावो अञ्जमञ्जपतनं, सो पटिघो वियाति पटिघो। यथा हि पटिघाते सति दुब्बलस्स चलनं होति, एवं अञ्जमञ्जं पटिमुखभावे सति अरूपसभावत्ता दुब्बलस्स भवङ्गस्स चलनं होति। पटिघो यस्स अत्थि तं सम्पटिघं। तत्थ सयं सम्पत्ति फोड्ढस्स, निस्सयवसेन सम्पत्ति घानजिक्काकायगन्धरसानं, उभयथापि असम्पत्ति चक्खुसोतरूपसदानन्ति दडुब्बं। इतरं सोठसविधं ओठारिकतादिसभावाभावतो सुखमरूपादिकं।

^{१०२} ध० स० ६४२

^{१०३} ध० स० ६४१-६४२

२४. कम्पतो जातं अद्वारसविधं उपादिन्नरूपं तण्हादिद्वीहि उपेतेन कम्मुना अत्तनो फलभावेन आदिन्नत्ता गहितत्ता। इतरं अग्गहितग्गहणेनदसविधं अनुपादिन्नरूपं।

२५. ददुब्बभावसङ्घातेन निदस्सनेन सह वत्ततीति सनिदस्सनं। चक्खुविज्जाणगोचरभावो हि निदस्सनन्ति बुच्चति तस्स च रूपायतनतो अनञ्जत्तेपि अञ्जेहि धम्मोहि तं विसेसेतुं अञ्जं विय कत्वा वत्तुं वदुत्तीति सह निदस्सनेन सनिदस्सनन्ति। धम्मभावसामञ्जेन हि एकीभूतेसु धम्मेषु यो नानत्तकरो विसेसो, सो अञ्जो विय कत्वा उपचरित्तुं युत्तो। एवञ्चि अत्थविसेसावबोधो होति।

२६. असम्पत्तवसेनाति अत्तानं असम्पत्तस्स गोचरस्स वसेन, अत्तना विसयम्पदेसं वा असम्पत्तवसेन। चक्खुसोतानि हि रूपसद्देहि असम्पत्तानि, सयं वा तानि असम्पत्तानेव आरम्भणं गणहन्ति। तेनेतं बुच्चति-

“चक्खुसोतं पनेतेसु, होतासम्पत्तगाहकं।
विज्जाणुप्पत्तिहेतुत्ता, सन्तराधिकगोचरे ॥
“तथा हि दूरदेसदुं, फलिकादितरोहितं।
महन्तञ्च नगादीनं, वण्णं चक्खु उदिव्वत्ति ॥
“आकासादिगतो कुच्छि-चम्मानन्तरिकोपि च।
महन्तो च घण्टादीनं, सद्दो सोतस्स गोचरो ॥
“गन्त्वा विसयदेसं तं, फरित्वा गणहतीति चे।
अधिद्धानविधानेपि, तस्स सो गोचरो सिया ॥
“भूतप्पबन्धतो सो चे, याति इन्द्रियसन्निधिं।
कम्पचित्तोजसम्भूतो, वण्णो सद्दो च चित्तजो ॥
“न तेसं गोचरा होन्ति, न हि सम्भोन्ति ते बहि।
बुत्ता च अविसेसेन, पाठे तं विसयाव ते ॥
“यदि चेत्तं द्रयं अत्तसमीपंयेव गणहति।
अक्खिवण्णं तथा मूलं, पस्सेय्य भमुकस्स च ॥
“दिसादेसववत्थानं, सद्दस्स न भवेय्य च।
सिया च सरवेधिस्स, सकण्णे सरपातन”न्ति ॥

गोचरग्गाहिकरूपं विज्जाणाधिद्वितं हुत्वा तं तं गोचरग्गहणसभावत्ता। इतरं तेवीसतिविधं अगोचरग्गाहिकरूपं गोचरग्गहणाभावत्तो।

२७. वण्णितब्बो ददुब्बोति वण्णो। अत्तनो उदयानन्तरं रूपं जनेतीति ओजा। अविनिर्भोगरूपं कत्थचिपि अञ्जमञ्जं विनिभुञ्जनस्स विसुं विसुं पवत्तिया अभावत्तो। रूपलोके गन्धादीनं अभाववादिमत्तम्पि हि तत्थ तत्थ^{३०४} आचरियेहि पटिक्खित्तमेव।

२८. इच्चेवन्ति एत्थपि इति-सद्दो पकारत्थो, तेन इध अनागतम्पि सब्बं दुक्कतिकादिभेदं सङ्गणहति।

रूपविभागवण्णना निद्विता।

रूपसमुद्धाननयवण्णना

२९. कानि पन तानि कम्पादीनि, कथं, कत्थ, कदा च रूपसमुद्धानानीति आह “तत्था”त्यादि। पटिसन्धिमुपादायाति पटिसन्धिचित्तस्स उप्पादक्खणं उपादाय। खणे खणेति

^{३०४} विभ० मूलटी० २२७; विभ० अनुटी० २२७

एकेकस्स चित्तस्स तीसु तीसु खणेषु, निरन्तरमेवाति वुत्तं होति। अपरे पन चित्तस्स टित्तिक्खणं^{१०५}, भङ्गक्खणे च रूपुप्पादं^{१०६} पटिसेधेन्ति। तत्थ किञ्चापि टित्तिक्खणाभावे तेसं उपपत्तिं चेव तत्थ वत्तब्बज्ज हेट्ठा कथितमेव, इधापि पन भङ्गक्खणे रूपुप्पादाभावे उपपत्तिया तत्थ वत्तब्बेन च सह सुखग्गाहणत्थं सङ्गहेत्वा वुच्चति-

“उप्पन्नूप्पज्जमानन्ति, विभङ्गे एवमादिनं।
 भङ्गक्खणस्सिं उप्पन्नं, नो च उप्पज्जमानकं ॥
 “उप्पज्जमानमुप्पादे, उप्पन्नञ्चातिआदिना।
 भङ्गुप्पादाव अक्खाता, न चित्तस्स टित्तिक्खणो ॥
 “उप्पादो च वयो चेव, अञ्जथत्तं टित्तस्स च।
 पञ्जायती”ति^{१०७} वुत्तत्ता, टिति अत्थीति चे मतं ॥
 “अञ्जथत्तस्स एकस्सिं, धम्मे अनुपलद्धितो।
 पञ्जाणवचना चेव, पबन्थट्ठिति तत्थपि ॥
 “वुत्ता तस्सा न चित्तस्स, टिति दिस्सति पाळियं।
 अभिधम्मे अभावोपि, निसेधोयेव सब्बथा ॥
 “यदा समुदयो यस्स, निरुज्झति तदास्स किं।
 दुक्खमुप्पज्जतीत्येत्थ, पञ्हे नोति निसेधतो ॥
 “रूपुप्पादो न भङ्गस्सिं, तस्सा सब्बेपि पच्चया।
 उप्पादेयेव चित्तस्स, रूपहेतूति केचन ॥
 “वुच्चते तत्थ एकस्सिं, धम्मेयं यथा मता।
 उप्पादावत्थतो भिन्ना, भङ्गावत्था तथेव तु ॥
 “भङ्गस्साभिमुखावत्था, इच्छितब्बा अयं टिति।
 नयदस्सनतो एसा, विभङ्गे न तु देसिता ॥
 “लक्खणं सङ्गतस्सेव, वत्तुमुप्पादआदिनं।
 देसितत्ता न तत्थापि, पबन्थस्स टितीरिता ॥
 “उपसग्गास्स धातूनमत्थेयेव पवत्तितो।
 पञ्जायतीति चेतस्स, अत्थो विञ्जायते इति ॥
 “भङ्गे रूपस्स नुप्पादो, चित्तजानं वसेन वा।
 आरुप्पंवाभिसन्धाय, भासितो यमकस्स हि ॥
 “सभावोयं यथालाभ-योजनाति ततो नहि।
 न चित्तट्ठिति भङ्गे च, न रूपस्स असम्भवो”ति ॥

३१. रूपविरागभावानिब्बत्तत्ता हेतुनो तब्बिधुरताय, अनोकासताय च अरूपविपाका, रूपजनने विसेसपच्चयेहि ज्ञानङ्गेहि सम्पयोगाभावतो द्विपञ्चविञ्जाणानि चाति चुद्धस चित्तानि रूपं न समुद्गापेन्तीति वुत्तं “आरुप्पविपाकद्विपञ्चविञ्जाणवज्जित”न्ति। पटिसन्धिचित्तं, पन चुत्तिचित्तञ्च एकूनवीसति भवङ्गस्सेव अन्तोगधत्ता चित्तन्तरं न होतीति न तस्स वज्जनं कत्तं। किञ्चापि न कत्तं, पच्छाजातपच्चयरहितं, पन आहारादीहि च अनुपत्थद्धं दुब्बलवत्थुं निस्साय पवत्तत्ता, अत्तनो च आगन्तुकताय कम्मजरूपेहि चित्तसमुद्धानरूपानं ठानं गहेत्वा टितत्ता च पटिसन्धिचित्तं रूपसमुद्गापकं न होति। चुत्तिचित्ते पन अट्टकथायं^{१०८} ताव “नूपसन्तवट्टमूलस्सिं सन्ताने सातिसयं सन्तवुत्तित्ताय

^{१०५} विभ० मूलटी० २० पकिण्णककथावण्णना

^{१०६} विभ० मूलटी० २० पकिण्णककथावण्णना

^{१०७} अ० नि० ३.४७

^{१०८} ध० स० अट्ट० ६३६; विभ० अट्ट० २६ पकिण्णककथा

खीणासवस्सेव चुत्तिचित्तं रूपं न समुद्वापेती”ति^{३०९} वुत्तं। आनन्दाचरियादयो पन “सब्बेसम्पि चुत्तिचित्तं रूपं न समुद्वापेती”ति वदन्ति। विनिच्छयो पन नेसं सङ्घेपतो मूलटीकादीसु, विन्धारतो च अभिधम्मत्थविकासिनियं वुत्तनयेन दट्टब्बो। पठमभवङ्गमुपादायाति पटिसन्धिया अनन्तरनिब्बत्तपठमभवङ्गतो पट्टाय। जायन्तमेव समुद्वापेति, न पन ठित्तं, भिज्जमानं वा अनन्तरादिपच्चयलाभेन उप्पादक्खणेयेव जनकसामत्थिययोगतो।

३२. इरियाय कायिककिरियाय पवत्तिपथभावतो इरियापथो, गमनादि, अत्थतो तदवत्था रूपम्पवत्ति। तम्पि सन्धारति यथापवत्तं उपत्थम्भेति। यथा हि वीथिवित्तेहि अब्बोकिण्णे भवङ्गे पवत्तमाने अङ्गानि ओसीदन्ति, न एवमेतेसु द्वत्तिसविधेसु, वक्खमानेसु च छब्बीसतिया जागरणचित्तेसु पवत्तमानेसु। तदा पन अङ्गानि उपत्थद्धानि यथापवत्तइरियापथभावेनेव पवत्तन्ति।

३३. विज्जत्तिम्पि समुद्वापेन्ति, न केवलं रूपिरियापथानेव। अविसेसवचनेपि पनेत्थ मनोद्वारम्पवत्तानेव वोट्टब्बनजवनानि विज्जत्तिसमुद्वापकानि, तथा हासजनकानि च पञ्चद्वारम्पवत्तानं परिदुब्बलभावतोति दट्टब्बं। कामज्जेत्थ रूपविनिमुत्तो इरियापथो, विज्जत्ति वा नत्थि, तथापि न सब्बं रूपसमुद्वापकं चित्तं इरियापथूपत्थम्भकं, विज्जत्तिविकारजनकञ्च होति। यं पन चित्तं विज्जत्तिजनकं, तं एकंसतो इरियापथूपत्थम्भकं इरियापथस्स विज्जत्तिया सह अविनाभावतो। इरियापथूपत्थम्भकञ्च रूपजनकन्ति इमस्स विसेसदस्सनत्थं रूपतो इरियापथविज्जत्तीनं विसुं गहणं।

३४. तेरसाति कुसलतो चत्तारि, अकुसलतो चत्तारि, किरियतो पञ्चाति तेरसु। तेसु हि पुथुज्जना अट्टहि कुसलकुसलेहि हसन्ति, सेक्खा दिट्ठिसहगतवज्जितेहि, असेक्खा पन पञ्चहि किरियचित्तेहि, तत्थापि बुद्धा चत्तुहि सहेतुककिरियचित्तेहेव हसन्ति, न अहेतुकेन “अतीतंसादीसु अप्पटिहतजाणं पत्वा इमेहि तीहि धम्मेहि समन्नागतस्स बुद्धस्स भगवतो सब्बं कायकम्मं जाणपुब्बङ्गं जाणानुपरिवत्ती”ति वचनतो^{३१०}। न हि विचारणपञ्चारहितस्स हसितुप्पादस्स बुद्धानं पवत्ति युत्ताति वदन्ति। हसितुप्पादचित्तेन पन पवत्तियमानम्पि तेसं सितकरणं पुब्बनिवासअनागतं ससब्बञ्जुतञ्जाणानं अनुवत्तकत्ता जाणानुपरिवत्तियेवाति। एवञ्च कत्वा अट्टकथायं^{३११} “तेसं आणानं चिण्णपरियन्ते इदं चित्तं हासयमानं उप्पज्जती”ति वुत्तं, तस्मा न तस्स बुद्धानं पवत्ति सक्का निवारेतुं।

३५. पच्छाजातादिपच्चयूपत्थम्भलाभेन ठितिक्खणेयेव उतुओजानं बलवभावोति वुत्तं “तेजोधातु ठितिप्पत्ता”त्यादि।

३७. तत्थ हृदयइन्द्रियरूपानि नव कम्मतोयेव जातत्ता कम्मजानेव। यच्चि जातं, जायति, जायिस्सति च, तं “कम्मज”न्ति वुच्चति यथा दुद्धान्ति।

४०. पच्चुप्पन्नपच्चयापेक्खत्ता लहुतादित्तयं कम्मजं न होति, इतरथा सब्बदाभावीहि भवित्त्वन्ति वुत्तं “लहुतादित्तयं उतुचित्ताहारेहि सम्भोती”ति।

४३. एकन्तकम्मजानि नव, चतुजेसु कम्मजानि नवाति अट्टारस कम्मजानि, पञ्चविकाररूपसहअविनिब्भोगरूपआकासवसेन पन्नरस चित्तजानि, सट्ठो, लहुतादित्तयं, अविनिब्भोगाकासरूपानि नवाति तेरस उतुजानि, लहुतादित्तयअविनिब्भोगाकासवसेन द्वादस आहारजानि।

४४. केवलं जायमानादिरूपानं जायमानपरिपच्चमानभिज्जमानरूपानं सभावत्ता सभावमत्तं विना अत्तनो जातिआदिलक्खणाभावतो लक्खणानि केहिचि पच्चयेहि न जायन्तीति पकासितं। उप्पादादियुत्तानञ्चि चक्खादीनं जातिआदीनि लक्खणानि विज्जन्ति, न एवं जातिआदीनं। यदि तेसम्पि जातिआदीनि सियुं, एवं अनवत्थानमेव आपज्जेय्य। यं पन “रूपायतनं...पे०...

^{३०९} थ० स० मूलटी० ६३६

^{३१०} महानि० ६९; वृत्तनि० शोषराजमाणवपुच्छानिदेस ८५; पटि० म० ३.५

^{३११} थ० स० अट्ट० ५६८

कबळीकारो आहारो। इमे धम्मा चित्तसमुद्धाना”त्यादीसु^{३१२} जातिया कुतोचिजातत्तं अनुज्जातं, तम्पि रूपजनकपच्चयानं रूपुप्पादनं पति अनुपरतव्यापारानं पच्चयभावपगमनक्खणे जायमानधम्मविकारभावेन उपलब्भमानतं सन्थायाति दट्टब्बं। यम्पि “जाति, भिक्खवे, अनिच्चा सङ्घता पटिच्चसमुप्पन्ना। जरामरणं, भिक्खवे, अनिच्चं सङ्घतं पटिच्चसमुप्पन्न”न्ति वचनं^{३१३}, तत्थापि पटिच्चसमुप्पन्नानं लक्खणभावतोति अयमेत्थाभिसन्धि। तेनाहु पोराना—
 “पाटे कुतोचि जातत्तं, जातिया परियायतो।
 सङ्घतानं सभावत्ता, तीसु सङ्घततोदिता”ति ॥

रूपसमुद्धाननयवण्णना निड्ढिता।

कलापयोजनावण्णना

४५. यस्मा पनेतानि रूपानि कम्मादितो उप्पज्जमानानिपि न एकेकं समुद्दहन्ति, अथ खो पिण्डतोव। तस्मा पिण्डानं गणनपरिच्छेदं, सरूपञ्च दस्सेतुं “एकुप्पादा”त्यादि वुत्तं। सहवुत्तिनोति विसुं विसुं कलापगतरूपवसेन सहवुत्तिनो, न सब्बकलापानं अज्जमज्जं सहुप्पत्तिवसेन।

४६. दस परिमाण्णा अस्साति दसकं, समुदायस्सेतं नामं, चक्खुना उपलब्धितं, तप्पधानं वा दसकं चक्खुदसकं। एवं सेसेसुपि।

४७. वचीविज्जत्तिग्गहणेन सदोपि सङ्घहितो होति तस्सा तदविनाभावतोति वुत्तं “वचीविज्जत्तिदसक”न्ति।

५०. किं पनेते एकवीसति कलापा सब्बेपि सब्बत्थ होन्ति, उदाहु केचि कत्थचीति आह “तत्था”त्यादि।

कलापयोजनावण्णना निड्ढिता।

रूपपवत्तिकमवण्णना

५२. इदानि नेसं सम्भववसेन, पवत्तिपटिसन्धिवसेन, योनिवसेन च पवत्तिं दस्सेतुं “सब्बानिपि पनेतानी”त्यादि वुत्तं। यथारहन्ति सभावकपरिपुण्णायतनानं अनुरूपतो।

५३. कमलकुहरगब्भमलादिसंसेदडानेसु जाता संसेदजा। उपपातो नेसं अत्थीति ओपपातिका, उक्कंसगतिपरिच्छेदवसेन चेत्य विसिट्ठउपपातो गहितो यथा “अभिरूपस्स कज्जा दातब्बा”ति। सत्त दसकानि पातुभवन्ति परिपुण्णायतनभावेन उपलब्धनतो। कदाचि न लब्धन्ति जच्चन्धजच्चबधिरजच्चाधाननपुंसकआदिकम्पिकानं वसेन। तत्थ सुगतियं महानुभावेन कम्मुना निब्बत्तमानानं ओपपातिकानं इन्द्रियवेकल्लायोगतो चक्खुसोतधानालाभो संसेदजानं, भावालाभो पटमकम्पिकओपपातिकानं वसेनपि। दुग्गतियं पन चक्खुसोतभावालाभो दिन्नम्पि वसेन, धानालाभो संसेदजानमेव वसेन, न ओपपातिकानं वसेनाति दट्टब्बं। तथा हि धम्महदयविभङ्गे “कामधातुया उपपत्तिक्खणे कस्सचि एकादसायतनानि पातुभवन्ति, कस्सचि दस, कस्सचि अपरानिपि दस, कस्सचि नव, कस्सचि सत्ता”ति^{३१४} वचनतो परिपुण्णिन्द्रियस्स ओपपातिकस्स सद्दायतनवज्जितानि एकादसायतनानि वुत्तानि। अन्धस्स चक्खायतनवज्जितानि दस, तथा बधिरस्स सोतायतन-

^{३१२} ध० त० १२०१

^{३१३} सं० नि० २.२०

^{३१४} वि० १००७

वज्जितानि, अन्धबधिरस्स तदुभयवज्जितानि नव, गम्भसेय्यकस्स चक्खुसोतघानजिह्वासहायतन-
वज्जितानिसत्तायतनानि वुत्तानि। यदि पन अधानकोपि ओपपातिको सिया, अन्धबधिराधानकानं
वसेन तिवखत्तुं दस, अन्धबधिरअन्धाधानकबधिराधानकानं वसेन तिवखत्तुं नव,
अन्धबधिराधानकस्स वसेन च अट्ट आयतनानि वत्तब्बानि सियुं, न पनेवं वुत्तानि। तस्मा नत्थि
ओपपातिकस्स घानवेकल्लन्ति। तथा च वुत्तं यमकट्टकथायं “अधानको ओपपातिको नत्थि। यदि
भवेय्य, कस्सचि अट्टायतनानीति वदेय्या”ति^{३१५} ।

संसेदजानं पन घानाभावो न सक्का निवारेतुं “कामधातुया उपपत्तिवखणे”त्यादिपाठिया^{३१६}
ओपपातिकयोनिमेव सन्धाय, सत्तायतनगहणस्स च अज्जेसं असम्भवतो गम्भसेय्यकमेव सन्धाय
वुत्तत्ता। यं पन “संसेदजयोनिंका परिपुण्णायतनभावेन ओपपातिकसङ्गहं कत्वा वुत्ता”ति
अट्टकथावचनं, तम्पि परिपुण्णायतनंयेव संसेदजानं ओपपातिकेसु सङ्गहवसेन वुत्तं। अपरे पन यमके
घानजिह्वानं सहचारिता वुत्ताति अजिह्वस्स असम्भवतो अधानकस्सपि अभावमेव वण्णेन्ति, तत्थापि
यथा चक्खुसोतानि रूपभवे घानजिह्वाहि विना पवत्तन्ति, न एवं घानजिह्वा अज्जमज्जं विना
पवत्तन्ति द्वित्रम्पि रूपभवे अनुप्यज्जनतोति एवं विसुं विसुं कामभवे अप्पवत्तिवसेन तेसं सहचारिता
वुत्ताति न न सक्का वत्तुन्ति।

५४. गम्भे मातुकुच्छियं सेन्तीति गम्भसेय्यका, तेयेव रूपादीसु सत्तायाय सत्ताति
गम्भसेय्यकसत्ता। एते अण्डजजलाबुजा। तीणि दसकानि पातुभवन्ति, यानि “कललरूप”न्ति
वुच्चन्ति, परिपिण्डितानि च तानि जातिउण्णाय एकस्स अंसुनो पसन्नतिलतेले पविष्वपित्वा उद्वटस्स
पग्घरित्वा अग्गे टित्तिबिन्दुमत्तानि अच्छानि विप्पसन्नानि।

कदाचि न लब्धति अभावकसत्तानं वसेन। ततो परन्ति पटिसन्धितो परं। पवत्तिकालेति
सत्तमे सत्ताहे, टीकाकारमतेन एकादसमे सत्ताहे वा। कमेनाति चक्खुदसकपातुभावतो
सत्ताहातिकमेन सोतदसकं, ततो सत्ताहातिकमेन घानदसकं, ततो सत्ताहातिकमेन
जिह्वादसकन्ति एवं अनुक्कमेन। अट्टकथायम्पि हि अयमत्थो दस्सितोव।

५५. टितिकालन्ति पटिसन्धित्तस्स टितिकालं। पटिसन्धित्तसहजाता हि उतु ठानप्पत्ता
तस्स टितिवखणे सुद्धट्टकं समुदापेति, तदा उप्पन्ना भङ्गवखणेत्यादिना अनुक्कमेन उतु रूपं जनेति।
ओजाफरणमुपादायाति गम्भसेय्यकस्स मातु अज्जोहटाहारतो संसेदजोपपातिकानञ्च मुखगतसेम्हादितो
ओजाय रसहरणीअनुसारेण सरीरे फरणकालतो पट्टाय।

५६. चुत्तिचित्तं उपरिमं एतस्साति चुत्तिचित्तोपरि। कम्मजरूपानि न उप्पज्जन्ति तदुप्पत्तियं
मरणाभावतो। कम्मजरूपविच्छेदे हि “मतो”ति वुच्चति। यथाह-

“आयु उस्मा च विज्जाणं, यदा कायं जहन्तिमं।
अपविद्धो तदा सेति, निरत्थं व कलिङ्गर”न्ति^{३१७} ॥

पुरेतरन्ति सत्तरसमस्स उप्पादवखणे। ततोपरं चित्तजाहारजरूपञ्च वोच्छिज्जतीति
अजीवकसन्ताने तेसं उप्पत्तिया अभावतो यथानिब्बतं चित्तजं, आहारजञ्च ततो परं किञ्चि कालं
पवत्तित्वा निरुज्जति। अपरे पन आचरिया “चित्तजरूपं चुत्तिचित्ततो पुरेतरमेव वोच्छिज्जती”ति
वण्णेन्ति।

५८. रूपलोके घानजिह्वाकायानं अभावे कारणं वुत्तमेव। भावद्वयं पन
बहलकामरागूपनिस्सयत्ता ब्रह्मानञ्च तदभावतो तत्थ न पवत्तति। आहारजकलापानि च न लब्धन्ति
अज्जोहटाहाराभावेन सरीरगतस्सपि आहारस्स रूपसमुदापनाभावतो। बाहिरज्जे उतु, आहारञ्च

^{३१५} यम० अट्ट० आयतनयमक० १८-२१

^{३१६} विभ० १००७

^{३१७} सं० नि० ३.१५ धोके विसदिसं

उपनिस्सयं लभित्वा उतुआहारा रूपं समुद्गापेन्ति। जीवितनवकन्ति कायाभावतो कायदसकड्डानियं जीवितनवकं।

६१. अतिरिच्छति सेसब्रह्मानं पटिसन्धियं, पवत्ते च उपलभितव्वरूपतो अवसिट्ठं होति, मरणकाले पन ब्रह्मानं सरीरनिक्खेपाभावतो सब्बेसम्मि तिसमुद्धानानि, दिसमुद्धानानि च सहेव निरुद्धान्ति।

६१. रूपेसु तेवीसति घानजिक्कायभावद्वयवसेन पञ्चत्रं अभावतो। केचि पन “लहुतादित्तयम्मि तेसु नत्थि दन्धत्तकरादिधातुक्खोभाभावतो”ति वदन्ति, तं अकारणं। न हि वूपसमेतव्वापेक्खा तब्बिरोधिधम्मपवत्ति तथा सति सहेतुककिरियचित्तेसु लहुतादीनं अभावप्पसङ्गतो। “सद्दो विकारो”त्यादि सब्बेसम्मि साधारणवसेन वुत्तं।

रूपपवत्तिकमववण्णना निट्ठिता।

निब्बानभेदवण्णना

६२. एत्तावता चित्तचेतसिकरूपानि विभागतो निद्विसित्वा इदानि निब्बानं निद्विसन्तो आह “निब्बानं पना”त्यादि। “चतुमग्गजाणेन सच्छिकातव्व”न्ति इमिना निब्बानस्स तं तं अरियपुग्गलानं पच्चक्खसिद्धतं दस्सेति। “मग्गफलानमारम्मणभूत”न्ति इमिना कल्याणपुधुज्जनानं अनुमानसिद्धतं। सङ्गतधम्मारम्मणञ्छि, पञ्जत्तारम्मणं वा जाणं किलेसानं समुच्छेदपटिप्पस्सम्भने असमत्थं, अत्थि च लोके किलेससमुच्छेदादि। तस्मा अत्थि सङ्गतसम्मतिधम्मविपरीतो किलेसानं समुच्छेदपटिप्पस्सद्विकरानं मग्गफलानं आरम्मणभूतो निब्बानं नाम एको धम्मोति सिद्धं। पच्चक्खानुमानसिद्धतासन्दस्सनेन च अभावमत्तं निब्बानन्ति विप्पटिपन्नानं वादं निसेधेतीति अलमतिप्पपञ्चेन।

खन्धादिभेदे तेभूमकधम्मे हेट्टुपरियवसेन विननतो संसिब्बनतो वानसङ्घाताय तण्हाय निक्खन्तत्ता विसयातिक्कमवसेन अतीतत्ता।

६३. सभावतोति अत्तनो सन्तिलक्खणेन। उपादीयति कामुपादादीहीति उपादि, पच्चक्खन्धस्सेतं अधिवचनं, उपादियेव सेसो किलेसेहीति उपादिसेसो, तेन सह वत्ततीति सउपादिसेसा, सा एव निब्बानधातूति सउपादिसेसनिब्बानधातु। कारणपरियायेनाति सउपादिसेसादिवसेन पञ्जापने कारणभूतस्स उपादिसेस भावाभावस्स लेसेन।

६४. आरम्मणतो, सम्पयोगतो च रागदोसमोहेहि सुज्जत्ता सुज्जं, सुज्जमेव सुज्जतं, तथा रागादिनिमित्तरहितत्ता अनिमित्तं। रागादिपणिधिरहितत्ता अप्पणिहितं। सब्बसङ्घारेहि वा सुज्जत्ता सुज्जतं। सब्बसङ्घारनिमित्ताभावतो अनिमित्तं। तण्हापणिधिया अभावतो अप्पणिहितं।

६५. चवनाभावतो अच्युतं। अन्तस्स परियोसानस्स अतिक्कन्तत्ता अच्यन्तं। पच्चयेहि असङ्गतत्ता असङ्गतं। अत्तनो उत्तरितरस्स अभावतो, सहधम्मेन वत्तव्वस्स उत्तरस्स वा अभावतो अनुत्तरं। वानतो तण्हातो मुत्तत्ता सब्बसो अपगतत्ता वानमुत्ता। महन्ते सीलक्खन्धादिके एसन्ति गवेसन्तीति महेसयो। “इति चित्त”न्यादि छहि परिच्छेदेहि विभत्तानं चित्तादीनं निगमनं।

निब्बानभेदवण्णना निट्ठिता।

इति अभिधम्मत्थविभाविनिया नाम अभिधम्मत्थसङ्ग्रहवण्णनाय रूपपरिच्छेदवण्णना निट्ठिता।

७. समुच्चयपरिच्छेदवर्णना

१. सलक्षणा चिन्तनादिसलक्षणा चित्तचेतसिकनिष्फन्नरूपनिब्वानवसेन द्वासत्ततिपभेदा वत्थुधम्मा सभावधम्मा वुत्ता, इदानि तेसं यथायोगं सभावधम्मानं एकेकसमुच्चयवसेन योगानुरूपतो अकुसलसङ्गहादिभेदं समुच्चयं रासिं पवक्खामीति योजना।

२. अकुसलानमेव सभागधम्मवसेन सङ्गहो अकुसलसङ्गहो। कुसलादिवसेन मिस्सकानं सङ्गहो मिस्सकसङ्गहो, सच्चाभिसम्बोधिसङ्घातस्स अरियमग्गस्स पक्खे भवानं बोधिपक्खियानं धम्मानं सत्तिपट्टानादिभेदानं सभागवत्थुवसेन सङ्गहो बोधिपक्खियसङ्गहो। खन्धादिवसेन सब्बेसं सङ्गहो सब्बसङ्गहो।

अकुसलसङ्गहवर्णना

३. पुब्बकोटिया अपञ्जायनतो चिरपारिवासियट्टेन, वणतो वा विस्सन्दमानयूसा विय च्खखादितो विसयेसु विस्सन्दनतो आसवा। अथ वा भवतो आभवगं धम्मतो आगोत्रभुं सवन्ति पवत्तन्तीति आसवा। अवधिअत्थो चेत्थ आ-कारो, अवधि च मरियादाभिविधिवसेन दुविधो। तत्थ “आपाटलिपुत्तं वुट्ठो देवो”त्यादीसु विय किरियं बहि कत्वा पवत्तो मरियादो। “आभवगं सट्ठो अब्भुग्गतो”त्यादीसु विय किरियं व्यापेत्वा पवत्तो अभिविधि। इध पन अभिविधिन्हि दट्ठब्बो। तथा हेते निब्बत्तिट्टानभूते च भवगो, गोत्रभुम्हि च आरम्भणभूते पवत्तन्ति। विज्जमानेसु च अज्जेसु आभवगं, आगोत्रभुज्य सवन्तेसु मानादीसु अत्तत्तनियग्गहणवसेन अभिव्यापनतो मदकरणट्टेन आसवसदिसताय च एतेयेव आसवभावेन निरुब्भाति दट्ठब्बं। कामोयेव आसवो कामासवो, कामरागो। रूपरूपभवेसु छन्दरागो भवासवो। ज्ञाननिकन्तिसस्सतदिट्टिसहगतो च रागो एत्थेव सङ्गहति। तत्थ पट्ठो उपपत्तिभवेसु रागो, दुतियो कम्मभवे, ततियो भवदिट्टिसहगतो। द्वासङ्घिविधा विट्ठि दिट्ठासवो। दुक्खादीसु चतूसु सच्चेसु, पुब्बन्ते, अपरन्ते, पुब्बापरन्ते, पटिच्चसमुप्पादेसु चाति अट्टसु ठानेसु अज्जाणं अविज्जासवो।

४. ओत्थरित्वा हरणतो, ओहननतो वा हेट्ठा कत्वा हननतो ओसीदापनतो “ओघो”ति कुच्चति जलप्पवाहो, एते च सत्ते ओत्थरित्वा हनन्ता वट्ठस्मि सत्ते ओसीदापेन्ता विय होन्तीति ओघसदिसताय ओघा, आसवायेव पनेत्थ यथावुत्तट्टेन “ओघा”ति च कुच्चन्ति।

५. वट्ठस्मि, भवयन्तके वा सत्ते कम्मविपाकेन भवन्तरादीहि, दुक्खेन वा सत्ते योजेन्तीति योगा, हेट्ठा वुत्तधम्माव।

६. नामकायेन रूपकार्यं, पच्चुप्पन्नकायेन वा अनागतकार्यं गन्धेन्ति दुप्पमुज्जं वेठेन्तीति कायगन्धा। गोसीलादिना सीलेन, वतेन, तदुभयेन च सुद्धीति एवं परतो असभावतो आमसनं परामासो। “इदमेव सच्चं, मोघमज्ज”न्ति अभिनिविसनं दब्बग्गाहो इदं सच्चाभिनिवेसो।

७. मण्डूकं पन्नगो विय भुसं दब्बं आरम्भणं आदियन्तीति उपादानानि। कामोयेव उपादानं, कामे उपादियतीति वा कामुपादानं। “इमिना मे सीलवतादिना संसारसुद्धी”ति एवं सीलवतादीनं गहणं सीलवतुपादानं। वदन्ति एतेनाति वादो, खन्धेहि व्यतिरित्ताव्यतिरित्तवसेन वीसति परिकम्पितस्स अत्तनो वादो अत्तवादो। सोयेव उपादानन्ति अत्तवादुपादानं।

८. ज्ञानादिवसेन उप्पज्जनककुसलचित्तं निसेधेन्ति तथा तस्स उप्पज्जितुं न देन्तीति नीवरणानि, पञ्जाचक्खुनो वा आवरणट्टेन नीवरणा। पञ्चसु कामगुणेसु अधिमत्तरागसङ्घातो कामोयेव छन्दनट्टेन छन्दो चाति कामच्छन्दो। सोयेव नीवरणन्ति कामच्छन्दनीवरणं। व्यापज्जति विनस्सति एतेन चित्तन्ति व्यापादो, “अनत्थं मे अचरी”त्यादि नयम्पवत्तनवविध-

आघातवत्थुपदद्धानताय नवविधो, अद्धानकोपेन सह दसविधो वा दोसो, सोयेव नीवरणन्ति व्यापादनीवरणं। धिनमिद्धमेव नीवरणं धिनमिद्धनीवरणं।

तथा उद्धच्चकुक्कुच्चनीवरणं। कस्मा पनेते भिन्नधम्मा द्वे द्वे एकनीवरणभावेन बुत्ताति? किच्चाहारपटिपक्खानं समानभावतो। धिनमिद्धानज्हे चित्तुप्पादस्स लयापादनकिच्चं समानं, उद्धच्चकुक्कुच्चानं अवूपसन्तभावकारणं। तथा पुरिमानं द्वित्रं तन्दीविजम्भिता आहारो, हेतूत्पत्थो, पच्छिमानं जातिव्यसनादिवितक्कनं। पुरिमानञ्च द्वित्रं वीरियं पटिपक्खभूतं, पच्छिमानं समथोति, तेनाहु पोरणा-

“किच्चाहारविपक्खानं, एकत्ता एकमेत्थ हि।

कतमुद्धच्चकुक्कुच्चं, धिनमिद्धञ्च तादिना ॥

“लीनतासन्ता किच्चं, तन्दी जातिवितक्कनं।

हेतु वीरियसमथा, इमे तेसं विरोधिन्”ति ॥

१. अप्पहीनट्टेन अनु अनु सन्ताने सेन्तीति अनुसया, अनुरूपं कारणं लभित्वा उपपज्जन्तीत्यत्थो। अप्पहीना हि किलेसा कारणलाभे सति उपपज्जनारहा सन्ताने अनु अनु सयिता विय होन्तीति तदवत्था “अनुसया”ति बुच्चन्ति। ते पन निष्परियायतो अनागता किलेसा, अतीतपच्चुप्पन्नापि तं सभावता तथा बुच्चन्ति। न हि कालभेदेन धम्मानं सभावभेदो अत्थि, यदि अप्पहीनट्टेन अनुसया, ननु सब्बेपि किलेसा अप्पहीना अनुसया भवेय्युन्ति? न मयं अप्पहीनतामत्तेन “अनुसया”ति वदाम, अथ खो अप्पहीनट्टेन धामगता किलेसा अनुसयाति। धामगमनञ्च अनञ्जसाधारणो कामरागादीनमेव आवेणिको सभावोति अलं विवादेन। कामरागोयेव अनुसयो कामरागानुसयो।

१०. संयोजेन्ति बन्धन्तीति संयोजनानि।

१२. चित्तं किलिस्सति उपत्तप्पति, बाधीयति वा एतेहीति किलेसा।

१३. कामभवनामेनाति कामभवसङ्घातानं आरम्भणानं नामेन। तथापवत्तन्ति सीलब्वतादीनं परतो आमसनादिवसेन पवत्तं।

१४. आसवा च ओघा च योगा च गन्था च वत्थुतो धम्मतो बुत्तनयेन तयो। तथा उपादाना दुवे बुत्ता तण्हादिद्विवसेन। नीवरणा अट्ट सियुं धिनमिद्धउद्धच्चकुक्कुच्चानं विसुं गहणतो। अनुसया छळेव होन्ति कामरागभवरगानुसयानं तण्हासभावेन एकतो गहितत्ता। नव संयोजना मता उभयत्थ बुत्तानं तण्हासभावानं, दिट्ठिसभावानञ्च एकेकं सङ्गहितत्ता। किलेसा पन सुत्तन्तवसेन, अभिधम्मवसेनपि दस। इति एवं पापानं अकुसलानं सङ्गहो नवथा बुत्तो। एत्थ च-

नवाडुसङ्गहा लोभ-दिट्ठियो सत्तसङ्गहा।

अविज्जा पटिघो पञ्च-सङ्गहो चतुसङ्गहा।

कङ्गा तिसङ्गहा मानुद्धच्चा धिनं द्विसङ्गहं ॥

कुक्कुच्चमिद्धाहिरिका-नोत्तप्पिस्सा निगूहना।

एकसङ्गहिता पापा, इच्चेवं नवसङ्गहा ॥

अकुसलसङ्गहवण्णना निट्ठिता।

मिस्सकसङ्गहवण्णना

१५. हेतुसु वत्तब्बं हेडा बुत्तमेव।

१६. आरम्भणं उपगन्त्वा चिन्तनसङ्घातेन उपनिज्जायनट्टेन यथारहं पच्चनीकधम्मज्ञापनट्टेन च ज्ञानानि च तानि अङ्गानि च समुदितानं अवयवभावेन अङ्गीयन्ति जायन्तीति ज्ञानज्ञानि।

अवयवविनिमुक्तस्स च समुदायस्स अभावेपि सेनङ्गरथङ्गादयो विय विसुं विसुं अङ्गभावेन वुच्चन्ति एकतो हुत्वा ज्ञानभावेन। दोमनस्सज्जेत्थ अकुसलज्ञानङ्गं, सेतानि कुसलकुसलाब्बाकतज्ञानङ्गानि।

१७. सुगतिदुग्गतीनं, निब्बानस्स च अभिमुखं पापनतो मग्गा, तेसं पथभूतानि अङ्गानि, मग्गस्स वा अट्टङ्गिकस्स अङ्गानि मग्गङ्गानि। सम्मा अविपरीततो पस्सतीति सम्मादिट्ठि। सा पन “अत्थि दिङ्ग” न्यादिवसेन दसविधा, परिञ्जादिकिच्चवसेन चतुब्बिधा वा।

सम्मा सङ्कप्पेन्ति एतेनाति सम्मासङ्कप्पो। सो नेक्खम्मसङ्कप्पअव्यापादसङ्कप्प-अविहिंसासङ्कप्पवसेन तिविधो। सम्मावाचादयो हेट्ठा विभाविताव। सम्मा वायमन्ति एतेनाति सम्मावायामो। सम्मा सरन्ति एतायाति सम्मासति। इमेसं पन भेदं उपरि वक्खति। सम्मा सामज्य आधीयति एतेन चित्तन्ति सम्मासमाधि, पटमज्झानादिवसेन पञ्चविधा एकग्गता। पिच्छादिट्ठिआदयो दुग्गतिमग्गता मग्गङ्गानि।

१८. दस्सनादीसु चक्खुविञ्जाणादीहि, येभुय्येन तं सहितसन्तानप्पवत्तियं लिङ्गादीहि, जीवने जीवन्तेहि कम्मजरूपसम्पयुत्तधम्महि, मनने जानने सम्पयुत्तधम्महि, सुखितादिभावे सुखितादीहि सहजातेहि, सद्वहनादीसु सद्वहनादिवसप्पवत्तेहि तेहेव, “अनञ्जातं जस्सामी”ति पवत्तियं तथापवत्तेहि सहजातेहि, आजानने अञ्जभाविभावे च आजाननादिवसप्पवत्तेहि सहजातेहि अत्तानं अनुवत्तापेत्ता धम्मा इस्सरट्टेन इन्द्रियानि नामाति आह “चक्खुन्द्रिय” न्यादि। अट्टकथायं^{१९} पन अपरेपि इन्दलिङ्गद्वादयो इन्द्रियद्वा वुत्ता। जीवितिन्द्रियन्ति रूपारूपवसेन दुविधं जीवितिन्द्रियं। “अनमतग्गे संसारे अनञ्जातं अमतं पदं, चतुसच्चधम्ममेव वा जस्सामी”ति एवमज्झासयेन पटिपन्नस्स इन्द्रियं अनञ्जातञ्जस्सामीतिन्द्रियं। आजानाति पटममग्गेन दिट्ठमरियदं अनतिकक्कमित्वा जानाति इन्द्रियञ्चाति अञ्जिन्द्रियं।

अञ्जाताविनो चत्तारि सच्चानि पटिविज्जित्वा टितस्स अरहतो इन्द्रियं अञ्जाताविन्द्रियं। धम्मसरूपविभावनत्थञ्चेत्थ पञ्जिन्द्रियग्गहणं, पुग्गलज्झासयकिच्चवित्सेसविभावनत्थं अनञ्जातञ्जस्सामीतिन्द्रियादीनं गहणं।

एत्थ च सत्तपञ्जत्तिया वित्सेसनिस्सयत्ता अज्जत्तिकायतनानि आदितो वुत्तानि, मनिन्द्रियं पन अज्जत्तिकायतनभावसामञ्जेन एत्थेव वत्तब्बम्मि अरूपिन्द्रियेहि सह एकतो दस्सनत्थं जीवितिन्द्रियानन्तरं वुत्तं, सायं पञ्जत्ति इमेसं वसेन “इत्थी पुरिसो”ति विभागं गच्छतीति दस्सनत्थं तदनन्तरं भावद्वयं, तयिमे उपादिन्नधम्मा इमस्स वसेन तिट्ठन्तीति दस्सनत्थं ततो परं जीवितिन्द्रियं, सत्तसञ्जितो धम्मपुञ्जो पबन्धवसेन पवत्तमानो इमाहि वेदनाहि संकिलिस्सतीति दस्सनत्थं ततो वेदनापञ्चकं, ताहि पन विसुद्धिकामानं वोदानसम्भारदस्सनत्थं ततो सद्दादिपञ्चकं, सम्भूतवोदानसम्भारा च इमेहि विसुज्जन्तीति विसुद्धिप्पत्ता, निट्ठितकिच्चा च होन्तीति दस्सनत्थं अन्ते तीणि वुत्तानि।

एत्तावता अधिप्पेतत्थसिद्धीति अञ्जेसं अग्गहणन्ति इदमेतेसं अनुक्कमेन देसनाय कारणन्ति अलमत्तिप्पपञ्जेन।

१९. असद्वियकोसज्जपमादउद्धच्चअविज्जाअहिरिकअनोत्तप्पसद्दातेहि पटिपक्खधम्महि अकम्पियट्टेन, सम्पयुत्तधम्मेषु धिरभावेन च सद्दादीनि सत्त बलानि, अहिरिकानोत्तप्पद्वयं पन सम्पयुत्तधम्मेषु धिरभावेनेव।

२०. अत्ताधीनप्पवत्तीनं पतिभूता धम्मा अधिपती। “छन्दवतो किं नाम न सिज्जती”त्यादिकं हि पुब्बाभिसद्धारूपनिस्सयं लभित्वा उप्पज्जमाने चित्ते छन्दादयो धुरभूता सयं सम्पयुत्तधम्मेषु साधयमाना हुत्वा पवत्तन्ति, ते च तेसं वसेन पवत्तन्ति, तेन ते अत्ताधीनानं पतिभावेन पवत्तन्ति। अञ्जेसं अधिपतिधम्मानं अधिपतिभावनिवारणवसेन इस्सरियं अधिपतिता। सन्तेसुपि

^{१९} विभ० अट्ट० २१९; विसुद्धि० २.५२५

इन्द्रियन्तरेषु केवलं दस्सनादीसु चक्खुविज्जाणादीहि अनुवत्तापनमत्तं इन्द्रियताति अयं अधिपतिइन्द्रियानं विसेसो।

२१. ओजद्वमकरूपादयो आहरन्तीति आहारा। कबळीकाराहारो हि ओजद्वमकरूपं आहरति, फस्साहारो तित्सो वेदना, मनोसञ्चेतनाहारसङ्घातं कुसलाकुसलकम्मं तीसु भवेसु पटिसन्धि। विज्जाणाहारसङ्घातं पटिसन्धिविज्जाणं सहजातनामरूपेआहरति, किञ्चापि सकसकपच्चयुप्पन्ने आहरन्ता अञ्जेपि अन्धि। अज्झत्तिकसन्ततिया पन विसेसपच्चयत्ता इमेयेव चत्तारो “आहारा”ति वुत्ता।

कबळीकाराहारभक्खानज्हे सत्तानं रूपकायस्स कबळीकाराहारो विसेसपच्चयो कम्मादिजनितस्सपि तस्स कबळीकाराहाररूपत्थम्भबलेनेव दसवस्सादिप्पवत्तिसम्भवतो। तथा हेस “धाति विय कुमारास्स, उपत्थम्भनकयन्तं विय गेहस्सा”ति वुत्तो। फस्सोपि सुखादिवत्थुभूतं आरम्पणं फुसन्तोयेव सुखादिवेदनापवत्तनेन सत्तानं ठितिया पच्चयो होति।

मनोसञ्चेतना कुसलाकुसलकम्मवसेन आयूहमानायेव भवमूलनिष्पादनतो सत्तानं ठितिया पच्चयो होति। विज्जाणं विजानन्तमेव नामरूपपवत्तनेन सत्तानं ठितिया पच्चयो होतीति एवमेतेयेव अज्झत्तसन्तानस्स विसेसपच्चयत्ता “आहारा”ति वुत्ता, फस्सादीनं दुतियादिभावो देसनाक्कमतो, न उप्पत्तिकमतो।

२६. पच्चविज्जाणानं वितक्कविरहेन आरम्पणेषु अभिनिपातमत्तत्ता तेषु विज्जमानानिपि उपेक्खानुसुखदुक्खानि उपनिज्जानाकारस्स अभावतो ज्ञानङ्गभावेन न उद्धटानि। “वितक्कपच्छिमकं हि ज्ञानङ्ग”न्ति वुत्तं। द्विपच्चविज्जाणमनोधातुत्तिकसन्तीरणत्तिकवसेन सोळसचित्तेसु वीरियाभावतो तत्थ विज्जमानोपि समाधि बलभावं न गच्छति। “वीरियपच्छिमकं बल”न्ति हि वुत्तं। तथा अट्टारसाहेतुकेसु हेतुविरहतो मग्गङ्गानि न लब्भन्ति। “हेतुपच्छिमकं मग्गङ्ग”न्ति^{३१९} हि वुत्तन्ति इममत्थं मनसि निधायहा “द्विपच्चविज्जाणेषु”त्यादि। ज्ञानङ्गानि न लब्भन्तीति सम्बन्धो।

२७. अधिमोक्खविरहतो विचिकिच्छाचित्ते एकगता चित्तद्विपत्तिमत्तं, न पन भिच्छासमाधिसमाधिन्द्रियसमाधिबलबोहारं गच्छतीति आह “तथा विचिकिच्छाचित्ते”त्यादि।

२८. द्विहेतुकतिहेतुकगगणेन एकहेतुकेसु अधिपतीनं अभावं दस्सेति। जवनेस्वेवाति अवधारणं लोकियविपाकेसु अधिपतीनं असम्भवदस्सनत्थं। न हि ते छन्दादीनि पुरक्खत्वा पवत्तन्ति। वीमंसाधिपतिनो द्विहेतुकजवनेसु असम्भवतो चित्ताभिसङ्घारूपनिस्सयस्स च सम्भवानुरूपतो लब्भमानतं सन्धायहा “यथासम्भव”न्ति। एकोव लब्भति, इतरथा अधिपतिभावायोगतो, तेनेव हि भगवता “हेतू हेतुसम्पयुत्तकानं धम्मानं हेतुपच्चयेन पच्चयो”त्यादिना^{३२०} हेतुपच्चयनिद्देसे विय “अधिपती अधिपतिसम्पयुत्तकानं”-न्त्यादिना अवत्वा “छन्दाधिपति छन्दसम्पयुत्तकानं”-न्त्यादिना^{३२१} एकेकाधिपतिवसेनेव अधिपतिपच्चयो उद्धटो।

२९. वत्थुतो धम्मवसेन हेतुधम्मा छ, ज्ञानङ्गानि पच्च सोमनस्सदोमनस्सुपेक्खानं वेदनावसेन एकतो गहितत्ता, मग्गङ्गा नव भिच्छासङ्कप्पवायामसमाधीनं वितक्कवीरियचित्तेकगता-सभावेन सम्मासङ्कप्पादीहि एकतो गहितत्ता। इन्द्रियधम्मा सोळस पच्चत्रं वेदनिन्द्रियानं वेदनासामञ्जेन, तिण्णं लोकुत्तरिन्द्रियानं पच्चिन्द्रियस्स च जाणसामञ्जेन एकतो गहितत्ता, रूपारूपजीवित्तिन्द्रियानञ्च विसुं गहितत्ता, बलधम्मा पन यथावुत्तनयेनेव नव ईरिता, अधिपतिधम्मा चत्तारो वुत्ता, आहारा तथा चत्तारो वुत्ताति कुसलादीहि तीहि समाकिण्णो ततोयेव मिस्सकसङ्गहो एवंनामको सङ्गहो सत्तधा वुत्तो। एत्थ च-

^{३१९} ध० ण० अट्ट० ४३८

^{३२०} पट्टा० १.१.१

^{३२१} पट्टा० १.१.३

पञ्चसङ्ग्रहिता पञ्जा, वायामेकगता पन ।
चतुसङ्ग्रहिता चित्तं, सति चेव तिसङ्ग्रहा ॥
सङ्ग्रहो वेदना सद्दा, दुकसङ्ग्रहिता मता ।
एकेकसङ्ग्रहा सेसा, अट्टवीसति भासिता ॥

मिस्सकसङ्ग्रहवण्णना निट्ठिता ।

बोधिपक्खियसङ्ग्रहवण्णना

३०. पट्टातीति पट्टानं, असुभगहणादिवसेन अनुपविसित्वा कायादिआरम्भणे पवत्ततीत्यत्थो, सतियेव पट्टानं सतिपट्टानं। तं पन कायवेदनाचित्तधम्मेषु असुभदुक्खनिच्चानत्ताकारगहणवसेन, सुभसुखनिच्चअत्तसञ्जाविपल्लासप्पहानवसेन च चतुब्बिधन्ति बुत्तं “चत्तारो सतिपट्टाना”ति। कुच्छित्तानं केसादीनं आयोति कायो, सरीरं, अस्सासपस्सासानं वा समूहो कायो, तस्स अनुपस्सना परिकम्मवसेन, विपस्सनावसेन च सरणं कायानुपस्सना। दुक्खदुक्खविपरिणामदुक्खसङ्कारदुक्खभूतानं वेदनानं वसेन अनुपस्सना वेदनानुपस्सना। तथा सरागमहग्गतादिवसेन सम्पयोगभूमिभेदेन भिन्नस्सेव चित्तस्स अनुपस्सना चित्तानुपस्सना। सञ्जासङ्कारानं धम्मानं भिन्नलक्खणानमेव अनुपस्सना धम्मानुपस्सना।

३१. सम्मा पदहन्ति एतेनाति सम्पपधानं, वायामो। सो च किच्चभेदेन चतुब्बिधोति आह “चत्तारो सम्पपधाना”त्यादि। असुभमनसिकारकम्मट्टानानुयुञ्जनादिवसेन वायमनं वायामो। भिय्योभावायाति अभिवुट्ठिया।

३२. इज्झति अधिट्टानादिकं एतायाहि इट्ठि, इट्ठिविधजाणं इट्ठिया पादो इट्ठिपादो, छन्दोयेव इट्ठिपादो छन्दिट्ठिपादो।

३५. बुज्झतीति बोधि, आरद्धविपस्सकतो पट्टाय योगावचरो। याय वा सो सतिआदिकाय धम्मसामग्गिया बुज्झति सच्चानि पटिविज्झति, किलेसनिट्ठतो वा बुट्टाति, किलेससङ्कोचाभावतो वा मग्गफलप्पत्तिया विकसति, सा धम्मसामग्गी बोधि, तस्स बोधिस्स, तस्सा वा बोधिया अङ्गभूता कारणभूताति बोज्झङ्गा, ते पन धम्मवसेन सत्तविधाति आह “सतिसम्बोज्झङ्गो”त्यादि। सतियेव सुन्दरो बोज्झङ्गो, सुन्दरस्स वा बोधिस्स, सुन्दराय वा बोधिया अङ्गोति सतिसम्बोज्झङ्गो। धम्मे विचिनाति उपपरिक्खतीति धम्मविचयो, विपस्सनापञ्जा। उपेक्खाति इध तत्रमज्जतुपेक्खा।

४०. “सत्तथा तत्थ सङ्ग्रहो”ति वत्तान पुन तं दस्सेतुं “सङ्ग्रहपस्सद्धि चा”त्यादि बुत्तं। तत्थ वीरियं नवट्टानं सम्पपधानचतुक्कवीरियिट्ठिपादवीरियिन्द्रियवीरियबलसम्बोज्झङ्गसम्मावायाम-वसेन नवकिच्चत्ता, सति अट्टट्टाना सतिपट्टानचतुक्कसतिन्द्रियसतिबलसतिसम्बोज्झङ्गसम्मासतिवसेन अट्टकिच्चत्ता। समाधि चतुट्टानो समाधिन्द्रियसमाधि-बलसमाधिसम्बोज्झङ्गसम्मासमाधिवसेन चतुकिच्चत्ता, पञ्जा पञ्चट्टाना वीमंसिट्ठिपादपञ्जिन्द्रियपञ्जाबलधम्मविचयसम्बोज्झङ्गसम्मादिट्ठि-वसेन पञ्चकिच्चत्ता, सद्दा ट्टिट्टाना सट्ठिन्द्रियसद्दाबलवसेन ट्टिकिच्चत्ता। एसो उत्तमानं बोधिपक्खियभावेन विसिट्टानं सत्ततिस धम्मानं पवरो उत्तमो विभागो।

४१. लोकुत्तरे अट्टविधेषि सब्बे सत्ततिस धम्मा होन्ति, सङ्ग्रहपीतियो न वा होन्ति, दुतियज्झानिके सङ्ग्रहपस्स, चतुत्थपञ्चमज्झानिके पीतिया च असम्भवतो न होन्ति वा, लोकियेषि चित्ते सीलविमुट्ठादि छब्बिसुट्ठिपवत्तियं यथायोगं तं तं किच्चस्स अनुरूपवसेन केचि कत्थचि विसुं विसुं होन्ति, कत्थचि न वा होन्ति।

बोधिपक्खियसङ्ग्रहवण्णना निट्ठिता ।

सब्सङ्ग्रहवर्णना

४२. अतीतानागतपच्युष्पत्रादिभेदभिन्ना ते ते सभागधम्मा एकज्झं रासट्टेन खन्धा। तेनाह भगवा- “तदेकज्झं अभिसंयूहित्वा अभिसङ्घिपित्वा अयं बुच्चति रूपक्खन्धो”त्यादि (विभ० २), ते पनेते खन्धा भाजनभोजनव्यञ्जनभक्तकारकभुञ्जकविकम्पवसेन पञ्चेव वुत्ताति आह “रूपक्खन्धो”त्यादि। रूपञ्हि वेदानानिस्सयत्ता भाजनद्वानियं, वेदना भुञ्जितब्बत्ता भोजनद्वानिया, सञ्जा वेदनास्सादलाभहेतुत्ता व्यञ्जनद्वानिया, सङ्कारा अभिसङ्करणतो भक्तकारकद्वानिया, विञ्जाणं उपभुञ्जकत्ता भुञ्जकद्वानियं। एतावता च अधिप्पेतत्थसिद्धीति पञ्चेव वुत्ता। देसनाक्कमेपि इदमेव कारणं यत्थ भुञ्जति, यच्च भुञ्जति, येन च भुञ्जति, यो च भोजको, यो च भुञ्जिता, तेसं अनुक्कमेन दस्सेतुकामत्ता।

४३. उपादानानं गोचरा खन्धा उपादानक्खन्धा, ते पन उपादानविसयभावेन गहिता रूपादयो पञ्चेवाति वुत्तं “रूपुपादानक्खन्धो”त्यादि। सब्सभागधम्मसङ्ग्रहत्थं हि सासवा, अनासवापि धम्मा अविसेसतो “पञ्चक्खन्धा”ति देसिता। विपस्सनाभूमिसन्दस्सनत्थं पन सासवाव “उपादानक्खन्धा”ति। यथा पनेत्थ वेदनादयो सासवा, अनासवा च, न एवं रूपं, एकन्तकामावचरत्ता। सभागरासिवसेन पन तं खन्धेसु देसितं, उपादानियभावेन, पन रासिवसेन च उपादानक्खन्धेसूति दट्टुब्बं।

४४. आयतन्ति एत्थ तं तं द्वारारम्भणा चित्तचेतसिका तेन तेन किच्चेन घट्टेन्ति वायमन्ति, आयभूते वा ते धम्मे एतानि तनोन्ति वित्थारेन्ति, आयतं वा संसारदुक्खं नयन्ति पवत्तेन्ति, चक्खुविञ्जाणादीनं कारणभूतानीति वा आयतनानि। अपिच लोके निवासआकरसमोसरणसञ्जातिद्वानं “आयतन”न्ति बुच्चति, तस्मा एतेपि तं तं द्वारिकानं, तं तदारम्भणानञ्च चक्खुविञ्जाणादीनं निवासद्वानताय, तेसमेव आकिण्णभावेन पवत्तानं आकरद्वानताय, द्वारारम्भणतो समोसरन्तानं समोसरणद्वानताय, तत्थेव उप्पज्जन्तानं सञ्जातिद्वानताय च आयतनानि। तानि पन द्वारभूतानि अज्झत्तिकायतनानि छ, आरम्भणभूतानि च बाहिरायतनानि छाति द्वादसविधानीति आह “चक्खायतन”न्त्यादि। चक्खु च तं आयतनञ्चाति चक्खायतनं। एवं सेसेसुपि।

एत्थ अज्झत्तिकायतनेसु सनिदस्सनसम्पटिधारम्भणत्ता चक्खायतनं विभूतन्ति तं पठमं वुत्तं, तदनन्तरं अनिदस्सनसम्पटिधारम्भणानि इतरानि, तत्थापि असम्पत्तग्गाहकसामञ्जेन चक्खायतनानन्तरं सोतायतनं वुत्तं, इतरेसु सीघतरं आरम्भणग्गहणसमत्थत्ता घानायतनं पठमं वुत्तं। पुरतो ठपितभत्तस्स हि भोजनादिकस्स गन्धो वातानुसारिन घाने पटिहञ्जति, तदनन्तरं पन पदेसवुत्तिसामञ्जेन जिक्कायतनं वुत्तं, ततो सब्बद्वानिकं कायायतनं, ततो पञ्चन्नम्पि गोचरग्गहणसमत्थं मनायतनं, यथावुत्तानं पन अनुक्कमेन तेसं तेसं आरम्भणानि रूपायतनादीनि वुत्तानि।

४५. अत्तनो सभावं धारेन्तीति धातुयो। अथ वा यथासम्भवं अनेकप्पकारं संसारदुक्खं विदहन्ति, भारहारेहि विय च भारो सत्तेहि धीयन्ति धारियन्ति, अवसवत्तनतो दुक्खविधानमत्तमेव चेता, सत्तेहि च संसारदुक्खं अनुविधीयति एताहि, तथाविहितञ्च एतास्खेव मीयति ठपियति, रससोणितादिसरीरावयवधातुयो विय, हरितालमनोसिलादिसेलावयवधातुयो विय च जेय्यावयवभूता चाति धातुयो। यथाहु-

“विदहति विधानञ्च, धीयते च विधीयते।
एताय धीयते एत्थ, इति वा धातुसम्पत्ता।
सरीरसेलावयव-धातुयो विय धातुयो”ति ॥

ता पन मनायतनं सत्तविञ्जाणधातुवसेन सत्तथा भिन्दित्वा अवसेसेहि एकादसायतनेहि सह अट्टारसधातू वुत्ताति आह “चक्खुधातू”त्यादि। कमकारणं वुत्तनयेन दट्टुब्बं।

४६. अरियकरत्ता अरियानि, तच्छभावतो सच्चानीति अरियसच्चानि। इमानि हि चत्तारो पटिपन्नके, चत्तारो फलट्टेति अट्टअरियपुग्गले साधेन्ति असति सच्चप्पटिवेधे तेसं अरियभावानुपगमनतो, सति च तस्मिं एकन्तेन तव्भावपुगमनतो च। दुक्खसमुदयनिरोधमग्गानमेव पन यथाक्कमं बाधकत्तं पभवत्तं निस्सरणत्तं निव्यानिकत्तं, नाञ्जेसं, बाधकादिभावोयेव च दुक्खादीनं, न अबाधकादिभावो, तस्मा अञ्जत्थाभावतत्थव्यापितासङ्घातेन लक्खणेन एतानि तच्छानि। तेनाहु पोराना-

“बोधानुरूपं चत्तारो, छिन्दन्ते चतुरो मले।

खीणदोसे च चत्तारो, साधेन्तारियपुग्गले ॥

“अञ्जत्थ बाधकत्तादि, न हि एतेहि लब्धति।

नाबाधकत्तमेतेसं, तच्छानेतानिवेततो”ति ॥

अरियानं वा सच्चानि तेहि पटिविज्जितव्वत्ता, अरियस्स वा सम्मासम्बुद्धस्स सच्चानि तेन देसितत्ताति अरियसच्चानि। तानि पन संकिलिद्धासंकिलिद्धफलहेतुवसेन चतुब्बिधानीति आह “चत्तारि अरियसच्चानी”त्यादि। तत्थ कुच्छित्तता, तुच्छता च दुक्खं। कम्मादिपच्चयसन्निट्टाने दुक्खुप्पत्तिमित्तताय समुदयो समुदेति एतस्मा दुक्खन्ति कत्वा, दुक्खस्स समुदयो दुक्खसमुदयो। दुक्खस्स अनुप्पादनिरोधो एत्थ, एतेनाति वा दुक्खनिरोधो। दुक्खनिरोधं गच्छति, पटिपज्जन्ति च तं एतायाति दुक्खनिरोधगामिनिपटिपदा।

४७. चेतसिकानं, सोढससुखुमरूपानं, निब्बानस्स च वसेन एकूनसत्तति धम्मा आयतनेसु धम्मायतनं, धातूसु धम्मधातूति च सङ्गं गच्छन्ति।

४९. सेसा चेतसिकाति वेदनासञ्जाहि सेसा पञ्जास चेतसिका। कस्मा पन वेदनासञ्जा विसुं कताति? वट्टधम्मेसु अस्सादतदुपकरणभावतो। तेभूमकधम्मेसु हि अस्सादवसप्पवत्ता वेदना, असुभे सुभादिसञ्जाविपल्लासवसेन च तस्सा तदाकारप्पवतीति तदुपकरणभूता सञ्जा, तस्मा संसारस्स पधानहेतुताय एता विनिभुज्जित्वा देसिताति। वुत्तञ्जेतं आचरियेन-

“वट्टधम्मेसु अस्सादं, तदस्सादुपसेवनं।

विनिभुज्ज निदस्सेतुं, खन्धद्वयमुदाहट”न्ति^{३२२} ॥

५०. ननु च आयतनधातूसु निब्बानं सङ्गहितं, खन्धेसु कस्मा न सङ्गहितन्ति आह “भेदाभावेना”त्यादि। अतीतादिभेदभिन्नानञ्जि रासट्टेन खन्धवोहारोति निब्बानं भेदाभावतो खन्धसङ्गहतो निस्सटं, विनिमुत्तन्त्यत्थो।

५१. छत्रं द्वारानं, छत्रं आरम्भणानञ्च भेदेन आयतनानि द्वादस भवन्ति, छत्रं द्वारानं छत्रं आरम्भणानं तदुभयं निस्साय उप्पन्नानं तत्तकानमेव विञ्जाणानं परियायेन कमेन धातुयो अट्टारस भवन्ति।

५२. तिस्रो भूमियो इमस्साति तिभूमं, तिभूमंयेव तेभूमकं। वत्तति एत्थ कम्मं, तव्विपाको चाति वट्टं। तण्हाति कामतण्हादिवसेन तिविधा, पुन छत्तारम्भणवसेन अट्टारसविधा, अतीतानगतपच्चुप्पन्नवसेन चतुपञ्जासविधा, अज्जत्तिकवाहिरवसेन अट्टसतप्पभेदा तण्हा। कस्मा पन अञ्जेसुपि दुक्खहेतूसु सन्तेसु तण्हायेव समुदयोति वुत्ताति?

पधानकारणत्ता। कम्मविचित्ताहेतुभावेन, हि कम्मसहायभावपुगमनेन च दुक्खविचित्ताकारणत्ता तण्हा दुक्खस्स विसेसकारणन्ति। मग्गो दुक्खनिरोधगामिनिपटिपदानामेन वुत्तो मग्गो लोकुत्तरो मतोति मग्गोति पुन मग्गग्गहणं योजेतव्वं।

^{३२२} नाम० परि० ६४९

५३. मगगयुत्ता अट्टङ्गिकविनिमुत्ता सेसा मगगसम्पयुत्ता फस्सादयो फलञ्चेव ससम्पयुत्तान्ति एते चतूहि सच्चेहि विनिस्सटा विनिग्गता निष्परियायतो, परियायतो पन अञ्जाताविन्द्रियनिद्देसेपि “मगगङ्गं मगगपरियापन्न”न्ति (ध० स० ५५५) वुत्तत्ता फलधम्मेषु सम्पादिद्वादीनं मगगसच्चे, इतरेसञ्च मगगफलसम्पयुत्तानं सङ्कारदुक्खसामञ्जेन दुक्खसच्चे सङ्गहो सक्का कातुं। एवञ्चि सति सच्चदेसनायपि सब्बसङ्गाहिकता उपपन्ना होति। कस्मा पनेते खन्धादयो बहू धम्मा वुत्ताति? भगवतापि तथेव देसितत्ता। भगवतापि कस्मा तथा देसिताति? तिविधसत्तानुगहस्स अधिप्पेतत्ता। नामरूपतदुभयसम्पुब्बहवसेन हि तिक्खनाभितिक्खमुदिन्द्रियवसेन, सङ्घित्तमज्झिमवित्थाररुचिवसेन च तिविधा सत्ता। तेषु नामसम्पुब्बहानं खन्धगहणं नामस्स तत्थ चतुधा विभत्तत्ता, रूपसम्पुब्बहानं आयतनगहणं रूपस्स तत्थ अट्टेकादसथा विभत्तत्ता, उभयमुब्बहानं धातुगहणं उभयेसम्पि तत्थ वित्थारतो विभत्तत्ता, तथा तिक्खिन्द्रियानं, सङ्घित्तरुचिकानञ्च खन्धागहणन्यादि योजेतब्बं। तं पनेतं तिविधम्पि पवत्तिनिवत्तित्तदुभयहेतुवसेन दिट्ठमेव उपकारावहं। नो अञ्जथाति सच्चगहणन्ति दट्ठब्बं।

सब्बसङ्गहवण्णना निट्ठिता।

इति अभिधम्मत्थविभाविनया नाम अभिधम्मत्थसङ्गहवण्णनाय समुच्चयपरिच्छेदवण्णना निट्ठिता।

८. पच्चयपरिच्छेदवण्णना

१. इदानि यथावुत्तनामरूपधम्मानं पटिच्चसमुप्पादपट्टाननयवसेन पच्चये दस्सेतुं “येस”न्त्यादि आरद्धं। येसं पच्चयेहि सङ्घतत्ता सङ्घतानं पच्चयुप्पन्नधम्मानं ये पच्चयधम्मा यथा येनाकारेण पच्चया टितिया, उप्पत्तिया च उपकारका, तं विभागं तेसं पच्चयुप्पन्नानं, तेसं पच्चयानं, तस्स च पच्चयाकारस्स पभेदं इह इमस्मिं समुच्चयसङ्गहानन्तरे ठाने यथारहं तं तं पच्चयुप्पन्नधम्मे सति तं तं पच्चयानं तं तं पच्चयभावकारानुरूप इदानि पवक्खामीति योजना।

२. तत्थ पच्चयसामगिं पटिच्च समं गन्त्वा फलानं उप्पादो एतस्माति पटिच्चसमुप्पादो, पच्चयाकारो। नानप्पकारानि ठानानि पच्चया एत्थात्यादिना पट्टानं, अनन्तनयसमन्त-पट्टानमहापकरणं, तत्थ देसितनयो पट्टाननयो।

३. तत्थाति तेषु द्वीसु नयेसु। तस्स पच्चयधम्मस्स भावेन भवनसीलस्स भावो तत्भावभावीभावो, सोयेव आकारमत्तं, तेन उपलक्खितो तत्भावभावीभावाकारमत्तोपलक्खितो।

एतेनेव तदभावाभावाकारमत्तोपलक्खिततापि अत्थतो दस्सिता होति। अन्यव्यतिरेक-वसेन हि पच्चयलक्खणं दस्सेतब्बं। तेनाह भगवा- “इमस्मिं सति इदं होति, इमस्सुप्पादा इदमुप्पज्जति। इमस्मिं असति इदं न होति, इमस्स निरोधा इदं निरुज्जती”ति^{३२३}। पटिच्च फलं एति एतस्माति पच्चयो। तिट्ठति फलं एत्थ तदायत्तवुत्तियाति टिति, आहच्च विसेसेत्वा पवत्ता पच्चयसङ्घाता टिति आहच्चपच्चयट्ठिति। पटिच्चसमुप्पादनयो हि तत्भावभावीभावाकारमत्तं उपादाय पवत्तत्ता हेतादिपच्चयनियमविसेसं अनपेक्खित्वा अविसेसतोव पवत्तति, अयं पन हेतादितं तं पच्चयानं तस्स तस्स धम्मन्तरस्स तं तं पच्चयभावसामत्थियाकारविसेसं उपादाय विसेसेत्वा पवत्तोति आहच्चपच्चयट्ठितिभारब्भ पवुच्चतीति। केचि पन “आहच्च कण्ठतालुआदीसु पहरित्वा वुत्ता टिति आहच्चपच्चयट्ठिति”ति वण्णेन्ति। तं पन सवनमत्तेनेव तेसं अवहसितब्बवचनतं पकासेति। न हि पटिच्चसमुप्पादनयो, अञ्जो वा कोचि नयो कण्ठतालुआदीसु अनाहच्च देसेतुं सक्काति। वोभिस्सेत्वाति पट्टाननयम्पि पटिच्चसमुप्पादेयेव पक्खिपित्वा तत्भावभावीभावेन हेतादिपच्चयवसेन च

^{३२३} म० नि० १.४०४, ४०६; सं० नि० २.२१; उदा० १, २

भिस्सेत्वा आचरिया सङ्गहकारादयो पपञ्चेन्ति वित्थारेन्ति, मयं पन विसुं विसुंयेव दस्सयिस्सामात्यधिप्पायो।

पटिच्चसमुप्पादनयवण्णना

४. न विजानातीति अविज्जा, अविन्दियं वा कायदुच्चरितादिं विन्दति पटिलभति, विन्दियं वा कायसुचरितादिं न विन्दति, वेदितब्बं वा चतुसच्चादिकं न विदितं करोति, अविज्जमाने वा जवापेति, विज्जमाने वा न जवापेतीति अविज्जा, चतुसु अरियसच्चेसु पुब्बन्तादीसु चतुसु अज्जाणस्सेतं नामं। अविज्जा एव पच्चयो अविज्जापच्चयो। ततो अविज्जापच्चया सङ्गतमभिसङ्घरोत्तीति सङ्घारा, कुसलाकुसलकम्मानि। ते तिविधा पुज्जाभिसङ्घारो अपुज्जाभिसङ्घारो आनेज्जाभिसङ्घारोति। तत्थकामरूपावचरा तेरस कुसलचेतना पुज्जाभिसङ्घारो, द्वादस अकुसलचेतना अपुज्जाभिसङ्घारो, चतस्सो आरुप्पचेतना आनेज्जाभिसङ्घारोति एवमेता एकूनत्तिस चेतना सङ्घारा नाम। पटिसन्धिवसेन एकूनवीसतिविधं, पवत्तिवसेन द्वत्तिसविधं विपाकचित्तं विज्जाणं नाम। नामञ्च रूपञ्च नामरूपं। तत्थ नामं इध वेदनादिक्खन्धत्तयं, रूपं पन भूतुपादायभेदतो दुविधं कम्मसमुद्धानरूपं, तदुभयमि इध पटिसन्धिविज्जाणसहगतन्ति ददुब्बं। नामरूपपच्चयाति एत्थ नामञ्च रूपञ्च नामरूपञ्च नामरूपन्ति सरूपेकसेतो वेदितब्बो। चक्खादीनि छ अज्झत्तिकायतनानि, केसञ्चि भतेन रूपादीनि छ बाहिरायतनानिपि वा आयतनं नाम। छ आयतनानि च छट्ठायतनञ्च सट्ठायतनं। चक्खुसम्फस्सादिवसेन छद्वारिको फस्सो फस्सो नाम। सुखदुक्खुपेक्खावसेन तिविधा वेदना।

कामतण्हा भवतण्हा विभवतण्हाति तिविधा तण्हा। छट्ठारम्पणादिवसेन पन अट्टसत्तप्पभेदा होन्ति कामुपादानादिवसेन चत्तारि उपादानानि। एत्थ च दुब्बला तण्हा तण्हा नाम, बलवती उपादानं। असम्पत्तिसयपत्थना वा तण्हा तमसि चोरानं हत्थप्पसारणं विय, सम्पत्तिसयगहणं उपादानं चोरानं हत्थप्पत्तस्स गहणं विय। अप्पिच्छतापटिपक्खा तण्हा, सन्तोसप्पटिपक्खं उपादानं। परियेसनदुक्खमूलं तण्हा, आरक्खदुक्खमूलं उपादानन्ति अयमेतेसं विसेसो। कम्मभवो उपपत्तिभवोति दुविधो भवो। तत्थ पठमो भवति एतस्मा फलन्ति भवो, सो कामावचरकुसलाकुसलादिवसेन एकूनत्तिसविधो। दुतियो पन भवतीति भवो, सो कामभवादिवसेन नवविधो। उपादानपच्चया भवोति चैत्थ उपपत्तिभवोपि अधिप्पेत्तो। भवपच्चया जातीति कम्मभवोव। सो हि जातिया पच्चयो होति, न इतरो। सो हि पटमाभिनिब्बत्तक्खन्धसभावो जातियेव, न च तदेव तस्स कारणं युत्तं। तेसं तेसं सत्तानं तं तं गतिआदीसु अत्तभावपटिलाभो जाति। तथानिब्बत्तस्स च अत्तभावस्स पुराणभावो जरा। एतस्सेव एकभवपरिच्छिन्नस्स परियोसानं मरणं।

जातिव्यसनादीहि फुट्टस्स चित्तसन्तापो सोको। तस्सेव वचीपलापो परिदेवो। कायिकदुक्खवेदना दुक्खं। मानसिकदुक्खवेदना दोमनस्सं। जातिव्यसनादीहि फुट्टस्स अधिमत्तचेतोदुक्खप्पभावितो भुसो आयासो उपायासो।

एत्थ च सतिपि वत्थारम्पणादिके पच्चयन्तरे अविज्जादिपेकेकपच्चयगहणं पधानभावतो, पाकटभावतो चाति ददुब्बं। एत्थ च अविज्जानुसयितेयेव सत्ताने सङ्घारानं विपाकधम्मभावेन पवत्तनतो अविज्जापच्चयासङ्घारासम्भवन्ति, विज्जाणञ्च सङ्घारजनितं हुत्वा भवन्तरे पतिट्ठाति। न हि जनकाभावे तस्सुप्पत्ति सिया, तस्मा सङ्घारपच्चया विज्जाणं। नामरूपञ्च पुब्बङ्गमाधिदानभूतविज्जाणुपत्थद्वं पटिसन्धिवत्तीसु पतिट्ठहतीति विज्जाणपच्चयानामरूपं, सट्ठायतनञ्च नामरूपनिस्सयमेव छब्धिफस्सस्स द्वारभावेन यथारहं पवत्तति, नो अज्जथाति नामरूपपच्चया सट्ठायतनं। फस्सो च सट्ठायतनसम्भवेयेव आरम्पणं फुसति। न हि द्वाराभावे तस्सुप्पत्ति सियाति सट्ठायतनपच्चया फस्सो। इड्डानिड्डमज्झत्तञ्च आरम्पणं फुसन्तोयेव वेदनं वेदयति,

नो अञ्जधाति फस्सपच्चया वेदना। वेदनीयेसु च धम्मेषु अस्सादानुपस्सिनो वेदनाहेतुका तण्हा समुद्घातीति वेदनापच्चया तण्हा। तण्हासिनेहपिपासितायेव च उपादानियेषु धम्मेषु उपादाय दब्बभावाय संबत्तन्ति। तण्हाय हि रूपादीनि अस्सादेत्वा अस्सादेत्वा कामेषु पातब्बतं आपज्जन्तीति तण्हा कामुपादानस्स पच्चयो। तथा रूपादिभेदेगधितो “नत्थि दिव्व”न्यादिना मिच्छादस्सनं संसारतो मुच्चितुकामो असुद्धिमग्गे सुद्धिमग्गपरामासं खन्धेषु अत्तत्तनियगाहभूतं अत्तवाददस्सनद्वयञ्च गण्हाति, तस्मा दिड्डुपादादीनिष्प पच्चयोति तण्हापच्चया उपादानं। यथारहं सम्मयोगानुसयवसेन उपादानपतिट्ठितायेव सत्ता कम्मयूहनाय संबत्तन्तीति उपादानं भवस्स पच्चयो। उपपत्तिभवसङ्घाता च जाति कम्मभवहेतुकायेव । बीजतो अद्दुरो विय तत्थ तत्थ समुपलब्धतीति भवो जातिया पच्चयो नाम। सत्ति च जातिया एव जरामरणसम्भवो। न हि अजातानं जरामरणसम्भवो होतीति जाति जरामरणानं पच्चयोति एवमेतेसं तब्भावभावीभावो दडुब्बो।

एवमेतस्स केवलस्स दुक्खवखन्धस्स समुदयो होतीति यथावुत्तेन पच्चयपरम्परविधिना, न पन इस्सरनिम्मानादीहि एतस्स बट्टसङ्घातस्स केवलस्स सुखादीहि अत्तम्मिस्सस्स, सकलस्स वा दुक्खवखन्धस्स दुक्खरासिस्स न सुखसुभादीनं समुदयो निब्बन्ति होति। एत्थ इमस्मिं पच्चयसङ्गहाधिकारे।

५. अतति सततं गच्छति पवत्ततीति अद्दा, कालो।

६. अविज्जासङ्घारा अतीतो अद्दा अतीतभवपरियापन्नहेतूनमेवेत्थ अधिप्पेतत्ता, अद्दाग्गहणेन च अविज्जादीनं धम्मानमेव गहणं तब्बिनिमुत्तस्स कस्सचि कालस्स अनुपलब्धनतो। निरुद्धानुप्पादा एव हि धम्मा अतीतानागतकालवसेन उप्पादादिक्खणत्तपरियापन्ना च पच्चुप्पन्नकालवसेन वोहरीयन्ति। जातिजरामरणं अनागतो अद्दा पच्चुप्पन्नहेतुतो अनागते निब्बत्तनतो। मज्जे पच्चुप्पन्नो अद्दा अतीतहेतुतो इध निब्बत्तनकफलसभावता, अनागतफलस्स इध हेतुसभावता च मज्जे विज्जाणादीनि अद्दुद्धानि पच्चुप्पन्नो अद्दा।

७. ननु सोकपरिदेवादयोपि अद्दुद्धानेन वत्तब्बाति आह “सोकादिवचन”न्यादि। सोकादिवचनं जातिया निस्सन्दस्स अमुख्यफलमत्तस्स निदस्सनं, न पन विसुं अद्ददस्सनन्त्यत्थो।

९. तण्हुपादानभवापि गहिता होन्तीति किलेसभावसामञ्जतो अविज्जाग्गहणेन तण्हुपादानानि, कम्मभवसामञ्जतो सङ्खारग्गहणेन कम्मभवो गहितो। तथा तण्हुपादानभवग्गहणेन च अविज्जासङ्घारा गहिताति सम्बन्धो। एत्थापि वुत्तनयेन तेसं गहणेन तेसं सङ्गहो दडुब्बो, विज्जाणानामरूपसळायतनफस्सवेदानं जातिजराभङ्गाव जातिजरामरणन्ति च वुत्ताति आह “जातिजरामरणग्गहणेना”न्यादि।

१०. अतीते हेतवो पञ्चाति सरूपतो वुत्तानं दिव्वं अविज्जासङ्घारानं, सङ्गहवसेन गहितानं तिण्णं तण्हुपादानभवानञ्च वसेन पच्चुप्पन्नफलस्स पच्चया अतीतभवे निब्बत्ता हेतवो पञ्च, इदानि फलपञ्चकन्ति अतीतहेतुपच्चया इध पच्चुप्पन्ने निब्बत्तं विज्जाणादिफलपञ्चकं। इदानि हेतवो पञ्चाति सरूपतो वुत्तानं तण्हादीनं तिण्णं, सङ्गहतो लद्धानं अविज्जासङ्घारानं दिव्वञ्च वसेन आयत्तिं फलस्स पच्चया इदानि हेतवो पञ्च। आयत्तिं फलपञ्चकन्ति जातिजरामरणग्गहणेन वुत्तं पच्चुप्पन्नहेतुपच्चया अनागते निब्बत्तनकविज्जाणादिफलपञ्चकन्ति एवं वीसति अतीतादीसु तत्थ तत्थ आकिरियन्तीति आकारा।

अतीतहेतूनं, इदानि फलपञ्चकस्स च अन्तरा एको सन्धि, इदानि फलपञ्चकस्स, इदानि हेतूनञ्च अन्तरा एको, इदानि हेतूनं, आयत्तिं फलस्स च अन्तरा एकोति एवं तिसन्धि। वुत्तञ्हेतं- “सङ्खारविज्जाणानमन्तरा एको, वेदनातण्हानमन्तरा एको, भवजातीनमन्तरा एको सन्धी”ति। एत्थ हि हेतुतोफलस्स अविच्छेदम्पवत्तिभावतो हेतुफलसम्बन्धभूतो पटमो सन्धि, तथा ततियो, दुतियो पन फलतो हेतुनो अविच्छेदम्पवत्तिभावतो फलहेतुसम्बन्धभूतो। फलभूतोपि हि धम्मो अञ्जस्स

हेतुसभावस्स धम्मस्स पच्चयोति। सङ्घिपीयन्ति एत्थ अविज्जादयो, विज्जाणादयो चाति सङ्घेपो, अतीतहेतु, एतरहि विपाको, एतरहि हेतु आयतिं विपाकोति चत्तारो सङ्घेपाति चतुसङ्घेपा।

११. कम्मभवसङ्घातो भवेकदेसोति एत्थ आयतिं पटिसन्धिया पच्चयचेतना भवो नाम, पुरिमकम्मभवास्मि इध पटिसन्धिया पच्चयचेतना सङ्घाराति वेदितब्बा। अवसेसा चाति विज्जाणादिपच्चकजातिजरामरणवसेन सत्तविधा पच्चुप्पन्नफलवसेन वुत्तधम्मा। उपपत्तिभवसङ्घातो भवेकदेसोति पन अनागतपरियापन्ना वेदितब्बा। भव-सहेन कम्मभवस्सपि वुच्चमानता भवेकदेस-सदो वुत्तो।

१२. पुब्बन्तस्स अविज्जा मूलं। अपरन्तस्स तण्हा मूलन्ति आह अविज्जातण्हावसेन दे मूलानी”ति।

१३. तेसमेव अविज्जातण्हासङ्घातानं वट्टमूलानं निरोधेन अनुप्पादधम्मापत्तिया सच्चपटिवेधतो सिद्धाय अप्पवत्तिया वट्टं निरुज्झति। अभिण्हसो अभिक्खणं जरामरणसङ्घाताय मुच्छाय पीळितानं सत्तानं सोकादिसमप्पितानं कामासवादिआसवानं समुप्पादतो पुन अविज्जा च पवत्तति। “आसवसमुदया अविज्जासमुदयो”ति^{३२४} हि वुत्तं। एतेन अविज्जायपि पच्चयो दस्सितो होति, इतरथा पटिच्चसमुप्पादचक्कं अबद्धं सियाति। इच्चैवं वुत्तनयेन आवद्धं अविच्छिन्नं अनादिकं आदिरहितं तिभूमकपरियापन्नता तेभूमकं किलेसकम्मविपाकवसेन तिवट्टभूतं पटिच्चसमुप्पादोति पट्टपेसि पञ्जपेसि महामुनि सम्मासम्बुद्धो।

पटिच्चसमुप्पादनयवण्णना निद्धिता।

पट्टाननयवण्णना

१४. एवं पटिच्चसमुप्पादनयं विभागतो दस्सेत्वा इदानि पट्टाननयं दस्सेतुं “हेतुपच्चयो”त्यादि वुत्तं। तत्थ हिनोति पतिट्ठाति एतेनाति हेतु। अनेकत्थत्ता धातुसद्धानं हि-सदो इध पतिट्ठत्थोति दट्टब्बो। हिनोति वा एतेन कम्मनिदानभूतेन उद्धं ओजं अभिहरन्तेन मूलेन विय पादपो तप्पच्चयं फलं गच्छति पवत्तति वुद्धिं विरूळ्ळि आपज्जतीति हेतु। हेतु च सो पच्चयो चाति हेतुपच्चयो। हेतु हुत्वा पच्चयो, हेतुभावेन पच्चयोति वुत्तं होति। मूलट्टेन हेतु, उपकारट्टेन पच्चयोति सङ्घपतो मूलट्टेन उपकारको धम्मो हेतुपच्चयो। सो पन पवत्ते चित्तसमुट्टानानं, पटिसन्धियं कम्मसमुट्टानानञ्च रूपानं उभयत्थ सम्पयुत्तानं नामधम्मानञ्च रुक्खस्स मूलानि विय सुप्पत्तिट्ठितभावसाधनसङ्घातमूलट्टेन उपकारका छ धम्माति दट्टब्बं।

आलम्बीयति दुब्बलेन विय दण्डादिकं चित्तचेतसिकेहि गद्धतीति आरम्भणं। चित्तचेतसिका हि यं यं धम्मं आरब्भ पवत्तन्ति, ते ते धम्मा तेसं तेसं धम्मानं आरम्भणपच्चयो नाम। न हि सो धम्मो अत्थि, यो चित्तचेतसिकानं आरम्भणपच्चयभावं न गच्छेय्य। अत्ताधीनप्पवत्तीनं पतिभूतो पच्चयो अधिपतिपच्चयो।

न विज्जति पच्चयुप्पन्नेन सह अन्तरं एतस्स पच्चयस्साति अनन्तरपच्चयो। सण्ठानाभावेन सुट्टु अनन्तरपच्चयो समनन्तरपच्चयो। अत्तनो अत्तनो अनन्तरं अनुरूपचित्तुप्पादजननसमत्थो पुरिमपुरिमनिरुद्धो धम्मो “अनन्तरपच्चयो”, “समनन्तरपच्चयो”ति च वुच्चति। व्यञ्जनमत्तेनेव हि नेसं विसेसो। अत्थतो पन उभयम्पि समनन्तरनिरुद्धस्सेवाधिवचनं। न हि तेसं अत्थतो भेदो उपलब्धति। यं पन केचि वदन्ति “अत्थानन्तरताय अनन्तरपच्चयो, कालानन्तरताय समनन्तरपच्चयो”ति, तं “निरोधा वुट्टहन्तस्स नेवसञ्जानासञ्जायतनं फलसमापत्तिया समनन्तरपच्चयेन पच्चयो”त्यादीहि विरुज्झति। नेवसञ्जानासञ्जायतनं हि सत्ताहादिकालं निरुद्धं

^{३२४} म० नि० १.१०३

फलसमापत्तिया समनन्तरपच्यो, तस्मा अभिनिवेशं अकत्वा व्यञ्जनमत्ततोवेत्थ नानाकरणं पच्चेतब्बं, न अत्थतो। पुब्बधम्मनिरोधस्स हि पच्छाजातधम्मुप्पादनस्स च अन्तराभावेन उप्पादनसमत्थताय निरोधो अनन्तरपच्ययता, “इदमितो उद्धं, इदं हेट्ठा, इदं समन्ततो”ति अत्तना एकत्तं उपनेत्वा विय सुदु अनन्तरभावेन उप्पादेतुं समत्थं हुत्वा निरोधो समनन्तरपच्ययताति एवं व्यञ्जनमत्ततोव भेदो। निरोधपच्ययस्सपि हि नेवसञ्जानासञ्जायतनस्स असञ्जुप्पत्तिया पुरिभस्स च चुत्तिचित्तस्स कालन्तरोपि उपपज्जन्तानं फलपटिसन्धीनं अन्तरा समानजातियेन अरूपधम्ममेन व्यवधानाभावतो भिन्नजातिकानञ्च रूपधम्मानं व्यवधानकरणे असमत्थताय निरन्तरुप्पादने एकत्तं उपनेत्वा विय उप्पादने च समत्थता अत्थीति तेसमि अनन्तरसमनन्तरपच्ययता लब्धति, तस्मा धम्मतो अविसेसेपि तथा तथा बुज्जनकानं वेनेय्यानं वसेन उपसग्गन्थविसेसमत्ततोव भेदो पच्चेतब्बोति।

अत्तनो अनुप्पत्तिया सहुप्पन्नानमि अनुप्पत्तितो पकासस्स पदीपो विय सहुप्पन्नानं सहुप्पादभावेन पच्यो सहजातपच्यो, अरूपिनो चतुक्खन्धा, चत्तारो महाभूता, पटिसन्धिक्खणे वत्थुविपाका च धम्मा।

अञ्जमञ्जं उपत्थम्भयमानं तिदण्डं विय अत्तनो उपकारकधम्मानं उपत्थम्भकभावेन पच्यो अञ्जमञ्जपच्यो। अञ्जमञ्जतावसेनेव च उपकारकता अञ्जमञ्जपच्ययता, न सहजातमत्तेनाति अयमेतेसं द्विजं विसेसो। तथा हि सहजातपच्ययभावीयेव कोचि अञ्जमञ्जपच्यो न होति चित्तजरूपानं सहजातपच्ययभाविनो नामस्स उपादारूपानं सहजातपच्ययभावीनं महाभूतानञ्च अञ्जमञ्जपच्ययभावस्स अनुद्धटत्ता। यदि हि सहजातभावेनेव अत्तनो उपकारकानं उपकारकता अञ्जमञ्जपच्ययता सिया, तदा सहजातअञ्जमञ्जपच्ययेहि समानेहि भवितब्बन्ति।

चित्तकम्मस्स पटो विय सहजातनामरूपानं निस्सयभूता चतुक्खन्धा, तरुपब्बतादीनं पथवी विय आधारणतोयेव सहजातरूपसत्तविञ्जाणधानूनं यथाक्कमं निस्सया भूतरूपं, वत्थु चाति इमे निस्सयपच्यो नाम निस्सीयति निस्सितकेहीति कत्वा, बलवभावेन निस्सयो पच्यो उपनिस्सयपच्यो उप-सदस्स अतिसयजोतकत्ता, तस्स पन भेदं वक्खति।

छ वत्थूनि, छ आरम्भणानि चाति इमे पच्युप्पन्नतो पठमं उप्पज्जित्वा पवत्तमानभावेन उपकारको पुरेजातपच्यो। पच्छाजातपच्यये असति सन्नानट्टित्तिहेतुभावं आगच्छन्तस्स कायस्स उपत्थम्भनभावेन उपकारका पच्छाजाता चित्तचेतसिका धम्मा पच्छाजातपच्यो। सो गिज्झपोतकसरीरानं आहारसा चेतना विय दट्टब्बो।

पुरिमपुरिमपरिचितगन्थो विय उत्तरउत्तरगन्थस्स कुसलादिभावेन अत्तसदिसस्स पगुणबलवभावविसिद्धअत्तसमानजातियतागाहणं आसेवनं, तेन पच्यया सजातियधम्मानं सजातियधम्माव आसेवनपच्यो। भिन्नजातिका हि भिन्नजातिकेहि आसेवनपगुणेन पगुणबलवभावविसिद्धं कुसलादिभावसङ्घातं अत्तनो गतिं गाहापेतुं न सक्कोन्ति, न च सयं ततो गण्हन्ति, ते पन अनन्तरातीतानि लोकियकुसलाकुसलानि चेव अनावज्जनकिरियजवनानि चाति दट्टब्बं। चित्तपयोगसङ्घातकिरियाभावेन सहजातानं नानाक्खणिकानं विपाकानं, कटत्तारूपानञ्च उपकारिका चेतना कम्मपच्यो।

अत्तनो निरुस्साहसन्तभावेन सहजातनामरूपानं निरुस्साहसन्तभावाय उपकारका विपाकचित्तचेतसिका विपाकपच्यो। ते हि पयोगेन असाधेतब्बताय कम्मस्स कटत्ता निष्फज्जमानमत्ततो निरुस्साहसन्तभावा होन्ति, न किलेसवूपसमसन्तभावा। तथा सन्तभावतोयेव हि भवङ्गादयो दुब्बिञ्जेय्या। अभिनिपातसम्पटिच्छनसन्तीरणमत्ता पन विपाका दुब्बिञ्जेय्याव। जवनप्वत्तियाव नेसं रूपादिगहितता विञ्जायति।

रूपारूपानं उपत्थम्भकत्तेन उपकारका चत्तारो आहारा आहारपच्यो। सतिपि हि जनकभावे उपत्थम्भकत्तमेव आहारस्स पधानकिच्चं। जनयन्तोपि आहारो अविच्छेदवसेन उपत्थम्भन्तो व

जनेतीति उपत्थम्भकभावो व आहारभावो। तेषु तेषु किञ्चेषु पच्युप्यन्नधम्मेहि अत्तानं अनुवत्तापनसङ्घाताधिपतियद्देन पच्ययो इन्द्रियपच्ययो।

आरम्मणूपनिज्झानलक्खणूपनिज्झानवसेन उपगन्त्वा आरम्मणनिज्झानका वितक्कादयो ज्ञानपच्ययो। सुगतितो पुञ्जतो, दुग्गतितो पापतो वा निय्यानद्देन उपकारका सम्मादिद्वादयो मग्गपच्ययो।

परमत्थतो भिन्नापि एकीभावगता विय एकुप्पादादिभावसङ्घातसम्पयोगलक्खणेन उपकारका नामधम्मा व सम्पयुत्तपच्ययो। अञ्जमञ्जसम्बन्धताय युत्तापि समाना विष्पयुत्तभावेन विसंसट्टुताय नानत्तुपगमनेन उपकारका वत्थुचित्तचेतसिका विष्पयुत्तपच्ययो। पच्चुप्पन्नसभावसङ्घातेन अत्थिभावेन तादिसस्सेव धम्मस्स उपत्थम्भकत्तेन उपकारका “सहजातं पुरेजातं”त्यादिना वक्खमानधम्मा अत्थिपच्ययो। सतिपि हि जनकत्ते टितियंयेव सातिसयो अत्थिपच्ययानं ब्यापारोति उपत्थम्भकताव तेसं गहिता। एकस्मिं फस्सादिसमुदाये पवत्तमाने दुतियस्स अभावतो अत्तनो टितिया ओकासं अलभन्तानं अनन्तरमुप्पज्जमानकचित्तचेतसिकानं ओकासदानवसेन उपकारका अनन्तरनिरुद्धा चित्तचेतसिका नत्थिपच्ययो।

अत्तनो सभावाविगमनेन अप्पवत्तमानानं विगतभावेन उपकारकायेव धम्मा विगतपच्ययो। निरोधानुपगमनवसेन उपकारका अत्थिपच्यया व अविगतपच्ययो। ससभावतामत्तेन उपकारकता अत्थिपच्ययता, निरोधानुपगमनवसेन उपकारकता अविगतपच्ययताति पच्ययताविसेसो नेसं धम्माविसेसेपि दट्टब्बो। धम्मानञ्चि समत्थताविसेसं सब्बाकारेन जत्वा भगवता चतुवीसतिपच्यया देसिताति भगवति सद्वाय “एवं विसेसा एते धम्मा”ति सुतमयजाणं उप्पादेत्वा चिन्ताभावनामयजाणेहि तदभिसमयाय योगो करणीयो।

अविसेसेपि हि धम्मसामगियस्स तथा तथा विनेतब्बपुग्गलानं वसेन हेट्टा वुत्तोपि पच्ययो पुन पकारन्तेन वुच्चति अहेतुकदुकं वत्तापि हेतुविष्पयुत्तदुकं वियाति दट्टब्बं।

१५. नामं चतुवक्खन्धसङ्घातं नामं तादिसस्सेव नामस्स छधा छहाकारेहि पच्ययो होति, तदेव नामरूपीनं समुदितानं पच्चधा पच्ययो होति, रूपस्स पुन भूतुपादायभेदस्स एकधा पच्ययो होति, रूपञ्च नामस्स एकधा पच्ययो, पञ्जत्तिनामरूपानि नामस्स द्विधा द्विष्पकारा पच्यया होन्ति, द्वयं पुन नामरूपद्वयं समुदितं द्वयस्स तादिसस्सेव नामरूपद्वयस्स नवधा पच्ययो चेति एवं पच्यया छब्बिधा टिता।

१६. विपाकब्याकतं कम्मवसेन विपाकभावप्पत्तं कम्मवेगक्खित्तपतितं विय हुत्वा पवत्तमानं अत्तनो सभावं गाहेत्वा परिभावेत्वा नेव अञ्जं पवत्तेति, न च पुरिमविपाकानुभावं गहेत्वा उप्पज्जति। “न मग्गपच्यया आसेवने एक”न्ति वचनतो च अहेतुककिरियेसु हसितुप्पादस्सेव आसेवनताउद्धरणेन आवज्जनद्वयं आसेवनपच्ययो न होति, तस्मा जवनानेव आसेवनपच्ययभावं गच्छन्तीति आह “पुरिमानि जवनानी”त्यादि। अविसेसवचनेपेत्थ लोकियकुसलाकुसलाब्याकत-जवनानेव दट्टब्बानि लोकुत्तरजवनानं आसेवनभावस्स अनुद्धट्ता।

एवञ्च कत्वा वुत्तं पट्टानट्टकथायं^{३२५} “लोकुत्तरो पुन आसेवनपच्ययो नाम नत्थी”ति। तत्थ हि कुसलं भिन्नजातिकस्स पुरेचरत्ता न तेन आसेवनगुणं गण्हापेति, फलचित्तानि च जवनवसेन उप्पज्जमानानिपि विपाकाब्याकते वुत्तनयेन आसेवनं न गणहन्ति, न च अञ्जं गाहापेन्ति। यम्पि “आसेवनविनिमुत्तं जवनं नत्थी”ति आचरियधम्मपालत्थेरेन वुत्तं, तम्पि येभुय्यवसेन वुत्तन्ति विज्जायति। इतरथा आचरियस्स असमपेक्खिताभिधायकत्तप्पसङ्गो सिया। मग्गो पुन गोत्रभुतो आसेवनं न गण्हातीति नत्थि भूमिआदिवसेन नानाजातिताय अनधिप्पेतत्ता। तथा हि वुत्तं पट्टाने

^{३२५} पट्टा० अट्ट० १.१२

“गोत्रभु मगस आसेवनपच्येन पच्ययो, वोदानं मगस आसेवनपच्येन पच्ययो”ति^{३२६} । एकुप्पादादिचतुर्विधसम्पयोगलक्षणाभावतो सहुप्पन्नान्मि रूपधम्मानं सम्पयुत्तपच्ययता नत्थीति वुत्तं “चित्तचेतसिका धम्मा अज्जमज्ज”न्ति ।

१७. हेतुज्ञानङ्गमगङ्गानि सहजातानं नाम रूपानन्ति तयोपेते पटिसन्धियं कम्मसमुद्धानानं, पवत्तियं चित्तसमुद्धानानञ्च रूपानं, उभयत्थ सहजातानं नामानञ्च हेतादिपच्येन पच्यया होन्ति । “सहजातरूपन्ति हि सब्बत्थ पटिसन्धियं कम्मसमुद्धानानं, पवत्तियं चित्तसमुद्धानान”न्ति वक्खति । सहजाता चेतनाति अन्तमसो चक्खुविज्जाणादीहिपि सहजातचेतना । सहजातानं नाम रूपानन्ति सब्बापि चेतना नामानं, पटिसन्धिसहगता चेतना कम्मसमुद्धानरूपानं, पवत्तियं रूपसमुद्दापकचित्तसहगता चेतना चित्तसमुद्धानरूपानञ्च । नानाक्खणिका चेतनाति विपाकक्खणतो नानाक्खणे अतीतभावादीसु निब्बत्ता कुसलाकुसलचेतना । नामरूपानन्ति उभयत्थापि नामरूपानं । विपाकक्खन्धाति पटिसन्धिविज्जाणादिका विपाका अरूपक्खन्धा । कम्मसमुद्धानम्पि हि रूपं विपाकवोहारं न लभति अरूपधम्मभावेन, सारम्पणभावेन च कम्मसदिसेसु अरूपधम्मेष्वेव विपाक-सइस्स निरुद्धत्ता ।

१८. पुरेजातस्स इमस्स कायस्साति पच्ययधम्मतो पुरे उप्पन्नस्स इमस्स रूपकायस्स । कथं पन पच्ययुप्पन्नस्स पुरे निब्बत्तियं पच्छाजातस्स पच्ययताति? ननु वुत्तं “पच्छाजातपच्यये असति सन्तानडिटिहेतुकभावं आगच्छन्तस्सा”ति, तस्मा सन्तानम्पवत्तस्स हेतुभावुपत्थम्भने इमस्स व्यापारोति न कोचि विरोधो ।

१९. पटिसन्धियं चक्खादिवत्थूनं असम्भवतो, सति च सम्भवे तं तं विज्जाणानं पच्ययभावानुपगमनतो, हृदयवत्थुनो च पटिसन्धिविज्जाणेन सहुप्पन्नस्स पुरेजातकताभावतो वुत्तं “छवत्थूनि पवत्तिय”न्ति । “पञ्चारम्पणानि पञ्चविज्जाणवीथिया”ति च इदं आरम्पणपुरेजातनिहेसे आगतं सन्धाय वुत्तं । पञ्हावारे पन “सेक्खा वा पुथुज्जना वा चक्खुं अनिच्चतो दुक्खतो अनत्ततो विपस्सन्ती”त्यादिना अविसेसेन पच्युप्पन्नचक्खादीनाम्पि गहितत्ता धम्मरम्पणम्पि आरम्पणपुरेजातं मनोविज्जाणवीथिया लब्धति । अत्थतो हेतं सिद्धं, यं पच्युप्पन्नधम्मरम्पणं गहेत्वा मनोद्वारिकवीथि पवत्तति, तं तस्स आरम्पणपुरेजातं होतीति ।

२२. पकतिया एव पच्ययन्तररहितेन अत्तनो सभावेनेव उपनिस्सयो पकतूपनिस्सयो । आरम्पणानन्तरोहि असंभित्तो पुथगेव कोचि उपनिस्सयोति वुत्तं होति । अथ वा पकतो उपनिस्सयो पकतूपनिस्सयो । पकतोति चेत्य प-कारो उपसग्गो, सो अत्तनो फलस्स उप्पादनसमत्थभावेन सन्ताने निष्फादितभावं, आसेवितभावञ्च दीपेति, तस्मा अत्तनो सन्ताने निष्फन्नो रागादि, सद्दादि, उपसेवितो वा उतुभोजनादि पकतूपनिस्सयो । तथा चेव निहिसति ।

२३. गरुकतन्ति गरुं कत्वा पच्यवेक्खित्तं । तथा हि “दानं दत्वा सीलं समादियित्वा उपोसथकम्मं कत्वा तं गरुं कत्वा पच्यवेक्खती”त्यादिना दानसीलउपोसथकम्मपुब्बेकत-सुचिण्णज्ञानगोत्रभुवोदान-मग्गादीनि गरुं कत्वा पच्यवेक्खणवसेन अस्स निहेसो पवत्तो ।

२४. “पुरिमा पुरिमा कुसला खन्धा पच्छिमानं पच्छिमानं कुसलानं खन्धानं उपनिस्सयपच्येन पच्ययो”त्यादिना नयेन अनन्तरपच्येन सद्धिं नानत्तं अकत्वा अनन्तरूपनिस्सयस्स आगतत्ता वुत्तं “अनन्तरनिरुद्धा”त्यादि । एवं सन्तेपि अत्तनो अनन्तरं अनुरूपचित्तुप्पादवसेन अनन्तरपच्ययो, बलवकारणवसेन अनन्तरूपनिस्सयपच्ययोति अयमेतेसं विसेसो ।

२५. यथारहं अज्जत्तञ्च बहिद्धा च रागादयो...पे०... सेनासनञ्चाति योजना । रागादयो हि अज्जत्तं निष्फादिता, पुग्गलादयो बहिद्धा सेविता । तथा हि वुत्तं आचरियेन-

“रागसद्वादयो धम्मा, अज्झत्तमनुवासिता।
सत्तसद्धारधम्मा च, बहिद्दोपनिसेविता”ति^{३२७} ॥

अथ वा अज्झत्तञ्च बहिद्दा च कुसलादिधम्मानन्ति यथाटितवसेनेव योजना अत्तनो हि रागादयो च अत्तनो कुसलादिधम्मानं कल्याणमित्तस्स सद्वादिके निस्साय कुसलं करोन्तानं परेसञ्च निस्सया होन्ति।

तत्थ कामरागादयो निस्साय कामभवादीसु निब्बत्तन्त्थं, रागादिवूपसमत्थञ्च दानसीलउपोसथज्झानाभिञ्जाविपस्सनामग्गभावना, रागादिहेतुका च उपरूपरिरागादयो होन्तीति यथारहं दद्वुब्बं। यं यञ्हि निस्साय यस्स यस्स सम्भवो, तं तं तस्स तस्स पकतूपनिस्सयो होति। पच्चयमहापदेसो हेस, यदिदं “उपनिस्सयपच्चयो”ति वुत्तं। तथा चाह “बहुधा होति पकतूपनिस्सयो”ति। सद्वादयोति सीलसुतचागपञ्जा। अत्तनो सद्वादिकञ्हि उपनिस्साय अत्तनो दानसीलादयो, तथा कल्याणमित्तानं सद्वादयो उपनिस्साय परेसञ्च दानसीलादयो होन्तीति पाकटमेतं। सुखं दुक्खन्ति कायिकं सुखं दुक्खं। पुग्गलोति कल्याणमित्तादिपुग्गलो। भोजनन्ति सप्पायादिभोजनं, उत्तुपि तादिसोव।

२७. “अधिपति...पे०... पच्चया होन्ती”ति सङ्केपेन वुत्तमत्थं वित्तारेतुं “तत्थ गरुकत्तमारम्पण”न्यादि वुत्तं। गरुकत्तमारम्पणन्ति पच्चवेक्खणअस्सादादिना गरुकत्तं आरम्पणं। तञ्हि ज्ञानमग्गफलविपस्सनानिब्बानादिभेदं पच्चवेक्खणअस्सादादिमग्गफलादिधम्मे अत्ताधीने करोतीति आरम्पणाधिपति नाम। गरुकातब्बतामत्तेन आरम्पणाधिपति।

गरुकतोपि बलवकारण्डेन आरम्पणूपनिस्सयोति अयमेतेसं विसेसो। सहजाता...पे०... नामरूपानन्ति छन्दयित्तवीरियवीमसानं, वसेन चतुब्बिधोपि सहजाताधिपति यथारहं सहजातानामरूपानं पवत्तियंयेव सहजाताधिपतिवसेन पच्चयो।

२८. रूपधम्मस्स अरूपधम्मं पति सहजातपच्चयता पटिसन्धियं वत्थुवसेन वुत्ताति आह “वत्थुविपाका अञ्जमञ्ज”न्ति-

३०. यस्मा पन अञ्जमञ्जुपत्थम्भनवसेनेव अञ्जमञ्जपच्चयता, न सहजातमत्ततोति पवत्तियं रूपं नामानं अञ्जमञ्जपच्चयो न होति, तस्मा वुत्तं “चित्तचेतसिका धम्मा अञ्जमञ्ज”न्ति। तथा उपादारूपानि च भूतरूपानं अञ्जमञ्जपच्चया न होन्तीति वुत्तं “महाभूता अञ्जमञ्ज”न्ति।

३१. ननु च “अरूपिनो आहारा सहजातानं नामरूपान”न्ति वुत्तं, एवञ्च सति असञ्जीनं सहजाताहारस्स असम्भवतो “सब्बे सत्ता आहारड्डितिका”ति कथमिदं नीयतीति? वुच्चते- मनोसञ्चेतनाहारवसप्पवत्तस्स कम्मस्स, तं सहगतानम्पि वा सेसाहारानं कम्मूपनिस्सयपच्चयेहि पच्चयत्तपरियायं गहेत्वा सब्बसत्तानं आहारड्डितिकता वुत्ता, न आहारपच्चयभावतोति।

३२. “पञ्च पसादा”त्यादीसु ननु इत्थिन्द्रियपुरिसिन्द्रिया न गहिताति? सच्चं न गहिता। यदिपि तेसं लिङ्गादीहि अनुवत्तनीयता अत्थि, सा पन न पच्चयभावतो। यथा हि जीविताहारा येसं पच्चया होन्ति, तेसं अनुपालका उपत्थम्भका अत्थि, अविगतपच्चयभूता च होन्ति, न एवं इत्थिपुरिसभावा लिङ्गादीनं केनचि उपकारेन उपकारा होन्ति।

केवलं पन यथासकेहेव कम्मादिपच्चयेहि पवत्तमानं लिङ्गादीनं यथा इत्थादिग्गहणस्स पच्चयभावो होति, ततो अञ्जेनाकारेन तं-सहितसन्ताने अप्पवत्तितो लिङ्गादीहि अनुवत्तनीयता, इन्द्रियता च नेसं वुच्चति, तस्मा न तेसं इन्द्रियपच्चयभावो वुत्तो।

३३. येसं नामानं चक्खादीनं अब्भन्तरतो निक्खमन्तानं विय पवत्तानं, येसञ्च रूपानं नामसन्निस्सयेनेव उप्पज्जमानानं सम्पयोगासङ्का होति, तेसमेव विप्पयुत्तपच्चयता।

रूपानं पन रूपेहि सासङ्गा नत्थि। वत्थुसन्निससयेनेव जायन्तानं विसयभावमतं आरम्भणन्ति तेनापि तेसं सम्मयोगासङ्गा नत्थीति येसं सम्मयोगासङ्गा अत्थि, तेसमेव विष्णुत्तपच्चयतापि वुत्ताति आह “ओक्कन्तिकखणे वत्थु”त्यादि।

३४. सब्बथा सब्बाकारेण यथारहं नामवसेन वुत्तं तिविधं सहजातं, दुविधं पुरेजातं, एकविधं पच्छाजातञ्च पच्चयजातं, आहारसु कबळीकारो आहारो, रूपजीवित्तिन्द्रियन्ति अयं पञ्चविधोपि अत्थिपच्चयो, अविगतपच्चयो च होति। पच्चुप्पन्नसभावेन अत्थिभावेन तादिसस्सेव धम्मस्स उपत्थम्भकत्ता अत्थिभावाभावेन अनुपकारकानमेव अत्थिभावेन उपकारकता अत्थिपच्चयभावोति नत्थि निब्बानस्स सब्बदा भाविनो अत्थिपच्चयता, अविगतपच्चयता च। उप्पादादियुत्तानं वा नत्थिभावोपकारकताविरुद्धो, विगतभावोपकारकताविरुद्धो च उपकारकभावो अत्थिपच्चयतादिकान्ति न तस्स तप्पच्चयत्तप्पसङ्गो। रूपजीवित्तिन्द्रियञ्चेत्थ ओजा विय ठित्तिवखणेव उपकारकता सहजातपच्चयेसु न गद्धतीति विसुं वुत्तं।

३५. इदानि सब्बेपि पच्चया सङ्केपतोपि चतुथायेवाति दस्सेतुं “आरम्भणू...पे०... गच्छन्ती”ति वुत्तं। न हि सो कोचि पच्चयो अत्थि, यो चित्तचेतसिकानं आरम्भणभावं न गच्छेय्य, सकसकपच्चयुप्पन्नस्स च उपनिस्सयभावं न गच्छति, कम्महेतुकत्ता च लोकप्पवत्तिया फलहेतूपचारवसेन सब्बेपि कम्मसभावं नातिवत्तन्ति, ते च परमत्थतो लोकसम्मुतिवसेन च विज्जमानायेवाति सब्बेपि चतूसु समोधानं गच्छन्ति।

३६. इदानि यं वुत्तं तत्थ तत्थ “सहजातरूप”न्ति, तं सब्बं न अविसेसतो ददुब्बन्ति दस्सेतुं “सहजातरूप”न्त्यादि वुत्तं। पटिसन्धियञ्चि चित्तसमुद्धानरूपाभावतो पवत्तियं कम्मसमुद्धानानञ्च चित्तचेतसिकेहि सहुप्पत्तिनियमाभावतो सहजातरूपन्ति सब्बत्थापि पवत्ते चित्तसमुद्धानानं रूपानं, पटिसन्धियं कटत्तारूपसङ्घातकम्मजरूपानञ्च वसेन दुविधं होति। कम्मस्स कतत्ता निब्बत्तमानानि रूपानि कटत्तारूपानि।

३७. इति एवं वुत्तनयेन सम्भवा यथासम्भवं तेकालिका अनन्तरसमनन्तर-आसेवननत्थिविगतवसेन पच्चन्नं अतीतकालिकानं, कम्मपच्चयस्स अतीतवत्तमानवसेन द्विकालिकस्स, आरम्भणअधिपतिउपनिस्सयपच्चयानं तिकालिकानं, इतरेसं पन्नरसन्नं पच्चुप्पन्नकालिकानञ्च वसेन कालत्तयवन्तो, निब्बानपञ्जत्तिवसेन कालविमुत्ता च, चक्खादि रागादि सद्दादिवसेन अज्जत्तिका च, पुग्गलउतुभोजनादिवसेन ततो बहिद्धा च, पच्चयुप्पन्नभावेन सङ्घता च, कथा तप्पटिपक्खभावेन असङ्घता च धम्मा पञ्जत्तिनामरूपानं वसेन सङ्केपतो तिविधा टिता सब्बथा पद्दाने अनन्तनयसमन्तपद्दाने पकरणे चतुवीसत्तिसङ्घाता पच्चया नामाति योजना।

३८. तत्थाति तेसु पञ्जत्तिनामरूपेसु।

पद्दाननयवण्णना निट्ठिता।

पञ्जत्तिभेदवण्णना

३९. वचनीयवाचकभेदा दुविधा पञ्जत्तीति वुत्तं “पञ्जापियत्ता”त्यादि। पञ्जापियत्ताति तेन तेन पकारेण आपेतब्बत्ता, इमिना रूपादिधम्मानं समूहसन्तानादिअवत्थाविसेसादिभेदा सम्मुतिसच्चभूता उपादापञ्जत्तिसङ्घाता अत्थपञ्जत्ति वुत्ता। सा हि नामपञ्जत्तिया पञ्जापीयति। पञ्जापनतोति पकारेहि अत्थपञ्जत्तिया आपनतो। इमिना हि पञ्जापेतीति “पञ्जती”ति लद्धनामानं अत्थानं अधिधानसङ्घाता नामपञ्जत्ति वुत्ता।

४०. भूतपरिणामाकारमुपादायाति पथवादिकानं महाभूतानं पवन्थवसेन पवत्तमानानं पत्थटसङ्गहतादिआकारेण परिणामाकारं परिणतभावसङ्घातं आकारं उपादाय निस्सयं कत्वा। तथा तथाति भूमादिवसेन। भूमिपब्बतादिकानि भूमिपब्बतरुक्खादिका सन्तानपञ्जत्ति।

सम्भारसन्निवेशाकारन्ति दारुमत्तिकातन्तादीनां सम्भारानं उपकरणानं सन्निवेशाकारं रचनादिविसिद्धं तं तं सण्ठानादिआकारं। रथसकटादिकाति रथसकटागामघटपटादिका समूहपञ्जति। चन्दावट्टनादिकन्ति चन्दिमसूरियनक्खत्तानं सिनेरुं पदक्खिणवसेन उदयादिआवट्टनाकारं। दिसाकालादिकाति पुरत्थिमदिसादिका दिसापञ्जति, पुब्बण्हादिका कालपञ्जति, मासोतुवेसाखमासादिका तं तं नामविसिद्धा मासादिपञ्जति च। असम्फुट्टाकारन्ति तं तं रूपकलापेहि असम्फुट्टं सुसिरादिआकारं। कूपगुहादिका ति कूपगुहछिहादिका आकासपञ्जति। तं तं भूतनिमित्तन्ति पथवीकसिणादि तं तं भूतनिमित्तं। भावनाविसेसन्ति परिकम्मादिभेदं भावनाय पबन्धविसेसं। कसिणनिमित्तादिकाति कसिणासुभनिमित्तादिभेदा योगीनां उपट्टिता उग्गहपटिभागादिभेदा निमित्तपञ्जति। एवमादिप्यभेदाति कसिणुग्घाटिमाकासनिरोधकसिणादिभेदा च। अत्थच्छायाकारेणाति परमत्थधम्मस्स छायाकारेण पटिभागाकारेण।

४१. नामनामकम्मादिनामेनाति नामं नामकम्पं नामधेय्यं निरुत्ति व्यञ्जनं अभिलापोति इमेहि छहि नामेहि। तत्थ अत्थेसु नमतीति नामं। तं अन्वत्थरुद्धीवसेन दुविधं, सामञ्जगुणकिरियायदिच्छावसेन चतुब्धिं। नाममेव नामकम्पं। तथा नामधेय्यं। अक्खरद्वारेण अत्थं नीहरित्वा उत्ति कथनं निरुत्ति, अत्थं व्यञ्जयतीति व्यञ्जनं। अभिलपतीति अभिलापो, सदृगतअक्खरसन्निवेशकम्पो। सा पनायं नामपञ्जति विज्जमानअविज्जमानतदुभय-संयोगवसेन छब्बिधा होतीति दस्सेतुं “विज्जमानपञ्जती”त्यादि वुत्तं, एताय पञ्जापेन्तीति “रूपवेदना”त्यादिना पकासेन्ति।

४२. उभिन्नन्ति विज्जमानाविज्जमानानं द्विन्नं। पञ्चाभिञ्जा, आसवक्खयजाणन्ति छ अभिञ्जा अस्साति छब्बभिञ्जो। एत्थ च अभिञ्जानं विज्जमानत्ता, तप्पटिलाभिणो पुग्गलस्स अविज्जमानत्ता च अयं विज्जमानेण अविज्जमानपञ्जति नाम। तथा इत्थिया अविज्जमानत्ता, सदस्स च विज्जमानत्ता इत्थिसद्दोति अविज्जमानेण विज्जमानपञ्जति। पसादचक्खुनो, तन्निस्सितविञ्जाणस्स च विज्जमानत्ता चक्खुविञ्जाणन्ति विज्जमानेण विज्जमानपञ्जति। रञ्जो च पुत्तस्स च सम्मुतिसच्चभूतत्ता राजपुत्तोति अविज्जमानेण अविज्जमानपञ्जति।

४३. वचीघोसानुसारेणाति भूमिपब्बतरूपवेदनादिवचीमयसद्दस्स अनुसारेण अनुगमनेण अनुस्सरणेण आरम्भणकरणेण पवत्ताय सोतविञ्जाणवीथिया पवत्तितो अनन्तरं उप्पन्नस्स मनोद्वारस्स नामचिन्तनाकारप्पवत्तस्स मनोद्वारिकविञ्जाणसन्तानस्स “इदमीदिसस्स अत्थस्स नाम”न्ति पुब्बेयेव गहितसङ्केतोपनिस्सयस्स गोचरा आरम्भणभूता ततो नामगगहणतो परं यस्सा सम्मुतिपरमत्थविसयाय नामपञ्जत्तिया अनुसारेण अनुगमनेण अत्था सम्मुतिपरमत्थभेदा विञ्जायन्ति, सायं भूमिपब्बतरूपवेदनादिका पञ्जापेतब्बत्थपञ्जापिका लोकसङ्केतेन निम्मिता लोकवोहारेण सिद्धा, मनोद्वारगगहिता अक्खरावलिभूता पञ्जति विञ्जेय्या पञ्जापनतो पञ्जत्तिसङ्घाता नामपञ्जतीति विञ्जेय्या।

एत्थ च सोतविञ्जाणवीथिया अनन्तरभाविनिं मनोद्वारिकवीथिमिं सोतविञ्जाण-वीथिगगहणेनेव सङ्गहेत्वा “सोतविञ्जाणवीथिया”ति वुत्तं। घटादिसद्दञ्जि सुणन्तस्स एकमेकं सद्दं आरब्ध पच्चुप्पन्नातीतारम्भणवसेन द्वे द्वे जवनवारा, बुद्धिया गहितनामपण्णत्तिभूतं अक्खरावल्लिमारब्ध एकोति एवं सोतविञ्जाणवीथिया अनन्तराय अतीतसद्दारम्भणाय जवनवीथिया अनन्तरं नामपञ्जत्तिया गहणं, ततो परं अत्थावबोधोति आचरिया।

पञ्जत्तिभेदवण्णना निद्धिता।

इति अभिधम्मत्वविभाविनया नाम अभिधम्मत्थसङ्गहवण्णनाय पच्चयपरिच्छेदवण्णना निद्धिता।

९. कम्मडानपरिच्छेदवण्णना

१. इतो पच्चयनिद्देशतो परं नीवरणानं समनट्टेन समथसङ्घातानं, अनिच्चादि विविधाकारतो दस्सनट्टेन विपस्सनासङ्घातानञ्च द्वित्रं भावनानं दुविधम्मि कम्मडानं दुविधभावनाकम्मस्स पवत्तिडानताय कम्मडानभूतमारम्भणं उत्तरुत्तरयोगकम्मस्स पदडानताय कम्मडानभूतं भावनावीथिञ्च यथाक्कमं समथविपस्सनानुक्कमेन पवक्खामीति योजना ।

समथकम्मडानं

चरितभेदवण्णना

३. रागो व चरिता पकतीति रागचरिता । एवं दोसचरितादयोपि । चरितसङ्गहोति मूलचरितवसेन पुगलसङ्गहो, संसग्गवसेन पन तेसट्ठि चरिता होन्ति । वुत्तञ्छि-

“रागादिके तिके सत्त, सत्त सद्दादिके तिके ।
एकद्वितिकमूलम्हि, मिस्सतो सत्तसत्तक”न्ति ॥

एत्थ हि रागचरिता दोसचरिता मोहचरिता रागदोसचरिता रागमोहचरिता दोसमोहचरिता रागदोसमोहचरिताति एवं रागादिके तिके सत्तकमेकं । तथा सद्दाचरिता बुद्धिचरिता वितक्कचरिता सद्दाबुद्धिचरिता सद्दाबुद्धिवितक्कचरिता बुद्धिवितक्कचरिता सद्दाबुद्धिवितक्कचरिताति सद्दादिकेपि तिके एकन्ति एवं द्वे तिके अभिस्सेत्वा चुद्दस चरिता होन्ति । रागादिके पन एकद्वितिकमूलवसेन सद्दादितिकेन सह योजिते रागसद्दाचरिता रागबुद्धिचरिता रागवितक्कचरिता रागसद्दाबुद्धिचरिता रागसद्दावितक्कचरिता रागबुद्धिवितक्कचरिता रागसद्दाबुद्धिवितक्कचरिताति रागमूलनये एकं सत्तकं, तथा “दोससद्दाचरिता दोसबुद्धिचरिता दोसवितक्कचरिता”त्यादिना दोसमूलनयेपि एकं, “मोहसद्दाचरिता”त्यादिना मोहमूलनयेपि एकन्ति एवं एकमूलनये सत्तकत्तयं होति । यथा चेत्थ, एवं द्विमूलकनयेपि “रागदोससद्दाचरिता रागदोसबुद्धिचरिता रागदोसवितक्कचरिता”त्यादिना सत्तकत्तयं । तिमूलकनये पन “रागदोसमोहसद्दाचरिता”त्यादिना एकं सत्तकन्ति एवं मिस्सतो सत्तसत्तकवसेन एकूनपञ्जास चरिता होन्ति ।

इति इमा एकूनपञ्जास, पुरिमा च चुद्दसाति तेसट्ठि चरिता दट्टब्बा । केचि पन दिट्ठिया सद्धि “चतुसट्ठी”ति वण्णन्ति ।

चरितभेदवण्णना निट्ठिता ।

भावनाभेदवण्णना

४. भावनाय पटिसङ्कारकम्मभूता, आदिकम्मभूता वा पुब्बभागभावना परिकम्मभावना नाम । नीवरणविक्खम्भनतो पट्टाय गोत्रभूपरियोसाना कामावचरभावना उपचारभावना नाम । अप्पनाय समीपचारित्ता गामूपचारादयो विय । महग्गतभावप्पत्ता अप्पनाभावना नाम अप्पनासङ्घातवितक्कपमुखत्ता । सम्पयुत्तधम्महे आरम्भणे अप्पेन्तो विय पवत्ततीति वितक्को अप्पना । तथा हि सो “अप्पना ब्यप्पना”ति^{३२८} निट्ठिट्ठो । तप्पमुखतावसेन पन सब्बेपि महग्गतानुत्तरज्ञानधम्मा “अप्पना”ति वुच्चन्ति ।

भावनाभेदवण्णना निट्ठिता ।

^{३२८} (ध० स० ७)

निमित्तभेदवर्णना

५. परिकम्पस्स निमित्तं आरम्भणत्ताति परिकम्पनिमित्तं, कसिणमण्डलादि। तदेव चक्खुना दिट्ठं विय मनसा उग्गहेतब्बं निमित्तं, उग्गण्हन्तस्स वा निमित्तन्ति उग्गहनिमित्तं।

तप्पटिभागं वर्णणादिकसिणदोसरहितं निमित्तं उपचारप्पनानं आरम्भणत्ताति पटिभागनिमित्तं।

६. पथवीयेव कसिणं एकदेसे अट्टत्वा अनन्तस्स फरितब्बताय सकलट्टेनाति पथवीकसिणं, कसिणमण्डलं। पटिभागनिमित्तं, तदारम्भणञ्च ज्ञानं 'पथवीकसिण'न्ति वुच्चति। तथा आपोकसिणादीसुपि। तत्थ पथवादीनि चत्तारि भूतकसिणानि। नीलादीनि चत्तारि वर्णकसिणानि, परिच्छिन्नाकासो आकासकसिणं, चन्दादिआलोको आलोककसिणन्ति दट्टब्बं।

७. उद्धं धुमात्तं सूणं छवसरीरं उद्धुमात्तं, तदेव कुच्छित्तट्टेन उद्धुमात्तकं। एवं सेसेसुपि। सेतरत्तादिना विभिस्सित्तं येभुय्येन नीलवर्णं छवसरीरं विनीलकं विसेसतो नीलकन्ति कत्त्वा। विस्सवन्तपुब्बकं विपुब्बकं। मज्जे द्विधा छिन्नं विच्छिद्दकं। सोणसिङ्गालादीहि विविधाकारेण खायितं विक्खायितकं। सोणसिङ्गालादीहि विविधेनाकारेण खण्डित्वा तत्थ तत्थ खित्तं विक्खित्तकं। काकपदादिआकारेण सत्थेन हन्तिवा विविधं खित्तं हतविक्खित्तकं। लोहितपग्घरणकं लोहितकं। किमिकूलपग्घरणकं पुठ्ठकं। अन्तमसो एकम्पि अट्टि अट्टिकं।

८. अनु अनु सरणं अनुस्सति, अरहतादिबुद्धगुणारम्भणा अनुस्सति बुद्धानुस्सति। स्वाक्खाततादिधम्मगुणारम्भणा अनुस्सति धम्मानुस्सति। सुप्पटिपन्नतादिसंघगुणारम्भणा अनुस्सति संघानुस्सति। अखण्डतादिना सुपरिसुद्धस्स अत्तनो सीलगुणस्स अनुस्सरणं सीलानुस्सति। विगतमलमच्छेरतादिवसेन अत्तनो चागानुस्सरणं चागानुस्सति। "येहि सद्दादीहि समन्नागता देवा देवत्तं गता, तादिसा गुणा मयि सन्ती"ति एवं देवता सक्खिद्वाने ठपेत्वा अत्तनो सद्दादिगुणानुस्सरणं देवतानुस्सति। सब्बदुक्खूपसमभूतस्स निब्बानस्स गुणानुस्सरणं उपसमानुस्सति। जीवित्तिन्त्रियुपच्छेदभूतस्स मरणस्स अनुस्सरणं मरणानुस्सति। केसादिकायकोडासे गता पवत्ता सति कायगतासति। आनञ्च अपानञ्च आनापानं, अस्सासपस्सासा, तदारम्भणा सति आनापानस्सति।

९. मिज्जति सिनिह्थतीति मेत्ता, मित्तेसु भवाति वा मेत्ता, सा सत्तानं हितसुखूपसंहरणलक्खणा। परदुक्खापनयनकामतालक्खणा करुणा। परसम्पत्तिपमोदलक्खणा मुदिता। इट्ठानिट्ठेसु मज्झत्ताकारप्पवत्तिलक्खणा उपेक्खा। अप्पमाणसत्तारम्भणत्ता अप्पमज्जा। उत्तमविहारभावतो, उत्तमानं वा विहारभावतो ब्रह्मविहारो।

१०. गमनपरियेसनपरिभोगादिपच्चवेक्खणवसेन कबळीकाराहारे पटिकूलन्ति पवत्ता सज्जा आहारे पटिकूलसज्जा।

११. पथवीधातुआदीनं चतुन्नं धातून् सलक्खणतो केसादिससम्भारादितो च ववत्थानं चतुधातुववत्थानं।

१२. अरूपे आरम्भणे पवत्ता आरुप्पा।

निमित्तभेदवर्णना निट्ठिता।

सप्पायभेदवर्णना

१३. इदानि तस्स तस्स पुगलस्स चरित्तानुकूलकम्मद्धानं दस्सेतुं "चरित्तानु पना"त्यादिमाह। रागो व चरित्तं पकत्ति एतस्साति रागचरित्तो, रागबहुलो पुगलो, रागस्स उज्जुविपच्चनीकभावतो असुभकम्मद्धानं तस्स सप्पायं। आनापानं मोहचरित्तस्स, वितक्कचरित्तस्स च सप्पायं बुद्धिविसयभावेन मोहप्पटिपक्खत्ता, वितक्कसन्धावनस्स निवारकत्ता च। छ बुद्धानुस्सतिआदयो सद्दाचरित्तस्स सप्पाया सद्दाबुद्धिहेतुभावतो।

१७. मरणउपसमसञ्जाववत्थानानि बुद्धिचरितस्स सप्पायानि गम्भीरभावतो बुद्धिया एव विसयत्ता।

१८. सेसानीति चतुब्धिभूतकसिणआकासआलोककसिणआरुप्पचतुक्कवसेन दसविधानि। तत्थापीति तेषु दससु कम्मङ्गानेषु। पुधुलं मोहचरितस्स सप्पायं सम्बाधे ओकासे चित्तस्स भिय्योसोमत्ताय सम्मुक्कनतो। खुदकं वितक्कचरितस्स सप्पायं महन्तारम्मणस्स वितक्कसन्धावनपच्चयत्ता। उजुविपच्चनीकतो चेव अतिसप्पायताय चेतं वुत्तं। रागादीनं पन अविक्खम्भिका, सद्दादीनं वा अनुपकारिका कसिणादिभावना नाम नत्थि।

सप्पायभेदवण्णना निट्ठिता।

भावनाभेदवण्णना

१९. सब्बत्थापीति चत्तालीसकम्मङ्गानेषुपि नत्थि अप्पना, बुद्धगुणादीनं परभत्थभावतो, अनेकविधत्ता, एकस्सपि गम्भीरभावतो च। बुद्धानुस्सतिआदीसु दससु कम्मङ्गानेषु अप्पनावसेन समाधिस्स पत्तिट्ठातुं असक्कुण्येयत्ता अप्पनाभावं अप्पत्वा समाधि उपचारभावेन पत्तिट्ठाति। लोकुत्तरसमाधि, पन द्रुतियचतुत्थारुप्पसमाधि च सभावधम्मेषि भावनाविसेसवसेन अप्पनं पापुणाति। विमुद्धिभावनानुक्कमवसेन हि लोकुत्तरो अप्पनं पापुणाति। आरम्मणसमतिक्कम-भावनावसेन आरुप्पसमाधि। अप्पनाप्पत्तस्सेव हि चतुत्थज्झानसमाधिना आरम्मणसमतिक्कमनमत्तं होति।

२१. पञ्चपि ज्ञानानि एतेसमत्थि, तत्थ नियुत्तानीति वा पञ्चकज्झानिकानि।

२२. असुभभावनाय पटिकूलारम्मणत्ता चण्डसोताय नदिया अरित्तबलेन नावा विय वितक्कबलेनेव तत्थ चित्तं पवत्ततीति असुभकम्मङ्गाने अवितक्कज्झानासम्भवतो “पठमज्झानिका” ति वुत्तं।

२३. मेत्ताकरुणामुदितानं दोमनस्ससहगतव्यापादविहिंसानभिरतीनं पहायकत्ता दोमनस्सपटिपक्खेन सोमनस्सेनेव सहगतता युत्ताति “मेत्तादयो तयो चतुक्कज्झानिका”ति वुत्ता।

२४. “सब्बे सत्ता सुखिता होन्तु, दुक्खा मुच्चन्तु, लद्धसुखसम्पत्तितो मा विगच्छन्तु”ति मेत्तादिवसप्पवत्तव्यापारत्तयं पहाय कम्मस्सकतादस्सनेन सत्तेसु मज्झताकारप्पवत्तभावनानिब्बत्ताय तत्रमज्झत्तुपेक्खाय बलवतरत्ता उपेक्खाब्रह्मविहारस्स सुखसहगतासम्भवतो “उपेक्खा पञ्चमज्झानिका”ति वुत्ता।

भावनाभेदवण्णना निट्ठिता।

गोचरभेदवण्णना

२६. यथारहन्ति तं तं आरम्मणानुरुपतो। कस्सपि आरम्मणस्स अपरिव्यत्तताय “परियायेना”ति वुत्तं।

२७. कसिणासुभकोट्टासानापानस्सतीस्सेव हि परिव्यत्तनिमित्तसम्भवोति।

२८. पथवीमण्डलादीसु निमित्तं उग्गण्हन्तस्साति आदिम्मि ताव चतुपारिसुद्धिसीलं विसोधेत्वा दसविधं पलिबोधं उपच्छिन्दित्वा पियगरुभावनीयादिगुणसमन्नागतं कल्याणमित्तं उपसङ्कमित्वा अत्तनो चरियानुकूलं कम्मङ्गानं गहेत्वा अट्टारसविधं अननुरुपविहारं पहाय पञ्चङ्गसमन्नागते अनुरुपविहारे विहरन्तस्स केसनखहरणादिखुदकपलिबोधुपच्छेदं कत्वा कसिणमण्डलादीनि पुरतो कत्वा आनापानकोट्टासादीसु चित्तं टपेत्वा निसीदित्वा “पथवी पथवी”त्यादिना तं तं भावनानुक्कमेन पथवीकसिणादीसु तंतदारम्मणेषु निमित्तं उग्गण्हन्तस्स।

अयमेत्थ सङ्केपो। वित्थारतो पन भावना विसुद्धिमगतो^{३२९} गहेतब्बा। दुविधम्मि हि भावनाविधानं इध आचरियेन अतिसङ्केपतो वुत्तं, तदत्थदस्सनत्थञ्च वित्थारनये आहरियमाने अतिप्पपञ्चो सियाति मयम्मि तं न वित्थारेस्साम। यदा पन तं निमित्तं चित्तेन समुग्गहितन्ति एवं पवत्तानुपुब्बभावनावसेन यदा तं परिकम्मनिमित्तं चित्तेन सम्मा उग्गहितं होति। मनोद्वारस्स आपाथमागतन्ति चक्खुं निम्पीलेत्वा, अञ्जत्थ गन्त्वा वा मनसि करोन्तस्स कसिणमण्डलसदिसमेव हुत्वा मनोद्वारिकजवनानं आपाथं आगतं होति।

२९. समाधियतीति विसेसतो चित्तेकगतापत्तिया समाहिता होति।

३०. चित्तसमाधानवसेन पुग्गलोपि समाहितोयेवाति वुत्तं “तथा समाहितस्सा”ति। तप्पटिभागन्ति उग्गहनित्तसदिसं, ततोयेव हि तं “पटिभागनिमित्त”न्ति वुच्चति। तं पन उग्गहनित्ततो अतिपरिसुद्धं होति। वत्थुधम्मविमुच्चितन्ति परमत्थधम्मतो विमुत्तं, वत्थुधम्मतो वा कसिणमण्डलगतकसिणदोसतो विनिमुत्तं। भावनाय निब्बत्तता भावनामयं। सम्पित्तन्ति सुद्ध अप्पित्तं।

३१. ततो पट्टायाति पटिभागनिमित्तुप्पत्तित्तो पट्टाय।

३२. पञ्चसु ज्ञानङ्गेषु एकेकारम्मणे उप्पन्नावज्जनानन्तरं चतुपञ्चजनवसिता नाम। समापज्जितुकामतानन्तरं कतिपयभवङ्गतो परं अगन्त्वा उप्पन्नावज्जनानन्तरं समापज्जितुं समत्थता समापज्जनवसिता नाम। सेतु विय सीघसोताय नदिया ओषं भवङ्गवेगं उपच्छिन्दित्वा यथापरिच्छिन्नकालं ज्ञानं ठपेतुं समत्थता भवङ्गपाततो रक्खणयोग्यता अधिद्वानवसिता नाम। यथा परिच्छिन्नकालं अनतिककमित्वा ज्ञानतो बुद्धानसमत्थता बुद्धानवसिता नाम।

अथ वा यथापरिच्छिन्नकालतो उद्धं गन्तुं अदत्वा ठपनसमत्थता अधिद्वानवसिता नाम। यथापरिच्छिन्नकालतो अन्तो अवुद्धित्वा यथाकालवसेनेव बुद्धानसमत्थता बुद्धानवसिता नामाति अलमतिप्पपञ्चेन। पच्चवेक्खणवसिता पन आवज्जनवसिताय एव सिद्धा। आवज्जनानन्तरजवनानेव हि पच्चवेक्खणजवनानि नाम। वितक्कादिओठारिकङ्गं पहानायाति दुतियज्ज्ञानादीहि वितक्कादिओठारिकङ्गानं ज्ञानक्खणे अनुप्पादाय। पदहतोति परिकम्मं करोन्तस्स। तस्स पन उपचारभावना निष्फन्ना नाम होति वितक्कादीसु निकन्तिविक्खम्भनतो पट्टायाति दट्टब्बं। यथारहन्ति तं तं ज्ञानिककसिणादिआरम्माणुरूपं।

३६. आकासकसिणस्स उग्घाटेतुं असक्कुणेयत्ता वुत्तं “आकासवज्जितेसू”ति। कसिणन्ति कसिणपटिभागनिमित्तं। उग्घाटेत्वाति अमनसिकारवसेन उद्धरित्वा। अनन्तवसेन परिकम्मं करोन्तस्साति “अनन्तं आकासं, अनन्तं आकास”न्ति आकासं आरब्धं परिकम्मं करोन्तस्स, न पन केवलं “अनन्तं अनन्त”न्ति। एवं विज्जाणञ्चायतनेपि। “अनन्त”न्ति अवत्वापि “आकासो आकासो”^{३३०}, विज्जाणं विज्जाण”न्ति^{३३१} मनसि कातुं वट्टतीति आचरिया।

३९. “सन्तमेतं, पणीतमेतं”न्ति परिकम्मं करोन्तस्साति अभावमत्तारम्मणताय “एतं सन्तं, एतं पणीत”न्ति भावेन्तस्स।

४०. अवसेसेसु चाति कसिणादीहि सह अप्पनावहकम्मद्वानतो अवसेसेसु बुद्धानुस्सतिआदीसु अट्टसु, सञ्जाववत्थानेसु चाति दससु कम्मद्वानेसु। परिकम्मं कत्वाति “सो भगवा इतिपि अरहं, इतिपि सम्मासम्बुद्धो”त्यादिना^{३३२} वुत्तविधानेन परिकम्मं कत्वा। साधुकमुग्गहितेति बुद्धादिगुणनिब्रपोणपठ्भारचित्तावसेन सुद्ध उग्गहिते। परिकम्मञ्च समाधियतीति परिकम्मभावना

^{३२९} विसुद्धि० १.५४ आदयो

^{३३०} विसुद्धि० १.२७६

^{३३१} विसुद्धि० १.२८१

^{३३२} विसुद्धि० १.१२४

समाहिता निष्पज्जति। उपचारो च सम्पज्जतीति नीवरणानि विक्खम्भेन्तो उपचारसमाधि च उप्पज्जति।

४१. अभिञ्जावसेन पवत्तमानन्ति अभिविसेसतो जाननट्टेन अभिञ्जासङ्घातं इद्धिविधादिपञ्चलोकियाभिञ्जावसेन पवत्तमानं, अभिञ्जापादकपञ्चमज्झाना बुद्धहित्वाति कसिणानुलोमादीहि चुद्धसहाकारेहि^{३३३} चित्तं परिदमेत्वा अभिनीहारक्खमं कत्वा उपेक्खेकग्गातयोगतो अनुरुपत्ता च रूपावचरपञ्चमज्झानमेव अभिञ्जानं पादकं पतिट्ठाभूतं पथवादिकसिणारम्मणं पञ्चमज्झानं, तं समापज्जित्वा ततो बुद्धाय। अधिद्वेय्यादिकमावज्जेत्वाति इद्धिविधाजाणस्स परिकम्मकाले अधिट्ठातब्बं विकुब्बनीयं सतादिकं कोमाररूपादिकं, दिब्बसोतस्स परिकम्मकाले थूलसुखुमभेदं सद्दं, चेतोपरियजाणस्स परिकम्मकाले परस्स हृदयङ्गतवण्णदस्सनेन सरागादिभेदं चित्तं, पुब्बेनिवासानुस्सतिजाणस्स परिकम्मसमये पुरिमभवेसु चुत्तिचित्तादिभेदं पुब्बे निवुत्थक्खन्धं, दिब्बचक्खुस्स परिकम्मसमये ओभासफरितट्ठानगतं रूपं वा आवज्जेत्वा।

परिकम्मं करोन्तस्साति “सतं होमि, सहस्सं होमी”त्यादिना परिकम्मं करोन्तस्स। रूपादीसूति परिकम्मविसयभूतेसु रूपपादकज्झानसद्दपरिचित्तपुब्बेनिवुत्थक्खन्धादिभेदेसु आरम्मणेसु। एत्थ हि इद्धिविधाजाणस्स ताव पादकज्झानं, कायो, रूपादिअधिट्ठाने रूपादीनि चाति छ आरम्मणानि। तत्थ पादकज्झानं अतीतमेव, कायो पच्चुप्पन्नो, इतरं पच्चुप्पन्नमनागतं वा। दिब्बसोतस्स पन सद्दोयेव, सो च खो पच्चुप्पन्नो। परिचित्तविजाननाय पन अतीते सत्तदिवसेसु, अनागते सत्तदिवसेसु च पवत्तं परित्तादीसु यं किञ्चि तिकालिकं चित्तमेव आरम्मणं होतीति महाअट्ठकथाचरिया^{३३४}।

सङ्गहकारा पन “चत्तारोपि खन्धा”ति^{३३५} वदन्ति, कथं पनस्सा पच्चुप्पन्नचित्तारम्मणता, ननु च आवज्जनाय गहितमेव इद्धिचित्तस्स आरम्मणं होति, आवज्जनाय च पच्चुप्पन्नचित्तारम्मणं कत्वा निरुज्झमानाय तं समकालमेव परस्स चित्तम्पि निरुज्जतीति आवज्जनजवनानं कालवसेन एकारम्मणता न सिया, मग्गफलवीथितो अज्जत्थ आवज्जनजवनानं कथञ्च नानारम्मणता न अधिप्पेततीति? अट्ठकथाय^{३३६} ताव सन्ततिअद्धानपच्चुप्पन्नारम्मणता योजिता। आनन्दाचरियो^{३३७} पन भणति “पादकज्झानतो बुद्धाय पच्चुप्पन्नादिविभागं अकत्वा केवलं ‘इमस्स चित्तं जानामि’च्चेव परिकम्मं कत्वा पुनपि पादकज्झानं समापज्जित्वा बुद्धाय अविसेसेनेव चित्तं आवज्जेत्वा तिण्णं, चतुन्नं वा परिकम्मनं अनन्तरं चेतोपरियजाणेन परस्स चित्तं पटिविज्जाति रूपं विय दिब्बचक्खुना। पच्छा कामावचरचित्तेन सरागादिववस्थानम्पि करोति नीलादिववस्थानं विय। तानि च सब्बानि अभिमुखीभूतचित्तारम्मणानेव, अनिट्ठे च ठाने नानारम्मणतादोसो नत्थि अभिन्नाकारप्पवत्तितो”ति। पुब्बेनिवासानुस्सतिजाणस्स पुब्बे निवुत्थक्खन्धा, खन्धप्पटिबद्धानि च नामगोत्तानि, निब्बानञ्च आरम्मणं होति, दिब्बचक्खुस्स पन रूपमेव पच्चुप्पन्नन्ति अयमेतेसं आरम्मणविभागो। यथारहमप्पेतीति तं तं परिकम्मनुरुपतो अप्पेति।

४२. इदानि आरम्मणानं भेदेन अभिञ्जाभेदं दस्सेतुं “इद्धिविधा”त्यादिमाह। अधिट्ठानादि इद्धिप्यभेदो एतिस्साति इद्धिविधा। दिब्बानं सोतसदिसताय, दिब्बविहारसन्निस्सितताय च दिब्बञ्च तं सोतञ्चाति दिब्बसोतं। परेसं चित्तं विञ्जायति एतायाति परिचित्तविजानना। अत्तनो सन्ताने निवुत्थवसेन चैव गोचरनिवासवसेन च पुब्बे अतीतभवेसु खन्धादीनं अनुस्सरणं पुब्बेनिवासानुस्सति। वुत्तनयेन दिब्बञ्च तं चक्खु चाति दिब्बचक्खु। ‘चुत्तूपपातजाण’न्ति पन दिब्बचक्खुमेव वुच्चति।

^{३३३} विसुद्धि० २.३६५

^{३३४} विसुद्धि० २.४१६; ध० स० अट्ठ० १४३४

^{३३५} ध० स० अट्ठ० १४३४

^{३३६} विसुद्धि० २.४१६; ध० स० अट्ठ० १४३४

^{३३७} ध० स० मूलदी० १४३४ थोक विसदिसं

यथाकम्मपूगजाणअनागतंसजाणानिपि दिब्बचक्खुवसेनेव इज्झन्ति। न हि तेसं विसुं परिकम्मं अत्थि। तत्थ अनागतं सजाणस्स ताव अनागते सत्तदिवसतो परं पवत्तनकं चित्तचेतसिकं दुतियदिवसतो पट्टाय पवत्तनकञ्च यं किञ्चि आरम्भणं होति। तज्हि सविसये सब्बञ्जुतञ्जाणगतिकन्ति। यथा कम्मपूगजाणस्स पन कुसलकुसलसङ्घाता चेतना, चत्तारोपि वा खन्धा आरम्भणन्ति दट्ठब्बं।
गोचरवसेन भेदो गोचरभेदो।

गोचरभेदवण्णना निट्ठिता।

समथकम्मट्टानवण्णना निट्ठिता।

विपस्सनाकम्मट्टानं

विसुद्धिभेदवण्णना

४३. अनिच्चादिवसेन विविधाकारेण पस्सतीति विपस्सना, अनिच्चानुपस्सनादिका भावनापज्जा। तस्सा कम्मट्टानं, सायेव वा कम्मट्टानन्ति विपस्सनाकम्मट्टानं। तस्मि विपस्सनाकम्मट्टाने सत्तविधेन विसुद्धिसङ्गहोति सम्बन्धो।

४४. अनिच्चतायेव लक्खणं लक्खितब्बं, लक्खीयति अनेनाति वा अनिच्चलक्खणं। उदयवयपटिपीठनसङ्घातदुक्खभावो व लक्खणन्ति दुक्खलक्खणं। परपरिकम्पितस्स अत्तनो अभावो अनत्तता, तदेव लक्खणन्ति अनत्तलक्खणं।

४५. तिण्णं लक्खणानं अनु अनु पस्सना अनिच्चानुपस्सनादिका।

४६. खन्धादीनं कलापतो सम्मसनवसम्पवत्तं जाणं सम्मसनजाणं। उप्पादभङ्गानुपस्सनावसम्पवत्तजाणं उदयव्यजाणं। उदयं मुच्चित्वा वये पवत्तं जाणं भङ्गजाणं। सङ्घारानं भयतो अनुपस्सनावसेन पवत्तं जाणं भयजाणं, दिट्ठभयानं आदीनवतो पेक्खणवसेन पवत्तं जाणं आदीनवजाणं, दिट्ठादीनवेषु निब्बिन्दनवसम्पवत्तं जाणं निब्बिदाजाणं। निब्बिन्दित्वा सङ्घारेहि मुच्चितुकम्यतावसेन पवत्तं जाणं मुच्चितुकम्यताजाणं। मुच्चनस्स उपायसम्पटिपादनत्थं पुन सङ्घारानं परिग्गहवसम्पवत्तं जाणं पटिसङ्घाजाणं। पटिसङ्घातधम्मेसु भयनन्दीविवज्जनवसेन अज्झुपेक्खित्वा पवत्तं जाणं सङ्घारुपेक्खाजाणं।

पुरिमानं नवत्तं किच्चनिष्कत्तिया, उपरि च सत्तत्तिसाय बोधिपक्खियधम्मानं अनुकूलं जाणं अनुलोमजाणं।

४७. अत्तसुज्जताय सुज्जतो। संयोजनादीहि विसुच्चनट्टेन विमोक्खो। निच्चनिमित्तादिनो अभावतो अनिमित्तो। पणिहितस्स तण्हापणिधिस्स अभावतो अप्पणिहितो।

४९. यो नं पाति, तं मोक्खेति अपायादीहि दुक्खेहीति पातिमोक्खं, तदेव कायदुच्चरितादीहि संवरणतो संवरो, समाधानोपधारणट्टेन सीलज्जाति पातिमोक्खसंवरसीलं।

मनच्छट्टानं इन्द्रियानं रूपादीसु संवरणवसेन पवत्तं सीलं इन्द्रियसंवरसीलं। भिच्छाजीव विवज्जनेन आजीवस्स परिसुद्धिवसम्पवत्तं आजीवपारिसुद्धिसीलं। पच्चये सन्निस्सितं तेसं इदमत्थिकताय पच्चवेक्खणसीलं पच्चयसन्निस्सितसीलं। चतुब्बिधता देसनासंवरपरियेड्ढिपच्चवेक्खणवसेन, परिसुद्धता च चतुपारिसुद्धिसीलं नाम।

५०. चित्तविसुद्धि नाम चित्तस्स विनीवरणभावापादनवसेन विसोधनतो, चित्तसीसेन निद्विड्ढता, विसुद्धता चाति वा कत्वा।

५१. “धम्मानं सामञ्जसभावो लक्खणं, किच्चसम्पत्तियो रसो, उपट्टानाकारो, फलज्ज पच्चुपट्टानन्ति एवं वुत्तानं लक्खणादीनं “फुसनलक्खणो फस्सो, कक्खळलक्खणा पथवी”त्यादिना

वित्थारतो, “नमनलक्खणं नामं, रूपनलक्खणं रूप”न्यादिना सङ्घपतो च परिग्गहो पच्चत्तलक्खणादिवसेन परिच्छिज्ज गहणं दुक्खसच्चववत्थानं दिट्ठिविसुद्धि नाम “नामरूपतो अत्ता नत्थी”ति दस्सनतो दिट्ठि च अत्तदिट्ठिमलविसोधनतो विसुद्धि चाति कत्वा।

५२. पच्चयपरिग्गहोति नामञ्च रूपञ्च पटिसन्धियं ताव अविज्जातण्हाउपादान-कम्महेतुवसेन निब्बत्तति। पवत्तियञ्च रूपं कम्मचित्तउतुआहारपच्चयवसेन, नामञ्च चक्खुरुपादिनिस्सयारम्भणादिपच्चयवसेन, विसेसतो च योनिसोमनसिकारादिचतुचक्कसम्पत्तिया कुसलं, तब्बिपरियायेन अकुसलं, कुसलाकुसलवसेन विपाको भवद्वादिवसेन आवज्जनं, खीणासवसन्तानवसेन किरियजवनं, आवज्जनञ्च उप्पज्जतीति एवं साधारणासाधारणवसेन तीसु अद्वासु नामरूपपच्चयत्तिया पच्चक्खादिसिद्धस्स कम्मादिपच्चयस्स परिग्गहणं समुदयसच्चस्स ववत्थानं कङ्कवितरणविसुद्धि नाम “अहोसिं नु खो अहमतीतमद्धान”न्यादिकाय^{३१८} सोब्बसविधाय, “सत्थरिकङ्कती”त्यादिकाय^{३१९} अडुविधाय च कङ्कवितरणतो अतिककमनतो कङ्कवितरणा, अहेतुकविसमहेतुदिट्ठिमलविसोधनतो विसुद्धि चाति कत्वा।

५३. ततो पच्चयपरिग्गहतो परं तथापरिग्गहितेसु पच्चत्तलक्खणादिववत्थानवसेन, पच्चयववत्थानवसेन च परिग्गहितेसु लोकुत्तरवज्जेसु तिभूमिपरियापन्नेसु नामरूपेसु अतीतादिभेदभिन्नेसु खन्धादिनयमारब्ध पच्चक्खन्धछद्दारछद्दारम्भणछद्दारप्यवत्तधम्मादिवसेन आगतं खन्धादिनयं आरब्ध कलापवसेन पिण्डवसेन सङ्घिपित्वा यं अतीते जातं रूपं, तं अतीतेव निरुद्धं। यं अनागते भावि रूपं, तम्पि तत्थेव निरुद्धिस्सति। यं पच्चुप्पन्नं, तं अनागतं अप्पत्वा एत्थेव निरुद्धति, तथा अज्जत्तबहिद्दसुखुमओठारिकहीनपणीतरूपादयो। तस्मा “अनिच्चं अत्तादिवसेन न इच्चं अनुपगन्तब्बं खयट्ठेन खयगमनतो, दुक्खं भयट्ठेन भयकरत्ता, अनत्ता असारकट्ठेन अत्तसारादिअभावेना”ति च “चक्खुं अनिच्चं...पे०... मनो। रूपं...पे०... धम्मा। चक्खुविज्जाणं...पे०... मनोविज्जाणं अनिच्चं दुक्खं अनत्ता”त्यादिना^{३२०} अतीतादिअद्भावसेन, अतीतादिसन्तानवसेन, अतीतादिखणवसेन च सम्मसनजाणेन हुत्वा अभावउदयब्बयपटिपीठन-अवसवत्तनाकारसङ्घात-लक्खणत्तयसम्मसनवसम्पवत्तेन कलापसम्मसन-जाणेन लक्खणत्तयं सम्मसन्तस्स परिग्गज्जन्तस्स।

सम्मसनजाणे पन उप्पन्ने पुन तेस्सेव सङ्गारेसु “अविज्जासमुदया रूपसमुदयो, तण्हाकम्मआहारसमुदया रूपसमुदयो, तथा अविज्जानिरोधा रूपनिरोधो, तण्हाकम्मआहारनिरोधा रूपनिरोधो”ति^{३२१} एवं रूपक्खन्धे वेदनासञ्जासङ्गारक्खन्धेसुपि आहारं अपनेत्वा “फस्ससमुदया फस्सनरोधा”ति च एवं फस्सं पक्खिपित्वा, विज्जाणक्खन्धे “नामरूपसमुदया नामरूपनिरोधा”ति नामरूपं पक्खिपित्वा पच्चयसमुदयवसेन, पच्चयनिरोधवसेन च, पच्चये अनामसित्वा पच्चुप्पन्नक्खन्धेसु निब्बत्तिलक्खणमत्तस्स, विपरिणामलक्खणमत्तस्स च दस्सनेन खणवसेन चाति एकेकस्मिं खन्धे पच्चयवसेन चतुधा, खणवसेन एकधा चाति पच्चधा उदयं, पच्चधा वयन्ति दसदसउदयब्बयदस्सनवसेन समपञ्जासाकारेहि उदयब्बयजाणेन उदयब्बयं समनुपस्सन्तस्स आरद्धविपस्सकस्स योगिनो विपस्सनाचित्तसमुद्धानो सरीरतो निच्छरणकआलोकसङ्घातो ओभासो, विपस्सनाचित्तसहजाता खुट्ठिकादिपच्चविधा^{३२२} पीति, तथा कायचित्तदरथवूपसमलक्खणा कायचित्तवसेन दुविधा पस्सद्धि, बलवसद्धिन्द्रियसङ्घातो अधिमोक्खो, सम्पपधानकिच्चसाधको वीरियसम्बोज्झङ्गसङ्घातो पगगहो, अतिपणीतं सुखं, इन्द्विस्सट्ठवजिरसदिसं तिलक्खणविपस्सनाभूतं जाणं, सत्तिपट्टानभूता चिरकतादिअनुस्सरणसमत्था उपट्टानसङ्घाता सति, समप्यवत्तविपस्सनासहजाता

^{३१८} म० नि० १.१८; सं० नि० २.२०

^{३१९} ध० सं० ११२३; वि० ११५

^{३२०} पटि० म० १.४८

^{३२१} पटि० म० १.५०

^{३२२} ध० सं० अट्ट० १ धम्मुद्देशवार ज्ञानहरासिवण्णना

उपेक्षासम्बोज्झभूता तत्रमज्जनुपेक्षा, मनोद्वारे आवज्जनुपेक्षा चाति दुविधापि उपेक्षा, ओभासादीसु उप्पत्रेसु “न वत मे इतो पुब्बे एवरूपो ओभासो उप्पत्रपुब्बो”त्यादिना^{१४३} नयेन तत्थ आलयं कुरुमाना सुखुमतण्हा रूपनिकन्तिचाति ओभासादीसु दससु विपस्सनुपक्किलेसेसु उप्पत्रेसु “न वत मे इतो पुब्बे एवरूपा ओभासादयो उप्पत्रपुब्बा अद्दा मग्गप्पतोस्मि, फलप्पत्तोस्मी”ति^{१४४} अग्गहेत्वा “इमे ओभासादयो तण्हादिदिमानवत्थुताय न मग्गो, अथ खो विपस्सनुपक्किलेसा एव, तब्बिनिमुत्तं पन वीथिपटिपन्नं विपस्सनाजाणं मग्गो”ति एवं मग्गामग्गलक्खणस्स वक्थानं निच्छयनं मग्गामग्गस्स जाननतो, दस्सनतो, अमग्गे मग्गसञ्जाय विसोधनतो च मग्गामग्गजाणदस्सनविसुद्धि नाम।

५४. यावानुलोमाति याव सच्चानुलोमजाणा। नव विपस्सनाजाणानीति^{१४५} खन्धानं उदयञ्च वयञ्च जाननकं उदयव्यञ्जाणं, उदयं मुञ्चित्वा भङ्गमत्तानुपेक्खकं भङ्गजाणं, भङ्गवसेन उपट्टितानं सीहादीनं विय भायित्तब्बाकारानुपेक्खकं भयजाणं, तथानुपेक्खितानं आदित्थरस्स विय आदीनवाकारानुपेक्खकं आदीनवजाणं, दिट्ठादीनवेसु निब्बिन्दनवसेन पवत्तं निब्बिदाजाणं, जालादितो मच्छादिका विय तेहि तेभूमकधम्मोहि मुच्चितुकामतावसेन पवत्तं मुच्चितुकम्यताजाणं, मुच्चनुपायसम्पादनत्थं दिट्ठादीनवेसुपि समुदसकुणी विय पुनप्पुनं सम्पसनवसप्पत्तं पटिसङ्गानुपस्सनाजाणं, चत्तभरियो पुरिसो विय दिट्ठादीनवेसु तेसु सङ्गारेसु उपेक्खनाकारप्पवत्तं सङ्गारुपेक्खाजाणं, अनिच्चादिलक्खणविपस्सनताय हेट्ठा पवत्तानं अट्टन्नं विपस्सनाजाणानं, उद्धं मग्गक्खणे अधिगन्तब्बानं सत्तत्तिसबोधिपक्खियधम्मनञ्च अनुलोमतो मग्गवीथियं गोत्रभुतो पुब्बे पवत्तं सच्चानुलोमिकजाणसङ्घातं नवमं अनुलोमजाणन्ति इमानि नव जाणानि जाणदस्सनविसुद्धिया पटिपदाभावतो तिलक्खणजाननट्टेन, पच्चक्खतो दस्सनट्टेन, पटिपक्खतो विसुद्धता च पटिपदाजाणदस्सनविसुद्धि नाम।

५५. विपस्सनाय परिपाको विपस्सनापरिपाको, सङ्गारुपेक्खाजाणं। तं आगम्म पटिच्च। इदानि अप्पना उप्पज्जिस्सतीति “इदानि अप्पनासङ्घातो लोकुत्तरमग्गो उप्पज्जिस्सती”ति वत्तब्बक्खणे। यं किञ्चीति सङ्गारुपेक्खाय गहितेसु तीसु एकं यं किञ्चि।

५६. विपस्सनाय मत्थकप्पत्तिया सिखाप्पत्ता। अनुलोमजाणसहितताय सानुलोमा। सा एव सङ्गारेसु उदासीनत्ता सङ्गारुपेक्खा। यथानुरूपं अपायादितो, सङ्गारनिमित्ततो च बुद्धहनतो बुद्धानसङ्घातं मग्गं गच्छतीति बुद्धानगामिनी।

५७. अभिसम्भोन्तन्ति पापुणन्तं।

५८. परिजानन्तोति “एत्तकं दुक्खं, न इतो ऊनाधिक”न्ति परिच्छिज्ज जानन्तो। सच्छिकरोन्तोति आरम्भणकरणवसेन पच्चक्खं करोन्तो। मग्गसच्चं भावनावसेनाति मग्गसच्चसङ्घातस्स सम्पयुत्तमग्गसङ्घातस्स चतुत्थसच्चस्स सहजाताविपच्चयो हुत्वा वह्नवसेन। एकस्सेव जाणस्स चतुक्किच्चसाधनं पदीपादीनं वट्टिदाहादिचतुक्किच्चदस्सनतो, “यो, भिक्खवे, दुक्खं पस्सती”त्यादि^{१४६} आगमतो च सम्पटिच्छित्तब्बं।

५९. द्वे तीणि फलचित्तानि पवत्तित्वाति मग्गुप्पत्तिया अनुरूपतो द्वे वा तीणि वा फलचित्तानि अपनीतग्गिद्धि ठाने उण्हत्तनिब्बापनत्थाय घट्टेहि अभिसिञ्चमानमुदकं विय समुच्छिन्नकिलेसेपि सन्ताने दरथपटिप्पस्सम्भकानि हुत्वा पवत्तित्वा, तेसं पवत्तियाति वुत्तं होति।

^{१४३} विसुद्धि० २.७३३

^{१४४} विसुद्धि० २.७३३

^{१४५} विसुद्धि० २.७३७ आदयो

^{१४६} सं० नि० ५.११००; विसुद्धि० २.८३९

पचवेक्षणजाणानीति मग्गफलादिविसयानि कामावचरजाणानि, यानि सन्थाय “विमुत्तस्मि विमुत्तमिति जाणं होती”ति^{३४०} वुत्तं।

६०. इदानीं पचवेक्षणाय भूमिं दस्सेतुं “मग्गं फलञ्चा”त्यादि वुत्तं। तत्थ “इमिनाव वताहं मग्गेन आगतो”ति मग्गं पचवेक्खति। ततो “अयं नाम मे आनिसंसो लद्धो”ति तस्स फलं, ततो “अयं नाम मे धम्मो आरम्भणतो सच्छिकतो”ति निब्बानञ्च पण्डितो पचवेक्खति। ततो “इमे नाम मे किलेसा पहीना”ति पहीने किलेसे, “इमे नाम अवसिद्धा”ति अवसिद्धकिलेसे पचवेक्खति वा, न वा। कोचि सेक्खो पचवेक्खति, कोचि न पचवेक्खति। तत्थ कामचारोत्थधिप्पायो। तथा हि महानामो सक्को “को सु नाम मे धम्मो अज्जत्तं अप्पहीनो”ति^{३४१} अप्पहीने किलेसे पुच्छि। अरहतो पन अवसिद्धकिलेसपचवेक्षणं नत्थि सब्बकिलेसानं पहीनत्ता, तस्मा तिण्णं सेक्खानं पन्नस अरहतो चत्तारीति एकनवीसति पचवेक्षणजाणानीति दट्टब्बं।

छब्बिसुद्धिकमेनाति^{३४२} सीलचित्तविसुद्धीनं वसेन मूलभूतानं द्वित्रं, दिट्ठिविसुद्धिआदीनं वसेन सरिरभूतानं चतुत्रन्ति एतासं छत्रं विसुद्धीनं कमेन।

चतुत्रं सच्चानं जाननत्ता, पचवेक्खकरणतो, किलेसमलेहि विसुद्धत्ता च जाणदस्सनविसुद्धि नाम।

एत्थाति विपस्सनाकम्पट्टाने।

विसुद्धिभेदवण्णना निट्ठिता।

विमोक्खभेदवण्णना

६१. तत्थ तस्मि उहेसे। सङ्घारेसु “यो अत्ताभिनिवेशो कम्मस्स कारको फलस्स च वेदको एसो मे अत्ता”ति एवं अभिनिवेशो दब्बग्गाहो, तं मुञ्चन्ती “अनत्ता”ति पवत्ता अनुपस्सनाव अत्तसुञ्जताकारानुपस्सनतो सुञ्जतानुपस्सना नाम विमोक्खमुखं पटिपक्खतो विमुत्तिवसेन विमोक्खसङ्घातस्स लोकुत्तरं मग्गफलस्स द्वारं होति।

६२. सङ्घारेसु “अनिच्च”न्ति पवत्ता अनुपस्सना अनिच्चे “निच्च”न्ति^{३४०} पवत्तं सञ्जाचित्तिदिट्ठिविपल्लाससङ्घातं विपल्लासनिमित्तं मुञ्चन्ती पजहन्ती विपल्लासनिमित्त-रहिताकारानुपस्सनतो अनिभित्तानुपस्सना नाम विमोक्खमुखं होतीति सम्बन्धो।

६३. “दुक्ख”न्ति पवत्तानुपस्सना सङ्घारेसु “एतं मम, एतं सुख”न्त्यादिना नयेन पवत्तं कामभवतण्हासङ्घातं तण्हापणिधि तण्हापत्थनं मुञ्चन्ती दुक्खाकारदस्सनेन परिच्चजन्ती पणिधिरहिताकारानुपस्सनतो अप्पणिहितानुपस्सना नाम।

६४. तस्माति यस्मा एतासं तिस्सत्रं एतानि तीणि नामानि, तस्मा यदि बुद्धानगामिनिविपस्सना अनत्ततो विपस्सति। मग्गो सुञ्जतो नाम विमोक्खो होति आगमनवसेन लद्धनामत्ता।

६६. विपस्सनागमनवसेनाति विपस्सनासङ्घातागमनवसेन। आगच्छति एतेन मग्गो, फलञ्चाति विपस्सनामग्गो इध आगमनं नाम।

६७. यथावुत्तनयेनाति पुब्बे वुत्तअनत्तानुपस्सनादिवसेन। यथासकं फलमुप्पज्जमानम्पीति यथालद्धमग्गस्स फलभूतं अत्तनो अत्तनो फलं उप्पज्जमानम्पि मग्गागमनवसेन अलभित्वा विपस्सनागमनवसेनेव तीणि नामानि लभति फलसमापत्तिकाले तदा मग्गप्पवत्ताभावेन तस्स

^{३४०} महाव० २३

^{३४१} म० नि० १.१७५; विसुद्धि० २.८१२

^{३४२} विसुद्धि० २.६६२ आदयो

^{३४०} अ० नि० ४.४९; पटि० म० १.२३६; विम० ९३९

द्वारभावायोगतो। आरम्भणवसेनाति सब्बसङ्कारसुञ्जतत्ता, सङ्कारनिमित्तरहितत्ता, तण्हापणिधि-
रहितत्ता च सुञ्जतअनिमित्तअप्पणिहितनामवन्तं निब्बानं आरब्ध पवत्तत्ता तस्स वसेन।
सरसवसेनाति रागादिसुञ्जतत्ता, रूपनिमित्तादि आरम्भणरहितत्ता, किलेसपणिधिरहितत्ता अत्तनो
गुणवसेन। सब्बत्थाति मग्गवीथियं, फलसमापत्तिवीथियञ्च। सब्बेसम्पीति मग्गस्स, फलस्सपि।

विमोक्खभेदवण्णना निद्धिता।

पुग्गलभेदवण्णना

६८. सत्तक्खत्तुं सत्तसु वारेसु कामसुगतियं पटिसञ्चिग्गहणं परमं एतस्साति सत्तक्खत्तुपरमो
न पन अट्टमादिकामभवगाभीत्यधिप्पायो। यं सन्धाय वुत्तं “न ते भवं अट्टममादियन्ती”ति^{१११}।
रूपारूपसुगतियं पन सत्तवारतो परम्पि गच्छतीति आचरिया।

६९. रागदोसमोहानन्ति मोहग्गहणं रागदोसेकट्टमोहं सन्धायति दट्टब्बं।

७०. खीणा चत्तारो आसवा एतस्साति खीणासवो। दक्खिणारहेसु अग्गत्ता
अग्गदक्खिणेय्यो।

पुग्गलभेदवण्णना निद्धिता।

समापत्तिभेदवण्णना

७२. सब्बेसम्पीति चतुन्नम्पि अरियपुग्गलानं।

७३. चित्तचेतसिकानं अप्पवत्तिसङ्घातस्स निरोधस्स समापत्ति निरोधसमापत्ति, दिट्ठेव धम्मे
चित्तनिरोधं पत्वा विहरणं। अनागाभीनञ्चाति कामरूपभवद्धानं अट्टसमापत्तिलाभीनमेव अनागाभीनं,
तथा खीणासवानञ्च। तत्थाति निरोधसमापत्तियं। याव आकिञ्चञ्जायतनं गन्त्वाति एवं
समथविपस्सनानं युगनद्धभावापादनवसेन याव आकिञ्चञ्जायतनं, ताव गन्त्वा। अधिट्ठेय्यादिकन्ति
कायपटिबद्धं टपेत्वा विसुं विसुं टपितचीवरादिपरिक्खारगेहादीनं अग्गिआदिना अविनासनाधिद्धानं,
संघपटिमाननसत्थुपक्कोसनानं पुरेतरं बुद्धानं, सत्ताहवन्तरे आयुसङ्कारप्पवत्ति-ओलोकनन्ति चतुब्बिधं
अधिद्धानादिकं पुब्बकिच्चं कत्वा।

समापत्तिभेदवण्णना निद्धिता।

विपस्सनाकम्मद्धानवण्णना निद्धिता।

उत्थोजनवण्णना

७५. पटिपत्तिरसस्सादन्ति ज्ञानसुखफलसुखादिभेदं समथविपस्सनापटिपत्तिरसस्सादं।

इति अभिधम्मत्थविभाविनिया नाम अभिधम्मत्थसङ्ग्रहवण्णनाय कम्मद्धानपरिच्छेदवण्णना निद्धिता।

^{१११} खु० पा० ६.९; सु० नि० २३२; नेत्ति० ११५

निगमनवण्णना

(क) चारित्तेन कुलाचारेण सोभिते विसालकुले उदयो निब्बत्ति यस्स, तेन, कम्मादिविसयाय सद्दाय अभिवुद्धो परिसुद्धो च दानसीलादिगुणानं उदयो यस्स, तेन, नम्पहयेननम्पनामकेन, परानुकम्पं सासने सुखोत्तरणपरिपाचनलक्खणं परानुग्गहं, पणिधाय पत्थेत्वा यं पकरणं पत्थितं अभियाचितं, तं एत्तावता परिनिद्धितन्ति योजना।

(ख) तेन पकरणप्पसुत्तेन विपुलेन पुज्जेण पज्जावदातेन अरियमग्गपज्जापरिसुद्धेन सीलादिगुणेण सोभिता। ततोयेव लज्जिनो भिक्खू, धज्जानं अधिवासभूतं, उदितोदितं अच्चन्तप्पसिद्धं, मूलसोमं नाम विहारं, पुज्जविभवस्स उदयसङ्घाताय मङ्गलत्थाय आयुकन्तं मज्जन्तु, तत्थ निवासिनो भिक्खू ईदिसा होन्तूत्यधिप्पायो।

निगमनवण्णना निद्धिता।

निद्धिता चायं अभिधम्मत्थविभाविनी नाम अभिधम्मत्थसङ्गहटीका।

निगमनकथा

१. रम्मे पुलत्थिनगरे नगराधिराजे, रज्जा परक्कमभुजेण महाभुजेण।
कारापिते वसति जेतवने विहारे, यो रम्महम्मियवरूपवनाभिरामे ॥
२. सम्पन्नसीलदमसंयमतोसितोहि, सम्मानितो वसिगणेहि गुणाकरेहि।
पत्तो मुनिन्दवचनादिसु नेकगन्थजातेसु चाचरियतं महितं विदूहि ॥
३. ज्ञानानुभावमिह यस्स च सूचयन्ती, संवण्णना च विनयट्ठकथादिकानं।
सारत्थदीपनिमुखा मधुरत्थसारसन्दीपनेण सुजनं परितोसयन्ती ॥
४. तस्सानुकम्पमवलम्बिय सारिपुत्तत्थेरस्स धामगतसारगुणाकरस्स।
यो नेकगन्थविसयं पट्टतं अलत्थं, तस्सेस ज्ञानविभवो विभवेकहेतु ॥
५. सोहमेतस्स संसुद्धवायामस्सानुभावतो।
अद्दासासनदायादो, हेस्सं मेत्तेय्यसत्थुजो ॥
६. जोतयन्तं तदा तस्स, सासनं सुद्धमानसं।
पस्सेय्यं सक्करेय्यञ्च, गहं मे सारिसम्भवं ॥
७. दिनेहि चतुवीसेहि, टीकायं निद्धिता यथा।
तथा कल्याणसङ्कप्पा, सीघं सिज्जन्तु पाणिनन्ति ॥

इति भदन्तसारिपुत्तमहाथेरस्स सिस्सेण रचिता अभिधम्मत्थविभाविनी नाम अभिधम्मत्थसङ्गहटीका निद्धिता।

सन्दर्भ ग्रन्थ :

प्रह्लानन्द, महास्थविर (ने.अ.), अग्गजाणी, अ.(सं.), *म्यूजैजी*, श्री शाक्यसिंह विहार, बु. सं. २५४८
 रेवतधम्म, भदन्त, *अभिधम्मत्थसङ्ग्रह*, वाराणसी, विद्यामन्दिर प्रेस (प्रा.) लि. बु. सं. २५१०
 ज्ञानपूर्णि, भिक्षु, *अभिधम्मत्थसङ्ग्रह*, काठमाण्डौ, आनन्दकुटी विहारगुठी, बु. सं. २५३५
 आनन्द कौसल्यायन, भदन्त, *अभिधम्मत्थसङ्ग्रह*, नागपुर, श्रीनिवास मुद्रणालय, ई. सं. २००५
 भिक्षु धर्मगुप्त महाराष्ट्रविर, *अभिधम्मत्थसङ्ग्रहो*, भिक्षु धर्मगुप्त, सुनाकोटी, वि. सं. २०६८
 धर्मगुप्त, भिक्षु, *अभिधम्मत्थसङ्ग्रह*, Tainan, Kai Yuan Institute, 2545 B.E.
 धर्मगुप्त, भिक्षु, *अभिधम्मत्थविभाविनीटिका*, Tainan, Kai Yuan Institute, 2545 B.E.
 धर्मगुप्त, भिक्षु, *सःआभिटायो इ लुन्*, Tainan, Original Dhamma Institute, 2545 B.E.
 आटे, वामन शिवराम, *संस्कृत-हिन्दी कोश*, दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास, ई. सं. २००१
 Narada, Mahathera, *A Manual of Abhidhamma*, Candy, Buddhist Publication Society, 1968
 Bodhi, Bhikkhu, *Comprehensive Manual of Abhidhamma*, Candy, Buddhist Publication Society, 2007
 Nandamalabhivamsa, Dr., *Fundamental Abhidhamma*, Sagaing, Dharmavijalaya (CBS), 2005
 RhysDavids, T. W., *Pali English Dictionary*, Delhi, Motilal Banarsidass, 1993

अनुवादकको सम्पादित तथा प्रकाशित पालि ग्रन्थहरूः

सुत्तन्तपिटक : १. दीघनिकायो २. मज्झिमनिकायो ३. संयुत्तनिकायो ४. अङ्गुत्तरनिकायो ५. खुद्दकनिकायोः

१. खुद्दकपाठ २. धम्मपद ३. उदान ४. इतिवृत्तक ५. सुत्तनिपात ६. विमानवत्थु ७. पेतवत्थु ८. धेरागाथा ९. धेरीगाथा १०. जातक ११. निदेस १२. पटिसम्भिदामग्ग १३. अपदान १४. बुद्धवंस १५. चरियापिटक १६. थिलिन्दपञ्चा १७. नेत्तिपकरण १८. पेटकोपदेस ।

विनयपिटक : १. पाराजिका २. पाचित्तिय ३. महावग्ग ४. चुल्लवग्ग ५. परिवार ।

अभिधम्मपिटक : १. धम्मसङ्गणी २. विथङ्ग ३. धातुकथा ४. पुग्गलपञ्जति ५. कथावत्थु ६. यमक ७. पट्टान ।

सुत्तन्तपिटक अङ्ककथा : १. सुमङ्गलविलासिनी (दीघनिकाय-अङ्ककथा) २. पपञ्चसूदनी (मज्झिमनिकाय-अङ्ककथा) ३. सारत्थप्पकासिनी (संयुत्तनिकाय-अङ्ककथा) ४. मनोरथपूरणी (अङ्गुत्तरनिकाय-अङ्ककथा) ५. धम्मपद-अङ्ककथा ६. जातक-अङ्ककथा ७. खुद्दकपाठ-अङ्ककथा ८. सुत्तनिपात-अङ्ककथा ९. अपदान-अङ्ककथा १०. मधुरत्थविलासिनी (बुद्धवंस-अङ्ककथा) ११. नेत्तिपकरणङ्ककथा १२. इतिवृत्तकङ्ककथा १३. उदानङ्ककथा १४. चरियापिटकङ्ककथा १५. धेरकथङ्ककथा १६. धेरीकथङ्ककथा १७. विमलविलासिनी विमानवत्थु-अङ्ककथा १८. विमलविलासिनी (पेतवत्थु-अङ्ककथा) ।

विनयपिटक अङ्ककथा : समन्तपासादिका (विनय-अङ्ककथा) २. कङ्गावितरणी ।

अभिधम्मपिटक अङ्ककथा : १. परमत्थकथा (अभिधम्म-अङ्ककथा), २. अभिधम्मावतारो, ३. सच्चसङ्घेय ४. मोहविच्छेदनी ५. अभिधम्मत्थसङ्ग्रह ६. परमत्थविनिच्छय ७. नामरूपपरिच्छेद ८. अभिधम्मत्थसङ्ग्रहस्सटीका ।

पालिभासा : १. कच्चायन-ब्याकरण २. भोग्गलान-ब्याकरण ३. सुबोधालङ्कार ४. बुत्तोदय ५. अभिधानप्पदीपिका ।



攝阿毘達磨義論和註解

倡印者：釋大甘

住 址：台灣彰化縣和美鎮線東路四段286號



回 向 偈 www.dhamma.digital

願以此功德
增長諸福慧
法界有情眾
皆共成佛道



वित्त र वैतसिकको सम्प्रयोगनय र संग्रहनयको तालिका नं.

| वित्त | वैतसिक | सर्वचित्त साधारण ७ | | | | | | | | | | | | | | शोधन साधारण १९ | विरती ३ | अपगत्य | प्रभा | उभ्या |
|-----------------------|--------|--------------------|-------|---------|-----|-------|-------|----------------|-----|--------|-----|-----------------------------|--------------|----------|----------------|----------------|---------|--------|-------|-------|
| | | वित्तक | विचार | अधिकेका | सौभ | प्रति | उत्तर | अकुशल साधारण ४ | लेप | दुष्टि | पान | शेष, शिष्य, फलार्थ, केकुल्य | स्वान, शिष्ट | विविधिता | शोधन साधारण १९ | विरती ३ | अपगत्य | प्रभा | उभ्या | |
| लोपपूल | १ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | १९ | |
| " | २ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | २१ | |
| " | ३ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | १९ | |
| " | ४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | २१ | |
| " | ५ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | १८ | |
| " | ६ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | २० | |
| " | ७ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | १८ | |
| " | ८ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | २० | |
| देपपूल | १ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | २० | |
| " | २ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | २२ | |
| मोहपूल | १ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | १५ | |
| " | २ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | १५ | |
| द्विपञ्चविंशत | १० | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ७ | |
| सम्प्रदिखन | २ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | १० | |
| उ. सन्तीरण | २ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | १० | |
| सौ. सन्तीरण | १ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ११ | |
| पञ्चद्वारावर्जन | १ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | १० | |
| धनाद्वारावर्जन | १ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ११ | |
| हसितलेपाव | १ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | १२ | |
| कामावचर कुशल | १,२ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३८ | |
| | ३,४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३७ | |
| | ५,६ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३७ | |
| | ७,८ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३६ | |
| कामावचर विपाक | १,२ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३३ | |
| | ३,४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३२ | |
| | ५,६ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३२ | |
| | ७,८ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३१ | |
| कामावचर क्रिया | १,२ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३५ | |
| | ३,४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३४ | |
| | ५,६ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३४ | |
| | ७,८ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३३ | |
| रूपवचर प्रथमध्यान | ३ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३५ | |
| रूपवचर द्वितीयध्यान | ३ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३४ | |
| रूपवचर तृतीयध्यान | ३ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३३ | |
| रूपवचर चतुर्थध्यान | ३ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३२ | |
| रूपवचर पञ्चमध्यान | ३ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३० | |
| अरूपवचर | १२ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३० | |
| ४ फलोचित्त प्रथमध्यान | ४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३६ | |
| " द्वितीयध्यान | ४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३५ | |
| " तृतीयध्यान | ४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३४ | |
| " चतुर्थध्यान | ४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३३ | |
| " पञ्चमध्यान | ४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३३ | |
| ४ फलोचित्त प्रथमध्यान | ४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३६ | |
| " द्वितीयध्यान | ४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३५ | |
| " तृतीयध्यान | ४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३४ | |
| " चतुर्थध्यान | ४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३३ | |
| " पञ्चमध्यान | ४ | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | ३३ | |
| जम्मा | | ८९ | ५५ | ६६ | ७८ | ७३ | ५१ | ६९ | १२ | ८ | ४ | ४ | २ | ५ | १ | ५९ | १६ | २८ | ४७ | |
| | | १२१ | | | ११० | १०५ | | १०१ | | | | | | | ११ | ४८ | ७९ | | | |

नोट :

उ. = उपेक्षा

सौ. = सौमनस्य

सर्वचित्त साधारण ७ = स्पर्श^(१), वेदना^(२), संज्ञा^(३), चेतना^(४), एकाग्रता^(५), जीवित इन्द्रिय^(६), र मनसिकार^(७)

अकुशल साधारण ४ = मोह^(१२), अहिक्य^(१५), अनपत्राप्य^(१५), औद्वत्य^(१७)

शोधन साधारण १९ = श्रद्धा^(२८), स्मृति^(२९), श्लि^(३०), अपत्राप्य^(३१), अलोभ^(३२), अद्वेष^(३३), तत्रमध्यस्थता^(३४), कायप्रशब्धि^(३५),

चित्तप्रशब्धि^(३६), कायलघुता^(३७), चित्तलघुता^(३८), कायमुदुता^(३९), चित्तमुदुता^(४०), कायकर्मण्यता^(४१), चित्तकर्मण्यता^(४२),

कायप्रागुप्यता^(४३), चित्तप्रागुप्यता^(४४), काय-ऋजुकता^(४५), चित्त-ऋजुकता^(४६)

विरती ३ = सम्यक्-वचन (वाक्)^(४७), सम्यक्-कर्मान्त^(४८), सम्यक्-आजीव^(४९)

攝阿毘達磨義論和註解

倡印者：釋大甘

住 址：台灣彰化縣和美鎮線東路四段286號

回向偈

願以此功德
增長諸福慧
法界有情眾
皆共成佛道

